श्रीस्वामी चरणदासजी रचित

श्री भक्तिसागर ग्रन्थ

(परिशिष्ट भाग सहित)

प्रकाशक

(राजा) रामकुमार-प्रेस, बुकडिपो,
लखनऊ.

उत्तराधिकारी—नवलकिशोर-प्रेस, लखनऊ.

छठांवार]

१ू

ॐ

श्रीयुग्मनिकुंजविहारिणे नमः

श्रीस्वामी चरणदासजी रचित

श्रीभक्तिसागर ग्रन्थ

परिशिष्ट भाग सहित

अर्थात्

सर्व वाणी का समुच्चय जो कि आज तक भारतवर्ष के
किसी यंत्रालय मे भी नही छपा है

जिसको

श्रीमान् सर्व गुण निधान श्रीमत शुकसम्प्रदाय सेवक प्रधान पंडित
शिवदयालु गौड़ हरि सम्बंधी नाम सरसमाधुरीशरण
जयपुर निवासी ने शुद्ध किया

पंचम बार

लखनऊ

मैनेजर राजा रामकुमार प्रेस द्वारा मुद्रित और प्रकाशित

सन् १९५१ ई०

श्रीस्वामी चरणदासजी रचित भक्तिसागर का

❀ सूचीपत्र ❀

श्रीशुकदेव मुनि

श्रीश्यामचरणदासजी

श्रीराधाकृष्णाय नमः ॥

(प्रस्तावना)

श्रीमत् परब्रह्म परमात्मा श्रीकृष्णचन्द्र आनन्दकन्द परम दयानिधान और करुणा कृपाकी खान हैं कि जो कोई सद्-भक्ति भाव से जिस किसी लौकिक अलौकिक पदार्थ की प्राप्ति होनेकी प्रार्थना किया करता है उसहीको अपनी कृपादृष्टि से अवश्यही पूर्ण करते हैं। हमारे श्री मुंशी नवलकिशोर प्रेसमें सबसे प्रथम श्रीस्वामी श्यामचरणदास जी महाराज का रचित ग्रन्थ भक्तिसागर छापा जाकर जगत्प्रसिद्ध किया गया जिसके पश्चात् और २ प्रेसों में भी उक्त ग्रन्थके छापने के उद्योगी हुये ग्रन्थके छप जाने के पश्चात् हमको विदित हुआ कि श्रीभक्ति-सागरग्रन्थ के सिवाय श्रीस्वामीजी महाराज की रचित और भी महाबानी सन्तनमनमानी श्यामचरणदासीय सन्तों के खास २ स्थानों में मौजूद है वह किसी प्रकार से प्राप्त हो सके तो ग्रन्थ भक्तिसागर के साथ ही परिशिष्टभाग के नामसे छापकर लोकहित के लिये प्रकाशित करदी जाय इसही विचार के अवसरपर सन् १९१६ ईसवी में श्रीमान् पण्डित शिवदयालुजी गौड़ हरिसम्बन्धी नाम सरसमाधुरीशरणजी जयपुर निवासी मुक्तिमार्ग ग्रन्थ स्वामी रामरूपजी रचित के छपानेके निमित्त लखनऊ पधारे उन्हों से वार्तालाप होनेसे मालूम हुआ कि भक्तिसागरग्रन्थ के अतिरिक्त और वाणी श्रीस्वामी श्यामचरणदासजी की लिखित पुस्तक मौजूद है हमने उस वाणी की १ प्रति लिखाकर प्रेसमें छपजानेके लिये

भेजदेने को कहा तो उन्हों ने हमारे मनोरथ की प्रशंसा कर लिखित वाणीकी प्रति भेजदेना स्वीकार कर वाणीकी प्रति को शुद्धकरके प्रेसमें मुद्रणार्थ भेज दिया अब हम अपने मनोरथ सिद्धिकर्ता महाशय को परम धन्यवाद देतेहुये ग्रन्थ भक्तिसागर के परिशिष्टभाग के नाम से छापकर प्रकाशित करते हैं—

सुपरिंटेंडेंट
राजाराम कुमार प्रेस लखनऊ

ॐ

श्रीराधाकृष्णाय नमः ॥

❀ श्री सरसमाधुरीजी रचित ❀

* सूचना दोहावली *

श्रीमत शुक मुनिराज वर, व्यास पुत्र भगवान ।
श्याम चरण के दासजी, जिनके शिष्य महान १
जिनकीवाणीविविधिविधि, अद्भुत अनुपम ग्रन्थ ।
नाम भक्तिसागर सरस, प्रेम परा को पन्थ २
व्रजचरित्र तामें प्रथम, अमरलोक शुचिनाम ।
रासादिक लीला ललित, अरु महिमा निजधाम ३
कर्मकाण्ड शुभ अशुभ फल, कथन किये महाराज ।
नाम धरयो ताको प्रभू, अनुपम धर्म जहाज ४
योग युक्ति जामें भरी, सब विधि सांगोपांग ।
याहीतें याको धरयो, नाम योग अष्टांग ५
सागर योग सन्देह की, पुस्तक वरनी गूढ़ ।
गुरुमुख ज्ञानी जन बिना, अर्थ न समझें मूढ़ ६
योग स्वरोदय पुनि रच्यो, स्वर को भेद उचार ।
ताहि पढ़ेकर प्रेम जो, पावे तत्व विचार ७
वेद अथर्वण की कही, पंच उपनिषद् सार ।
भाषा में वर्णन करी, योग ज्ञान निरधार ८
भक्ति पदारथ पुनि कथ्यो, श्रुति पुराण को सार ।
अगुन सगुन हरि रूपको, कियो तत्व निरधार ९
दत्तात्रेय मुनि ने किये, गुरु चौबीस उदार ।
ताकी कथा कथी भली, नाम सु गुटकासार १०

ब्रह्म जीव की एकता, कही खोल निरधार।
ब्रह्मज्ञान सागर धर्यो, ताको नाम बिचार ११
रची सरस शब्दावली, राग सहित रुचिकार।
ज्ञान योग वैराग पुनि, प्रेम भक्ति भंडार १२
पुनि परिशिष्ट सुभाग में, दशम स्कन्धनुसार।
श्रीकृष्ण लीला ललित, अनुपम युगल विहार १३
वानी श्रीमहाराज की, सद्ग्रन्थन को सार।
सरस माधुरी जो पढ़े, मिलें पदारथ चार १४

इति ॥

श्रीमन्निकुञ्जविहारिणे नमः ॥

श्रीमद्भक्तिसागरग्रन्थ की महिमा तथा माहात्म्य के वर्णन में ॥

श्रीसरसमाधुरीजी रचित

कवित्त

ग्रन्थ भक्तिसागर उजागर सब विश्वबीच बांचत हैं जाको कविकोविद अरु ज्ञानी हैं। साधु सन्त बुद्धिमन्त विद्वज्जन विविधि भाँति मनन करत हिये धरत योगी यती ध्यानी हैं॥ त्यागी वैरागी जन-पढ़त ताय चितलगाय चतुर्वर्गदायक यह निश्चय कर जानी हैं। कहे सरसमाधुरी सुनाय सब सन्तन को याके अर्थ समझे होत जीवनमुक्त प्रानी हैं॥ १ ॥

अष्टादश पटरु चार चौदह अरु नव की सार ऐसी यह अनूप श्याम चरणदास बानी हैं। भारत अरु गीता पुनि भागवत भरी है यामें रामायण सार रसिकजननने पिछानी हैं॥ संस्कृत भाषादिक पुस्तक बहु विश्वविदित उक्ति जुक्ति सारी याके बीच में समानी हैं। कहे सरसमाधुरी सुनाय सब सन्तन को एक एक बात याकी अनुभव कर प्रमानी हैं॥ २ ॥

नाम रूप लीला धाम सेवा श्री श्यामा श्याम सबही की सुलभरीति बानी में बखानी हैं। सन्त अरु महन्त गुणवन्त बुद्धिवन्त सकल सर्वोपरि रहस्य रीत मानी रससानी हैं॥ याही को गावें अरु सुनावें सब शिष्यन को या समान सुलभ सरल और न जगजानी हैं। कहे सरसमाधुरी यह सबकी मन हरनहार महिमा अपार अरु भक्ति मुक्ति दानी हैं ॥ ३ ॥

जलाली जमाली ज़िक्र सुल्तानुल् अज़कार फ़ना बक़ा सिफ्त सब ग्रन्थ में बखानी हैं। ज़ात अरु सिफ़ात की प्रकाश

करी सर्वबात नूर अरु ज़हूर सब बरनें रहमानी हैं ॥ फ़ना फ़िल्लाबाद में बक़ा की बुनियाद कही आबिद मक़बूल खुदा उनहीने जानी हैं। कहे सरसमाधुरी सुनाय सब फ़ुक़रन को इश्क़ है हक़ीक़ी यामें शग़ल सुन्हानी हैं ॥ ४ ॥

सम्प्रदाय सर्वधर्म आश्रम अरु वर्णकर्म वैष्णवता मुख्य मर्मया में जनाये हैं। कर्मयोग ज्ञानयोग सांख्ययोग राजयोग अष्टअंगयोग भक्तियोग दरसाये हैं ॥ मायाजीव ईश्वर ये तीन तत्त्व कहे अनादि ईश के अधीन माया जीव कहि गाये हैं। कहे सरसमाधुरी कृपाल श्याम चरणदास शुक मुनि प्रसाद गुप्तभेद प्रगटाये हैं ॥ ५ ॥

खण्डन अरु मण्डनकी उक्ति युक्ति कथी नाहिं श्रुति पुराण सारधर्म सबही कहि गायो है। जितने मत पंथ प्रगट देखियत जगत माहिं ग्रन्थ भक्तिसागर यह सबके मन भायो है ॥ बाँचें कर मन विचार रहस्यरीति हृदयधार परमानँद सुख प्रतक्ष उनहीने पायो है। कहे सरसमाधुरी सुनाय सब भक्तन को भारत भूमि में प्रताप अतिशय कर छायो है ॥ ६ ॥

ज्ञानिनने पर्मज्ञान ध्यानिनने पर्मध्यान योगिनने पर्मयोग याहि पढ़े पायो है। परम बैराग प्राप्त भयो है बिरागिन को अनुरागी भक्तन के प्रेम हाथ आयो है ॥ आरत जिज्ञासू अरु मुमुक्षु अधिकारिन के इच्छा अनुसार समाधान उर छायो है। कहे सरसमाधुरी यह अतिही उपयोगी ग्रन्थ सबही मत पंथ याकी बानी सुन लुभायो है ॥ ७ ॥

निर्गुन अरु सगुन पुनि सर्वोपरि रहनि यामें निराकार अरु साकार सुलभ कहि सुनायो है। ओत प्रोत अगुन सगुन सूरज अरु धूप सदृश भिन्नभेद भावरूप एक कर दिखायो है ॥ जैसी जाके चाह ताहि तैसीही प्राप्तिहोत यामें

नहिं संशय यह भेद समझायो है । कहे सरसमाधुरी सुनाय सब भक्तनको रस समुद्र सगुन ब्रह्म पुरुपोत्तम बतायो है ॥ ८ ॥

छहों मुक्तिमारग की रहस्य कही याके बीच प्रेम को परत्व सर्व उत्तम दृढ़ायो है । प्रेम के समान नहीं और कुछ बतायो आन ज्ञान ध्यान योगादिक तुच्छ दरसायो है ॥ आदि मध्य अन्त भक्तिसागर में भलीभाँति सबको सरताज प्रभु प्रेम को जनायो है । कहे सरसमाधुरी सुनाय सब रसिकनको जिनने कुछ पायो एक प्रेमही से पायो है ॥ ९ ॥

बिना पढ़े वेदनके वेदतत्त्व जानपरे बिना शास्त्र श्रवण किये समझे बात सारी है । बिना किये जोगके जुगती सब जानलेव। बिन बिराग त्याग भेद पावत नर नारी है ॥ बिना किये तीरथ के तीरथफल प्राप्तहोत बिना जाप अजपा की उक्ति उर बिचारी है । कहे सरसमाधुरी सुनाय सब सन्तनको बांचे भक्तिसागर होत भवसागर पारी है ॥ १० ॥

श्रीहरिके सुमिरनमें सुरति निरति लगे जाय नैनन में बसे आय ध्यान प्रिया श्यामको । अमरलोक लीला को अनुभव हियमाहिं फुरे दरसन लगजाय तात्काल रूप धामको ॥ रासादिक लीलाकी ललित रीति जानपरे हिये माहिं भरे आय प्रेम अष्ट जामको । कहे सरसमाधुरी सुनाय सब भक्तन को ग्रन्थ भक्तिसागर है रसिकन के कामको ॥ ११ ॥

सरल और सुगम देश भाषा सो भूषित है अतिही निर-दूषित यह बानी परम पावनी । पढ़ते ही अक्षर के अर्थ ज्ञान परेजान पर्मभूल सबही संदेह की नशावनी ॥ प्रेम प्रगटावनी रंगभक्ति की बढ़ावनी है अतिही सुहावनी सन्त भक्तन मन-भावनी । हरि रस सरसावनी छवि दम्पति छकावनी सरस-

माधुरी रसामृत को रसिकन को ध्यावनी ॥ १२ ॥

गृहस्थ अरु विरक्त वानप्रस्थ संन्यस्तहू की जुदी जुदी रहनि गहनि जुक्ति कर जनाई है। आश्रम अरु वर्ण धर्म शास्त्रनमें सकल कहे उनहूकी करनरीति उत्तम बताई है॥ ऊँच नीच कर्मनके फलन की अनेकगति जैसी प्रासहोत तैसी खोलकर दिखाई है। कहे सरसमाधुरी रहस्यभरी वानी यह वांचें जो ग्रन्थ तिन्ह सुगम जानपाई है॥ १३ ॥

ज्ञाताज्ञेय ज्ञान अरु ध्याता ध्येय ध्यानहू की त्रिपुटी के मिटे शुद्ध आत्मा बताई है। क्षर और अक्षर निहअक्षर वखान किये अक्षरातीतरीत बानीमें गाई है॥ पदस्थ पिंडस्थ रूपस्थ रूपातीत ध्यान शून्य में समावन की बात समझाई है। परम है प्रकाशमान पटतर नहि होत भान परमतत्त्व की पिछान सरस कहि सुनाई है॥१४॥

सतयुग अरु त्रेता पुनि द्वापर कलियुग कराल तिनहूं की रहनि गहनि रीति सर्व गाई है। जैसी करे करनी ताहि तैसीही भरनी है टरनी है नाहिं यही दृढ़कर दरसाई है॥ जीतन जमराज काल काटन को माया जाल श्रीहरिगुन गान रीति ग्रन्थमें बताई है। कहे सरसमाधुरी सुसाज वाज सहित भजन करे ताहि मिलें आय राधिका कन्हाई है॥ १५ ॥

सर्व से सुलभ कलिबीच सार कीरतन है याहीको करके कह्यो हरिको रिझावना। जोग जग्य ज्ञान ध्यान तीरथ के न्हानहूते उत्तम है यही सही केवल गुण गावना॥ भजन के कियेते भवसागर तरजात तुरत निश्चय कर याहीतें परम धाम पावना। कहे सरसमाधुरी सु सेवाकर दम्पति की छवि में नित छके छुटे आवन अरु जावना॥ १६ ॥

इति॥

श्रीमन्निकुंजविहारिणे नमः ॥

श्रीमत् श्यामचरणदासाचार्यचरितामृत ॥

❀ श्री सरसमाधुरीजी रचित ❀

(दोहावली)

श्रीसतगुरु बलदेव प्रभु, चरणन शीश नवाय।
श्यामचरण के दास को, चरितामृत कहों गाय १
बैठि हिये मम श्रीगुरु, करि हैं आय सहाय।
सरस माधुरी गुरु कृपा, सबही विधि बनजाय २
सम्वत सत्रहसौ गिनो, ऊपर साठ पिछान।
प्रगटे भार्गववंश में, कृष्ण अंश प्रभु आन ३
शोभनजी के कुल विषै, अष्टम पीढ़ी अन्त।
मुरलीधर घर प्रगट भे, श्यामरूप धर सन्त ४
स्वप्न माहिं दर्शन दिये, कुंजो को श्री श्याम।
तुमरे प्रगटूं पुत्र हो, सुनहु मातु सुखधाम ५
भादो शुक्ला तीज को, कुंजो कूख मझार।
बालनाम रणजीत धर, प्रगटे कृष्ण मुरार ६
जन्म समय अस्थान में, भयो अधिक उजियार।
अनहद धुनि वाजे वजे, छई सुगन्धि अपार ७
नाम ग्राम डहरे विषै, घर घर मंगल चार।
विविधि वधाई गुनिनमिल, गाई भली प्रकार ८
पंच वर्ष की वैसमें, सरिता तट शुकदेव।
गोदलिये रणजीत को, प्यार कियो गुरुदेव ९
गये वर्ष उन्नीस में, गंगातट शुकतार।
साक्षात् दर्शन दिये, शुक मुनि व्यास कुमार १०

गुरुदीक्षा दी विधि सहित, मंत्र सुनायो कान ।
योग ज्ञान वैराग दे, किये शिष्य हित मान ११
श्री तिलक मस्तक रचो, श्रीतुलसी शुचि माल ।
गल में बांधी प्रेमसों, कीन्हैं शिष्य निहाल १२
नौधा प्रेमा अरु परा, त्रिविधि भक्ति दइ दान ।
तारण तरण बनायके, कीने आप समान १३
आज्ञा दी श्री शुकमुनी, जगमें भक्ति प्रचार ।
विमुखन हरि सन्मुख करो, निस्तारो संसार १४
सतगुरु आज्ञा शीशधर, आ दिल्ली अस्थान ।
रचि मन्दिर राजे जहां, कियो मानसी ध्यान १५
योग युक्ति चौदह वरष, करी समाधि लगाय ।
रूप अनेकन धार प्रभु, भारत दियो चिताय १६
राजा रानी छत्रपति, तिनकी करी न चाह ।
चरणदास हरि रंग रंगे, सबसों बे परवाह १७
ईश्वरीय परिचय अमित, दिये भक्ति हरि हेत ।
किये मनोरथ सबन के, पूरण प्रेम समेत १८
बादशाह दिल्ली तखत, ठाड़े रहे हुजूर ।
चरणदास के चरण की, मस्तक धारी धूर १९
अष्टसिद्धि नवनिद्धि सब, खड़ी रही कर जोर ।
श्यामचरणके दास प्रभु, लखें न तिनकी ओर २०
शिष्य अनेकन कर प्रभो, तारन तरन बनाय ।
चार धाम सातो पुरी, तीरथ दिये पठाय २१
श्री भगवत की भक्ति को, भानु दियो प्रगटाय ।
भर्म निशा सोते हुए, दीने जीव जगाय २२
नर नारी संसार के, करन लगे हरि भक्त ।

पगे प्रेम प्रीतम प्रिया, नशी बासना जक्त २३
कलियुगके कलमष सकल, दीने सबहि मिटाय ।
चरणदास प्रभु कृपाकर, बिगरी दई बनाय २४
कलियुग छायो जक्त में, मिटी वेद मरयाद ।
उबरे अनगिन जीव जग, श्री चरणदास प्रसाद २५
कलियुग सतयुग समकियो, दियो नाम हरि दान ।
चरणदास जग जियको, प्रेम करायो पान २६
कलियुग में सत कर्मको, कियो बहुत बिस्तार ।
चरणदास गुरु भक्ति दे, निस्तारो संसार २७

श्रीवृन्दावनगमनवर्णन ॥

सगुण ब्रह्म सर्वज्ञ प्रभु, सर्व व्यापी श्याम ।
पुरुषोत्तम परमात्मा, श्रीवन जिनको धाम २८
सतचिद्घन आनन्दमय, जिनको अद्भुत रूप ।
ध्यानधरत विधि शिवसदा, तिन पद पद्म अनूप २९
श्याम चरण के दास प्रभु, आचारज अवतार ।
दिल्ली से चलकर गये, वृन्दा विपिन मझार ३०
हगन चटपटी दरस की, निरखन नन्दकुमार
विरह विथा व्याकुल महा, तनकी सुधिन सँभार ३१
पहुंचे सेवा कुंज में, निरखी अनुपम ठौर ।
सब कुंजनतें अति सरस, तेहि समान नहिं और ३२
सेव्य जहाँ श्रीराधिका, सेवक श्रीनँदलाल ।
याते नाम प्रसिद्ध जग, सेवा कुंज रसाल ३३
लता ललित छाई जहाँ, छवि को नाहिं न पार ।
कुसुमित तरु वेली छई, भृंग करत गुंजार ३४

द्रुम बहु नाना भांतिके, छाई बेलि वितान ।
तिनमें पक्षी विविधिविधि, करत युगल गुणगान ३५
सीतलमन्द सुगन्ध मय, रोचक बहत समीर ।
ऋतुबसन्त सन्तत रहत, बोलत कोयल कीर ३६
रैनि माहिं तहाँ छिपरहै, श्याम चरण के दास ।
निज मन्दिर बारहदरी, जा बैठे जेहि पास ३७
करनलगे तहां भावना, मूंदलिये निज नैन ।
रोमांचितहो पुलक तन, कहे बिरह मुख बैन ३८
हा राधे मम स्वामिनी, हे प्रीतम घनश्याम ।
वेगि दरश दे युगल वर, पूरणकर मन काम ३९
हा हा छबि दीजै दिखा, दास मोहिं निज मान ।
नाहीं तन तज जायगो, तात्काल यह प्रान ४०
विरह हूक हिय में उठी, भये महा बेहाल ।
दृगन अश्रुधारा बही, तनकी सुधि न सँभाल ४१
अन्तरयामी युगलवर, रसिकन के प्रिय प्रान ।
विरह विथा निज दासकी, अतिशय निज मनमान४२
चरणदास आये यहां, हमरे घर महमान ।
प्रगट होय दे निज दरस, करें सन्त सन्मान ४३
रसिक हमारे प्राण धन, हम रसिकन के प्रान ।
प्रेमिन के समतुल हमें, और प्रिय जग आन ४४
अर्धनिशा बीती तबहि, प्रगटे प्यारी लाल ।
भक्तन के मन भावने, करुणासिन्धु कृपाल ४५
गौरश्याम अभिराम दोउ, अनुपम नवलकिशोर ।
ललितादिक अनगिनअली, संगलिये सिरमौर ४६
नील पीत पट सोहने, नखशिख सजि शृंगार ।

मुकुट चन्द्रिका शीशपर, छविको नाहीं पार ४७
युगल चन्द्रमुख चन्द्रिका, छाई मध्य निकुंज ।
दमकत चमकत अंगद्युति, अनुपम छविकी पुंज ४८
चंचल चितवनि रसभरी, मन्द मधुर मुसकान ।
अलक कपोलन छुटरही, अधर ललाई पान ४९
बेसर और बुलाक शुचि, नासा शोभा देत ।
निरखतही निजजननको, मनमानिक हरि लेत ५०
गल बैयां दीने दोऊ, मदन मनोहर लाल ।
प्रीतम कर वंशी लसी, प्रिय कर कमल रसाल ५१
युगलचरण वारिजबरण, छवि कुछ कही न जाय ।
पायल घुँघरू सजि रहै, छुम छुम शब्द सुनाय ५२
उठ आतुर चरणन परे, चरणदास तेहि वार ।
कृष्ण भुजनभर हियलगा, कियो प्रेम अति प्यार ५३
कुँवरि किशोरी करि कृपा, प्रेम मंजरी जान ।
हस्तकमल मस्तक धरो, दियो प्रेम वरदान ५४
पुनि दोऊ प्रीतम प्रिया, चरणदास लै संग ।
जाय विराजे कुंज में, हिलमिल हर्ष उमंग ५५
हँसिहँसि रसवतियांकरन, लागे श्याम सुजान ।
चतुर शिरोमणिलाड़िली, नागरि नेह निधान ५६
कहनलगे मुख मृदुवचन, आये प्रीति पिछान ।
कहा करें तुम पहुनई, अरु सेवा सन्मान ५७
चरणदास दोउ जोरकर, या विधि बोले बैन ।
सेवादे निज पद कमल, निकट रखो दिन रैन ५८
हँसि बोले तब श्रीहरि, मधुर वचन अभिराम ।
जगमें भेजे जिस लिये, सो न किये कुछ काम ५९

आचारज बपु दे तुम्हें, भक्ति प्रचारन काज।
भेजा है संसार में, सुनहु भक्त महराज ६०
योगध्यान तज कीजिये, नौधा भक्ति प्रचार।
प्रेमपरायण जीव हो, उतरे भवनिधि पार ६१
प्रेमभक्ति प्रगटाय जग, जीवन को दे दान।
करो कृतारथ जक्त को, मेरे जीवन प्रान ६२
कछु इक दिन बीते तुम्हें, ले निजधाम बुलाय।
रखें निरन्तर निकट नित, सुन प्यारे चितलाय ६३
वचन कहे श्रीकृष्ण ने, सुने श्याम चरन्दास।
बिछुरन बिरह वियोगलखि, अतिशय भये उदास ६४
गदगद बानी होगई, नैन बही जलधार।
सुबकीले रोवन लगे, सन्मुख कृष्ण मुरार ६५
हाय हरी कैसी करी, धीर धरी नहिं जाय।
तुम सब समझत लाड़िले, बिछुरन दुख अधिकाय ६६
तुमरो श्रीमुख चन्द्रमा, मेरे नयन चकोर।
बिनदरशन जीवन नहीं, सुनिये नवलकिशोर ६७
सघन सजल गिरि आपहो, मैं हों तुम्हरा मोर।
सुखी होंहु सुन साँवरे, बंशीधुनि घन घोर ६८
चरण कमलवत आप के, मधुकर है मन मोर।
तहां बसनको चित चहै, अन्त नहीं कहिं ठौर ६९
स्वामी मेरे आप हो, मैं सेवक निज दास।
उत्कंठा अति रहन की, सदा तुम्हारे पास ७०
स्वाति बूंद तुम हो हरी, चातक मोहिं पिछान।
रूप सुधारस पान बिन, तलफत मेरे प्रान ७१
आप पारधी प्राण धन, मोहिं मृगा लो मान।

मारो निस्तारो तुमहि, मोको गति नहिं आन ७२
गंगाजल सम श्याम तुम, मैं हों तुम्हरा मीन ।
तुम माता मैं पुत्रवत, समझो सत्य प्रवीन ७३
तुम गैया मैं बत्स सम, मैं पतंग तुम दीप ।
यही चाह चित में बसे, निशिदिन रहों समीप ७४
कहनलगे श्रीकृष्ण तब, सुनहु श्याम चरन्दास ।
तुमरे हिय माहीं रहै, हमरो सदा निवास ७५
सन्त हमारी आतमा, यामें नहिं संदेह ।
रोम रोम में रमि रहै, ज्यों बादर में मेह ७६
आज्ञा जो हमने दई, लीजे प्यारे मान ।
भक्ति प्रचारो भक्त में, करो जियन कल्यान ७७
जो आज्ञा करिहों यही, कही चरणही दास ।
देखो चाहूँ सांवरे, सुन्दर रास बिलास ७८
ह्वै प्रसन्न बोले लला, मूंदो अपने नैन ।
आज्ञा दूँ तब खोलियो, हे प्रीतम सुख दैन ७९
मूंदे तबहीं नैन निज, चरणदास तेहि बार ।
बोले पुनि श्रीश्यामघन, देखो पलक उघार ८०
दृगन खोल देखन लगे, तेजोमय उजियार ।
रत्न जटित अवनी लखी, जगमग जोति अपार ८१
ऋतु बसंत संतत तहाँ, अनगिन बाग बहार ।
फूले फूल अनेक जहाँ, लहरत लता अपार ८२
फुलवारी क्यारी बनी, न्यारी नाना रंग ।
तरुन माहिं बहु बरन के, बोलत बिविधि बिहंग ८३
बीच बिबिधि कुंजस्थली, छाई वेलि बितान ।
तिन में सेवा हित रहैं, सहचरि सखी सुजान ८४

ठौर ठौर सुंदर सुखद, भरे सरोवर नीर ।
कमल खिले वहु रंग के, रोचक वहत समीर ८५
बँगला अरु बारहदरी, बनी अनेकन और ।
तिन पर सूवा सारिका, क्रीड़त भोरी मोर ८६
मध्य महारमनीक इक, रतन जटित सुढार ।
बन्यों चौतरा अति सरस, मंडल गोलाकार ८७
चौंसठ खम्भा तासु पर, जटित जवाहर लाल ।
पचरँग चुन्नी चमकनी, बूंटा वेलि सुढाल ८८
चौंसठ खम्भा पर बनो, रंग महल रस खान ।
मणि माणिक चहुँ दिसि जड़े, जगमग जोति महान८९
चौंसठ कलश सुहावने, ध्वज पताक धजदार ।
लहरत फहरत तड़ित सम, दमकत द्युति मनहार ९०
चौंसठ खम्भा मध्य में, विछी विछायत खूव ।
नरम रेशमी गलीचा, अतिशय सरस अजूव ९१
गुलदस्ता सुंदर सजे, सुमन अनेकन रंग ।
महल महक छाई महा, निरखि दृगन गति दंग ९२
चँदुवा पिछवाई सजी, सुवरन बूँटे दार ।
मुतियन झालर लग रही, जगमग जोति अपार ९३
सप्त रंग की मणिन के, शोभित सुन्दर झार ।
सजे सुहावन महल में, दमकत द्युति अपार ९४
स्वर्ण मई दीवार में, चारों ओर सुढार ।
पन्ना हीरालाल मणि, जड़रहै विविधि प्रकार ९५
सिंहासन सुन्दर सजो, तापर छत्र सुहान ।
मसनद तकिया मन हरन, सुंदरता की खान ९६
राज रहै तापर तहाँ, युगल बिहारी लाल ।

चहों ओर ठाड़ी सखी, मनहुँ प्रेम की माल ९७
चमर मोर छल अरु छरी, लिये खरी कोइ वाल ।
इतरदान लीने कोऊ, कोउ कर लिये रुमाल ९८
पानदान लेकर कोऊ, कोउ फूलन की माल ।
कोउ दरपन अरपन करत, छबिलखि होत निहाल ९९
सन्मुख श्यामा श्याम के, खड़े सखिन के वृन्द ।
इकटक निरखत युगलको, मनहुँ चकोरी चंद १००
सखी रास रस करन को, वजवत बीन मृदंग ।
कोउ सितार कोउ सरंगी, कोउ बजात मुहचंग १०१
मधुर मजीरा कोउ अली, लिये बजावत संग ।
कोऊ अलापत सप्तस्वर, हिय में भरी उमंग १०२
कोउ उघटत सांगीतअली, नृतत गति नव ढंग ।
भाव बतात नचात दृग, लचकावत कटि अंग १०३
जै जै जुगल किशोर कहि, कोऊ रही हरपाय ।
गोदन भर अति मोद मन, सुमन रही वरपाय १०४
चरणदास तहां अपन का, देखे सखी सरूप ।
नव यौवन सुकुमार तन, नख शिख सुंदर रूप १०५
सिंहासन के सन्निकट, रही दोऊ कर जोर ।
तब हँसि बोले श्री हरिः, चितय चपल दृगकोर १०६
अब नीके लखि लीजिये, लीला रास बिलास ।
सुख रासी दासी चरन, आव हमारे पास १०७
चरणदासि कर गहि उठे, श्री मत गोपीनाथ ।
पुनि लालन निरतन लगे, प्राण प्रिया लै साथ १०८
वाम अंग श्री राधिका, दहिने चरणहिदासि ।
मध्य बिहारी लाल जू, नृतत उमँगि हुलासि १०९
चहों ओर आली नचत, मंडल गोल बनाय ।

निरखत छबि रस माधुरी, हर्ष न हृदय समाय ११०
लेत स्वल्पगति लाड़लो, बहुबिधि भाव बताय ।
नैन नचा लचकाय कटि, ताथेइया मुख गाय १११
अंग संग दै अधर रस, प्यावत प्रेम बढ़ाय ।
चरणदासि को श्यामघन, लेत भुजन भर धाय ११२
मुकट लटक मन को हरत, अलक रही वलखाय ।
छुटी कपोलन लाल के, चित को लेत चुराय ११३
मकराकृत कुंडल श्रवन, नाक बुलाक सुढार ।
मोती मटकत अधर पर, अजब सुराहीदार ११४
पाजामा कछनी ललित, पीत रंग मनहार ।
नख शिख लो भूषन सजे, गल फूलन के हार ११५
रंग रँगीली लाड़िली, मदन मनोहर लाल ।
नटवर गति ले ले नई, रस बस कीनी बाल ११६
श्री राधे रासेश्वरी, सखियन की सरदार ।
दरसायो चरन्दासि को, नित नवरास बिहार ११७
पुनि राजे दम्पति तबहि, सिंहासन पर जाय ।
चरणदासि को कर कृपा, लइनिज निकट बुलाय ११८
हँसि बोले श्री हरि बचन, करके प्रेम अपार ।
चरणदासि जा जक्त में, भक्ति करो विस्तार ११९
तबहि दासि दोउ जोर कर, आज्ञा सिर धर लीन ।
परिक्रमा करके बहुर, चरण प्रणाम सुकीन १२०
नैन मूंदि निज लीजिये, कही कृष्ण भगवान ।
दृग मूंदे तब दास ने, ताही समय पिछान १२१
पुनि अकाशबानी भई, चक्षु खोल चरन्दास ।
दृग खोलतही आ गये, बंशीवट के पास १२२
संतरूप आपन लखो, श्याम चरन के दास ।

बिछुरन दम्पति मन समझ, अतिशय भये उदास १२३
धरनि गिरे व्याकुल विरह, देह दशा विसराय ।
नैनन जल धारा बही, करत हाय हरि हाय १२४
इसी भांति बीतो दिवस, होय गई पुनि रैन ।
प्रगट भये शुकदेव मुनि, निजशिष्यको सुखदैन १२५
श्री सतगुरु नैनन निरखि, उठ करि चरण प्रणाम ।
व्याकुल हो बिलपन लगे, विनश्रीश्यामाश्याम १२६
विनय करी कर जोर के, दम्पति दरस कराय ।
नाहीं तो तन त्यागि के, जीव निकस यहजाय १२७
श्री शुक मस्तक शिष्य के, धरो कृपा कर हाथ ।
वंशीवट नीचे लखे, श्याम राधिका साथ १२८
गलबैंयां दीने युगल, नवल लाड़िली लाल ।
मंद मंद मुसकात मुख, रूप राशि छवि जाल १२९
श्री दम्पति के दरस कर, छके श्याम चरन्दास ।
रोम रोम में प्रगट भयो, परमानंद हुलास १३०
शिष्य के मस्तक से तभी, मुनि लियो हाथ उठाय ।
दृष्टि परे दम्पति न तब, अचरजभयोअधिकाय १३१
श्री शुक मुनिचरनन परे, श्यामचरन के दास ।
धन्यवाद श्री गुरुन को, कीनो सहित हुलास १३२
पुनि गुरु शिष्य दोऊन में, ज्ञान गोष्टि सम्वाद ।
रह्यो रैन में रंग अति, उर उपजो आह्लाद १३३
प्रात होत शुक मुनि कही, सुनो श्याम चरन्दास ।
दिल्ली जाके तुम करो, श्री हरि भक्ति प्रकास १३४
शिष्य करी तब दंडवत, श्री गुरुचरनों माहिं ।
शीश उठा देखन लगे, शुक मुनि दरसे नाहिं १३५
श्रीशुक मुनि धर ध्यानउर, श्यामचरन के दास ।

बृन्दाबन से गवन कर, दिल्ली कियो निवास १३६
रहन लगे आनन्द सों, कृष्ण ध्यान गलतान।
नर नारिन उपदेश दे, भजन करें भगवान १३७
दूर देश रामत करन, जावें श्री महाराज।
भक्ति प्रचारें जक्त में, परमारथ के काज १३८
रूप अनेकन धार के, भक्तन करी सहाय।
जल थल देश बिदेश में, चरणदास प्रगटाय १३९
बैष्णव नागरिदास को, जगन्नाथ निज रूप।
दरसायो करि के कृपा, सुंदर अधिक अनूप १४०
बैजनाथ विप्रने लखे, श्री महाराज सुजान।
चरण प्रछाले गंगजल, शिष्य ह्वगए अस्थान १४१
बैष्णव परमानंद की, मनसा पूरन कीन।
कृष्ण रूप निज ह्वै प्रभो, दर्श दयानिधि दीन १४२
जोग जीत गुरु छोन को, दरसायो निज धाम।
अमर लोक सँग ले गये, जहां श्री राधे-श्याम १४३
राम सखी सह वपु गई, श्याम सुँदर के संग।
जा पहुँची निज धाम में, जहां रास रस रंग १४४
श्री मति कुंजो मात कों, दरस कराये श्याम।
तन को तज के फिर गई, अमरलोक निजधाम १४५
बिबिचारी जय करन को, कियो कृतारथ जाय।
अमर लोक में ले गये, दम्पति दरस कराय १४६
स्वर्ग प्रवाही गंगजल, सेवक दिये न्हवाय।
जय जय श्रीमहाराज की, सकल उठे मुख गाय १४७
साधू परमानंद को, डसो सर्प ने आय।
श्यामचरण के दास प्रभु, लीनो तुरत जिवाय १४८
दो कन्या पैदा हुई, सेवक के घर आन।

निज प्रभुता सों पुत्र किए, चरणदास भगवान १४६
रक्षा कीनी बैल सों, शिष्य प्रेम गलतान ।
घोड़े से लीनो बचा, निरमलदास सुजान १५०
जमुना में न्हावत हुते, मुक्तानंद सु संत ।
ग्राह ग्रसे लीने छुड़ा, चरनहि दास तुरंत १५१
दूसर आतम राम को, दीने नर्क दिखाय ।
भय मानो यमदूत लखि, चरण शरणलइ आय १५२
बैठे जमुना नाव में, डूबन लागे संत ।
ध्यान धरो महाराज को, दिये उबार तुरंत १५३
छै महिने पहिले कह्यो, आवन नादिरशाह ।
परचय पा चरनन परे, शाह मुहम्मदशाह १५४
माना नादिरशाह ने, भक्त राज इर्शाद ।
मुरशद पीर पिछान के, कीना निज दिलशाद १५५
खिलचे आये क़तल को, कियो तरवार प्रहार ।
हाथ हुवे जड़ सबन के, तब मन मानी हार १५६
नौधा प्रेमा पराको, निशिदिन बरसे रंग ।
सदा होइ हरिकीरतन, बाजत बीन मृदंग १५७
सेवक साधू सन्त सब, रहैं ध्यान लवलीन ।
युगल लगन में मग्ननित, प्रेम सिंधु मन मीन १५८
भक्ति हरी को कर दियो, श्री महाराज प्रचार ।
भारत में करने लगे, प्रेम भक्ति नर नार १५९
सर्परूप श्री हरी ने, पार्षद दिया पठाय ।
आवो प्यारे धाम अब, दियो संकेत जनाय १६०
तब निज सन्तनको बुला, बोले श्री महाराज ।
हमजावें हरिधाम को, कर मन वांछित काज १६१
भक्ति भजन करते रहो, सुमरो श्री हरिनाम ।

हरि गुरु उर विश्वासरख, रहो सदा निष्काम १६२
तुम सब तन तजि आयहो, निश्चय मेरे धाम।
प्रेम प्रीति कर प्यारसों, बोले गुरु गुण ग्राम १६३
श्री हरि आज्ञा सिरधरी, करी तयारी धाम।
दशम द्वार निज पुरगये, जहाँ श्रीराधे श्याम १६४
सम्बत अठारह सौ हुते, ऊपर उन्तालीस।
देहत्याग चरन्दास प्रभु, गये धाम जगदीस १६५
अस्सी बर्ष भूतल बिषे, राजे श्री महाराज।
सरसमाधुरी भक्ति हरि, जक्त प्रचारन काज १६६

* श्रीमत्श्यामचरणदासाचार्यमहिमा *

चरणदास के चरण में, जो जन आये धाय।
सूरज मण्डल बेधकर, बसे अमरपुर जाय १६७
भेजे श्यामा श्याम ने, करन जगत उद्धार।
चरनदास ने कृपाकर, किये पतित भवपार १६८
चार पदारथ प्रेम सो, सबको कीने दान।
चरणदास ने दयाकर, कियो जक्त कल्यान १६९
नवधा प्रेमा अरु परा, दियो भक्ति उपदेश।
किये कृतारथ जीवजग, पार न पावत शेश १७०
ज्ञान दियो ज्ञानीन को, जोगिन को दियो जोग।
भक्तनको दइ भक्ति हरि, मेटे भव दुख रोग १७१
ज्ञानी विज्ञानी बड़े, जोगिन के सिरताज।
रसिका चारज मुकुटमणि, चरणदास महाराज १७२
दयावान दाता बड़े, परदुख भंजन हार।
पतितन के पावन करन, चरणदास अवतार १७३
सब सद्गुण सम्पन्न हैं, सब लायक महाराज।

सदा सहायक जनन के, मण्डन सन्त समाज १७४
लोक और परलोक के, सुखदायक सिरमौर ।
व्यापिरहै सब विश्व में, भीतर बाहर ठौर १७५
भक्तन के मन भावने, रसिकन के रिझवार ।
प्रेमिन के प्रभु प्राण प्रिय, चरणदास सरकार १७६
शिष्यन के संशय हरन, सेवक जन प्रतपाल ।
आश्रित जन रक्षा करन, श्री रणजीत दयाल १७७
प्रगट भये संसार में, दूर करन भुव भार ।
धर्म सनातन भागवत, चहूँ दिशिकरन प्रचार १७८
जिज्ञासू जन मुमुक्षु, चरण शरण लइ आय ।
चरणदास प्रभु कृपाकर, श्रीहरि दिये मिलाय १७९
सेवा में ठाढ़ी सदा, अष्टसिद्धि नव निद्धि ।
चरणदास दाता बड़े, जग में भए प्रसिद्धि १८०
रंकन को राजा किये, दिये मुल्क अरु माल ।
चरणदास चरणन परे, सो सब हुवे निहाल १८१
भूत भविष्य वर्तमान के, त्रिकालज्ञ महाराज ।
चरणदास की दयासों, सुधरे सब के काज १८२
दै दै परचय विविधिविधि, कलिजिय किये सचेत ।
चरणदास विश्वास दे, प्रगटायो हरि हेत १८३
भगवत धर्म प्रचार हित, लियो अवनि अवतार ।
चरणदास तारण तरण, अधम उधारण हार १८४
चार धाम सातोंपुरी, तीरथ क्षेत्र सुठौर ।
चरणदास बहु रूपधर, रमें रसिक सिर मौर १८५
घर घर सेवा श्याम की, राग भोग रसखान ।
चरणदास की दया सो, भक्ति करी भगवान १८६
पुरुषोत्तम परमात्मा, अवतारी जगदीश ।

चरणदास दृढ़ उपासना, थापी बिस्वा बीश १८७
रसिक अनन्यन की रहनि, रस उपासना भाव ।
चरणदास सबही कहै, सुन उपजै चितचाव १८८
पापी अधम अनेक को, कियो जक्तसों पार ।
चरणदास सन्मुख हरी, पहुँचाये कर प्यार १८९
बहु जीवनको वपु सहित, कृष्ण ले गये धाम ।
चरणदास की दया सों, मिलो महल बिश्राम १९०
बहुतन को संसार में, श्री हरि दिये मिलाय ।
चरणदास ने सबन की, बिगरी दई बनाय १९१
आचारज को रूप धर, जग में प्रगटे आय ।
चरणदास निज कृष्णहो, दरसन दिये कराय १९२
निर्धन जनको धन दियो, पुत्र हीन सन्तान ।
सबको मन वांछित कियो, चरणदास भगवान १९३
बंधन में जो जन परे, तिनको दिये छुड़ाय ।
मृतक जिवाये बहुत से, महिमा कही न जाय १९४
ज्ञान योग वैराग को, जग में कियो प्रचार ।
कीनो भगवत धर्म को, चरणदास बिस्तार १९५
ग्रन्थ भक्तिसागर सरस, बानी पांच हजार ।
महाराज बरनन करी, प्रेम भक्ति भंडार १९६
जोग ज्ञान वैराग को, वरनो विविधि प्रकार ।
अरु गायो निज धामको, अनुपम नित्य बिहार १९७
खंडन मंडन मतन को, कियो न श्री महाराज ।
गीता अरु भागवत मत, बिरचो धर्म जहाज १९८
जो वांचें नित नेमसों, बानी परम पुनीत ।
पावे परमानन्द सुख, धाम जाय जग जीत १९९
सुन समझै दृढ़ उरधरे, करनी करे जु कोय ।

लहै पदारथ चार सो, श्री हरि वल्लभ होय २००
वानी रससानी सुनत, नास्तिकता होइ दूर ।
आस्तिकता उपजे अधिक, हरि गुन हिय भरपूर २०१
संप्रदाय शुकदेव मुनि, इष्ट राधिका श्याम ।
चरणदास वृन्दा विपिन, वरणन कीनो धाम २०२
नव निकुंज व्रजकी अमित, लीला के रस भेद ।
दिय जनाय निज जननको, कियो सकल भ्रम छेद २०३
दिव्य मानसी महल की, टहल करन की रीत ।
श्यामचरण के दास ने, प्रगट करी सह प्रीत २०४
अली मंजरी सहचरी, सखी सहेली भाव ।
ग्रन्थ भक्ति रस मंजरी, कहे तहां चितचाव २०५
दम्पति सेवा सुख मई, सब को दई बताय ।
श्यामचरण के दासहो, सहचरि पद लियो पाय२०६
रंगमहल युग टहल में, पहुँच लह्यो आनन्द ।
चरणदास चरणन परसि, पायो परमानन्द २०७
चरणदास के चरण की, लई शरण जिन आय ।
तिनको श्री प्रीतमप्रिया, लीने हैं अपनाय २०८
चरणदास के चरणको, जिनके लागो रंग ।
प्रेम पगे प्रीतम प्रिया, तजे न तिनको संग २०९
चरणदास के चरण में, जो दृढ़ लगे सनेह ।
रीझ तिन्हे राधे रसिक, महल खवासी देह २१०
चरणदास के चरण में, जो नवाय निज माथ ।
कुवँरि किशोरी राधिका, रीझ गहे तिहि हाथ २११
श्यामचरण के दास को, जपे प्रेमकर नाम ।
तिनको दम्पति भुजन भर, हँसि भेंटे सुख धाम २१२
चरणदास के ध्यान में, जो जनहो गलतान ।

उज्वल नवल निकुंजरस, करे निरन्तर पान २१३
भजे भावकर जिन्होंने, श्याम चरण के दास।
पहुँचे सोइ निकुंज में, जहां नित्य रस रास २१४
होत रहत जहां परस्पर, दम्पति विविधि विलास।
रहत निकटवर्ती तहां, श्याम चरण के दास २१५
शुभ प्रगट लीला ललित, करत राधिका श्याम।
चरणदास चरणन परसि, पाय तहां बिश्राम २१६
दृढ़ करगहे अनन्य व्रत, चरणदास प्रभु. इष्ट।
सरसमाधुरी रस मिले, महा मधुर अति मिष्ट २१७
जो जन मन वच कर्मकर, भजे श्याम चरन्दास।
रिधिसिधि सम्पति प्राप्तहो, अशुभ अमंगल नास २१८
लोक और परलोक के, रक्षक श्री महाराज।
सरस माधुरी शरण की, सबबिधि उनको लाज २१९
स्वामी रामहि रूपजी, जोग जीतजी जान।
दोउनने अनुपम कह्यो, जीवन चरित बखान २२०
तिन दोउनको सार यह, सूक्षम रचना कीन।
पढ़ौ सुनों सब प्रेमसों, साधू रसिक प्रवीन २२१
जैसे सुन्दर सुमन की, लई सुगन्धि निकार।
सरस माधुरी ने रचो, यह चरितामृत सार २२२
चरितामृत का प्रीतकर, पठन करे नित जोय।
सुफल होहिं सब मनोरथ, गुरुभक्ति दृढ़ होय २२३
शुभ सम्बत उन्नीससौ, और तिहत्तर जान।
चैत्र कृष्ण तिथि द्वादशी, भयो समाप्त सुखदान २२४
जयपुर शहर सुहावनो, जहां दरीबा पान।
सरसमाधुरी ने कह्यो, चरितामृत रसखान २२५

इति॥

श्रीमन्निकुंजविहारिणे नमः ॥

मङ्गलाचरणम् ॥

प्रह्लादनारदपराशरपुण्डरीकव्यासाम्बरीषशुक-शौनकभीष्मकाद्याः। रुक्माङ्गदार्जुनवासिष्ठविभीषणाद्या एतानहं परमभागवतान्नमामि ॥ १ ॥

(षोडशाक्षरमहामन्त्रः)

हरेराम हरेराम रामराम हरेहरे।
हरेकृष्ण हरेकृष्ण कृष्णकृष्ण हरेहरे ॥

(अथ श्रीस्वामी चरणदास रचितग्रन्थ)

श्रीभक्तिसागर प्रारम्भ ॥

दो०—मथुरा मण्डल परमशुचि, वृन्दावन रसरास।
रच्यो शुकमुनी शिष्यने, नाम श्यामचरन्दास ॥

अथ ब्रजचारित्रवर्णन ॥

दो०—दीनानाथ अनाथ का, विनती यह सुनिलेहु ।
मम हिरदय में आयकर, ब्रज कथा[1] कहदेहु ॥
चारिवेद[2] तुमकूं रटैं, शिव शारदा गणेश ।
और न शीश निवायहूं, श्रीकृष्ण करो उपदेश ॥
कै गुरु कै गोविन्द कूं, भक्ता कै हरिदास ।
सबहुँनको एकै गिनो, जैसे पुहुप[3] और बास[4] ॥
नारदमुनि अरु व्यासजू, कृपा करहु दयाल ।
अक्षर भूलौं जो कहीं, कहो मोहिं ततकाल ॥
श्रीशुकदेव दयाल गुरु, मम मस्तक पर ईश ।
ब्रजचरित्र कहत हौं, तुमहिं नवाऊँ शीश ॥
सबसाधुन परणाम करि, कर जोरूं शिरनाय ।
चरणदास विनती करै, वाणी घोह बनाय ॥
सदा शिव ब्रज में रहैं, करि गोपी को रूप ।
मूरति तौ परगट भई, आप रहत हैं गूप ॥
वंशीवट ढिग रहत हैं, करत रहत हैं ध्यान ।
वक्ता[5] वेद पुराण के, परम ।तम ज्ञान ॥
ब्रह्मादिक कलपत रहैं, वृन्दावन के हेत ।
सुधि आये ब्रजभूमिकी, बिसरिजाय सब वेद ॥
अब ब्रजकी गति गाय सुनाऊं । बुद्धि शुद्धि हरि भक्ति जु पाऊं ॥
चिन्ता मेटन भूमि वखानी । रण जीतमीत जहँदुमं विनानी॥
कमलापति को चक्र सुदर्शन । चरणदास ताकोकरै वन्दन ॥
मथुरामण्डल तापर रहै । व्यासदेव मुनि ऐसे कहै ॥

---

१ सम्पूर्णहाल २ सामवेद ऋग्वेद यजुर्वेद अथर्वण ३ फूल ४ सुगन्ध ५ कहने वाला ॥

वाराहसंहिता में जो गायो । सो मैं भाषा बीच बनायो ॥
गोवर्धन महिमा अति भारी । चरणदास ताके बलिहारी ॥
जाकी महिमा सबनें गाई । जहां कृष्ण नित गऊचराई ॥
खरिके बनाय धेनु जहाँ राखी । अजहूं चिह्न देत हैं साखी ॥

दो०—गोवर्धन बिनती करूं, मो बिनती सुनिलेहु ।
जगतफांस सों काढ़िकरि, भक्तिदान मोहिं देहु ॥

हाटकरूप अडोल खरारी । जाकी शरण रही ब्रज सारी ॥
तादिन इन्द्र कोप पठायो । सकल मेघ झुकि ब्रजपर आयो ॥
करपल्लव पर गिरि हरि धारो । तबहीं शरण रहो ब्रज सारो ॥
दिव्यदृष्टि बिन दृष्टि न आवै । कञ्चनरूप पुराण बतावै ॥
मथुरामण्डल में गिरि सोई । मथुरामण्डल अब सुनिलोई ॥
चौरासी कोशी परमाना । मथुरामण्डल ब्यास बखाना ॥
हरिके चरण सदा जो परसैं । कृष्णरूप में निशि दिन सरसैं ॥
सखासंग लीये हरि डोलैं । सखियन के सँग करत कलोलैं ॥

दो०—सदा कृष्ण ब्रजमें रहैं, मोहिं मिलत हैं नाहिं ।
लहर महर कबहूं करैं, आनि गहैं मोरी बाहिं ॥

जामें बारह बन बड़भागी । बारह उपवन हैं अनुरागी ॥
जिनमाहीं हरि वेणु बजावैं । मधुर मधुर बांके सुरगावैं ॥
चौथे पदको है वह स्वामी । सब जीवन को अन्तरयामी ॥
भक्तन हेतु रहैं ब्रजमाहीं । गुप्त रहैं वृन्दावन ठाहीं ॥
फिरत रहैं सबही बन सुन्दर । अन्तर बन्यो रास को मन्दर ॥
जगत दृष्टि सों रहैं अलोपा । मिलिहैं ताहि ध्यान जिनरोपा ॥
मथुरामण्डल परगट नाहीं । परगट है सो मथुरा नाहीं ॥
मथुरामण्डल यही कहावै । दिव्य दृष्टि बिन दृष्टि न आवै ॥

१ गौओंके रहनेका स्थान २ अंगुली ॥

दो०—वन उपवन अब कहतहौं, मथुरामण्डल माहिं ।
बिना भक्ति ब्रजनाथकी, क्योंहूं दीखत नाहिं ॥

उपवन कद्म मंडतवन दूजा । नंदीसुर नंदवन सूजा ॥
मंगल आनँद वन वहि गायो । जहां महर जा गांव बसायो ॥
संकेत वन सो सब जग जानै । बरसानो सबको पहिंचानै ॥
भोजन थाली वही कहायो । जहँा बैठि भात हरि खायो ॥
सुगन्ध वन अब सो कहावै । अखण्ड वन पुस्तक दरशावै ॥
खेलन द्रुम वन खेलत रहैं । मोहन वन केती वन कहैं ॥
दधि ग्राम वन वही कहायो । लूटि लूटि जहाँ दधि खायो ॥
वत्सहरनवन वही कहायो । ब्रह्मा माया देखि भुलायो ॥

दो०—ग्वाल बाल ब्रह्मा हरे, राखे कहूं दुराय ।
जानि बूझि टारो दियो । लीन्हें और बनाय ॥

जब ब्रह्मा समझो करिज्ञाना । कर्ता कृष्ण सत्य करिजाना ॥
फिरि चेतन ह्वै शीश नवायो । आदिपुरुष पुरुषोत्तम पायो ॥
द्वादश उपवन गाय सुनाये । मथुरा मण्डल मध्य बताये ॥
द्वादश वनकी गति सुनि लीजै । जिनमाहीं हरिध्यान करीजै ॥
भद्र वन अति महा सुहायो । श्रीवन लालन के मन भायो ॥
भांडीर वनकी महिमा गाऊं । भिन्न भिन्नकहितोहि समझाऊं ॥
लोहवन महिमा कहियत भारी । महावन सुन्दरता अति धारी ॥
तालर वन वहि दृष्टि निहारो । दानव धेनुक जहँ हरि मारो ॥

दो०—दानौं धेनक महाबली, भाव भक्ति हरि हेत ।
मुक्तिकाज सेवन कियो, तालरवन को खेत ॥

खिद्रवन जानत सब कोई । फूल माल जहँ लालन पोई ॥
बहुलावन घन दुरमन छायो । कुमुदवन तो सो कहिसमुझायो ॥

---

१ प्रथमपाठ ।

कामावन लालन सुखदाई । मधवन लालन भूमि सुहाई ॥
वृन्दावन की शोभा भारी । रास रच्यो जहाँ श्रीवनवारी ॥
वन उपवन शोभा गति ईशा । शिव ब्रह्मादिक नायो शीशा ।
इन्द्र वरुण कुबेर विनानी* । इनहूँ गति मति ब्रजकी जानी ॥
बल रावण जहाँ सेवा लाई । ऊंची नवनिधि उनहूँ पाई ॥
सप्तऋषिनं[1] मिलि सेवन कीन्हो । ऊंचो आसन ध्रुवको दीन्हो ॥

दो० बहुतक सुर नर तरिगये, तपकरि ब्रजके वीच ।
जाति पांतिको को गिनै, ऊंचा नीचा नीच ॥
वृन्दावन सबसों वड़ो, जैसे दूधमें घीव ।
सब धर्मन हरिभक्ति ज्यों, जैसे पिण्ड[2] में जीव ॥
सब तीरथ जगमें बड़े, जिनहूँ में हैं ईश ।
उन तीरथ फलकामना, इहि सेवन जगदीश ॥
बीस कोस के फेर में, वृन्दावन कूं जान ।
कुंजगली अति सोहनी, द्रुमवेली[3] पहिंचान ॥
कंचनकी जहँ भूमि है, धरे सतोगुण भेष ।
चरणदास बलिबलि गयो, दिव्यदृष्टि करि देख ॥
फूल जु फूले ऋतु विना, नाना छवि बहुरंग ।
अलि[4] मलकतगुञ्जत फिरैं, भँवरी सुतलै संग ॥
ऋतुवसन्त जहँ नितरहत, विहरत नन्दकिशोर
कुहँकत कोयल मगन होय, बोलत दादुर मोर ॥
तिहिमधि वृन्दावन महा, निज वृन्दावन जान ।
तिरकोणी वर्णन कियो, जोजंन[5] है प्रमान ॥

---

१ नारद, वशिष्ठ, भृगु, अंगिरा, कश्यप, विश्वामित्र, पुलस्त्य २ देह ३ लता ४ भ्रमर ५ चारि कोसका नाम ॥

प्रथमपाठ * इन्द्र कुबेर आदि विज्ञानी ॥

जाकी महिमा सबहुन गाई । रास करैं जहाँ कुँवर कन्हाई ॥
जमुना जहाँ परिक्रमा दीन्ही । गुप्तपिया की लीला चीन्ही ॥
गोपसुता जहाँ नित उठि न्हाई । वर पूरण पायो कुँवर कन्हाई ॥
श्यामरङ्ग निर्मल जल गहरी । वृन्दावनके ढिगढिग लहरी ॥
आसा मनसाकरि कोइ न्हावै । सहस सुरसुरी को फल पावै ॥
दिव्य वृन्दावन दिव्य कलिन्द्री । देखै सो जीतै मन इन्द्री ॥
किनार निकट वृक्षनकी छाहीं । आयपरी जमुनाजल माहीं ॥

दो० भक्ति विना पावै नहीं, वृन्दावन की संध ।
बिन पाये निन्दा करै, भोंदू मूरुख अंध ॥

झिलमिल शुभकी उठत तरंगा । बोलत दादुर अरु सुरभंगा ॥
कालीदह महिमा सुनु भ्राता । सहस गंगके फलकी दाता ॥
विहार*घाट बसि भजन करीजै । जेहिसेवन जमज्वाब न दीजै ॥
वंशीवट बसि हठ इमि कीजै । तजै देह जब दर्शन लीजै ॥
अब सुनु वृन्दावन की बतियां । शीतल करी हमारी छतियां ॥
वनघन कुञ्जलता छबिछाई । झुक टहनी धरणी पर आई ॥
करत मंद समीर पयाना । बसत सुगन्ध सबै अरघाना ॥
बरसत अमृत फूही सुहाई । निकसत कोमल गोभगुहाई ॥

दो० वृन्दावन में रहत हैं, ज्ञानी गुणी अतीत ।
वृन्दावन को ना मिलैं, कोऊ लहत जगजीत ॥

नित वसन्त जहँ सुगन्ध सुरारी । चलतमन्द जहाँ पवनसुखारी ॥
पुहुप विकसि रहे रङ्ग बिरङ्गा । लेत वास गुंजत सुरभृङ्गा ॥
बोलत भँवर महाध्वनि गाजैं । मानो अनहदकी गति साजैं ॥
जुगुनू दमकि चमकि चकरावैं । समय जानिकर हर्ष बढ़ावैं ॥

प्रथमपाठ * विहर ।

नाचत मोर करत चतुराई। पंख पसारि मुदित मगनाई ॥
कैइक उचक बोल निज बोलैं। कैइक कुञ्जन ऊपर डोलैं ॥
जुगल नामलैं कीर पुकारैं। बार बार वनओर निहारैं ॥
वृन्दावन चारौ जुग[१] माहीं। गोपरहैं[२] शुकदेव बताहीं ॥

दो० वृन्दावनकी साधुगति, कापैं वरणी जाय।
जैसी जाकूं दृष्टि है, जैसोही दरशाय ॥
जैसे हरि मथुरा गये, सबन विलोको आय।
काल कंसकी दृष्टि में, साधुन प्रभू लखाय ॥
मथुरा में जोधा बड़े, जिन्हैं मल्ल दरशाय।
नारिन दरशै कामसम, प्रीतिरीति अधिकाय ॥
वृन्दावन सोइ देखिहै, जिन देख्यो हरि रूप।
दुर्लभ देवन कूं भयो, महागूप सों गूप ॥
वृन्दावन सेवन करै, अमरलोक कूं जाय।
इन्द्रीजीते हरि भजें, प्रेम प्रीति के भाय ॥

रसिककेलि वृन्दावन माहीं। अमरलोक की भांति कराहीं ॥
अमरलोक तिहुँलोकसों न्यारो। मथुरामण्डल अंश विचारो ॥
अमरलोक विचहै निजधामा। जाको अंश वृन्दावन नामा ॥
पुरुषोत्तम निज धामा माहीं। कारण प्रेमरहे व्रज आई ॥
पुरुषोत्तम प्रभु लीला धारी। वृन्दावन में सदा विहारी ॥
निजधामा की कहियत शोभा। वृन्दावन में रहें अलोपा ॥
दिव्य दृष्टि विन दृष्टि न आवे। सकल पुराण वेद यों गावे ॥
गोल चौंतरो निज वृन्दावन। तापरवारों अपनो तनमन ॥
रहो चौतरो छिपि वहिठाहीं। जैसे अग्नि काठके माहीं ॥

१ सतयुग त्रेता द्वापर कलियुग २ छिपाहुआ

तापर चौंसठि खम्भा[1] सोहैं । कोटिकामको निज मन मोहैं ॥
तापर रंगमहल अधिकारी । कुन्दन[2] रूप सरूप सुखारी ॥
रंगमहल और खम्भनमाहीं । पन्नालाल बेलि की नाईं ॥
पन्ना नग लागे जहाँ मोती । झलकैं जगमगजगमगज्योती ॥
रंगमहल यों छिप्यो गोसाईं । जैसे लाली मेहँदी माहीं ॥
नित विहार जहँ करैं विहारी । कृष्ण कुँवर जहाँ राधा प्यारी ॥
गवर रूप वृषभानु दुलारी । श्यामरूप है कृष्ण मुरारी ॥
लीलाम्बर ओढ़े सँग राधा । दिव्य आभूषण रूप अगाधा ॥
भूषण अंग सँग लाजत ऐसे । चन्द निकट लघु तारे जैसे ॥
पीत वसन पहिरे नँदलाला । मोरे मुकुट माथे गलमाला ॥
जरद बादलेको अंग नीमा । बद्धी गलजिंदे सुख सीमा ॥
मोतियनकी माला गल सोहै । नाक बुलाक अधरपर जोहै ॥
मकराकृत कुण्डल सखन में । जुगल दामिनी मानजु घनमें ॥
श्याम भुवंगम जुलफैं प्यारी । बांकीभौंह कुटिल अनियारी ।
ललचौहैं अरु नैन ढरारें । रसके माते अरु कजरारे ॥
मोती नासाके बिच लटके । बोलत बोल होठ पर मटकै ॥
मुरली मुकताको रस पीवै । चाहनवारो देखत जीवै ॥
गले धुकधुकी सुन्दर झमकै । तामधिकौस्तुभमणिअतिदमकै ॥
अधिक सुघर पहिरे हिमचौकी । वनमाला कहियत नौनिधिकी ॥
गोल भुजनपर बाजू सोहैं । पहुँची कड़ा कनक करिदोहैं ॥
पहुंचीढिग पहिरे जहाँगीरी । रतन चौक छविलगीजँजीरी ॥

---

१ वंशीवट में जहां पर कि श्रीकृष्णचन्द्रने रास किया है वहां एक चौतरा बनाहुआ है जिसपर कि अष्टधातु व मलयागिरि आदि के चौंसठि खम्भा विद्यमान हैं २ सुवर्ण को कहते हैं ३ मछली के आकार कुण्डल ४ दुलरी नामका गहना जोकि गले में बांधी जाती है ५ कंकण जोकि पहुँची के आगे करमें बांधा जाता है जिसमें कि हीरादि नग जटित होते हैं ॥

रतन चौकहै पीठ हथेली । लगी जँजीर मुँदरियन मेली ॥
सोहैं छाप छला अरु मुँदरी । नुहसत पहिरे सुन्दर अंगुरी ॥
इकीस चिह्न चरणनमें धारे । भुनुक भुनुक पैं जनिझनकारे ॥
मन्द मन्द विहँसत मुसकाई । रणजीत* मीतछविकहीनजाई ॥
नितकिशोर अरुनित्तकिशोरी । द्वादश वरष अवस्था भोरी ॥
राधे भूषण छवि कह गाऊं । नाव लेत मनमें शरमाऊं ॥
हूं मैं दास नाव रणजीत । भक्तिदान मोहिं दीजैरीत ॥
वहुत सखी जिनके निजसंगा । रासकेलि खेलैं वहुरंगा ॥
वनके चौंसठि खम्भे माहीं । होत अखण्ड रास वहि ठाहीं ॥
भुनुक भुनुक सखियन पगवाजैं । घुँघुरू अधिकमहाध्वनिगाजैं ॥
दिव्य भूषण पहिरे पियप्यारी । शशिव[1]दनी तिरगुणते न्यारी ॥
नवल किशोरी गोरी सारी । सुघर सयानी चातुर नारी ॥
दिव्यवस्त्र अरु मधुर शरीरा । अधिक रूप छवि गहर गँभीरा ॥
कजरारी कच[2] लटकैं बेनी । अंजन नैन सैन पियदेनी ॥
चूड़ामणि गहनो छवि नीको । शीशफूल अरु वेनीटीको ॥
नथबुलाक अरु बन्दी झलकैं । घूंघुरवाली लटकैं अलकैं ॥
मुखऊपर अलकैं छवि ऐसी । चन्दचढ़ी दो नागिनि जैसी ॥
करणफूल सँग झुमके मलकैं । सव सखियनके भूषण झलकैं ॥
चम्पाकली नौलड़ी माला । चन्दनहार सुपहिरे वाला ॥
कठुला जैसे गले जनेऊ । अरु हिय चौकी महा अभेऊ ॥
फूलमाल सखियां सव पहिरे । गुंजनकी माला हिय लहिरे ॥
वांहन में वाजूवंद वांधे । वंकवला वांहन पर साधे ॥
सदा सुहागिनिं पहिरे चूरी । सुवक पछेली वँगरी रूरी ॥

---

१ चन्द्रमाकासा वदन २ वाल ॥

प्रथम पाठ * रणजित मित ॥

कँगनी अरु पहिरे जहँगीरी। रतनन चौक आरसी धीरी॥
छाप छला अरु पहिरे गूंठी। नुहसत पहिरे अजब अनूठी॥
पांवनमें पग वेवर बाजैं। नखशिखलौं आभूषण साजैं॥
झुनुक झुनुक नाचै अरु गावैं। ठुमुक ठुमुक निरतैं अरु धावैं॥
कबहूं थेइथेइ थेइथेइ करैं। कबहूं कर ऊपर कर धरैं॥
कबहूं घिनन घिनन अँग मोरैं। भाव बताय तान बहु तोरैं॥
कबहूं कर उठाय गति चालैं। साँग उपांग[1] बतावत हालैं॥
हो अनुराग राग बहु गावैं। घुँघुरूकीगतिअधिक बजावैं॥
कोइ नाचै कोई गावै। कोइमृदंग कोइ ताल बजावै॥
बैन सरू काहू कर राजै। कोउ तँबूरा नारी साजै॥
उपँग लिये कर कोउ सहेली। अमृत कुण्डली[2]कोउअलबेली॥
कोइ बीन कोइ लिये मुहचङ्गा। मगनरूप सबही निज सङ्गा॥

दो० कहा बुद्धि कहा कहसकूं, रासकेलि को साज।
बाजे हैं बहुभांति के, वर्णत आवै लाज॥
कबहूं करसों कर मिला, नृत्यत श्रीगोपाल॥
कबहूं बैठे सांवरो, नृत्यत सुन्दरबाल॥

कबहूं हँसिकरि निकट बुलावैं। कबहूं फूलमाल पहिरावैं॥
कबहूं मन्द मन्द मुसकावैं। बैन सैन दे नृत्य बतावैं॥
वृन्दावन में ऐसी लीला। चरणदासको जहां वसीला॥
जो कोइ इनको ध्यान लगावै। अमर लोक निहचै करिपावै॥
सिमिटो मन कबहूं नहिं फूटै। सोवत जागत ध्यान न छूटै॥
जो कोइ इनको ध्यान न करिहै। भरमि भरमि चौरासी परिहै॥
सुरनर मुनिसबही मिलि ध्यावैं। शिव ब्रह्मादिक अन्त न पावैं॥
वेद विना यह भेद न पावै। आप भरमि अरु जग भरमावै॥

---

१ सब विधियों सहित २ दारा॥

वेद पुराण संहिता गावैं । चारोंयुग हरिभक्ति बतावैं ॥

दो० इत उत भटको जग फिरै, कीन्हों नाहिं विचार ।
सत्य पुरुष जानों नहीं, कैसे उतरै पार ॥

द्वापर बीतो कलियुग आयो । राजाको शुकदेव सुनायो ॥
कलियुगकी दुर्बुद्धि बताऊं । सुनहुपरीक्षित कहि समुझाऊं ॥
ओछी बुद्धि मनुज की होगी । सकलविकल अरु मनके रोगी ॥
सूक्षम ज्ञान महाअभिमानी । नहीं मानिहैं वेद पुरानी ॥
परमेश्वर की निन्दा करि हैं । भूत मसानी चित में धरि हैं ॥
खेतरपाल भूमिया मानैं । कृत्रिमको कर्ता करिजानैं ॥
परमेश्वर की बात न भावै । एसो उत्तर तुरत बतावै ॥
कहैं राम कहां है भाई । हमहूँ को तु देहु दिखाई ॥

दो० चहूँओर हरिको विभव, सातद्वीप नौखण्ड ।
चरणदास* कहैं सुन अधिरे, किन राच्यो ब्रह्मण्ड ॥
भक्ति विना दीखै नहीं, इन नयनन हरिरूप ।
साधुन को परगट भयो, विना भक्ति हरिरूप ॥

साधुसन्तकी निन्दा करिहैं । भजन करै तासों वहु अरि हैं ॥
करि अभिमान आपमें जरिहैं । गुरुको कहो नेक नहिं करिहैं ॥
पंथ खड़े करि हैं छत्तीसा । भरमपूजि तजिहें हरि ईसा ॥
दम्भ झूठ की सेवा करिहैं । झूठे पंथन में जा लरिहैं ॥
गऊ ब्राह्मण भ्रष्टल होई । बाप पूत में परिहै दोई ॥
विद्या दान कपट व्यवहारा । राजा दुष्ट दुखित संसारा ॥
वेद पढ़े करि हैं अभिमाना । हम पंडित अरु सब अज्ञाना ॥

१गांव का चौकीदार २ छत्तीस प्रकारके पंथ ॥

प्रथमपाठ * चरण दाससुन

पढ़ पुराण भेद नहिं जानैं। साधुनसों झगड़ो बहु ठानैं ॥
पंथ पुजाय हरि कूं बिसरावैं। झूठे वाद विवाद बढ़ावैं ॥
व्यभिचारिणिहोइहैं बहुनारी। बोलैं झूठ बहुत परकारी ॥
शुकदेव कहे राजासूं बैना। सो अब देखे अपने नैना ॥
राजा डांड़ि बांधि करि लूटैं। पूजैं भूत रामसों छूटैं ॥
गऊ विष्ठा सो खाती जानी। पंडित देखे बहु अभिमानी ॥
दम्भ कपट बहु पूजा दौरी। कलुवा जाहर पूजैं बौरी ॥
पण्डित वेद पढ़े बिसरावैं। स्याने भोपे को शिर नावैं ॥
हरि के साधुन को विसरावैं। तजैं राम औरन को ध्यावैं ॥
हरिकी भक्ति सदा चलिआई। वेद पुराणन में जो गाई ॥
इनको समझि भये जो ज्ञानी। नाभा जिनकी भक्ति बखानी ॥
जिनकी महिमासबजगजानी। सबजानत हैं चतुरा ज्ञानी ॥
पीपा सदना सैना नाई। धना जाट अरु मीराबाई ॥
नामदेव रैदास चमारा। तुलसी माधो मीर विचारा ॥
कूबा कुम्हरा फत्तू सक्का। सेऊ सम्मन रङ्का बङ्का ॥
करमैती अरु करमा बाई। दास कबीरा बाणीगाई ॥
जैदेवा अरु नरसो महता। दास मलूक कड़ा में रहता ॥
अन्तानन्द कील अरु जंगी। देव मुरारि निपट सरवंगी ॥
नरहरि लालदास हरिवंसा। रंगनाथ बनवारी हंसा ॥
नानक सूरदास और दादू। सनक सनन्दन कहिये आदू ॥
ध्रुव प्रह्लाद विभीषण शवरी। हनूमान शङ्कर और गवरी ॥
बाल्मीकि अँबरीष सुदामा। मोरध्वज राजा संग्रामा ॥
बहुतक भक्त और जो भये। नाम न जानूं जात न कहे ॥
कई कोटि वैष्णवों बाके। सबही गये मुक्ति के नाके ॥
चरणदास हरिभक्ति विचारी। सुमिरिसुमिरि पहुँचोनरनारी ॥

दो०—लिखिपढ़ि समझि विचार करि, सदा करौ हरिध्यान ।
कृष्णभक्ति दृढ़ करि गहौ, मिटै सकल अज्ञान ॥

कवित्त साङ्गीत ॥

मुकुट जटित शिर अधिक विराजत गहे बँसुरिया अधर धरन् ।
शंख चक्र गदा पद्म विराजत कोटि मदन छवि वरणन् ॥
गिरिवर नखधारे असुरन मारे सन्तन के दुख हरनन् ।
जन चरणदास चरणनको चेरो सदा रहै गिरिधर शरनं ॥
कुमकुम विन्दी दीपित भालं उदधिजात की द्युति हरनं ।
मकराकृत कुण्डल अति राजत झुमक दामिनी छवि धरनं ॥
कटि किंकिणि पैंजनि पग वजत मुक्तमाल सुरसुर वरनं ।
जनचरणदास चरणनको चेरो सदा रहै गिरिधर शरनं ॥
सुन्दर वाल लाल सँग लीन्हे रासकरत अति मनमगनं ।
घुमिरि घुमिरि झुकि झुकि कर निर्तत खुटर खुटर नाटकवरनं ॥
मधुर मधुर ध्वनि वजत गजत घन झनक झनक झंझा झरनं ।
जनचरणदास चरणनको चेरो सदा रहै गिरिधर शरनं ॥
रास रचावैं सव सचुपावैं सांवरे वदन छवि वर्णनं ।
धुधक धुधक धूधूकरि नृत्यत तकृत तकृत ताधिनननन ॥
झुनुक झुनुक नूपुर झनकारत झनक झनक झनझनझननं ।
जनचरणदास चरणन को चेरो सदा रहै गिरिधर शरनं ॥

क०—नन्दके कुमार हौं तो कहौं वार वार मोहिं लीजिये उवारि ओट आपनी में कीजिये । काम अरु क्रोध को काटो जम वेड़ा प्रभु मांगौं एकनाम मोहिं भक्तिदान दीजिये ॥ और की छुटायो आश सन्तनको दीजे साथ वृन्दावन निवास मोहिं फेरिहू पतीजिये । कहै चरणदास मेरि होय नाहि हास

प्रथमपाठ ·· वास ॥

श्याम कहूं मैं पुकारि मेरी श्रवन* सुनि लीजिये ६४ ऊहीं हाथ कुचगहि† पूतना के प्राण सोखे पाय ऊंची‡ पदवी निज धाम को सिधारी है। ऊहीं हाथ श्रीधरको मुखमाड़ो दहीसेती छातीपर पांव दे मरोरि जीभ डारी है॥ ऊहीं हाथ कूबरी के कूबकाड़ सीधो कियो ऊहीं हाथ मस्तक+ गज खैंचि मूठ मारी है। ऊहीं हाथ बांह चरणदास कहै आय गहो ऊहीं हाथ जमुना में नाथ्यो नागकारी है॥

इति श्रीचरणदासजीकृतब्रजचरित्रसम्पूर्णम्॥

प्रथमपाठ * श्रौन † गहि ‡ ऊचो पद + मत्त॥

अथ अमरलोकअखण्डधामवर्णन ॥

दो०—प्रणमों श्री शुकदेव को, सो हैं गुरू दयाल ।
काम क्रोध मोह लोभ से, काढ़े मेरे साल ॥
वाणी विमल प्रकाश दी, बुधि निर्मल की तात ।
मोहि मूरख अज्ञानको, नहिं आवत ही बात ॥
अमरलोक वर्णन करौं, वेही करं सहाय ।
दृष्टिहिये मम खोलिकरि, सबही देहिं दिखाय ॥
भेद लियो गुरुदेव सों, अद्भुत रचों ग्रन्थ ।
साखी वेद पुराण में, जानी सुनियो सन्त* ॥

भेद अगोचर कोइकोइ जानै । गुरू दिखावै तौ पहिंचाने ॥
पता कहैं कछु वेद पुराना । ज्योंका त्यों उनहूं न बखाना ॥
कछु कछु मत मारगहू भाखें । फिरि भूलें समुझैं नहिं साखैं ॥
हरि कृपा प्रकट मैं गाया । किया उजागर खोलिदिखाया ॥

दो०—महा कठिन दुर्लभ हुता, अमरलोक का भेद ।
ताको मैं बीजक कियो, भाषो भेद अभेद ॥
निराकार तौ ब्रह्म है, माया है आकार ।
दोनों पदही को लिये, ऐसा पुरुप निहार ॥

माया जीव दोउ ते न्यारा । सो निज कहिये पीव हमारा ॥
क्षर अक्षर निहअक्षर तीनो । गीता पढ़ि सुनि इनको चीन्हों ॥
गीता अक्षर जीव बतावै । क्षरमाया सोइ दृष्टि दिखावै ॥
निहअक्षर है पुरुप अपारा । ज्ञानी पण्डित ल्योह विचारा ॥
जीवआत्म परमातम दोऊ । परमातम जानत है कोऊ ॥
आत्म चीन्हि परमातम चीन्हो । गीतामध्य कृष्ण कहि दीन्हो ॥

प्रथमपाठ *- सन्थ ।

माया उपजै विनशै अतिही। चेतन ब्रह्म अमरहै नितही॥
पारब्रह्म पुरुषोत्तम जानो। चरणदास के सो मन मानो॥

दो०—अमरलोक विच पुरुषहै, ब्रह्म जु सबके माहिं।
माया दरशत है सबै, ब्रह्म दीखतै[1] नाहिं॥

अब सुन अमरलोक की वानी। त्रैगुण रहित परम सुखदानी॥
तेज पुंजके ऊपर राजै। अहंविराट सो बाहर गाजै॥
ताको ज्योति कहत नरलोई। तेजपुंज कहियत है सोई॥
सूरज मण्डल ताहि बतावै। जोगी जोग जुगत सों पावै॥
सूरज मण्डल जैहैं चीरा। वालोकै कोइ पैहैं वीरा॥
कोटिभानु कोसो उजियारो। तेज पुंजको रूप विचारो॥
तीनि लोकसों बाहर होई। सात भवन सों बाहर सोई॥
ताके ऊपर अविचल लोका। पापपुण्य दुख सुख नहिं शोका॥
काल न ज्वाल अवधि नहिं होई। रनजीतदास जहाँ सुरतिसमोई॥
महाअगोचर गुप्तसों गुप्ता। जहां विराजत हैं भगवंता॥
अमरलोक गौ लोक कहावै। चौथा पद निर्वान बतावै॥
अगमपुरी बेगमपुर ठाऊं। कहा बुद्धिसों सब गति गाऊं॥
कछुइक बरणि बताऊं वाको। ब्रह्मासुत सतजुग में भाषो॥
पुहुपद्वीप है श्वेत अकारा। सब ब्रह्मण्डनसूं है न्यारा॥
जो कोइ जाय बहुरि नहिं आवै। आवागमन सकल विसरावै॥
जो कोइ गयो बहुरि नहिं आयो। देही दिव्यरूप अति पायो॥
सोलह बरष उमर नित रहै। अजर अमर निधि आनँद लहै॥
बूढ़ा बाला होय न तरुणा। षोड़श भानुरूप जहाँ धरणा॥
तत्वस्वरूपी काया पावै। भवसागरमें बहुरि न आवै॥

---

१ देखने में न आवै॥

पांचतत्त्व विनहै थिरथायो । ना वह वन्यो न कृत्यवनायो ॥
ओर छोर कछु दीखत नाहीं । कवसों है और कवसों नाहीं ॥
है अडोल मर्जाद न ताकी । वेपरमान वेद यों भाषी ॥
वेद पुराण पार नहिं पावै । कछू कछू धरिध्यान वतावै ॥
अनन्तभानु के सो उजियारो । पिण्ड ब्रह्मण्ड दोउते न्यारो ॥
लोकमध्य अविचल निजधामा । श्वेतरूप अगमपुर नामा ॥
अगमपुरी निरधारा सूची । हंसलहैं जिनकी मति ऊंची ॥
बेहद लोक वन्यो अतिभारी । असंख्यभानु कीसी उजियारी ॥

दो० हद्दकहूँ तौ है नहीं, बेहद कहूँ तौ नाहिं ।
ध्यान स्वरूपी कहतहौं, वैंन सैन के माहि ॥

अतिउज्ज्वल रवि दृष्टिन ठहरे । मणि हीरा लागे जहाँ गहरे ॥
कई रङ्गके हीरा भाखे । कलश कँगूरा स्थिरराखे ॥
ताभीतर बहु द्रुम* अशोगा । अक्षयवृक्ष फललगे निरोगा ॥
कल्पवृक्ष वहुरंग विरङ्गा । फल और पात फूल इकसङ्गा ॥
कोमलदल शोभा अतिभारी । अजर पुरुष दर्शन अधिकारी ॥
चेतनरूप गहर अतिछाहीं । साधु रहत तिनकी परछाहीं ॥
षोड़श भानु सम देह स्वरूपा । हरिरस मदमाते निधिरूपा ॥
उन वृक्षनके निचनिच मंदिर । अनगिन महल महामठ सुन्दर ॥
महलमहलपर ध्वजा पताका । पुरुषोत्तमपुरुष*नाम लिखिराखा ॥
ध्वजा पाताका लहरत ऐसे । खिमत बीजुरी बहुतक जैसे ॥
रतन जटित तिनकी अँगनाई । बैठत उठत चलत हर्षाई ॥
काम क्रोध नहिं लोभ अधीरा । निर्मल दिशा शील गुणधीरा ॥
जहां न आलस नींद जँभाई । भूखप्यास मलता नहिं भाई ॥
मैल पसीना आंसू नाई । दिव्य देहधरि रहे गुसाई ॥

प्रथमपाठ* द्रुम वहुत सु ॥

माया उपजै विनशै अतिही। चेतन ब्रह्म अमरहै नितही॥
पारब्रह्म पुरुषोत्तम जानो। चरणदास के सो मन मानो॥

दो०—अमरलोक बिच पुरुषहै, ब्रह्म जु सबके माहिं।
माया दरशत है सबै, ब्रह्म दीखतै[1] नाहिं॥

अब सुन अमरलोक की बानी। त्रैगुण रहित परम सुखदानी॥
तेज पुंजके ऊपर राजै। अहंविराट सो बाहर गाजै॥
ताको ज्योति कहत नरलोई। तेजपुंज कहियत है सोई॥
सूरज मण्डल ताहि बतावै। जोगी जोग जुगत सों पावै॥
सूरज मण्डल जैहैं चीरा। वालोकै कोइ पैहैं वीरा॥
कोटिभानु कोसो उजियारो। तेज पुंजको रूप विचारो॥
तीनि लोकसों बाहर होई। सात भवन सों बाहर सोई॥
ताके ऊपर अविचल लोका। पापपुण्य दुख सुख नहिं शोका॥
काल न ज्वाल अवधि नहिं होई। रनजीतदास जहाँ सुरतिसमोई॥
महाअगोचर गुप्तसों गुप्ता। जहां विराजत हैं भगवंता॥
अमरलोक गो लोक कहावै। चौथा पद निर्वान बतावै॥
अगमपुरी बेगमपुर ठाऊं। कहा बुद्धिसों सब गति गाऊं॥
कछुइक बरणि बताऊं वाको। ब्रह्मासुत सतजुग में भाषो॥
पुहुपद्वीप है श्वेत अकारा। सब ब्रह्मण्डनसूं है न्यारा॥
जो कोइ जाय बहुरि नहिं आवै। आवागमन सकल विसरावै॥
जो कोइ गयो बहुरि नहिं आयो। देही दिव्यरूप अति पायो॥
सोलह बरष उमर नित रहै। अजर अमर निधि आनँद लहै॥
बूढ़ा बाला होय न तरुणा। षोड़श भानुरूप जहाँ धरणा॥
तत्त्वस्वरूपी काया पावै। भवसागरमें बहुरि न आवै॥

१ देखने में न आवै॥

पांचतत्त्व विनहै थिरथायो । ना वह वन्यो न कृत्यवनायो ॥
ओर छोर कछु दीखत नाहीं । कवसों है और कवसों नाहीं ॥
है अडोल मर्जाद न ताकी । वेपरमान वेद यों भाषी ॥
वेद पुराण पार नहिं पावै । कछू कछू धरिध्यान वतावै ॥
अनन्तभानु के सो उजियारो । पिण्ड ब्रह्मण्ड दोउते न्यारो ॥
लोकमध्य अविचल निजधामा । श्वेतरूप अगमपुर नामा ॥
अगमपुरी निरधारा सूची । हंसलहैं जिनकी मति ऊंची ॥
वेहद लोक वन्यो अतिभारी । असंख्यभानु कीसी उजियारी ॥

दो० हद्दकहूँ तौ है नहीं, वेहद कहूँ तौ नाहिं ।
ध्यान स्वरूपी कहतहौं, वैन सैन के माहि ॥

अतिउज्ज्वल रवि दृष्टिन ठहरे । मणि हीरा लागे जहाँ गहरे ॥
कई रङ्गके हीरा भाखे । कलश कँगूरा स्थिरराखे ॥
ताभीतर वहु द्रुम* अशोगा । अक्षयवृक्ष फललगे निरोगा ॥
कल्पवृक्ष वहुरंग विरङ्गा । फल और पात फूल इकसङ्गा ॥
कोमलदल शोभा अतिभारी । अजर पुरुष दर्शन अधिकारी ॥
चेतनरूप गहर अतिछाहीं । साधु रहत तिनकी परछाहीं ॥
षोड़श भानु सम देह स्वरूपा । हरिरस मदमाते निधिरूपा ॥
उन वृक्षनके निचनिच मंदिर । अनगिन महलमहामठ सुन्दर ॥
महलमहलपर ध्वजा पताका । पुरुषोत्तमपुरुष'नाम लिखिराखा ॥
ध्वजा पाताका लहरत ऐसे । खिमत वीजुरी वहुतक जैसे ॥
रतन जटित तिनकी अँगनाई । वैठत उठत चलत हर्षाई ॥
काम क्रोध नहिं लोभ अधीरा । निर्मल दिशा शील गुणधीरा ॥
जहां न आलस नींद जँभाई । भूखप्यास मलता नहिं भाई ॥
मैल पसीना आंसू नाई । दिव्य देहधरि रहे गुसाई ॥

प्रथमपाठ* द्रुम वहुत 'सु ॥

एक रूप एकै गति पाई। एक बरण एकै सबदाई॥
संशय शोक रोग नहिं दहै। मगनरूप मन आनँद लहै॥
षोड़शवर्ष अवस्था नितही। गुण पौरुषहरिजनके अतिही॥
दिव्यभूषण दिव्यवस्त्र अङ्गा। श्यामगात सुन्दर छवि अङ्गा॥
जुलफैं लटकिरहीं कजियारी। कुण्डलछविसोहत आधकारी॥
नासामोती सुब्रक सुढारा। सुन्दरतिलकलगतअति प्यारा॥
दीरघ दृग कछूक अरुणाई। माथे मुकुट जटित ललिताई॥
घरघर दिव्य आसन सिंहासन। और महासुखहैं हरिदासन॥

दो० भौ मेटन अरुतिम हरण, तुमहिं नवाऊं शीस।
चरणदास चरणन पर्यो, भक्तिकरो बकसीस॥
शुकदेव गुरु कृपाकरी, दीन्हो भेद लखाय।
साधुनके पग पूजतै, सकलव्याधि मिटिजाय॥
आस पास हरिजन रहैं, मध्य ईश दरवार॥
रसिक केलि बहु कुंजहैं, ललित द्वारहैं चार॥
राजमहल जनपति रहैं, कापै बरण्यो जाय।
गिनत शारदाछविअधिक, गौरीसुत थकिजाय॥

अनन्त भानु* कोसोउजियारो। वा मण्डल को रूप विचारो॥
समतुल और कास को लाऊं। बैन सैन दै ताहि बताऊं॥
चन्द सूरि[2] वह ठौर न चीन्हो। दृष्टान्त देन[1]को पटतर दीन्हो॥
आदि अनादि पुरातम धामा। जैसे आदिपुरुष घनश्यामा॥
श्वेत[1]रूप स्वरूप सुगन्धा। सहज महक जहँ उठत सुगन्धा॥
चार द्वार बहु बाजन बाजैं। अनहद शब्द महाध्वनिगाजैं॥
दिव्यरूप जो लगे किवाँरा। तिनके आगे बाग सुढारा॥

---

१ सुन्दर २ सूर्य॥

*प्रथम पाठ भानु अनन्त भानुसरिस।हितदृष्टान्त सो।श्वेतहि रूप॥

हरो बाग अद्भुत है भाई । दूजे द्वार महा अरुणाई ॥
तीजे द्वार बाग पियराई । चौथे ऊदो है थिरथाई ॥
उन बागन के आसा पासा । बहुत भवन जहाँ साधुनिवासा ॥
मैड़ी* मण्डप बहुत सुढारी । श्वेत वरण सुन्दर अधिकारी ॥
साधु सन्त जहाँ हरिजन पूरे । दास भाव भावना शूरे ॥
षोड़श भानु की† सुन्दरताई । जगत जीति पहुँचै जो जाई ॥
सखाभाव पहुँचत वहि ठांई । सखीभाव भीतर को जांई ॥
धरै स्वरूप अनूपम भारो । सदा सुहागिनिहरिपिय प्यारी ॥
परमपुरुष पुरुषोत्तम पावैं । निकटरहैं नित केलि बढ़ावैं ॥
चारौ मुक्ति[1] जहां कर जोरैं । भाव बताय तान बहु तोरैं ॥
दरशन कारणकी सुखदाई । धरे स्वरूप रहैं हरपाई ॥
रतनजटित जहँ भूमि सुहाई । कोटि भानु छवि रहतलजाई ॥
एकसमय नित ऋतु छवि पावत । शीत उष्ण पावस नहिं आवत ॥
ऋतु वसन्त पीरी छवि सोहैं । वनघन कुंजलता मनमोहैं ॥
निज वृन्दावन है वह ठाहीं । सदा बसो मेरे मनमाहीं ॥
दिव्य फूल फूले बहुरंगा । बिन ऋतु फूले रंगबिरंगा ॥
सकल सखी विचरत हरिसंगा । गोरी सखो श्याम हरी अंगा ॥

दो०—पुहुप जु फूले नित रहें, मौरें ना कुम्हिलांयँ ।
कई वरण कइरंगसों, अति सुगन्ध हरपायँ ॥

उन पुहुपन को नाम न जानों । कहा नामले ताहि बखानों ।
बहुत वृक्ष कुंजन घनछाहीं । फल अरु फूल लगे उनमाहीं ॥
काहू द्रुम न फल नहिं फूला । पुहुपरूप ह्वै आपहि झूला ॥
कोऊ लाल रूप ह्वै छायो । कोऊ श्वेत रूप मन भायो ॥

---

[1] सायुज्य सारूप्य सामीप्य सालोक्य ॥

प्रथमपाठ * मन्दिर † दासनुभाव ‡ कि ॥

रंग रंग के वृक्ष बखाने । सो पुरुषोत्तम के मनमाने ॥
वनके माहिं बहुत जहँ क्यारी । पुहुप रंग छवि न्यारी न्यारी ॥
कई भांति को बास तरंगा । मगनरूप बोलत सुरभंगा ॥
वनबिच श्वेतरूप छविनाना । गोल चौतरो रूपनिधाना ॥
इकरस चेतन परम सढोला । कोटि भानु छवि अमरअडोला ॥
जहाँ परिकर्मा सखी सहेली । बारह भानु रूप अलबेली ॥
दिव्य दमक जहाँ हीरा लागे । सात रंगके झिलमिल ताके ॥
ऊदा लाल श्वेत अरु पीरा । हरित श्याम लहरी अतिधीरा ॥
ता पर चौंसठ खम्भा दमकै । मानों कोटि भानु छवि झमकैं ॥
खम्भन लगे लाल ओर मुक्ता । पन्ना लगे बेलि की जुगता ॥
मूंगा लाल पिरोजा भारी । ध्यान धरो ताको नर नारी ॥
ये सब लगे बखानों ऐसे । जैसो जुगत लगे हैं जैसे ॥
जड़ लालनको विद्रुम डारो । पन्ना पात वृक्ष गतिधारी ॥
चुन्नी पँचरँग फूल सुहाये । फल मुक्ताहल झुकत झुकाये ॥
और बनी बहु चित्तरकारी । बेलि बङ्क बूटा अधिकारी ॥
हीरा मोती चेतन होई । जाने साधू बिरला कोई ॥

दो०—ताकी छवि अति ललित है, शोभा सरस सुजान ।
लगो चँदोवा दिव्य अति, चेतन करो बखान ॥

लगे चँदोवा झालरि मोती । मानौ उडुगणं झिलमिलज्योती ॥
झालर बनी चँदोवा केरी । दिव्य दृष्टि करि साधुन हेरी ॥
ता पर रंगमहल की शोभा । चेतन आनँद सुखकी गोभा ॥
स्थिर इकरस भीत सुढारी । बने झरोखा अद्भुत बारी ॥
अजब कँगूरा सुबक सुढारे । चौंसठ कलश लगे अतिप्यारे ॥

---

१ आदित्य, दिवाकर, भास्कर, प्रभाकर, सहस्रांशु, त्रैलोक्यलोचन, हरिदश्व, विभावसु, दिनकर, द्वादशात्मक, त्रिमूर्ति, सूर्य. २ नक्षत्र ॥

रतनजटितकी खिड़की सोहैं। ताके आगे दिनकर कोहैं॥
भीत झरोखा कलशन माहीं। नग पन्ना लागे सब ठाहीं॥

दो० मणि हीरा माणिक लगे, रंगमहल के माहिं।
बिन पहुंचे निज धामके, क्योंहू दीखत नाहिं॥
आसपास बहु कुंज हैं, बीच लालको धाम।
चरणदास को दीजिये, सखियन में बिश्राम॥
जैसे चौंसठ खम्भ हैं, तैसे करों बखान।
छत्र सिंहासन वर्णहूँ, और सखियन की आन॥

तीस खम्भमें खम्भा बीस। तामें चौदह खम्भा ईस॥
परम बिछौना हे थिरथाये। मानौ सूरज लक्ष छवि छाये॥
तापर सिंहासन बड़भागी। श्वेतरूप चेतन अनुरागी॥
सिंहासन पर कछू बिछायो। शोभा ताकी कहत न लजायो॥
धरो गेंदवा तकिया नीके। छत्तर सोहे ऊपर पियके॥
पियकी शोभा कहा बखानूं। आदि अन्त ताको नहिं जानूं॥
अंजर[1] पुरुष पुरुषोत्तम स्वामी। सब जीवनको अन्तरयामी॥
पारब्रह्म अविचल अविनाशी। बायें अङ्ग रूपकी राशी॥
गोरी राधा कृष्ण श्यामघन। सिंहासन पर ललितमुदितमन॥
आसन जहाँ अखिलजगदीशा। मुकुट चन्द्रिका सोहै शीशा॥
मकराकृत कुण्डल छवि ऐसी। जग में कहा बखानूं जैसी॥
जुलफैं श्याम भुवङ्गम कारी। कजियारी अरु घूंघुरवारी॥
सहज सुगन्ध रहे महकाई। लांबी चिकनी अरु बलखाई॥
बांकी भौंह कुटिल अनियारी। तिरछी पलकें लागें प्यारी॥
रस के माते घूम घुमारे। ललचौहैं दृग हैं कजरारे॥

---

१ जो कभी बूढ़ा न हो॥

प्रथमपाठ॰जन्ञ॥

बांके दीरघ ओर ललचौहैं । चितवत सखियन के मन मोहैं ॥
सुवक बुलाक नाक में सोहै । ध्यान करत मेरो मन मोहै ॥
बिजुरीसी मुसकानि पियाकी । मनखैंचनि अरुभाल हियाकी ॥
वदन श्यामघन कहाबखानूं । कोटि भानु छवि मुखपर वारूं ॥
दिव्य नीमा* अंग माहीं सोहै । सूरज कोटि कला छवि मोहै ॥
कंठी कंठ धुकधुकी झमकै । तामधिकौस्तुभमणिअतिदमकै ॥
मोतियन की माला बनमाला । हुलसैं देखि धाम की बाला ॥
दिव्य बद्धि[1]गलजंद जड़ाऊ । नौरतनन के बाजू बाऊ ॥
पहुँची कड़ा कहा छवि गाऊं । सम तुल ताकी कहा बताऊं ॥
दिव्य जहांगीरी दोउ[1]करमाहीं । ताकी सम कछु कलमें नाहीं ॥
रतन चौक में लाल विराजैं । शोभा गावत मो मन लाजैं ॥
रतन चौकहै पीठ हथेली । लगी जँजीर मुँदरियन भेली ॥
चौकी सुघर हिये पर राजै । कटिकिंकिणिघुँघुरूध्वनि बाजै ॥
जुगलचरण पैंजनि झनकारें । दिव्य टोरे तिनमें ठनकारें ॥
कोटि चन्द्र दश नखपर वारूं । तलु अन चिह्न इकीस निहारूं ॥
वायें अंग राधिका प्यारी । कोटि चंद्रछवि मुखपर वारी ॥
जुगल सखी लै चँवर ढुरावैं । हिये हरषि महासुख पावैं ॥
खंभ खंभ ढिग सखी सहेली । चौदहखड़ीं ईश अलबेली ॥
औरसखी बहुतक बहिठाऊं । शोभा जिनकी कहत लजाऊं ॥
नित्य किशोरी गोरी सारी । पांच तत्त्व त्रैगुण[2] तें न्यारी ॥
दिव्य वस्त्र दिव्यभूषण जाना । अधिकरूप छवि बारह भाना ॥
कजियारी कच लटकैं बैनी । मुतियन मांग भरैं छवि पैनी ॥
चूड़ामणि गहनो अति नीको । शीशफूल अरु बेनो टीको ॥

---

१ जोकि समुद्रमथन में समुद्रसे निकसी थीं २ सत्, रज, तम ॥

प्रथमपाठ *दिव्यप्रभा अंग अँगन [1]बँधी [1]कर ॥

करणफूल सँग बन्दी लागी । झुमके थिरकैं महा सुभागी ॥
अंजन आंजे नैन ढरारे । तीखे अनियारे पिय प्यारे ॥
घूंघुरवारी[1] अलकैं लटकैं । वेसरिनासा छवि लिये मटकें ॥
चम्पाकली नौलरी माला । चन्दनहार सुपहिरे बाला ॥
कठुला जैसे गले जनेऊ । और हियचौकी महा अभेऊ ॥
सखी शिंगार हार सब साधैं । बाजूबँद बाहुन पर बांधैं ॥
सदा सुहागिनि पहिरे चूरी । सुबक पछेली बँगरी रूरी ॥
कँगनी अरु पहिरे जहँगीरी । रतनचौक छवि लगी जँजीरी ॥
छाप छला अरु पहिरें मुँदरी । नुहसत पहिरें सुन्दर अँगुरी ॥
पांवन में पगनेवरि बाजें । नख शिखलौं आभूषण साजें ॥
और सखी बिखरीं वन माहीं । सो काहू विधि गिनी न जाहीं ॥

दो० सुन्दर छवि पियरे वसन, झुण्ड सखिन के जान ।
कोउ पुञ्ज ऊदे वसन, सुघर सवारी आन ॥
लालवसन बहुतक सखी, श्वेत वसन बहुनार ।
नीलवसन बहु भामिनी, सबको रूप अपार ॥
हरे वसन नारी घनी, घनी गुलाबी वेष ।
बहुत झुण्ड कइ रंगसों, गायसकें नहिं शेष ॥

निज वन चौंसठि खंभे माहीं । होत अखण्ड रास वहिठाहीं ॥
झुण्ड सखेयों बनि बनि आवें । हुलसिहुलसिलालन ढिग धावें ॥
रासकेलि खेलें बहु रंगा । सदा विहार करें पिय संगा ॥
कबहुंक घुमरि घुमरि घुमरावैं । नैन सैन दै भाव बतावें ॥
कबहूंक थेइ थेइ थेइ थेइ करें । कबहूंक अँगुली नासा धरें ॥
कबहूंक कर उठाय गति चालें । मांग उपांग बनाबत हालें ॥
कबहूंक ठुमुक-ठुमुक पग धावें । घुंघुरूकी गति अधिक बजावें ॥
होअनुराग रागनीगावें । बाजे अद्भुत अधिक बजावें ॥

१ तिरछे २ छल्लेकी समान लहरी जिनमें होती हैं ॥

दो० कहा बुद्धि कहा कहिसकूं, रासकेलि को साज।
अद्भुत लीला होय रही, वर्णत आवै लाज॥
अखण्ड धाम लीला अमर, नित वृन्दावन रास।
नित विहार जहाँ होत है, चरणदास को वास॥
गौरीसुत[1] नहिंगा सकैं, नहीं शारदा वाम[2]।
चरणदास कहा बुद्धि है, बरणि सकै निज धाम॥
बड़ी दया मोपै करी, कृष्ण कुँवर सुन लाल।
वाणी आप बनायकै, कीन्हो मोहिं निहाल॥
ममहिरदय में आयकै, तुमही कियो प्रकास।
जो कछु कहौ सो तुम कहौ, मेरे मुखसों भास॥
आदि पुरुष परमातमा, तुमहिं निवाऊं माथ।
चरणन पास निवास दै, कीजै मोहिं सनाथ॥
तुम्हरी भक्ति न छांड़िहूँ, तनमनशिरक्यों न जाव।
तुम साहिब मैं दासहूँ, भलो बनो है दाव॥
शुकदेव गुरु कृपा करी, मूरुख भये प्रवीन।
मम मस्तकपर करधरयो, जानि निपट आधीन॥
कोटि नाम को फल लहै, तिरवेणी[3] अस्नान।
शोभा गावै लोक की, मूरख होय सुज्ञान॥
पढ़ै सुनै जो प्रीतिसों, पावै भक्ति हुलास।
नितउठि कर तू पाठ यह, चरणदास कहि भास॥
प्रेम बढ़ै अघ सब हरैं, कलह कल्पना जाय।
पाठ करै या लोकको, ध्यान करत दरशाय॥

इति श्रीशुकदेवानुदासचरणदासकृतअमरलोकनिजधामनिजस्थानपुरुषोत्तमपुरुष विराजमानप्राप्तिर्नरदुर्लभालीलासम्पूर्णा॥

---

१ गणेश २ ब्रह्मा ३ जहांपर कि गंगा यमुना और सरस्वती एकमें मिलि हैं॥

अथ श्रीगुरुचेलासंवादधर्मजहाजप्रारम्भ ॥

शिष्यवचन ॥

दो०–अर्ज करै कर जोरिकै, यह चरणनको दास ।
एहो श्रीशुकदेव जी, कछु पूंछन की आंस ॥

गुरुवचन ॥

पूंछौ मनको खोल करि, मेटो सव सन्देह ।
अरु तुम्हरे हिरदय विषे, सदा हमारो गेह ॥

शिष्यवचन ॥

मैंतो चरणहि दासहौं, तुम तौ परम दयाल ।
एकन पग पनहीं नहीं, एक चढ़ैं सुखपाल ॥
यही जु मोहिं वताइये, एक मुक्ति को जाहिं ।
एक नरकको जाय करि, मार यमोंकी खाहिं ॥
एकदुखी इक अतिसुखी, एक भूप इक रंक ।
एकन को विद्या वड़ी, एक पढ़े नहिं अंक ॥
एकन को मेवा मिलै, एकन चनेभि नाहिं ।
कारण कौन दिखाइये, करि चरणनकी छाहिं ॥
यही मोहिं समझाइये, मनका धोखा जाइ ।
है करि निस्संदेह में, चरण रहौं लपटाइ ॥

गुरुवचन ॥

जिन जैसी करणी करी, तैसेही फल पाय ।
भुगतत हैं वे जगत में, ताको वदला आय ॥

शिष्यवचन ॥

कही तुम्हारी हिय धरी, व्यासपुत्र शुकदेव ।
सुगत कुगत करणीनको, भिन्न भिन्न कहु भेव ॥

गुरुवचन॥

अब मैं वर्णन करत हौं, एशिष धर्म जहाज।
तामें बैठे विधि सहित, रहनी गहनी साज॥
जो कोइ करणी ना करै, बहुत करै बकवाद।
रीता जानौ तासु को, छूटै ना जग व्याध॥
कथनी कै पूजी नहीं, करणी है ततसार।
तामें लाभहि लाभ है, बदला दे कर्तार॥
सूरति कीन्ही साधु की, तन मन लागी आग।
बिन करणी कैसे बुझे, हरिसों नाहीं लाग॥
कथनी कथि दंभी भये, कहैं दूर की बात।
अन्तरमें करणी नहीं, मनहीं माहिं लजात॥
दंभी उनको जानिये, जगमें सिद्ध दिखात।
तनमन बचन नसाधिया, तिहुँविधि रोपी घात॥
तनमंन साधे साधु सो, वचन साधि जो लेय।
उज्ज्वल करणीके सहित, रामभक्ति चितदेय॥
तनसों करणीही करै, मनसों निश्चय लाय।
वचन जो ऐसा बोलिये, जो सबहीको सुहाय॥

बिन करणी थोथी[1] सब बातें। जैसे बिन चंदाकी रातें॥
ताते समुझि करो तुम करणी। बिन बोये नहिं उपजै धरणी॥
जैसा बोवै तैता लुनिये। जानत ज्ञानी पण्डित गुनिये॥
कीकर[2] नींब बवै सोइ पावै। अरु मेवा बोवै सोइ खावै॥
पिछिली करणी अबकै पावै। ताहीको नर करम बतावै॥
होनहार अरु भाग वही है। परालब्ध[3] सोइ बड़ोकही है॥
खोटी करणी से दुख भारी। होवै रंक पुरुष अरु नारी॥

---

१ बेकार २ बब्बुर ३ भाग्य॥

कहैं शुकदेव सांच यह जानौ । चरणदासलै मनमें आनौ ॥

दो० कोइ कोढ़ी कोइ आंधरा, कोई रोगी निर्धन्न ।
अंगहीन मांगत फिरै, कोइ भूखा विन अन्न ॥
विना वुद्धि कोइ वावरे, कोइ छोटतन हान ।
कोइ कर्मो से अति दुखी, जीवै ना सन्तान ॥
कोई जगत अधीन है, कोई विना प्रतीत ।
कोइ सव वस्तू हीन है, यह पापों की रीत ॥
जन्म मरण वहु भांतिके, नाना भवन निवास ।
करणीही से होत है, ऊँच नीच घर वास ॥
पशु पक्षी अरु चर अचर, सोभी छूटै नाहिं ।
कर्मोंही की चालसों, भुक्तै जग के माहिं ॥

भांति भांति के कष्ट घनेही । पावत हैं वे कर्म सनेही ॥
इनहीं आंखिन सों तुम देखौ । अपने मनमें करि करि लेखौ ॥
तन छूटे पुनि नरक गहे हें । नाना विधि के त्रास सहे हें ॥
नरकनकी गति परघट जानौ । शास्त्र माहिंसवकियो वखानौ ॥
अरु इक नरक जगत के माहीं । कोतवाल हाकिम के ठाहीं ॥
खोंटे कर्मन सों ह्वां जावे । त्रास सहे वहुते विरलावे ॥
शुभकर्मी जा निकसै आगे । उठि हाकिम चरणनसेलागे ॥
कहि शुकदेव सांचहै करणी । सुनिरणजीत करैसो भरणी ॥

दो० शुभकरणी पिछली करी, उज्ज्वल पाई देह ॥
शोभा जिनके भागकी, चरणदास सुनिलेह ॥

तनसों सुखी और धनधारी । सुत नारी सुन्दर संमारी ॥
नानाविधि के भोग करत हें । अरु वहुतन के दुःखहरत हें ॥
ऊँचे महल महा सुखदाई । जहां विराजत हें मनलाई ॥
तीनो ऋतुमें वे सुखपावें । वहुतक लोग टहलमें आवें ॥

पिछली करणी कर्म झुलाये। जैसे जैसेही सुख पाये॥
काहू मिली तुरंग सवारी। काहु पालकी झालरदारी॥
काहू गज पाये बहुतेरे। लाखौं पुरुष रहत हैं चेरे॥
श्रीशुकदेव कहे ये बैना। चरणदास लखु अपने नैना॥

दो० लाखौं पगसों लगिरहे, रहैं जीविका आस।
ईश्वर तिनके जेइहैं, वे हैं चरणहिं दास॥

ऐसी ईश्वर पदवी पाई। पुण्य प्रताप कहा नहिं जाई॥
सुनिकै शुभकर मनको कीजो। खोंटे कर्म सभी तजि दीजो॥
इनहीं आंखिनसों सब सूझै। बुद्धिमान प्रत्यक्ष जु बूझै॥
कोई चढ़े जाहिं रथमाहीं। सूरज मुखी तासुकी छाहीं॥
कोइ किरोड़पति लाखन वारा। कोई हजारनको व्यवहारा॥
कोई थोड़े में सुख पावै। ह्वैकर सुखी बहुत हरषावै॥
पिछली जैसी करी कमाई। तैसी तैसीही निधि पाई॥
शुकदेव कहियों आलस हरियो। चरणदास शुभकरणी करियो॥

दो० सुर दानव अरु अप्सरा, मनुष यक्ष गण प्रेत।
कर्मोंहीं से होत है, पाप पुण्य का हेत॥

नहिंतो हरि द्वैद्रष्टा नाहीं। एक दृष्टि सब ऊपर छाहीं॥
जो जैसी करणी करि लेवै। हरि तैसाही बदला देवै॥
अपना किया आपही पावै। परालब्ध वह नाम कहावै॥
घटै बढ़ै वह नेकु न क्योंहीं। पावै वही जु करणी ज्योंहीं।
नारिपुरुष मिलिकरि व्यवहारा। करणी सों उपजै संसारा॥
बाहे बोवे खेत किसाना। भांतिभांतिके उपजैं दाना॥
बाग लगावै सींचै माली। जब फल लागैं डाली डाली॥
पक्षी अरु मानुष सुख पावै। चरणदास शुकदेव सुनावै॥

---

१ घटाटोप

दो० माली करणी जो तजें, सींचै ना पटमास ।
जब वह बाग उदास हो, दिन दिन वाको नास ॥
दया धर्म पुण्य दानहीं, वड़ करणी है सांच ।
तीनलोक[1] चौदह[2] भुवन, माहिं न आवै आंच ॥

तीरथ बरत कछू जो कीजै । अरु काहूको दान जु दीजै ॥
याको भी फल नीको पावै । चरणदास शुकदेव दिखावै ॥
शुभकरणी करि भक्ति उपावै । ताते हरिके निकट रहावै ॥
करणी योग महा बलदाई । ईश्वर ह्वै पावै मुक्ताई ॥
चारमुक्ति करणी सों पावै । मन करणीसों ज्ञान जगावै ॥

दो० उज्ज्वल कर्म सदा किये, अरपै हित भगवान ।
लही मुक्ति सालोकही, जन्म मरणकरि हान ॥
सेवा करि भगवान की, निकट विराजै जाय ।
सा*मीप मुक्तिपाई तिन्हहुँ, इन्द्रहु से अधिकाय ॥
ध्यान किया श्रीकृष्ण का, भये जु वाके रूप ।
लही मुक्ति सारूपही, तनधरि अधिक अनूप ॥
पांचौं[3] मुद्रा योगवल, दशोंवें काढ़ै प्रान ।
मिली ज्योतिमें ज्योतिही, यह सायुज्य पिछान ॥
सवही करणी है वड़ी, भक्ति सवन शिरमोर ।
बांह पकरि हरि हेत करि, राखैं अपनी ठौर ॥
अजामील सों भी अधिक, जो कोउ पापी होय ।
नाम जपै हिय शुद्ध सों, पातक जावैं खोय ॥

---

१ स्वर्ग १ मृत्यु २ पाताल ३ । २ भूः १ भुवः २ स्वः ३ मह ४ जन ५ तप ६ सत्य ७ तल ८ अतल ९ वितल १० सुतल ११ रसातल १२ तलातल १३ पाताल १४ । ३ प्राण, अपान, समान, उदान, व्यान । ४ दशों इन्द्रिय । आंख, नाक, श्रवण, जिह्वा, हाथ, वाणी, पांव, त्वचा, लिंग, गुदा ॥

प्रथमपाठ * निकट ॥

महिमा गुरु के ध्यानकी, को करि सकै बखान।
मेरे मन निश्चय यही, जाय मिलै भगवान॥
करणी सों सत्ती भवै, करणी सों दातार।
करणी सों शूरा भवै, जावै स्वर्ग मँझार॥
भांतिभांति के सुख जहां, भोगै भोग अपार।
धर्म पन्थ कोई चलै, शूद्रा कै नर नार॥
चारिसमय नित नेमकरि, सदा रहै निष्पाप।
गिना जाय हरि जन बिषे, होय नहीं जन ताप॥
जिन जैसी करणी करी, सो निष्फल नहिं जाय।
जाका बदला होयगा, शुकदेवा कहै गाय॥

ब्राह्मण करणी ब्राह्मण होई। क्षत्री कर्मसों क्षत्री सोई॥
वैश्य कर्म सों वैश्य कहावै। शूद्रकर्म सों शूद्र लखावै॥
नहीं तो सबकी देह बराबर। पांचतत्त्व त्रैगुण सों कर कर॥
कान आंख मुख नासा एकी। शीश हाथ पग काया देखी॥
एकबाट[1] ह्वै सबही आवैं। एकहि भांति सबै बनिधावै॥

दो० जाति वंर्ण अरु[2] आश्रम, करणी सों दर्शाय।
चरणदास निश्चय करो, मूरख भी ले पाय॥
धोबी छीपी आदि दै, ये छत्तीसौ पौन।
करणी के सब नाम हैं, जैसो करै सो जौन॥

कर्मोंहीं से जग यह भासै। कर्मोंही से फिर ह्वै नासै॥
कर्म प्रलय उतपत्ति करावै। होनिहु कर्म ब्रह्म ह्वै जावै॥
परलय समय कर्म जी साथा। बुरे भले जो लागै गाथा॥
संगहि जाय रहै माया में। माया जाय लगत काया में॥

---

१ चारि अर्थात् ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य शूद्र। २. चारि अर्थात् ब्रह्मचारी, गृहस्थ, वानप्रस्थ, संन्यास॥

वासा करि हरि चरणन माहीं । होय लीन वह मिटै जुनाहीं ॥
पूंजी कर्म जु माया पासा । फिरउतपति की वाको आसा ॥
परलय कालव्यतीते जवहीं । उतपति करै जगतहू तवहीं ॥
चरणदास तुम ऐसे जानौ । कहैशुकदेव सांच करि मानौ ॥

दो० रहत प्रलय महँ वस्तु छः, इनका नाश न होय ।
सो मैं वर्णन करतहौं, वुधिआंखन सों जोय ॥

काल अकाश जीव अरु माया । पाप पुण्य प्रत्यक्ष वताया ॥
फिर उतपति इनहीं सों होई । जानै पण्डित विरला कोई ॥
काल न एकौ करै पुराना । प्रलय होय सो निश्चयजाना ॥
फिर परलय को लागारहै । करै समाप्त आपना गहै ॥
उतपतिसमै और नहिं होई । परलय हुये जो उतपति सोई ॥
कर्म धरे रहै ज्यों के त्योंही । उलटै पलटै नाहीं क्योंहीं ॥
जैसे के तैसे तन धारे । कर्म लगे रहे उनके लारे ॥
कहि शुकदेव कर्मगति भारी । चरणदास कोइ छुटै खिलारी ॥

शिष्यवचन ॥

दो० चरणदास यों कहत है, सुनो गुरू शुकदेव ।
ज्यों करि हो निष्कर्मही, ताको कहियो भेव ॥

गुरुवचन ॥

कहि शुकदेव सँदेह मिटाऊं । ज्योंकी त्यों पूरी समझाऊं ॥
खोटी करणी नरकहि जावे । पाप क्षीण मृतलोकहि आवे ॥
भले कर्म जा स्वर्ग मँझारा । पुण्यक्षीण मृतलोकहि डारा ॥
ऐसे लोक लोक फिरि आवे । कर्म न छूटै दुख सुख पावें ॥
जैसे कर्म छुटै सो कहूँ । तोपे दया करतही रहूँ ॥
खोटे कर्म सु सकल निवारै । शुभ करणी को नीके धारै ॥
जाके फलको मन नहिं लावे । ह्वै निष्कर्म परम सुख पावे ॥

फल त्यागै सोइ चरणादासा । चरणकमलकी राखै आसा ॥

दो० सो पावै निर्वान[1] पद, आवा गमन मिटाय ।
जन्म मरण होवे नहीं, फिरि फिरि काल न खाय ॥

शिष्यवचन ॥

जो जो कहि गुरुदेवजी, सो सो परी प्रत्यक्ष ।
चरणदास को दीजिये, साधु होन की शिक्ष ॥

गुरुवचन ॥

वही साधवी जानिये, निरवारै सब कर्म ।
तन मन वचन सधेरहैं, पाले अपना धर्म ॥
पहिले साधै वचन को, दूजे साधै देह ।
तीजे मन को साधये, गुरु सों राखै नेह ॥
जिनहीं के उपदेश को, सुन राखे निज चित्त ।
ताको मनन सदा करै, भूलै ना नित वृत्त ॥

शिष्यवचन ॥

जो जो कही सो जानिया, एहो श्री शुकदेव ।
साधन तन मन वचन को, सबही कहिये भेव ॥

गुरुवचन ॥

शिष्य सो तोसों कहत हौं, नीके सुन दै कान ।
ज्यों ज्यों कर्म बचैं दशौ, ताकी करि पहिचान ॥

प्रथम वचन के चार सुनाऊं । तेरे चितमें नीके लाऊं ॥
एक यही जो झूंठ न बोलै । सांच कहै तब हिरदय तोलै ॥
झूंठ कहन को पातक भारी । जो जप करै सुदेह उजारी ॥
झूंठेका जप लागत नाहीं । सिद्धहोय नहिं निष्फल जाहीं ॥
अरु झूंठेकी नहिं परतीतें । झूंठेकी खोटी सब रीतें ॥

[1] जिसको कि ब्रह्मपद सबसे उत्तम कहते हैं ॥

दूजे निन्दा नाहीं करिये । पर के औगुण चित्त न धरिये ॥
निन्दाका भारी है पाप । यासों भी निष्फल है जाप ॥
तीजे कडुआ वचन न भाखे । सवजीवन सों हितही राखे ॥
खोटा वचन महा दुखदाई । जो साधै सो अतिवलदाई ॥
खोटा वचन तपस्या खोवै । नरक माहिं ले जाय समोवै ॥
मीठे वचन बोलि सुखदीजे । उनके मनका शोक हरीजे ॥
कहि शुकदेवा चौथा सुनिये । चरणदास लै मनमें गुनिये ॥

दो० चौथे मौन गहे रहे, लक्षण अधिक अमोल ।
कर्म लगै जग वात सों, हरि चरचा में खोल ॥

तन सों तीनि कर्म जो लागे । जो मैं कहूं तुम्हारे आगे ॥
चोरी जारी अरु हिंसा है । इन पापन सों भारी भय है ॥
कर्म छुटै जाकी विधि गाऊं । भिन्न भिन्न तोको समुझाऊं ॥
तन सों चोरी कवहुँ न कीजे । काहूकी नहिं वस्तु हरीजे ॥
चोरी त्यागै सो सतवादी । तापर रीझैं राम अनादी ॥
जारीके क्रम ऐसे भानौ । परतिरिया को माता जानौ ॥
तीजी हिंसा त्यागहि कीजे । दया राखि जीवन सुख दीजे ॥
दया वरावर तप नहिं कोई । आतम पूजा तासों होई ॥
कर्म छुटन का भारी गैला । ज्यों सावुन उजला पट मैला ॥
शुकदेवा कहे तन के कहे । तीनि करम अव मनके रहे ॥

दो० कहों जु मनके तीनि अव, झीनी जिनकी वात ।
गुरू दिखाये दीखई, विधि औरी न दिखात ॥
खोटी चितवन वैरही, अरु तीजा अभिमान ।
इन सों कर्म लगें घने, मेटैं संत सुजान ॥

खोटी चितवनि खोलि दिखाऊं । जासों कहिये सो समुझाऊं ॥
कवहूं चितवै परनारी को । कवहूं चितवै फलवारी को ॥

मनही मन में भोगै भोग । हाथ न आवैं उपजै शोग ॥
कबहूं चितवै वाको मारौं । कबहूं चितवै फांसी डारौं ॥
कबहूं चितवै द्रव्य चुराऊं । वाको धन अपने घर लाऊं ॥
कबहूं चितवै ठगई करौं । माल बिराना छलकरि हरौं ॥
भांति भांति चितवनि उपजावै । बुरे मनोरथ कर्म लगावै ॥
ताते याका करै उपाऊ । होय जो साधू कर्म छुटाऊ ॥
जो चितवै तौ हरि गुरु चरणा । ब्रह्मविचार सदाही करणा ॥
खोटी चितवनि चितवै नाहीं । सदा रहै थिर ताके माहीं ॥
कहि शुकदेव सो हिरदै रहै । इत उतको चित नाहीं बहै ॥

दो० दूजा कर्म जु वैर है, महा पाप की पोट ।
सदा हिया जलता रहै, करै खोटही खोट ॥

वैरभाव में अवगुण भारी । तनछूटै जा नरक मँझारी ॥
वैरी याद रहै मन माहीं । हरि सों हेत लगन दे नाहीं ॥
ताते वैरभाव नहिं कीजे । याको कर्म लाग नहिं दीजे ॥
अरु तीजा जानौ अभिमाना । गुरू कृपा सों ताको जाना ॥
हूं हूं हूं हूं करता रहै । नीचा होय तौ अन्तर दहै ॥
कबहूं फूलै मन के माहीं । मो समान कोउ ऊंचा नाहीं ॥
मैंही योंकर योंकर करिया । मो बिन कारज कछू न सरिया ॥
अपने को चतुरा बहु जानै । और सबन को मूरख मानै ॥
अभिमानी ऐसा मन लावै । हरिकेगुण किरिया बिसरावै ॥
गर्व भरा खोटी वृत्ति धारै । अपने मनमें कबहुँ न हारै ॥
शुकदेव कहै वाहि पहिचानो । नरकजायगा निश्चय आनौं ॥
रणजीता अभिमान न कीजे । कर्म बचाय परम सुख लीजे ॥

दो० कृत्य घनी बेमुख भवै, गुरु सों विद्या पाय ।
उनको जानै तनकही, आपन को अधिकाय ॥

जैसे इक दृष्टान्त सुनाऊं । कथा पुरानी कहि समुझाऊं ॥
महापुरुष इक स्वामी पूरा । ज्ञान ध्यान में था भरपूरा ॥
लक्षण सभी हुते वा माहीं । आठपहर हरिहीको ध्याहीं ॥
उनको शिष्य आन इक भयो । वहि उपदेश जु नीको दयो ॥
करिके प्यार निकट जो राखो । प्रीतिकरी अरुसवकछुभाखो ॥
फिरि रामतकी आज्ञा लीन्ही । उनहूँ करि किरपातवदीन्ही ॥
पहुँचा एक नगर अस्थाना । ह्वांके नरन सिद्ध वहजाना ॥
ठहराया अरु पूजा कीन्ही । वहुत नरन ने कण्ठीलीन्ही ॥
वहुतक प्राणी आवें जावें । संध्या भोर शीश वहु नावें ॥
महिमा देखि फूल[1] मनमाहीं । कहाकि हमसमगुरुभी नाहीं ॥

दो० गद्दी पर बैठा रहै, तकिया बड़ लगाय ।
वहुत रहैं आज्ञा विषे, शिरपर चँवर ढुराय ॥

गुरु परताप नहीं वह जानै । अपनीही बुधि बड़ी जुठानै ॥
मूरख आगे क्यों नहिं भया । दीन होय करि द्वारेगया ॥
थोड़ेहीसे वहु इतराना । गुरुकी कृपा प्यार ना जाना ॥
वार वार शोचै मन मोई । हमरो गुरु क्या ऐसो होई ॥
उनको तो नर कोइ कोइ जानै । हमको सिगरो देश वखानै ॥
दिन दिन वढ़ता दीखै आगे । मेरे भाग वड़ेही जागे ॥
मेरे मनमें ऐसी आवे । उनका शिष्य जु कौन कहावे ॥
वहीं अचानक गुरु ह्वां आया । वैठेही शिर शिष्य नवाया ॥

दो० जैसे आते वैष्णव, करता वह दंडौत ।
ऐसेही गुरु से किया, आदर किया न वहोत ॥

देखि गुरू मन हांसी ठानी । वाको जाना वहु अभिमानी ॥
मुखसोंकहिकरि वहुझिड़कारा । कहा कि तू अभिमानी भारा ॥

---

१ आनन्द ॥

मनही मन में भोगै भोग । हाथ न आवै उपजै शोग ॥
कबहूं चितवै वाको मारौं । कबहूं चितवै फांसी डारौं ॥
कबहूं चितवै द्रव्य चुराऊं । वाको धन अपने घर लाऊं ॥
कबहूं चितवै ठगई करौं । माल बिराना छलकरि हरौं ॥
भांति भांति चितवनि उपजावै । बुरे मनोरथ कर्म लगावै ॥
ताते याका करै उपाऊ । होय जो साधू कर्म छुटाऊ ॥
जो चितवै तौ हरि गुरु चरणा । ब्रह्मविचार सदाही करणा ॥
खोटी चितवनि चितवै नाहीं । सदा रहै थिर ताके माहीं ॥
कहि शुकदेव सो हिरदै रहै । इत उतको चित नाहीं बहै ॥

दो० दूजा कर्म जु वैर है, महा पाप की पोट ।
सदा हिया जलता रहै, करै खोटही खोट ॥

वैरभाव में अवगुण भारी । तनछूटै जा नरक मँझारी ॥
वैरी याद रहै मन माहीं । हरि सों हेत लगन दे नाहीं ॥
ताते वैरभाव नहिं कीजे । याको कर्म लाग नहिं दीजे ॥
अरु तीजा जानौ अभिमाना । गुरू कृपा सों ताको जाना ॥
हूं हूं हूं हूं करता रहै । नीचा होय तौ अन्तर दहै ॥
कबहूं फूलै मन के माहीं । मो समान कोउ ऊंचा नाहीं ॥
मैंही योंकर योंकर करिया । मो बिन कारज कछू न सरिया ॥
अपने को चतुरा बहु जानै । और सबन को मूरख मानै ॥
अभिमानी ऐसा मन लावै । हरिकेगुण किरिया बिसरावै ॥
गर्व भरा खोटी वृत्ति धारै । अपने मनमें कबहुँ न हारै ॥
शुकदेम कहै वाहि पहिचानौ । नरकजायगा निश्चय आनौं ॥
रणजीता अभिमान न कीजे । कर्म बचाय परम सुख लीजे ॥

दो० कृत्य घनी बेमुख भवै, गुरु सों विद्या पाय ।
उनको जानै तनकही, आपन को अधिकाय ॥

जैसे इक दृष्टान्त सुनाऊं । कथा पुरानी कहि समुझाऊं ॥
महापुरुष इक स्वामी पूरा । ज्ञान ध्यान में था भरपूरा ॥
लक्षण सभी हुते वा माहीं । आठपहर हरिहीको ध्याहीं ॥
उनको शिष्य आन इक भयो । वहि उपदेश जु नीको दयो ॥
करिकै प्यार निकट जो राखो । प्रीतिकरी अरुसबकछुभाखो ॥
फिरि रामतकी आज्ञा लीन्ही । उनहूँ करि किरपातबदीन्ही ॥
पहुँचा एक नगर अस्थाना । ह्वांके नरन सिद्ध बड़जाना ॥
ठहराया अरु पूजा कीन्ही । बहुत नरन ने कण्ठीलीन्ही ॥
बहुतक प्राणी आवैं जावैं । संध्या भोर शीश बहु नावैं ॥
महिमा देखि फूल[1] मनमाहीं । कहाकि हमसमगुरुभी नाहीं ॥

दो० गद्दी पर बैठा रहै, तकिया बड़े लगाय ।
बहुत रहैं आज्ञा बिषे, शिरपर चँवर ढुराय ॥

गुरु परताप नहीं वह जानै । अपनीही बुधि बड़ी जुठानै ॥
मूरख आगे क्यों नहिं भया । दीन होय करि द्वारेगया ॥
थोड़ेहीसे बहु इतराना । गुरुकी कृपा प्यार ना जाना ॥
बार बार शोचै मन सोई । हमरो गुरु क्या ऐसो होई ॥
उनको तौ नर कोइ कोइ जानै । हमको सिगरो देश बखानै ॥
दिन दिन बढ़ता दीखै आगे । मेरे भाग बड़ेही जागे ॥
मेरे मनमें ऐसी आवै । उनका शिष्य जु कौन कहावै ॥
वहीं अचानक गुरु ह्वां आया । बैठेही शिर शिष्य नवाया ॥

दो० जैसे आते वैष्णव, करता वह दंडौत ।
ऐसेही गुरु से किया, आदर किया न बहोत ॥

देखि गुरू मन हांसी ठानी । वाको जाना बहु अभिमानी ॥
मुखसोंकहिकरि बहुझिड़कारा । कहा कि तू अभिमानी भारा ॥

---

१ आनन्द ॥

नीकी बुधि तेरी गइ खोई । बसी मूर्खता घटमें सोई ॥
मेरा सब उपदेश विसारा । जग मोहनको मन में धारा ॥
दशबीसनको शिष्यकरभूला । गद्दीपर बैठो बहु फूला ॥
शिष्यने कहा और क्या कीया । वही किया आज्ञा तुम दीया ॥
तुमनेही सतसंग बताई । कीजो दीजो जित मनलाई ॥
शिष्य शाखा करि संग बढ़ाई । मेरी तुम्हरी भई बड़ाई ॥
देखि ईर्षा तुमको आई । हमरी देखी बहु अधिकाई ॥
फिरिहँसि गुरु कहि तू अज्ञानी । मैं कहि संगति तैं नहिंजानी ॥
मैं कही भक्तनका सँग कीजे । सतपुरुषन के चरण गहीजे ॥
दिन दिन ज्ञान होय सरसाई । हरि गुरुमों है प्रीति सवाई ॥
तेरी तौ गति औरै भई । महा अविद्या में मति ठई ॥

दो० झरना मूंदे ज्ञानके, छाय रहा अज्ञान ।
राम रुठावनहीं किया, भई मुक्ति की हान ॥
कहा बात पूंजी कहा, इतने में गयो भूलि ।
मति ओछी घट थोथरा, तापर बैठा फूलि ॥
सिद्धी प्रापत जो भवे, देह विसर्जन होय ।
वहभी जो गुरु को तजै, जाय नरक को सोय ॥
कछू तपस्या नाकरी, नाहिं किया कछु योग ।
नाहीं लगी समाधिही, ले बैठा तू भोग ॥
रजगुण तमगुण लेलिया, तजा सतोगुण अङ्ग ।
हरि गुरुको दइ पीठिही, करि त्रिपयिनको सङ्ग ॥
भक्ति भावको छोड़ि कै, करी दम्भकी हाट ।
मुक्त पन्थको तजि दिया, लई नरक की बाट ॥
इन बातन सों क्या सरै, बहुत भया विख्यात ।

१ अरसाना २ मूर्खता ॥

तुमसे अधिकी मूढ़ नर, जगमें घने दिखात ॥
हुकुम बड़ा माया बड़ी, नामी बड़े जु भूप।
नर नारी बहु टहल में, सुन्दर अधिक अनूप ॥
सन्तन की गति और है, हरि गुरुसों सनमुक्ख।
मुक्त होय छूटैं सबै, जन्म मरण के दुक्ख ॥
जगत बड़ाई में फँसे, परी अविद्या छांहि।
नरक भुगति यमदण्डहो, फिरि चौरासी माहिं ॥

हरि औ गुरु को शिरपर धरिये, सतपुरुषनकी सङ्गति करिये ॥
रहिये साधुनके सँग माहीं। ध्यान भजन जहाँ छूटे नाहीं ॥
है परिपक्व जहां मन रहो। गुरुमत दया दीनता गहो ॥
सहज सहज उपदेश लगावो। भूलेको हरि बाट बतावो ॥
तारन तरन बहुत जन भये। क्षमा दीनता धारे गये ॥
पै उनको अभिमान न आया। नेक न पड़ी अविद्या छाया ॥
आपा मेटि गुरूही राखा। जब बोले तब गुरुही भाषा ॥
तू अभिमानी जन्म गँवाया। पापबोझ शिर घना उठाया ॥

दो॰ योंही न भकी ओरसों, वाणी भई जुआय।
कियो गुरूसों मान तैं, चौरासी को जाय ॥
ह्वां सों गुरु रमते भये, शिष्यहि दै फटकार।
कहा कि तेरे तन बिषे, हूजो बड़ो विकार ॥
तापाछे कछु दिननमें, देही भयो विकार।
निकट न आवैं तासुके, ह्वां के कोउ नर नार ॥
कुष्ठ भयो अर्द्धंगको, रहो न काहू योग।
आठ पहर वाको भयो, निरोशोगही शोग ॥
तनतजिकै नरकै गयो, फिरि चौरासी माहिं।

---

१ आकाश २ कुंभीपाक आदि चौरासी नरक संख्या॥

जो गुरु सों करे मानहीं, ताकी गतिहोय नाहीं ॥
कहैं गुरू शुकदेवजी, चरणदास परवीन ।
मनसोंतजि अभिमानको, गुरुसों रहिये दीन ॥
मान न काहूसों करै, सबही सों आधीन ।
समरथ हरिकी भक्तिमें, जगतकाज सों हीन ॥
दश कर्मों को जानिये, महापापकी खानि ।
तन मन वचन सँभारिये, यहीजु अधिकसयानि ॥
कहूं एक दृष्टान्तही, सो परमारथ भेश ।
सुनि समुझै हिरदै धरै, तौ लागै उपदेश ॥
रहै सुहावत नगर इक, बसैं लोग सुखमान ।
नर नारी सुन्दर सबै, अरुधनवन्त बखान ॥
नया करैं जहाँ भूपही, बरस दिनाके माहिं ।
संवत बीते तासुको, फिर वै राखैं नाहिं ॥

पकड़ डारदैं नद्दी[1] पारा । जहां भयानक अधिक उजारा ॥
पशू आदि ताको भषि जावैं । स्वपनासा देखैं विनशावैं ॥
नयाभूप करि आज्ञा मानैं । ताको अपना ईश्वर जानैं ॥
रहैं हुकुम माहीं करजोरैं । वाको वचन न कबहूँ मोरैं ॥
छत्तरधारी ह्वाई डारैं । सों मैं आगे कही उजारैं ॥
कई सैकड़ों ऐसे भये । चेते नाहीं निष्फल गये ॥
राजा नया और इक किया । सो वह समझा चेता हिया ॥
मनही मनमें कहै विचारे । बहुत भूप जंगल में डारे ॥

दो० बरस दिना जब बीतिहैं, हमहूँ को दे डारि ।
सरिताही के पारही, अधिकी जहां उजारि ॥

याको कछू उपाय बिचारौं । तासेती यह जन्म न हारौं ॥

---

१ नदी ॥

एक दिना उन यही विचारा। देखन गयो नदी के पारा॥
जहां भूप जाजाकरि मरते। तिनके हाड़ ह्वई जा गिरते॥
खड़ा जु होय देखि मन आई। नीकी ठौर बनाऊं ह्यांई॥
दृष्टि उठाय ऊंचि जो कीन्ही। कामदारको आज्ञा दीन्ही॥
बन काटौ आज्ञा दइ एता। फेरक पांचकोस में जेता॥
सुन्दरसा इक कोट बनाओ। तामें सुन्दर बाग रचाओ॥
करौ हवेली[1] ताके माहीं। जैसी भूपनहूँ कै नाहीं॥
गिलम[2] बिछौने परदे लावो। अरु तय्यारी सबै करावो॥
होय चुकै जब मोहिं सुनावो। बहुत इनाम अधिक तुम पावो॥

दो० वैसीही बनने लगी, जैसी आज्ञा दीन।
बनते बनते बनचुकी, सुन्दर अधिक नवीन॥

फिर राजा को आनि सुनाया। राजा सुनि बहुतै सुखपाया॥
आछी वस्तु वहां पहुँचाई। ह्यांजो रही न सुरति लगाई॥
कहा कि एक दिना ह्यां जाना। क्षणक्षण होय अवधि[3]कीहाना॥
पांचक गांव कोटके साथा। किये दिये लिखि अपने हाथा॥
अपना एक हितू मन भाई। भरी कचहरी लिया बुलाई॥
करि इनाम ताको वह दिया। वाका देखा सांचा हिया॥
और कही जो राजा होवै। वाहि तलाक[4] याहि जो खोवै॥
योंही आठ महीने बीते। करणी करि भये मनके चीते॥

दो० है निश्चित आनँदभये। चिन्ता भय नहिं कोय॥
अपना कारज करिचुके। ह्यां ह्वां एकहि होय॥

सुखही में वह वर्ष बिताया। अवधिबीतिफिरिवहदिनआया॥
सब उमराव[5] जु घिरिकर आये। नया भूप करने को लाये॥
यहि सिंहासन सों दियो डारी। कहा कि तुम्हरी बीती बारी॥

---

१ मकान २ गलीचा ३ अवादा ४ कसम ५ अमीर॥

ऐसे कहि कर गहि लै चाले । पार नदी के जंगल घाले ॥
शुभकरणी को करि वह राजा । अपने महलन जाय विराजा ॥
इतसे भी उत सुख बहुभारी । ना कोइबैरी ना जंजारी ॥
अपनी करणी से सुख पावै । रहै अशोक न चिन्ता आवै ॥
कहि शुकदेव चरणहीं दासा । शुभ करणी करि पाया बासा ॥

दो० ऐसे मानुष देह को, जानहुँ नगर समान ।
राजा यामें जीवहै, शुभकरणी परमान ॥

नाहिं तौ चौरासी जङ्गल है । भांति भांतिका जितही भौ है ॥
पशू पशूको जित भषिजावै । नित भयमानि नहीं सुख पावै ॥
बहु दुख पावै खोटी करनी । जैसी करनी तैसी भरनी ॥
शुभकरनी को जो नर धावै । बहुत भांति सुख सुरपुरजावै ॥

दो० भूप उमरअपनी किया, अपना पूरण काम ।
ऐसेही शुभ कर्म्म सों, तुमहूं पावो धाम ॥

अरु इक कथा कहौंअतिनीकी । जा सुनिजाय अविद्या[१] जीकी ॥
इक राजा था बहु परबीना । सो वह पुत्र विनाथा हीना ॥
एक समय वहि रोग जुआया । पुत्र बिना बहुतै कलपाया ॥
कौनकाज अब ह्यांको करिहै । जो मेरो देहीं यह मरिहै ॥
यह मन करत सिद्ध इकआया । राजाने सब वाहि सुनाया ॥
सिद्ध कही सुत गोद[२] घलावो । बेटाकरि तिहिराज बिठावो ॥
राजा कही जु ध्यान लगावो । राज भाग में ताहि बतावो ॥
फिरिउनकहीजुखोलि दिखाऊं । साहूकारका पुत्र बताऊं ॥
वाके भाग्य लिखा यह राजा । ताको सुत करि कीजै काजा ॥
फिर उन वाकोगोद जु लीन्हा । ह्यांको राज काज सब दीन्हा ॥
कोइक दिनमें उन तनत्यागा । पुत्र राज्य करने तब लागा ॥

---

१ मूर्खता २ चैठालेव ॥

राज्य पितासों नीका कीन्हा। प्रजाआदिको सब सुख दीन्हा॥

दो० राज करत वर्षैं भई, सुखले अरु सुख दीन।
नगर मध्य वाके कोऊ, विना द्रव्य नहिं हीन॥

एक दिना ऐसो भो काजा। सोवत चौंकि उठा वह राजा॥
भोर भये सब फौज बुलाई। हरिकी आज्ञा सो समुझाई॥
कहा जहांतक परजा मेरी। ताको लूटो जाय सबेरी॥
आज्ञा ले सब फौज पधारी। प्रजा लूटि लई तिन सारी॥
दूजे कहीं कि ह्वां तुम जावो। लूटे सब ते भवन जलावो॥
घर परजाके सभी जलाये। नीच ऊंचने बहुदुख पाये॥
तीजे वचन भूप यों भाखो। कहाफौज सों खोज न राखो॥
शस्त्र[1] सों बड़े बड़े नर मेलो। लड़के वाले कोल्हू पेलो॥
यह सुनि सकलप्रजाघिरिआई। राजा पास पुकार सुनाई॥
बहुतक राजा भये अनूठा[2]। अपनी प्रजा नहीं कोहुं लूटा॥

दो० पहिले सबको सुख दिया, अब भे तुम दुखदाय।
कारण यह कहि दीजिये, सबही को समुझाय॥
यह कहि साहूकार ने, जो था वाका बाप।
कुयश चला संसार में, बहुत लगाये पाप॥
साहुकार पण्डित घने, और बड़ेही लोग।
कोल्हूकी सुनि कतल[3]की, बहुतक माना शोग॥
आये हैं फरयाद[4] को, सुने बिगड़ते काज।
सकल प्रजाको मारिकै, किसकाकरिहौ राज॥
सकल प्रजा तुव शरणहैं, बकसि देव महराज।
अपनी अपनी भूमि में, फेरि बसैं सब साज॥

राजा कही सु मैं नहिं जानूं। अपने मुख से कहा बखानूं

---

१ हथियार २ उत्तम ३ मारना ४ गोहारि

कहा पुरुष सो इक तुम आनौ । जिनका कहासांच तुममानौ ॥
यह सुनि ज्वाब सवालहि वारे । आकरि बैठे सबन मँझारे ॥
सो इक नर बहुतै इतबारी । जिनकीसाखिहुतीबहु भारी ॥
तिनको लै राजा के पासा । खड़े किये सब चरणन दासा ॥
राजा उठि उनहीं के माहीं । मिलि बैठो पुनि वाही ठाहीं ॥
राजा कही जु हरि की ओरैं । ध्यान लगावो मनको मोरैं ॥
घड़ी चारि जब ध्यानलगाया । नभ से शब्द यही जो आया ॥

दो० ढील भूप तैं क्योंकरी , इनकी कीजे जेल ।
बड़े कतलही कीजिये , छोटे कोल्हू पेल ॥

तीनहिं बार लगाया ध्यानी । वारंवार यही भइ बानी ॥
भूप कही कहा दोष हमारा । कोपित भयोजोसिरजनहारा[1] ॥
अब तुम परजासों कहि देवो । कतल पेलना कोल्हू लेवो ॥
आय नरनकहि सबमें खोली । सुनि परजा ऐसे उठि बोली ॥
कहन सकल आपस में लागे । हम हैं मूरुख बड़े अभागे ॥
हम शुभकर्म कबहुँ नहिं कीन्हे । तिथि पर्वहि केहुदाननदीन्हे ॥
कथा कीर्त्तन में नहिं कहे । कुटुंब जाल में पागे रहे ॥
हरि की भक्ति नहीं चित लाई । ताते अब होतो मुकताई ॥

दो० हरी ही को बिसराइया , पूत महल के काज ।
नाम रहैगो जगत में , सो भी रहा न आज ॥

चले नरक को निश्चय जैहैं । मार यमों की निश्चय खैहैं ॥
कांपत है सब देह हमारी । आपस में भावैं नर नारी ॥
ऐसे ही सब रो रो बोलैं । व्याकुल भये धरणिमें डोलैं ॥
एक ठाँव ह्वै मता उपाया । सो राजा को जायसुनाया ॥
करजोरे मुख तृण गहिलीन्हे । नखशिखलौं तनदीन झुकीन्हे ॥

---

१ पैदा करनेवाला ॥

यह सुनि परजा सब हरषाई । अपने अपने घरको आई ॥
कोउ सिरकी कोउ छप्पर डारा । पक्का मंदिर नाहिं विचारा ॥
चोरी जारी सबै बिसारी । ढीले भये सभी ब्योहारी ॥
अरु साधुनकी वृत्ती धारी । बालक युवा जरठ नरनारी ॥
रहे नहीं वै खोटे मनके । भये तपस्वी कृश सब तनके ॥

दो० जो कछु गाड़ो द्रव्य गृह, करी न ताकी आंट ।
राखि लिया षटमास का, अरु सब दीन्हा बांट ॥

जिते धनिकतिन सब यह कीन्हा । हते अनाथ तिनहि दैदीन्हा ॥
कहैं परस्पर धन कहा करिहैं । छठे महीना पांछे मरिहैं ॥
यही समझि उपजा बैरागा । सकलइन्द्रियन का रस त्यागा ॥
फीके लगे भोग सब जगके । सहज काम तब छूटे अघके ॥
सबकी दशा एक जो भई । मौत जानि करि चिन्ता ठई ॥
दिन दिन दुर्बल होते जावैं । हरिहोका जप ध्यान लगावैं ॥
एक एक दिन लागै प्यारा । भजन करैं जगि न्यारा न्यारा ॥
हठ अरु वाद न कोऊ ठानै । इक इक घरी अमोलकि जानै ॥
कहैं कि खोवैं तौ कित पावैं । कथा कीर्तन सों चित लावैं ॥
कथा कीर्तन जित तित होई । साधु समागम ह्वै गये सोई ॥
घरघर शुभ कर्मन ब्योहारा । धर्म पकड़ि अधरम सब डारा ॥
ज्यों ज्यों दिवस अवधिके आवैं । घने घने शुभ कर्म कमावैं ॥

दो० जाको होवै मौतभय, जगमें लगै न चित्त ।
झुकै रामकी ओरही, बहुत लगावै हित्त ॥

उन पुरुषनकी यह गति भई । जगकी चाल डारि सब दई ॥
लाड़ चाव ब्योहार न कोई । ब्याह सगाई पुत्र न होई ॥
काम क्रोध नहिं उपजै मोहा । लोभ मान नहिं प्रीति न द्रोहा ॥

---

१ चाल २ वृद्ध ३ प्रेम ४ गुणों का गान करना ॥

ऐसे रहि शुभ कर्म्म जु करें। सदा मौत से सब जन डरें॥
सहज सहज फिरि वहदिन आया। डरे नहीं शुभकर्म्म कमाया॥
आपसमें कहें हमको क्या है। यमकी मार नरक भय नाहे॥
राजा जान्यो वह दिन आया। अपना सेवक तुरत पठाया॥
कही कि फौज सबै बनि आवैं। कतल करन परजा को धावैं॥
फौजें सजिकरि ठाढ़ी भई। आज्ञा ओर दृष्टि जो दई॥
राजाके मन ऐसी आई। उन सब पुरुषन लेहुँ बुलाई॥
सांचे सबही के इतबारी। फेरि बुलावो अबकी बारी॥
यही शोचि फिरि शीश उठाया। आज्ञाकारी निकट बुलाया॥

दो० कामदार सों यों कही, वैसो पुरुष बुलाय।
जिनमें मिलिबैठा प्रथम, हरिसों ध्यान लगाय॥

फिरि उनहिंन को लियो बुलाई। मिलि बैठा सबका सुखदाई॥
कहीकि सब मिलि सुरति उठावो। रामओर को ध्यान लगावो॥
अज्ञा होय सोइ तुम मानौ। मेरा दोष कछू मत जानौ॥
मोको अज्ञा होय सो करिहौं। अपने हिये नेकनहिं धरिहौं॥
राजा कहि मिलि ध्यान लगाया। ऐसा शब्द गगनसों आया॥
राजा मैं अब बकसि दियाहै। सकल प्रजाको शुद्ध हियाहै॥
जिन पर मोको कोप भया था। तिनके कारण खड्ग लियाथा॥
सर्व प्रजा सो बातें डारी। करिसुकर्म हरिभक्ति सँभारी॥

दो० ताते अज्ञा यों दई, रचौ कुटुँब घरबार।
शुभकर्म्मन को कीजिये, खोटे कर्म्म निवार॥

राजाकही खोलि दृग दीजै। अज्ञाभई सोई अब कीजै॥
खोलि आँख कर जोरिके भाखे। बकसे गये तुम्हारे राखे॥
जो तुम कहौ सोई अब करैं। वचन तुम्हारे हिरदय धरैं॥
राजा कही यही तुम कीजो। रामनामको संगी लीजो॥

गुरुको ध्यान धरो मनमाहीं। विपति जासुसों आवतनाहीं ॥
अपनी त्रिया त्रियाकरि जानो। परतिरियाको माता मानो ॥
परधन को पाहन[1] सम देखो। शुभकर्मनको करो विशेखो ॥
बोलौ सांच झूंठको नाखो। निन्दा हिंसा नेक न राखो ॥
ह्वै रहियो सबके सुखदाई। करुवा वचन न बोलौ भाई ॥
जो व्यवहार करौ सो सांचा। लोक प्रलोक न आवै आंचा ॥

दो० भाषत श्रीशुकदेवजी, सुनो चरणही दास।
राजा ने उपदेश दै, खोई सबकी त्रास ॥

फिरि वै पुरुष बिदा ह्वै आये। हरि राजाके वचन सुनाये ॥
जिन बातनसों बकसे सारे। सो रखियो तुम हिये मँझारे ॥
उज्ज्वल कर्म भूलि मति जैयो। हरिकीभक्ति माहँही रहियो ॥
सुनिकरि आपसमें फैलाई। एक एक ने सुनी सुनाई ॥
सबने मानी निश्चय कीन्ही। प्रकट[2] सुअपनी आंखिन चीन्ही ॥
हाथ कँगनको दर्प्पण केहा। जैसी करणी भुगतै जेहा ॥
खुशीभये लागे व्यवहारा। रामभक्तिको लिये सँभारा ॥
कहि शुकदेव चरणहीदासा। सकल प्रजा रहै उमगहुलासा ॥

दो० चरणदास सुनिये श्रवण, मैं उपदेशूं तोहिं।
जो पहिले हरिको भजै, पाछे दुःख न होहिं ॥

कथा कहौं इक और पुरानी। करणी करै सुसमुझै प्रानी ॥
इन्दुनाम इक ब्राह्मण हुता। जाके दश सुत अरु इक सुता ॥
सुता व्याहि दइ घरकी हुई। जाके पीछे माता मुई ॥
पिता मुवा दश पुत्र रहेथे। आपसमें सब बैठि कहेथे ॥
ऐसी कछू जु करणी कीजै। जगमें ऊंची पदवी लीजै ॥
इकने कही हूजिये भूपा। सुन्दर देही धरौ अनूपा ॥

---
१ पत्थर २ जाहिर ॥

तेज मुल्कमें होवै भारी । हुकुम जुमानैं नर अरु नारी ॥
और एक ऐसे उठि बोला । सावधान ह्वै अन्तर खोला ॥

दो० राजाही का हुकम तो, थोरेही में जोय ।
ऐसी करणी कीजिये, भूपचक्रवै होय ॥
एकद्वीप नौखण्ड में, जाको पूरो राज ।
एक और उठि बोलिया, यह भी ओछासाज॥
चक्रवर्ति में इन्द्र बड़, देवन हूँ को भूप ।
उम्र बड़ी आनँद वड़े, दुखकीलगैन धूप ॥

करणी करत इन्द्रही लेगा । होकर राजा कीजै भोगा ॥
जहाँ अप्सरा नृत्य करत हैं । सुन्दर अधिकी रूप धरत हैं ॥
और बड़ा भाई यों भाखा । सुरपतिहूको नाहीं राखा ॥
कहा कि पदवी ब्रह्माकीसी । और न दीखै काहू हीसी ॥
जाके एक दिवसही माहीं । चौदह इन्द्र सर्व ह्वै जाहीं ॥
सब ब्रह्मण्ड आसरे वाके । विनशिजायँ मिटिजावैं जाके ॥
तीनि लोकका पिता वही है । वेद पुराणन माहँ कही है ॥
करणी करिकरि ब्रह्मा हूजै । ऐसी पदवी क्यों नहिं लीजै ॥

दो० सगरे यों उठि बोलिया, सत्य सत्य यह बात ।
ऐसाही अब कीजिये, ठहराई सब भ्रात ॥

दशहू करन तपस्या लागे । पारब्रह्मकी ओरी पागे ॥
अधिक तपस्या कीन्ही भारी । मास सूखिगया दीखैं नारी ॥
हाड़ त्वचा चिपटी रहगई । लोहू धातु कछू ना ठई ॥
सब जन चित्रहिसे रहगये । कठिन तपस्या करते भये ॥
फूलपात जलहू नहिं लीन्हा । ऐसा तप दशहूने कीन्हा ॥
तन त्यागे दूजेही जन्मा । दशहू भ्रात हुये जो ब्रह्मा ॥

---

१ चारों दिशाओं का राजा २ खाल ३ वीर्य ॥

जिनके दश ब्रह्माण्ड बने हैं । एकएक तिनमाहिं ठने हैं ॥
करणी कबहुँ न निष्फल जावै । जो मनधारे सोई पावै ॥

दो० करणी सों भये इन्द्रहु, करणी ब्रह्मा सोय ।
करणी सों ईश्वर भये, शुकदेवा कहै गोय ॥
दश हजार इक बीसही, वर्ष तपस्या कीन्ह ।
हरिजाको बदलो दियो, मांगो सो वर दीन्ह ॥
चारौ युगके माहिं जो, करणीही परधान[1] ।
गुरु शुकदेवा कहत है, चरणदास उरआन ॥
उज्ज्वल कर्म्मन के कियें, दिनदिन उज्ज्वल होय ।
मनमें उपजै भक्तिही, प्रेम पदारथ सोय ॥

चरणदास तुम करणी कीजो । याही में मन नीके दीजो ॥
ऐसा जन्म बहुरि नहिं पैहै । बीतिजाय पुनि बहु पछितै हैं ॥
मनुष देह को दुर्लभ जानौ । याको पा शुभकरणी ठानौ ॥
यो देही में करी कमाई । जाय स्वर्ग में नौनिधि पाई ॥
भक्तिकरी देही के माहीं । जा बैकुण्ठ सु आये नाहीं ॥
या देही में ज्ञान भया है । जीव ब्रह्म जो होय गया है ॥
मूरुख करणी को नहिं जानै । कथनी कथिकथि बहुत बखानै ॥
थोथी कथनी काम न आवै । थोथा फटकै उड़ि उड़ि जावै ॥

दो० कथनीही के बीचमें, लीजो तत्त्व[2] विचार ।
सार सार गहि लीजियो, दीजो डारि असार ॥

थोथी कथनी वहीं जु जानौ । बिन करणी जो करै बखानौ ॥
लोक प्रलोक न शोभा पावै । बकिबकिबकि खाली रहिजावै ॥
कथनीं के शूरा बहु जानै । करणी में कायर अरु याने ॥
शूरा वही जु करणी करै । दया धर्म्मले सन्मुख अरै ॥

---

१ मुख्य २ पृथ्वी अप् तेज वायु आकाश ॥

पाँव धरे सो नाहीं उठावै । करणी करता चला जु जावै ॥
फिरै जबहिं फल लेकर आवै । सो वह शूरा मल्ल कहावै ॥
कायर बीचहि सों फिरि आवै । सो वह करणी को बिसरावै ॥
आपन खोट न जानै भोंदू । वह तौ कथनीही का गोंदू ॥

दो० ऐसे जगमें बहुत हैं, वैसे जगमें नाहिं ।
कोई कोइहि देखिये, सतगुरु के मग माहिं ॥

होनहार को बहुत बतावैं । पै ताको कछु मर्म न पावैं ॥
कहैं कि होनी होय सुहोई । ताको मेटिसकै नहिं कोई ॥
याको समझ उपाय न करिया । श्रद्धा तजि कायरह्वै परिया ॥
समझि निखट्टु[1] गृही भहे । वेष धारि बिन करणी रहे ॥
जानतनाहिंजु पिछिलो करणी । अब कै भई जु होनी भरणी ॥
परालब्ध अरु भाग्य कहावै । पिछिले कर्म्मन[2] से उपजावै ॥
अबके करै सु आगे पावै । कछू कछू फल अभी दिखावै ॥
कै काहू गाली दै देखो । कै काहू को मारि विशेखो ॥
कै काहूको अशन खवावो । कै काहूको शीश नवावो ॥
कै करि चोरी द्यूतहि[3] खेलौ । कै काहूको गुस्सा झेलौ ॥
दोनों का फल आगे आवै । चरणदास शुकदेव बतावै ॥
प्रगट देखिये यहीं तमाशा । नीच ऊंच करणी परकाशा ॥

दो० कोटि यही उपदेश है, यही जु सगरी बात ।
करणीही बलवंत है, यों शुकदेव दिखात ॥
मनकी करणी ज्ञान है, परमातम लखिलेय ॥
ब्रह्मरूप ह्वै जाय जब, छूटै सबही भेय ॥
भवसागर[4] में भय घने, ताकी लगै न आंच ॥
झूठेको भय बहुत है, भय नहिं व्यापै सांच ॥

---

१ कोईकाम न करनेवला २ कर्म्म ३ जुवां ४ संसार ॥

करणीही सों पाइये, पारब्रह्म का खोज ।
सतगुरु पै चलि जाइये, मेंटै सबही सोज ॥

इच्छाब्रह्म करी सोइ करणी । ईश्वर रूप धरालै धरणी ॥
महतत् करि अहँकार जुकीये । तीनरूप[1] उनको करिदीये ॥
राजस[2] तामस[3] सात्त्विक[4] जानौ । एही त्रैगुण मनमें आनौ ॥
राजस सों जगको उपजावै । सात्विक सों पालै सिरजावै ॥
तामस सों विनशावै तोड़ै । बहुत सृष्टि नहिं भूपर जोड़ै ॥
जोड़ै तौ वह कहां समावै । धरती का परमाण[5] कहावै ॥
योजन पंचास क्रोड़ बताई । वेद पुराणन में जो गाइ ॥
धरती करणीही सों ठाढ़ी । कछुवा शेष भये जो आढ़ी ॥
करणीही सों घन वरसावै । वादल मिलती पवन चलावै ॥

दो० करणी सों करतारही, धरा ब्रह्म का नावँ ।
माया भी तौ उन करी, खेली बहु विधि दावँ ॥

कोई निराकार वतलावै । कोई निर्गुण कहि समुझावै ॥
कोइ कहै दोनों से न्यारा । है जु अकर्त्ता अलख[6] अपारा ॥
कहैं कि माया कियो पसारा । जेता दीखै यह संसारा ॥
तौ कहु माया कितसों आई । अन्त यही हरिने उपजाई ॥
वही सृष्टि का कारण काजा । वाने जगत प्यारकरि साजा ॥
देह देह में वह दरशावै । चातुर हो चतुराई पावै ॥
जैसे वरतन गढ़ै कुम्हारा । सब में दीखै सिरजनहारा[7] ॥
चित्र[8] मध्य चित्रामी सूझै । सुरति लगाय लगाय उरूझै ॥
जवहीं बनी वनाई नीकै । कहि शुकदेवजु अपने जीकै ॥

---

१ ब्रह्मा विष्णु महेश २ रजोगुण ब्रह्मा ३ तमोगुण शिव ४ सतोगुण विष्णु ५ अंदाज ६ न देखपड़नेवाला ७ वनानेवाला ८ तस्वीर ॥

दो० बिना किये कछु होयना, आपहि लेहु विचार।
करणी देखी दूर लौं, शोचा वारंवार॥
चरणदास तोसों कहौं, उठि उद्यम को लाग।
आलस सकल गवांयकै, विषयन[1] में मतिपाग॥
कारज लोक अलोक के, विन करणी हो नाहिं।
करणी ही सों होतहैं, करणी सवके माहिं॥
खोटे कर्म्मन सों दुखी, या दुनिया के बीच।
करणी ही सों होतहै, नर ऊंचा अरु नीच॥
संगति मिलि करने लगे, ऊंचे नीचे कर्म्म।
बुधि मैली जो होति है, खोवै अपना धर्म्म॥
सतसंगति सों रहत है, धर्म्म कुसंगति जाय।
चरणदास शुकदेव कहि, दोनों दिये दिखाय॥
धर्म गया जब सत गया, भ्रष्ट भई अति बुद्धि।
तवहिं पाप अरु पुण्यकी, कछू रही ना शुद्धि॥
पाप पुण्यही सत्य है, ठहरि रहा ब्रह्मण्ड।
इन दोनों के मिटतही, होत खण्डहू खण्ड॥
पाप पुण्य व्यवहार है, ताहि देखि प्रत्यक्ष।
जाही सेती अंत यम, देवत गण अरु यक्ष॥
चौरासी अरु पुरुष सव, चंद सूर[3] लौं जान।
पाप पुण्य के फेर में, सवही पड़े पिछान॥
पाप किये नरकै पड़ै, पावै दुःख अपार।
पुण्य किये सुख वहुत है, देखो दृष्टि उधार॥
बिरले जन को होत है, पाप पुण्य की सूझ।
सोइ छूटै जग जाल सों, बहुतै रहै अरूझ॥

---

१ धन्ध २ काम क्रोध लोभ मोह मद मात्सर्य ३ सूर्य॥

लक्ष बात की बात है, कोटि बात की जान ।
पाप पुण्य सों जानिये, लाभ होय कै हान ॥
करणी विन थोथा रहै, कछू न पावै भेव ।
विभव प्राप्त कहुँ होयना, कहैं जु यों शुकदेव ॥

होनी कहैं जु वेभी सारे । करणी करते दृष्टि निहारे ॥
बिन करणी व्यवहार न चालै । नहीं तौ बैठे रहजा ठालै ॥
कृत्य करै सो भी यह करणी । वनिया हाट पांड़िया वरणी ॥
करणीही सों खावै पीवै । योग करै बहुतै दिन जीवै ॥
मन मांजे सवही परकाशै । करणीविन झूंठी सव आशै ॥
करणीही सों सिधि ह्वै जावै । अष्टसिद्धि करणी सों पावै ॥
जीवन्मुक्ती करणो हेती । सुनिले सकल शास्त्र[1] सों तेती ॥
गुरु सों निश्चय यहै जु कीनी । रणजोता मैं तुम को दीनी ॥

दो० यह तौ धर्म्म जहाज है, मैं तोहिं दई निहार ।
भवसागर मों डारियो, चढ़ै सो उतरै पार ॥
बादवान पुनि खेइयो, दीजो ताहि चलाय ।
पानी पाप निकासियो, नेकहु ना भरिजाय ॥
चढ़ि उतरै जो पारही, पावै सुख का धाम ।
आनँदही आनँद लहै, करै तहां विश्राम ॥

शिष्यवचन ॥

दो० धन्य श्रीशुकदेव हो, वचन तुम्हारे धन्य ।
सव संदेह मिटाय करि, निश्चल कीन्हो मन्य ॥

व्यास पुत्र तुम मम गुरु देवा । करूं मान[2]सी तुम्हरी सेवा ॥
मन में तुम्हरी पूजा साजू । तुमसों पूंछि करौं सब काजू ॥
मेरे ध्यान शितावी आये । जो थे सो सन्देह मिटाये ॥

---

१ सांख्ययोग मीमांसा न्याय वैशेषिक धर्मशास्त्र २ जो मन में की जाय ॥

मैं तो ध्यान करतही रहूँ । तुम्हरी मूरति हिरदय गहूँ ॥
मेरे जीवन प्राण अधारा । मैं नहिं रहों चरण से न्यारा ॥
तुम्हरो चरणन दास कहाऊं । वार वार तुम पै बलि जाऊं ॥
तुमहीं को ईश्वर करि मानूं । पारब्रह्म तुमहीं को जानूं ॥
और न कोई दूजी आसा । मो हिरदय में राखो वासा ॥
दो० अपने चरणहिं दास को, सब विधि दिया अघाय ।
स्तुतिकरूं तो क्या करूं, मोपै कही न जाय ॥

इति श्रीगुरुचेलेका संवादधर्मजहाजसम्पूर्णम् २ ॥
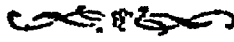
अथ श्रीगुरुशिष्यसंवादअष्टाङ्ग योग प्रारम्भः ॥
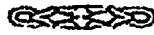
शिष्यवचन ॥

दो० व्यासपुत्रधनिधनि तुम्हीं, धनि धनि यह अस्थान ।
मम आशा पूरी करी, धनिधनि वह भगवान ॥
तुम दर्शन दुरलभ महा, भये जु मोको आज ।
चरण लगो आपादियो, भये जु पूरण काज ॥
चरणदास अपनोकियो, चरणन लियो लगाय ।
शिरकरधरिसबकछुदियो, भक्तिदई समुझाय ॥
बालपने दरशन दिये, तबहीं सब कछु दीन ।
बीज जु बोया भक्तिका, अब भया वृक्ष नवीन ॥
दिन दिन बढ़ता जायगा, तुम किरपा के नीर ।
जब लगमाली ना मिला, तबलग हुता अधीर ॥
अरु समुझाये योगही, बहु भांती बहु अंग ।

ऊरधरेता ही कही, जीतन बिंद अनंग ॥
अरु आसन सिखलाइया, तिनकी सारी विद्धि ।
तुम्हरी कृपा सों होहिंगे, सबही साधन सिद्धि ॥
इक अभिलाषा और है, कहि न सकूं सकुचाय ।
हिये उठे मुख आयकरि, फिरि उलटी ही जाय ॥

गुरुवचन ॥

दो० सतगुरु से नहिं सकुचिये, एहो चरणहि दास ।
जो अभिसाषा मन विषे, खोलि कहौ अब तास ॥

शिष्यवचन ॥

सतगुरु तुम आज्ञादई, कहूँ आपनी बात ।
योगअष्टांग बुझाइये, जाते हियो सिरात ॥
मोहिं योग बतलाइये, जोहै वह अष्टांग[1] ।
रहनीगहनी विधिसहित, जाके आठो आंग ॥
मत मारग देखे घने, ह्यांसियरे भये प्रान ।
जो कुछ चाहौ तुम करौ, मैं हौं निपट अयान ॥

गुरुवचन ॥

योगअष्टांग बुझाइहैं, भिन्न भिन्न सब अंग ।
पहिले संयम सीखिये, जाते होय न भंग ॥

शिष्यवचन ॥

संयम काको कहतहैं, कहौ गुरू शुकदेव ।
सो सबही समुझाइये, ताको पावै भेव ।

गुरुवचन ॥

प्रथम सूक्षम भोजन खावै । क्षुधामिटै नहिं आलस आवै ॥

---

१ यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, ध्यान, धारणा, समाधि ये अष्टांगयोग कहलाते हैं ।

थोड़ासा जल पीवन लीजै । सूक्षम बोलै वाद न कीजै ॥
बहुत नींद भर सोवै नाहीं । दूजा पुरुष न राखै पाहीं ॥
खट्टा चरपरा खार न खावै । बीरज क्षीण होन नहिं पावै ॥
करै न काहू वैरी मीता । जगवस्तुकी रखे न चीता ॥
निश्चल ह्वै मनको ठहरावै । इन्द्रिनके रस सब बिसरावै ॥
तिरया तेल नहिं देह छुवावै । अष्ट सुगन्धै[1] अंग नहिं लावै ॥
पुरुषन की राखै नहि आसा । गुरुका रहै चरणही दासा ॥

दो० काम क्रोध मद लोभ अरु, राखैना अभिमान ।
रहै दीनताई लिये, लगै न माया वान ॥

छल नहिं करै न छल में आवै । दम्भ[2] झूठके निकट न जावै ॥
टोना यंत्र भूत नहिं ध्यावै । झूठ जानकै सब विसरावै ॥
धातु रसायनि मन नहिं लीजै । झूठ जानि याहू तजिदीजै ॥
स्वांग तमाशे बाग न जैये । आसन ऊपर बैठा रहिये ॥
दृढ़ ह्वै लगै युक्तिके माहीं । ताते विघ्न होय कछु नाहीं ॥
रूठा रहै जगत लोगन सों । न्यारा रहै सवही भोगन सों ॥
इन्द्र आदि लौं सुख संसारी । नेक न चाहै चित्त मँझारी ॥
सिमिटि रहै हिय माहिं समावै । ऐसे योग सधे सिधि पावै ॥

दो० ऋद्धि सिद्धि अरु कामना, तिनकी रखै न आस ।
मान वड़ाई चपलता, त्यागै चरणहिं दास ॥

गहि संतोष क्षमा हिय धारै । संयम करिकरि रोग निवारै ॥
अहङ्कारको छोटा करिये । कुटिल मनोरथ मन नहिं धरिये ॥
वसिये जितहि देश सुस्थाना । निर उपाधि धरती अस्थाना ॥
भली भूमि लखि गुफा वनावै । नीची ऊंची रहन न पावै ॥

---

१ तेल, फुलेल, चोवा, चन्दन, कपूर, इत्र, केसरि, कस्तूरी ये अष्ट सुगन्ध कहलाते हैं २ मिथ्या वार्ता बनाना ॥

जिमीं वराबर चौरस होई। होय लदाव कि मथरी सोई ॥
साँकर द्वार कपाट[1] लगावै। कहूँ छिद्र रहने नहिं पावै ॥
तामें वैठि योग तप कीजै। दूजो पुरुष न भीतर लीजै ॥
कहि शुकदेव चरणहीं दासा। जगसों रहिये सदा उदासा ॥

दो० यह सब निश्चयही करै, योग युक्तिके साथ।
पहिले ऐसा होय करि, पीछे साधन साध ॥
आठ अंग कहुं योगके, सुनो चरणहीं दास।
मेरे वचनन के विषे, चितदै करौ निवास ॥

यमके अंग प्रथम सुनि लीजै। दूजे नियम कहूँ चित दीजै ॥
तीजे आसन हितकरि साधौ। प्राणा[2]याम चौथे आराधौ ॥
प्रत्याहार पांचवां जानौ। छठे धारणा को पहिंचानौ ॥
सतवें ध्यान मिटै सब वाधा। कहूँ आठवां अंग समाधा ॥

शिष्यवचन ॥

धन्य धन्य तुम श्री गुरुदेवा। मेरे प्राणनाथ शुकदेवा ॥
व्यास पुत्र तुम दीन दयाला। मम अनाथ को कियो निहाला ॥
आठ अंग मोहिं दिये सुनाई। अब कहु भिन्न भिन्न समुझाई ॥
एक एकको जुदा वखानो। जासों जाय दास पर जानो ॥

गुरुवचन

दो० एक एक का कहतहों, जुदा जुदा विस्तार।
श्रवणन सुनो विचारिकै, लैलै हियमें धार ॥

अथ यमअंग वर्णन

प्रथम कहों यम के दश अंगा[3]। समझै योग न होवै भंगा ॥

---

१ केंवारा २ प्राण अपान व्यान उदान समान ३ अहिंसा, सत्यहढ़ असत्-त्याग, ब्रह्मचर्य करना. काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद मात्सर्य, तृष्णा इनसे पृथक् रहना, क्षमा, धैर्य, दया, आर्यव, मिताहार यानी सूक्ष्म भोजन करना ये यमके दश अंग कहलाते हैं ॥

प्रथम अहिंसाही सुन लीजे। मनकरि काहू दोष न कीजैं ॥
कड़ुवा वचन कठोर न कहिये। जीवघात तनसों नहिं दहिये ॥
तन मन वचन न कर्म लगावै। यही अहिंसाधर्म कहावै ॥
दूजे सत्य सत्यही बोलै। हिरदै तौलि वचन मुख खोलै ॥
तीजे असते त्याग सुनीजै। तनमन सों कछु नाहिं हरीजैं ॥
तन चोरी के लक्षण नाखै। मनकी चोरी को नहिं राखै ॥
चौथा ब्रह्मचर्य बतलाऊं। भिन्न भिन्न करि ताहि सुनाऊं ॥

दो० ब्रह्मचर्य[1] यासों कहैं, सुनहु चरणही दास।
आठ अंग[2] सो नारिकी, नेक न राखै आस ॥

यती होय दृढ़ काँछ गहीजै। वीर्य क्षीण नहिं होने दीजै ॥
मैथुन कहूँ अष्ट परकारा। ब्रह्मचर्य रहै इनसे न्यारा ॥
सुमिरणातिरियाको नहि करिये। श्रवणनसुरति रूप नहिं धरिये ॥
रस शृंगार पढ़ै नहिं गावै। नारिनसों नहिं हँसै हँसावै ॥
दृष्टि न देखे विष नहिं दौरै। मुख देखै मन होजा औरै ॥
बात इकन्त करै नहिं कवहीं। मिलन उपाय जुत्यागै सवहीं ॥
स्पर्शअष्टम निकट न जावै। कामजीति योगी सुखपावै ॥
अष्टप्रकारके मैथुन जानों। इन्हैं तजे ब्रह्मचर्य पिछानों ॥
कहैं शुकदेव चरणहीदासा। ब्रह्म सत्य में करै निवासा ॥

दो० पँचवीं सुखदाई क्षमा, जलन बुझावै सोय।
जोटुक आवै घटविषे, पातक डारै खोय ॥

---

१ विद्या पढ़ना व्रत करना नित्यकर्म संध्यावन्दनादि करना भिक्षा मांगि कर भोजन बनाय गुरु को नैवेद्य लगाय भोजन करना इसे ब्रह्मचर्य कहते हैं २ स्मरण, सुरति, शृङ्गारावलोकन, हास्य करना, दृष्टि सों त्रिया रूप देखना, मिलन उपाय, स्पर्श, एकान्त में वार्त्तालाप करना ये अष्टाङ्ग विषय के कहलाते हैं ॥

कोई दुष्ट कछू कहिजावो । गाली देकर कोइ खिझावो ॥
कै कोइ शिरपर कूड़ा डारो । कै कोइ दुखदेवो अरु मारो ॥
बाकी कछू न मनमें लावैं । उलटा उनको शीश नवावै ॥
ऐसी क्षमा हिये में लावो । बोलौ शीतल अग्नि बुझावो ॥
छठाँ अंग धीरज का जानौ । धीरजही हिरदय में आनौ ॥
योगयुक्ति धीरज सों कीजैं । सब कारज धीरज सों लीजैं ॥
धीरज सों बैठे अरु डोलै । धीरज राखि समुझिकर बोलै ॥
आनि परे दुख ना अकुलावै । धीरज सों दृढ़ता गहिलावे ॥

दो० धीरज रहा तौ सब रहा, काहूसे न डराय ।
सिंह प्रेत अरु कालका, धीरज सों डरजाय ॥

दया सातवीं अब सुनि लीजै । सब जीवन की रक्षा कीजै ॥
लख चौरासी का सुखदाई । सबके हित की कहै बनाई ॥
रहिये तन मन बचन दयाला । सबही सों निर्वैर कृपाला ॥
अठवें कहूँ आर्य्यवे खोलै । कोमलहृदय सों कोमलबोलै ॥
सबको कोमल दृष्टि निहारै । कोमलता तन मन में धारै ॥
कोमल धरती बीज बवावै । बढ़ै बेगि फूलै फल लावै ॥
ऐसे कोमल हिया बनावै । योग सिद्धि करि पद पहुँचावे ॥
यही आर्य्यव लक्षण जानो । शुकदेवकहैं रणजीतपिछानो ॥

दो० मिताहार जो नवें की, समझ लेहु मनमाहिं ।
सतगुन भोजन खाइये, ऐसा वैसा नाहिं ॥
खावै अन्न बिचारिकै, खोटा खरा सँभार ।
जैसाही मन होत है, तैसा करै अहार ॥

सूक्ष्म चिकना हलका खावै । चौथाभाग छोड़ि करि पावै ॥
वानप्रस्थ कै हो संन्यासै । भोजन सोलह ग्रास गिरासै ॥
अरु गृहस्थ बत्तीस गिरासा । आव नींद न बहुत न श्वासा ॥

ब्रह्मचारी भोजन करै इतना । पठनमाहँबीरजरहै जितना ॥
दशवां शौच पवित्तर रहिये । कर दातौन हमेश नहइये ॥
जो शरीर में होवै रोगा । रहै न तन जल छूवन योगा ॥
तौ तन माटी से शुधि कीजै । अबअंतरकी शुधि सुनलीजै ॥
राग द्वेष हिरदय सों टारै । मन सों खोटे कर्म निवारै ॥

दो० दशप्रकारका कहा यह, पहिल योगकी नीव ।
नेम कहूं अब दूसरा, सो है साधन सीव ॥

अथ नेमअंगवर्णन ॥

दूजा अंग नियम[1] का गाऊं । भिन्न भिन्न सब अंग सुनाऊं ॥
पहला तप इन्द्री वश कीजै । इनके स्वाद सभी तजि दीजै ॥
खातें पीतें सोवत जागत । योगी इन्द्रिनकूं वशराखत ॥
तनकूं वश कर मनकूं मारै । ऐसी विधि तपका अँगधारै ॥
दूजा अंग कहूं संतोषा । हानि भये नहिं मानै शोका ॥
लाभ भये नाहीं हरषावै । ऐसी समुझ हिये में लावै ॥
परारब्ध तन होय सु होई । सँकलप बिकलपरखैनकोई ॥

दो० तीजा आस्तिक अंग है, जाका सुनो विचार ।
समझ समझ मनमें धरो, ताको गहो संभार ॥

शास्त्र सुने परतीत जो कीजै । सत्तब्रह्म निश्चय करिलीजै ॥
बुध निश्चय आतम के माहीं । जगत सांच करि मानै नाहीं ॥
चौथा दान अंग विधि होई । पात्र कुपात्र विचारै सोई ॥
एक दान उपदेश जु दीजै । भवसागर सों पार करीजै ॥
दूजा दान अन्न अरु पानी । दीजै कीजै बहु सनमानी ॥

---

१ इन्द्रियवश, संतोष, आस्तिक, शास्त्रचिंतन, दान देना, ईश्वराराधन, सिद्धांतश्रवण, लाजयुक्त, तत्त्वदृढ, जाप ये दशअंग नियमके कहलाते हैं ॥

और पराये दुख की बूझै । सुखदानी परमारथ सूझै ॥
पंचम ईश्वर पूजा करिये । तन मन बुद्धि जहांलै धरिये ॥
ह्वै निष्काम तजै सब आसा । सेवा करै होय निजदासा ॥

दो० पान फूल जु भाव सों, सह सुगन्ध करि धूप ।
शुकदेव कहैं यों कीजिये, पूजा अधिक अनूप ॥

छठें सिद्धान्त श्रवण सुन बानी । करि विचार गहिये मनमानी ॥
सार असार विचार जु कीजै । पानीको तजि पयको पीजै ॥
अरुसतगुरुसों निश्चय करिये । परखि सँभारि हिये में धरिये ॥
करणी करै तिन्हों से मिलना । वचनअयोगी के नहिं सुनना ॥
सतवां वही जु कहिये लाजा । सो वह सकल सँवारन काजा ॥
साधु गुरूसें लाज करीजै । तन मन डोलन नाहीं दीजै ॥
करम विपर्यय सब परिहरिये । हिय आंखिन में लज्जा भरिये ॥
शुकदेवकहै सुनिचरणहिंदासा । लज्जा भवन माहिं करि बासा ॥

दो० कुटुंब मित्र जग लोगही, सबसूं कीजै लाज ।
बड़ी लाज हरिसूं करो, नीके सुधरै काज ॥

अष्टम हूँ मति दृढ़ जो कहिये । सो विशेष साधनकूं चहिये ॥
शुभ करमनकी इच्छा करनी । हो न सकै तौ भी हिय धरनी ॥
बहँकै ना काहू बहँकाये । कैसेहू नहिं हलै हलाये ॥
जग सुख देखि न मनमें आनै । स्वर्गआदि सुख तुच्छहिजानै ॥
कोइ अस्तुति आदर करि सेवै । कोइ कुभाव करि गाली देवै ॥
दोनों में निश्चल रहै जोई । शुकदेव कहैं दृढ़मति है सोई ॥
नवयें जाप करै गहि मौना । मन जिह्वासूं कीजै जौना ॥
होयसकै मन पवन गहीजै । गुरुमन्तर जप तामें कीजै ॥

दो० हरिगुरुकी अस्तुति पढ़ै, सो भी कहिये जाप ।
शुकदेव कहैं रणजीतसुनि, त्रैविधि नाशै ताप ॥

दशवें समझो होमही, कीजै दोय प्रकार ।
अँगन माहिं साकिल्ल कूं, वेद कहै ज्यों डार ॥
दूजै पावक ज्ञानकी, तामें इन्द्री होम ।
वाकूं परगट भूमि है, याकूं हिरदा भौम ॥

यमका अंग सभी कह दीन्हा । नेम कहा सोभी तुम चीन्हा ॥
निरैयोगही के मतजानौ । सबके कारज को पहिंचानौ ॥
ओपै योग पहल ये चहिये । शुभकरमन के मारग गहिये ॥
जोये होय तौ होवै योग । नाहीं बहै जगत के भोग ॥
जज्ञासीकूं पहल सुनीजै । पाछे भेद योगको दीजै ॥
यम अरु नियम दोऊ बतलाये । अच्छी नीकी भांति सुनाये ॥
अब तीजे आसन समझाऊं । जुदे जुदे कहि सबै सुनाऊं ॥
योग पहिल आसनही साधे । आसनविना योग बरबादे ॥

अथ आसनवर्णन ॥

दो० चरणदास निश्चय करौ, बिन आसन नहिं योग ।
जो आसन दृढ़ होय तो, योग सधै भजि रोग ॥

चौरासीलख[1] आसन जानौ । योनिनकी बैठक पहिंचानौ ॥
तिनमें चौरासी चुग लीन्हें । दुरलभ भेद सुगम सों कीन्हें ॥
सो तुमकूं पहिले बतलाये । जिनकूं साधौगे चितलाये ॥
तिनमें दोय अधिक परधा[2]नैं । तिनकूं सब योगेश्वर जानैं ॥
आसनसिद्ध पदम कहलावै । इनकूं करि निश्चय ठहरावै ॥
अरु आसन सब रोग भजावैं । ये दो आसन योग सधावैं ॥
इन कूं साधै जो जन कोई । ध्यान समाधि लगावै सोई ॥

---

१ नवलक्ष जलचर, दशलक्ष नभचर, ग्यारहलक्ष कृमि, बारहलक्ष वनचर, चारिलक्ष मनुष्य, तीसलक्ष पशुयोनि इत्यादि चौरासीलक्ष योनि हैं २ मुख्य ॥

चरणदास शुकदेव कहैं यों । आसन दोनों बरणौं हैं ज्यों ॥

अथ पद्मासनविधि ॥

पहिले आसन पदम बताऊं । ज्यों की त्यों मूरति दिखलाऊं ॥
पहिले बावां पांव उठावै । दहिनी जङ्घा ऊपर लावै ॥
दहिना पांव फेरि यों लावै । बांवीं साथल ऊपर राखै ॥
बावां कर पीछे सों लावै । बाम अँगूठा गहि तन तावै ॥
ऐसे हाथ दाहिना लावै । दहिन अँगूठा पकड़ दृढ़ावै ॥
ग्रीवालटक चिबुक हिये आवै । नासा आगे दीठि लगावै ॥
दिव्यदृष्टि हो कौतुक दरशै । कहै शुकदेव अभैपद परशै ॥
दो० कै हिरदै राखै चिबुक, कै सम राखै देह ।
कै घोटों दोउ हाथ रखि, कै अँगुठा गहिलेह ॥

अथ सिद्धासनविधि ॥

दूजा आसनसिद्ध जुकीजे । बावां पांव गुदाढिग दीजै ॥
दाहिन पांव लिंगपर आवै । दृष्टि सुभृकुटी पै ठहरावै ॥
अचरज जहां अधिक दरशावै । खुले कपाट मोक्ष गति पावै ॥
आसन साधि व्याधि परिहरै । भूंख नींद जोपै वश करै ॥
दो० एड़ी पावै पांव की, सीवन मध्ये राख ।
लिंग गुदा के मध्य में, मूल बोलिये साख ॥
संयम सूं इन्द्री गहै, राखै सरल शरीर ।
दृष्टि उठा भृकुटी धरै, मिटै जु दोनों पीर ॥
दहिनी लावै लिंगपर, भाग बराबर राखि ।
बारी बारी कीजियै, शुकदेवा कहै भाखि ॥

अथ प्राणायामअंग वर्णन ॥

चौथे प्राणायामही, कहूँ सुनौ चित लाय ।
जाबल जीवै पनकूं, चढ़ै गगन कूं धाय ॥

षटचक्कर कूं छेदि करि, सुखमनही की राह ।
दलसहस्रके कमल में, पहुँचै करै उछाह ॥
हिरदै में अस्थान है, प्रान वायु का जान ।
वाके रोंके सबरुकैं, वायुन में परधान ॥
जैसे गंगा एकही, घाट घाट के नावँ ।
ऐसे प्राणहि वायु के, नावँ कहे बहु ठावँ ॥
चौरासी अस्थान पर, चौरासीही वायु ।
तामें दश ये मुख्य हैं, बरणौं सुनिये ताय ॥
प्राण अपान समानही, और व्यान उद्यान ।
नाम धनंजय देवदत, कूरम किरकल जान ॥
दशवायू जो एकही, तिनमें दीरघ दोय ।
सोवै प्राण अपानहैं, तिन्हैं पिछानै कोय ॥
प्राणजाय प्राणें मिलै, रहै प्राणके प्रान ।
शुकदेव कहि वर्णन करूं, अब इनके अस्थान ॥

प्राणवायु हिरदै के ठाहीं । बसै अपान गुदा के माहीं ॥
वायु समान नाभि अस्थाना । कंठ माहिं बाई उद्याना ॥
व्यान जुव्यापक है तन सारै । नाग वायु सों उठै डकारै ॥
पलक उघाड़ै कूरमबाई । देवदत्तसूं होय जँभाई ॥
किरकल वायु जु भूंख लगावै । मुखै धनंजय देह फुलावै ॥
सब में प्राण वायु मुखजानौं । सो हिरदै के मध्य पिछानौं ॥
हिरदाही देही के माहीं । जो कुछ है सो झांही झांही ॥
योगेश्वर ह्यांईं फल पावैं । ह्यांसूं अनहद नाद जगावै ॥

अथ चक्रवर्णन ॥

दो० अब चक्र[1] र बरणन करूं, पाछे प्राणायाम ।
बरणूं नारी सुषमना, सुधरे सबही काम ॥
हैं वे सूरति कमल की, छोटे और विशाल ।
मूलसु लेकर शीशलौं, एकहि जिनकी नाल ॥

कुं० लालरंग पहिला कहूँ चक्रधार तिहि नावँ ।
चार पैंख[2]री तासु की हैं जु गुदा के ठावँ ॥
हैं जु गुदा के ठावँ देह ताही पर राजे ।
चारों अक्षर तहाँ देव गन्नेश विराजे ॥
पवन सुरत ह्वां लैधरै खोलि कहैं शुकदेव ।
दूजा लिंगस्थानही जाको सुन अब भेव ॥
पीतबरण षट पैंखरी नामजु स्वाधिष्ठान ।
षट अक्षर जापै दिये ब्रह्मा दैवत जान ॥
ब्रह्मा दैवत जान सँग सावित्री[3] दासा ।
इन्द्र सहित सब देव तहां सबही का बासा ॥
मणिपूरक चक्कर कहूं तीजा नाभि स्थान ।
नीलबरण दश पैंखरी दश अक्षर परमान ॥

दो० विष्णु जहांका देवता, महालक्षिमी संग ।
चरणदास अब कहतहूँ, चौथे को परसंग ॥
अनहद्चक्र हिरदयबिषे, द्वादशदल अरुश्वेत ।
शिवश[4]क्ती जहाँ देवता, द्वादश अक्षर भेद ॥
पँचवां चक्कर कंठ में, विशुद्ध नामजिहिकेर ।

१ आधार,स्वाधिष्ठान, मणिपूरक, अनहद, विशुद्ध, आज्ञा ये छः चक्र शरीर के अन्तर रहते हैं २ पॅखुरी ३ सरस्वती ४ पार्वती ॥

षोड़श दल जीव देवता, षोड़श अक्षर हेर ॥
छठयों भौंहन बीच में, अज्ञा चक्कर सोय।
ज्योति देवता जानिये, दो दल अक्षर दोय ॥

शिष्यवचन ॥

कमलों पर अक्षर कहे, समझ न आई मोहिं।
कौन कौन अक्षर तहां, सतगुरु कहिये सोहिं ॥

गुरुवचन ॥

पहिला कमल अधार सुनाऊं। वशषस अक्षर वरण बताऊं ॥
दूजा कमल जु स्वाधिष्ठाना। बा भा माया रल जु बखाना ॥
तृतिये मणिपूरक जो कहिये। डा ढा णा ता था ही लहिये ॥
दा धा ना पा फा जो गाये। ये दश अक्षर वरण बताये ॥
चौथे चक्र अनाहद माहीं। द्वादश अक्षर वरण बताहीं ॥
का खा गा घा ङा जो जान। चा छा जा झा ञ ट ठ जुमान ॥
पँचवां षोड़श विशुद्ध जो आछे। आदि अकार अकार सुपाछे ॥
छठा जो अज्ञा चक्कर- मानो। हंस वरण दो अक्षर जानो ॥

दो० भवँर गुफा मंडल अखँड, तिरवेणी जहँ न्हान।
नित परबी जहाँ होत है, करै पाप की हान ॥
उलट पवन बेधे षटन, ऊपर पहुंचे जाय।
शुकदेव कहैं चरणदासजू, सुषमन सहज समाय ॥
कमलसहस दल सातवां, शीश मध्यही वास।
तहां देवता सत्तगुरु, पूरी करै जो आस ॥
ह्यांतक सुषमन का सिरा, सो सातो की नाल।
हैं वे उलटे षट कमल, तले अपान वयाल ॥
अपान वायुकूं साधिकरि, ऊपर लावैं मोड़।
जब होवै उलटे कमल, मुख अकाशकोओड़ ॥

अपान वायु ज्योंज्यों बढ़ै, चक्र चक्र के पास।
त्यों त्यों सीधे होय सब, पूरा जान अभ्यास॥
अपान वायु आवै जबै, चक्र अनाहद माहिं।
दश प्रकार के नादही, शनैःशनैःखुलि जाहिं॥

पहिले नाद सुनें जो ऐसा। चिड़ी चीकला बोलै जैसा॥
एकहि बार कहै यों चिन्न। दूजीबार कहै चिन चिन्न॥
क्षुद्रघंट ज्यों तीजी जानौ। चौथी नाद शङ्ख पहिंचानौ॥
पँचवीं नाद बीन ज्यों गाजै। छठवीं उपज ताल ज्यों बाजै॥
सतवीं नाद मुरलिया ऐसी। अठवीं उठै पखावज जैसी॥
नवै नफीरी नाद सुनावै। दशवैं सिंह गरज उपजावै॥
नौ तजि दशवें सूं हित लावै। अनहद सुनि अनहद होजावै॥
होय जीव सो ब्रह्म अगाधा। जो कोइ सुनै सुअनहदनादा॥

दो० खुलै जो अनहदनाद ज्यों, सोसाधन सुनि लेहु।
जासों पहुँचै सिद्धि को, या करणी चित देहु॥
चक्राधार सों खैंचि करि, अपान वायु सजलेह।
स्वाधिष्ठान के पासही, तीन लपेटै देह॥

याकीविधि सब तोहिं सुनाऊं। जैसे है तैसे समुझाऊं॥
पहिले मूल द्वार को शोधै। बंध लगाय अपान निरोधै॥
पहिले चकर में ठहरावै। खैंचि दूसरे के ढिग लावै।
वाके आसौ पास फिरावै। दहिने तीनि लपेट लगावै॥
फिरि मणिपूरक में पहुंचावै। फेरि अनाहद में लैजावै॥
अनहद खुलै सुनै सुखपावै। फिरिह्वांप्राण अपान मिलावै॥
हिरदय कंठ मध्य ठहरावै। संयम सों ताको परचावै॥
बंध दूसरो तहां लगावै। चरणदास शुकदेव बतावै॥

अष्टपदी ॥

पहिले अनहदनाद खुलैहिय ऊपरै ।
कंठ सु नीचे रोंकि ध्यान ह्वाई धरै ॥
जहांअपरवल होय जु अनहद शब्दही ।
फिरियों जानो जाय कंठ के मध्यही ॥
तहां किये अभ्यास ध्यान राखैघना ।
होवै अधिकीनाद सुनैं साधूजना ॥
केतक द्योसन माहिं ब्रह्म रन्ध्रकनै ।
जाय खुलै जहँ नाद सुरतिदै ह्वां सुनै ॥
शनै शनै यो होय जानेंकोइ साधही ।
हिरदय अरु ब्रह्मलोकलों एकैनादही ॥
मीठी और सवाद वहुतही पाइये ।
सतगुरु के परताप जहां मनलाइये ॥
ब्रह्मलोककी बात सुनै होवै जुह्वां ।
सवही सूझैं वस्तु जुकछु होवैं तहां ॥

दो० अनहद के सम औरना, फल बरणे नहिं जाहिं ।
पटतर कछू न देसकूं, सब कछु है वा माहिं ॥
पांच थकै आनँद बढ़ै, अरु मनुआ वश होय ।
शुकदेवकहि चरणदाससुनि, आपअपनजाखोय ॥
नाड़िन में सुपमन बड़ी, सो अनहद की मात ।
कुम्भक में केवल बड़ा, सो वाही का भ्रात ॥
मुद्रा बड़ी जु खेचरी, वाकी बहिनी जान ।
अनहद सा बाजा नहीं, और न या सम ध्यान ॥
सेवक से स्वामी भवै, सुनै जु अनहद नाद ।

जीव ब्रह्म ह्वैजात है, पावै अपनीं आद ॥
चरणदास अब कहत हूँ, वहीं जु प्राणांयाम ।
शुकदेव कहै ताके किये, पावै मन विश्राम ॥

बहत्तरहजार आठसौचौंसठनारी । सबकी जड़है नाभि मँझारी ॥
तिनमहँ दश नाड़ी शिरमौरी । पँच बायें पँच दहनीं ओरी ॥
जिनमें तीनि अधिक परधान । इड़ा पिंगला सुषमनजान ॥
उनमें सुषमन अधिक अनूप । सो वह कहिये अग्नि स्वरूप ॥
दश नाड़ी अस्थान बताऊं । ठौर ठौर तेहि कहि समझाऊं ॥

दो० नाड़ि शङ्खिनी गुदामें, किरकल लिंगस्थान ।
पोषा सरवन दाहिने, जसनीं बायें कान ॥
गंधारी द्दग बामही, हस्तिनि दाहने नैन ।
नारि लंबका जीभमें, सब सवाद सुखदैन ॥
नासा दहिने अंगहै, पिंगल सूरज वास ।
इड़ा सुबायें ओर है, जहं ससियर परकास ॥
दोऊ मध्य में सुषमना, अद्भुत वाको भेव ।
ब्रह्म नाड़िहू कहत हैं, यों कह सो शुकदेव ॥
इड़ा ब्रह्मा जमुना जहां, सुषमन विष्णु निवास ।
और सरस्वति जानिये, येहो चरणहिं दास ॥
शिव पिंगल गंगा सहित, सो वह दहिने अंग ।
तिरवेणी याते भई, मिलीं जु तीनो संग ।
कबहुँ इड़ा स्वर चलत है, कबहूँ पिंगल माहिं ।
मध्य सुषमना बहत है, गुरु बिन जानै नाहिं ॥
सोवह अग्नि स्वरूप है, बड़ी योग सरदार ॥
याहीते कारज सरै, ऐसीं सुषमन नार ॥

इनसों प्राणायाम करीजै । पूरक कुम्भक रेचकहीजै ॥

इड़ा पिंगला मारग थाके । उलटि सुषमना चालनलागे ॥
बायें खैंचना पूरक जानौ । ठहरावन को कुम्भक मानौ ॥
फेरि उतारे रेचक वोई । प्राणायाम कहावै सोई ॥

दो० इड़ा पवन पूरक करै, कुम्भक राखै रोक ।
रेचक पिंगल सों करै, मिटैं पापके थोक ॥

पिंगल रोकै पवन न जावै । इड़ा और सो वायु चढ़ावै ॥
कुम्भककरि हिय चिबुकलगावै । जितकातित मनको ठहरावै ॥
सोलह मात्रा पूरक लीजै । चौंसठि कुम्भकमें जपकीजै ॥
रेचक फिरि बत्तीस उतारै । धीरे धीरे ताहि निवारै ॥
पहिल पहिलही कीजै आधे । तीनि महीने ऐसे साधे ॥
यासे आगे फेरि बढ़ावै । दोय आठ अरु चारि चढ़ावै ॥
बढ़त बढ़त ऐसेही बढ़ै । योंहीं चौंसठि ताहीं चढ़ै ॥
इड़ा वायुसों पूरक कीजै । पिंगल सों रेचक तजिदीजै ॥
फिरि पिंगलसों पूरक धारै । बहुरि इड़ाहीसों निरवारै ॥
ऐसे बारीबारी करिये । जीते प्राण वायु अघ हरिये ॥
होयसकै कुम्भक सरकावै । चौंसठि से भी परै बढ़ावै ॥

शिष्यवचन ॥

दो० चरणदास करजोरिकह, सुनौ गुरू शुकदेव ।
कौन समै याको करै, राति दिना कहिदेव ॥
मात्रा कासों कहत हैं, जो बतलायो जाप ।
केतौ करै अहारही, जाको कहिये नाप ॥

गुरुवचन ॥

ॐ बिन्दी के सहितही, ताहि मात्रा जान ।
बीजमन्त्र तासों कहत, प्रणव को पहिंचान ॥

कोमल भोजन कीजिये, आधी रखिये भूख।
पवन बसै सुखसों जहां, तन नहिं पावै दूख ॥
साठिघरी दिनराति की, आठ तासुके याम।
लीजै चौथा भागही, कीजै प्राणायाम ॥
चारभाग ताके करै, चार समै ठहराय।
चार चार घटिका करै, दृढ़व्रत चित्तलगाय ॥

और दूसरी भांति सुनीजे। हो नसकै तौ याको कीजे ॥
बारह ॐ पवन चढ़ावे। कुम्भक माहिं बीस ठहरावे ॥
बारह पिंगल पवन उतारै। राति दिनामें चारहिबारै ॥
फेरि बढ़ावै कुम्भक दुगुनी। केते द्यौसन में फिर तिगुनी ॥
फिर पिंगल सों पूरक लीजे। इड़ा वायु रेचकही कीजे ॥
बिरिया एक इड़ा सों खेंचे। पिंगल दूजीबार जु एंचे ॥
कबहूँ यासू कबहूँ वासों। रेचक करे जो पूरक जासों ॥
कुंभक तिगुनी सो अधिकावे। होयसके जितनी सरकावे ॥

दो० भांति दूसरी और सुनि, साधन अधिक अनूप।
गुरु बिन भेद न पाइये, महा गुप्त सों गूप ॥

अष्टपदी ॥

प्राण वायुकी युक्ति कहौं जेहि बातहै।
द्वादश अंगुल नासिका आगे जातहै ॥
संयमही सों सहज जु उलट घटाइये।
शनैशनैही[1] साध जु ताहि समाइये ॥
अपान वायुको खैंचि प्राण घर लाइये।
फिरि बाहर सों रोंकि जु तिन्हैं मिलाइये ॥
तीनि कर्म पूरकके कुम्भकके कहे।

१ धीरेधीरे ॥

रेचकही के कर्म दोय निश्चय भये ॥
दो रेचक के कर्म पूरक के तीनहीं ।
ये सबही रहिजायँ होय जब छीनहीं ॥
पूरक रेचक छुटै केवल कुम्भकयही ।
ठौर समैका बंध न राखै नाशही ॥
या किरियाको अन्त जानो तुम ह्वां तहीं ।
प्राणवायु को रोंकै कायाके महीं ॥

दो० साठहज़ार इकीसलख, सबके श्वास परमान ।
यह तो रोंकै देहमें, जबलग एकहि प्रान ॥
याकेहू ये सौ दिना, साधन भवै जु सिद्धि ।
केवल कुम्भक जानिये, पूरी ह्वै जु विद्धि ॥

अष्टपदी ॥

इतनी होवै शक्ति रुकन जब श्वासकी ।
रहै नहीं परमाण जु गिनती मासकी ॥
द्वादशके सौ बरष सहस के लाखहीं ।
चाहे जब लग रखै सांच यह साखहीं ॥
गुप्त महा यह जान कठिन है साधना ।
कोटिनमें कोइ एक करै आराधना ॥
देखा देखी बहुत मनुष याकू लगैं ।
कोई चढ़ै परमान घने मगमेंथकैं ॥
चरणदास यह समझि कहैं शुकदेवहीं ।
शनैशनै सों करै पांय या भेवहीं ॥

दो० मूल बंध अरु खेचरी, मुद्राही को जान ।
दोनोंके साधे बिना, होय अपान न प्रान ॥

खेचरि मुद्राकहूँ बखानै । जाको कोटिन में कोइ जानै ॥

सकल शिरोमणि योग मंझारी। ज्यों मनुषों में छत्तर धारी ॥
शीश फूल ज्यों गहनों माहीं। या बिन ताड़ी लागै नाहीं ॥
साधन कर कर जीभ वढ़ावे। सो ब्रह्मरंधरताई लावे ॥
उरैताल वा ठौर कहावे। रसना सूं ह्वां बंध लगावै ॥
जासूं पवन न सरकन पावे। श्रवण नैनजू वाट रुकावे ॥
प्राणवायु बाहर नहिं आवै। मुखनासा हो निकस न जावै ॥
शुकदेव कहै चरणदास बताऊं। आगे मूलबंध समुझाऊं ॥

दो० मूल बन्ध जानौ यही, एंडी गुदा लगाव।
थक दहनी वावीं कभी, सिध आसन ठहराव ॥

मूलबन्ध जा कारण दीजे। सो मैं कहूँ सबै सुनि लीजे ॥
अधार चक्रसूं पवन उठावे। स्वाधिष्ठानहिं के ढिग लावै ॥
दहिनी ओर कूं ताहि फिरावे। ऐसी तीन लपेट लगावै ॥
सीधा हो ऊपर कूं धावै। मणिपूरक चकर में आवै ॥
शनई शनई ताहि चढ़ावे। चकर चकर में पहुंचावे ॥
भूचकर के ऊपर ताईं। ब्रह्मरंध्र के लावे ठाईं ॥
ऐसे षट चक्कर कूं शोधै। प्राण वायु को यों परबोधै ॥
अपान वायु जो ह्यांतक आव। प्राण वायु ह्वै सहज समावै ॥
शुकदेव कहै सुन चरणहिं दासा। सहज शून्यमें करै निवासा ॥

अथ अष्ट प्रकार के कुम्भक वर्णन ॥

शिष्यवचन ॥

दो० प्राणायाम की विधि सबै, गुरु तुम दई सुनाय।
सो लेकरि हिरदै धरी, ताहि न देउं भुलाय ॥
चरणदासके शीश पर, तुमहीं गुरु शुकदेव।
कुम्भक अष्ट प्रकार के, तिनको कहिये भेव ॥
लक्षण नाम स्वभाव गुण, जुदे जुदे समुझाय।

चरणदास के मन विषे, सुनबेको अति चाय॥

गुरुवचन

अब आठौ कुम्भक कहूँ, नावँ भेद गुण रूप।
शुकदेव कहैं परसिद्ध हैं, योगहि माहिं अनूप॥
प्रथमें कुम्भकही कहूँ, नावँ जु सूरज भेद।
दूजे ऊजाई सुनो, साधे छूटैं खेद॥
शीतकार अरु शीतली, पँचवीं भस्त्रक जान।
छठीं जु भ्रमरी नाम है, नीके समझि पिछान॥
नावँ मूर्छा सातवीं, अठवीं केवल होय।
रणजीता सबसे बड़ी, आयु बढ़ावै सोय॥

पवन पूर पूरकही कीजै। पाछे बन्ध जलन्धर दीजै॥
कुंभक रेचकके मधि जानौ। ह्वाईं बन्ध उड्यान पिछानौ॥
पवन जोरही सूं गहि लीजै। अर्ध ऊर्ध्व संकोच न कीजै॥
मध्यम कीजै पश्चिम तानै। ब्रह्म नारिके माहिं समानै॥
नाड़ीं पवन खैंचिये ऐसे। भरिये सब संध्यान जु जैसे॥
अपान वायु कूं ऊपर लावै। प्राण वायु नीचे लै जावै॥
जोपै यह साधन बनि आवै। योगी बूढ़ा होन न पावै॥
तरुण अवस्था देखै ऐसी। नितहीरहै जानिये जैसी॥

अथ सूर्यभेदन॥

कुं० कुम्भक सूरज भेदही, पहिले देहुं सुनाय।
सुख आसन के कीजिये, अथवा वज्र लगाय॥
अथवा वज्र लगाय, पूरक दहिने स्वर कीजै।
नख शिख सेती रोंकि, वायू कूं बन्ध करीजै॥

बायें सेती रेचिये, हौरै हौरै जान ।
कपाल धौंकनीजानिये, चरणदास पहिंचान ॥
दो० वायु किरम पीड़ा हरै, कीजै वारंबार ।
कुम्भक सूरज भेदनी, शुकदेव कहै हियधार ।

अथ ऊजाई ॥

अब ऊजाई कुम्भक सुनिये । समझ सीखमन माहीं गुनिये ॥
दोउ सुर समकर पवन चढ़ावै । पेट कण्ठ लौं ताहि भरावै ॥
ताको रोंकै दृढ़ करि राखै । सहजइड़ा सों रेचक नाखै ॥
ऐसे जो कोई साधन करै । रोग सलेषम के सब हरै ॥
हिरदय कण्ठ माहिं जो होई । कफका रोग रहै नहिं कोई ॥
रोग जलन्धरही का भागै । भजै वायु दुख पावक जागै ॥
बैठत चलत पवनको भरै । यही उजाई कुम्भक करै ॥
चरणदास शुकदेव बतावै । तीजी शीतकार समुझावै ॥

अथ शीतकार

दो० ओढ़ जँभाई नासिका, लीजै खिंचै जु पौन ।
ताहि कछू ठहरायकै, छोड़ै मुख सों जौन ॥
धीरे धीरे खैंचिये, सीसी शब्द उचार ॥
सुन्दर होवै तेजवन्त, अधिक रूप को धार ॥
भूख प्यास व्यापै नहीं, आलस नींद न होय ।
तनचेतनही होत है, रहै उपाधि न कोय ॥
यहि विधि साधतही रहै, होय योगिन मैं भूप ।
चरणदास शुकदेव कहि, कुम्भक यही अनूप ॥

अथ शीतली

कहूँ शीतली कुम्भक आगे । जो कोइ करै भागतिहि जागे ।
तालु मूल जिह्वा बल सेती । प्राण वायु पीवै कर हेती ॥

कुम्भक राखै सबतन माहीं। ढीला गात रमावै ह्वाहीं॥
नासा सेती रेचक कीजै। एकमास सिधिहो सुखलीजै॥
पीजै पवन जीभको मोड़े। सहजै छोड़ै नासा ओड़े॥
दोनों रंधरसे तजि दीजै। यों अभ्यास पूर करिलीजै॥
ताप तिली गोला ज्वर होई। वाके तनमें रहै न कोई॥
देह पुरानी नूतन होय। तीनि वरष साधै जो कोय॥
जैसे सांप केंचुली मौहिं। श्वेत बाल तजि काले होहिं॥
काहू भांतिका दुख नहिं व्यापै। भूख प्यास तिसभाजै आपै॥

अथ भस्त्रिका॥

दो० अबकहुँकुम्भकभस्त्रिका, पित कफ वायु नशाय॥
अगिनि बढ़ै अभ्याससों, तीनि गांठि खुलिजाय॥

आसनपद्म सुयाविधि करै। बामजंघ दहिनो पग धरै॥
बावों पग दहिनी पर लावै। जांघनसों दोउहाथ मिलावै॥
ग्रीवा पेट बराबर राखै। आगे सुनु शुकदेवा भाखै॥
मुख मूंदै रेचै नासासूं। पूरक चपल करै श्वासासूं॥
रेचक पूरक ऐसे कीजै। वारंवार तजै अरु लीजै॥
जैसे खाल लोहारा भरै। रेचक पूरक आतुर करै॥
करत करत जबहिं थकिजावै। नेक ठहरि दूजी विधि लावै॥
फिरि पूरक सूरजसों करै। पवन उदरके माहीं भरै॥
तर्जनि अँगुली सों दृढ़ रोंकै। नासामध्य धारकरि जोखै॥

दो० कुम्भक पिछली भांतिकरि, रेच इड़ासों वाय।
कफ पित वायु नशायके, लेवै अग्नि बढ़ाय॥
कुण्डलिनी देवैजगा, यह कुम्भक सुखदाय।
करै जुहित व्रत धारिकै, चरणदास चितलाय॥
कुण्डलिनी सरकायकै, बेधै तीनों गांठ।

ऐसी पँचवीं भस्त्रिका, रहै न कोई आंठ ॥

ब्रह्मनाड़िका के छिद्र माहीं । रोंकिरही मुखदेरहि ह्वाहीं ॥
लाय लपेटै नाभी ठाहीं । दृढ़है बैठी सरकै नाहीं ॥
सवा बिलस्त कि जाकीदेही । तामें अस्थित जीव सनेही ॥
शक्ति नांगिनी यही जु कहिये । याके भेद गुरूसों लहिये ॥
महा अपरबल जागै नाहीं । ताते नर सब मरिमरि जाहीं ॥
कोइ इक योगी ताहि डुलावै । सुपमन वाट गगन लैजावे ॥
ब्रह्मरंध्र में जाय समावै । लगै समाधि बहुत सुखपावै ॥
जो कछु होय सो कहा न जावै । चरणदास शुकदेव सुनावै ॥

दो० शिव शक्ति मे लाभ वय, रहै न द्वितिया भाव ।
कुण्डलिनी परबोधका, जो कोइ करै उपाव ॥

शिष्यवचन ॥

व्यास पुत्र शुकदेवजी, किरिपाकरी दयाल ।
चरणदास आधीनही, समझो भयो निहाल ॥
एकबार फिरि खोलिकै, कुण्डलिनी समुझाव ।
याके सवही भेद को, सुनबेको अतिचाव ॥

गुरुवचन ॥

फिरभी तोसों कहतहों, कुण्डलिनी विस्तार ।
ताके सगरे भेदही, सुनिकै हियमें धार ॥
नाभिस्थान नागिनि रहै, कुण्डल शशी अकार ।
प्राण पियारा वही है, आगे सुनो विचार ॥
कुंभक कर्म्म कोई करै, देवै शक्ति जगाय ।
जैसे लागी लष्टिका, नागन शीश उठाय ॥
सीखी गुरूसों कुंभकसाधै । नीकी विधि ताको अवराधै

पवन ठवकलग ताहि जगावै । तब ऊरध[1] को शीश उठावै ॥
नाभि ठौर ताका है वासा । पद्मराग मणि ज्यों परकासा ॥
सात लपेटे वाई जानौ । ताते शक्र कुण्डली मानौ ॥
नाड़ी सहस लगी हैं वाको । सोपर छुटी जानिको ताको ॥
जिनमें तीन नारि अधिकाई । इड़ा पिंगला सुषमन गाई ॥
तिनके माहिं शिरोमणिसुषमन । नालकमल जानतयोगी जन ॥
जायपहुंचि ब्रह्मरंधर ताहीं । ऊरध कमल सातवें माहीं ॥
आवन जोन पवन की बाटा । सकत चढ़न ऊरधका घाटा ॥
कहि शुकदेव चरणहीं दासा । आगे कहूं जुहो परकासा ॥

दो० नागिनि सूक्षम जानिये, बाल सहस वा भाग ।
शुकदेव कहैं अंकारही, रक्त बरण ज्यों नाग ॥
कुंभक हो अत्यन्त जब, तब ऊरधको जाय ।
ब्रह्मरंध्र में आयकर, घड़ी दोय ठहराय ।
अमृत का करि पानही, पूरण हो अभ्यास ।
उड़ते देखै सिद्धि तब, वाको माहिं अकास ॥

पै देखतहै नैन विनाहीं । चहै करै लीला उन माहीं ॥
खेचर मिलि खेचर ह्वै जावै । यह भी शक्ति उड़नकी पावै ॥
अधिकी ठहरै लगै समाधा । यह तो कहिये खेल अगाधा ॥
शिवशक्ती जहँ मेला होई । होय लीन मन उनमन सोई ॥
योग युक्ति करि याको पावै । परासक्त अपने बल लावै ॥
चाहै अर्द्ध ठौर लैआवै । जब चाहै ऊरध लैजावै ॥
कबहूं हिरदयके मधि आनै । याही को आपनपौ जानै ॥
इच्छा करै सिद्धि की जैसी । होय प्राप्त सो वेगिहि तैसी ॥
चहै अस्थूल सूक्ष्म तन धारूं । वैसाही होय जाय सबारूं ॥

---

१ ऊपर ॥

कहि शुकदेव सुन चरणहिंदासै। जो कुंडलिनी हृदयप्रकासै॥

दो० कुण्डलिनी परकाशही, भौंरा एक अनूप।
सोउ प्रकाशत है तहां, सुवरण कोसो रूप॥
हिरदयमें उजियारही, होत चपल यहि भांति।
जैसे धूमर मेघमें, बिजलीही दमकाति॥

कहि शुकदेव चरणदास बताऊं। और अनूठी सिद्धि सुनाऊं॥
चाहै परदेही में बरूं। अपनी कायाको परिहरूं॥
रेकच प्राणायाम प्रतापै। कुण्डलिनी जो अपनी आपै॥
रेचक किये बाहरे आवै। परकायामें जाय समावै॥
अस्थित होय जाय ज्यों जानो। सदा विराजत ऐसे मानो॥
ऐसे पहिली देह गिरावै। ज्यों मणिको डोरा तजिजावै॥
जब चाहै अपने घट माहीं। परासक्तही आवै ह्वाही॥
काया पलट कहत हैं याको। कोइक योगी जानत ताको॥

दो० चाहै तनको छोड़ करि, देह कलप धरि और।
मनमानै जहँ गवनकरि, फिरि आवै अपठौर॥

अथ भ्रामरीकुम्भ॥

छठी जु कुम्भक भ्रामरी, सुनिये चरणहिदास।
शुकदेवा हौं कहतहूं, तामें करो बिलास॥
जैसे भृंगी धुनिकरै, यों उपजै हिय माहिं।
दोनों स्वरसों कीजिये, परगट सुनिये नाहिं॥
बलसेती पूरक करै, यही शब्द लै साथ।
भृंगी कीसी धुनि सहत, रेचै मन्द सुहात॥
या अभ्यास के किये से, चित चंचलरहै नाहि।
योगीश्वर लीला करै, चिदानन्द के माहिं॥

अथ मूर्च्छा ॥

सतवीं कुम्भक मूरछा, पूरक ऐसे होय।
खैंचत होवै सोरसा, मेघधार ज्यों जोय ॥
बन्ध जलन्धर दीजिये, सहज कण्ठ तल ताज।
रेचित वाई मूरछित, होय यही पहिंचान ॥
सुखदायी सुखव॰ि करन, कही सोइ शुकदेव।
केवल कुम्भक आठवीं, गुरुसों पावै भेव ॥
पूरक रेचकहीं सहित, ये कुम्भक करि लेहि।
केवल कुम्भकनामधै, जबलग ह्यां चित देहि ॥
केवल कुम्भक आशधरि, येहू साधत लोग।
बलपावै वशपौन हो, और भजैं तन रोग ॥

अथ केवल कुम्भक ॥

आयु बढ़ावै सिद्धिदे, लागै और समाधि।
केवल कुम्भक गुण भरी, बिन परमाण अगाधि ॥
केवल कुम्भक जब सधै, तब ये सब रहि जाहिं।
जैसे सूरज उदयते, तारे सब लुकि जाहिं ॥
केवल कुम्भक योग में, ज्यों नगरी में भूप।
रेचक पूरक के विना, जैसे बँधा जु कूप ॥
सो तुम सों पहिले कही, विधिगति सब समुझाय।
सो सुनि तुम हिरदयधरी, देहौना बिसराय ॥
प्राणायाम बड़ातप सोई। प्राणायाम सों बल नहिं कोई ॥
प्राण वायुको यह वश लावै। मनको निश्चल करि ठहरावै ॥
आयुर्दायको यही बढ़ावै। तनमें रोग रहन नहिं पावै ॥
पाप जलावै निर्मल करै। उपजै ज्ञान तिमिर सब हरै ॥
योग युक्ति की जड़ यह जानो। याहि टेकगहि करना ठानो ॥

अड़ि आसनसों थाको कीजै । नवो द्वार पटनीके दीजै ॥
पांचौ इन्द्रीके रस पेलौ । इड़ा पिंगला सुषमन खेलौ ॥
कहि शुकदेव चरणहीं दासा । प्रत्याहार सुनि विषै निरासा ॥

इति चौथाप्राणायामअंग सम्पूर्णम् ॥

अथ पांचवांप्रत्याहारअंग वर्णन ॥

दो०—प्रत्याहार जो पांचवां, समझाऊं चर्णदास ।
शुकदेव कह कहुँ खोलकरि, नीके समझौ तास ॥

प्रत्याहार पांचवां कहिये । सो योगीको निश्चय चहिये ॥
विषय ओर इन्द्री जो जावै । अपने स्वादन को ललचावै ॥
तिनकी ओर न जाने देई । प्रत्याहार कहावै एई ॥
रोंकिरोंकि इन्द्रिनको लावै । ध्यान आतमा माहिं लगावै ॥
जैसे कछुआ अंग समेटै । रंक शीतकाला में लेटै ॥
जैसे माता पूत खिलावै । बालक वस्तू कों ललचावै ॥
सरप आग अरु शस्तर कोई । कछू और दुखदायी होई ॥
तिनको बालक नाहीं जानै । पकड़नको दौड़ै मन आनै ॥

दो०—बालक जानत है नहीं, दुखदायी सब एह ।
जो पकरूंगा हाथ से, दुख पावैगी देह ॥
माता जानत है सबै, खोटी खरी विकार ।
राखै सुतको खैंचिकरि, वारंवार निहार ॥
ऐसेही बुधि ज्ञान सों, पांचौ इन्द्री रोक ।
विषय ओरसों फेरिये, लहै न अपना भोग ॥

ज्यों ज्यों इनको भोगदै, परबल हाती जाहिं ।
विना भोग होहीं नहीं, वह बल रहै जुनाहिं ॥
नैन जु भोगैं रूप को, और गन्ध को घ्रान ।
षटरस भोगै जीभही, शब्दहि भोगै कान ॥
त्वचा भोगि अस्पर्शको, बाढ़ै अधिक विकार ।
पांचौ इन्द्री जानिले, इनका यही अहार ॥
इनसेमिलिमिलि मनबिगड़ि, होयगया कछुऔर ।
इन्द्री रोकै मन रुकै, रहै जु अपनी ठौर ॥
ज्यों ज्यो होवै प्राणवश, त्यों त्यों मनवश होय ।
ज्यों ज्यों इन्द्री थिररहैं, विषयजाय सब खोय ॥
तातै प्राणायाम करि, प्राणायामहिं सार ।
पहिले प्राणायामकर, पीछे प्रत्याहार ॥

इति प्रत्याहारअंगसम्पूर्णम् ॥

अथ षष्ठधारणाअंग वर्णन ॥

दो॰ तत्त्वनकी कहुँ धारणा, तिनमें करै प्रवेश ।
शनईःशनईः साधिकरि, पहुँचै निर्भयदेश ॥

पहिले भूमि धारणा कीजै । ठौर कालजेमें चितदीजै ॥
पीतवरण चौकोर अकारो । विधि दैवत है तहां विचारो ॥
प्राण लीनकरि पांचघड़ीहीं । चित अस्थिर होवैगा जबहीं ॥
यासों पृथिवीको वश करिये । यही धारणा जो चित धरिये ॥
हिरदै से ऊपर जल जानो । कण्ठतईं ताको पहिंचानो ॥

चन्दफांक अरु श्वेत अकारो । हृषीकेश तहँ देव निहारो ॥
ह्यां हूं पांच घरी अस्थापै । प्राणलीन करि चितदै आपै ॥
व्यापैना विष काहू विधिको । शुकदेवकहैंफलजलकेसिधिको ॥

दो० कण्ठसे ऊपर तालुका, लो पावक अस्थान ।
लालरंग तिरकोन है, रुद्र देवता मान ॥
तहां लीन करि प्राणको, पांच घड़ी परमान ।
भय व्यापै नहिं ज्वालको, अग्निधारणा जान ॥
जाके आगे वायु है, भृकुटीलौं मर्य्याद ।
मेघ बरण षटकोन है, ईश्वर देवत साध ॥
प्राणलीन तहँ कीजिये, पांच घड़ी रे तात ।
पैहै खेचर सिद्धिही, तत पदही ह्वै जात ॥
ब्रह्मरंध्र आकाश है, बड़ा जु तत्त्व न माहिं ।
श्याम बरण ब्रह्म देवता, योगी जहां सिराहिं ॥
प्राण लीन घटि पांचकरि, पावे मुक्ति अनूप ।
व्योमतत्त्व की धारणा, जहां छाहँ नहिं धूप ॥
पृथ्वी संग लकारही, जल के संग बकार ।
पावक संग रकार हैं, मारुत संग मकार ॥
पंचम तत्त्व आकाश ही, सब के ऊपर जान ।
अक्षर जहां हकारही, शुकदेव कहै बखान ॥
पहिलि धारणा थंभनी, दूजी द्रावण होय ।
तीजी दहनी जानिये, चौथी भ्रामनी सोय ॥
पँचवीं नाम जु शंखिनी, इनको लेवो जान ।
शुकदेवा अब कहत है, आगे और विधान ॥

गुरु की प्रथम धारणा लीजै । अपना रूप उन्हीं सा कीजै ॥

ऐसे ध्यान सभी सुधि पावै । जैसी धारै सो होयजावै ॥
वेगिहि सब साधन सधि आवै । आलस कायरता भजिजावै ॥
लोक परलोक सभी सुख लेवै । जो गुरु को ऐसो व्रत सेवै ॥
दूजे परमातम की धारण । मुक्तिदेन अरु बंध निवारण ॥
धारनसों चित घना लगावै । सिमिटि सभी ओरनसों आवै ॥
जो कछु होय सो आगेहि आगै । टेक पकरि मारग में लागै ॥
चरणदास शुकदेव बतावै । सती शूरमा ज्यों मन लावै ॥

दो० प्राण वायुकी धारणा, परमेश्वर पहिंचान ।
परमातम ह्वै जात है, जोपै रोके प्रान ॥
बारह मात्रा सों चढ़ै, ह्वां तक पहुँचै जाय ।
बारह सै अरु छानवे, कुम्भक में ठहराय ॥
यही धारणा अंग है, शनै शनै कर ध्याव ।
याते दुगुनी ध्यान में, प्राण वायु परचाव ॥
दूजा जानि समाधि लो, ध्यानहिं सेती एहु ।
पांच सहस अरु एकसौ, चौरासी गिनिलेहु ॥

इति धारणांगसम्पूर्णम् ॥

अथ सातवांअंग वर्णन ॥

शिष्यवचन ॥

दो० अंग धारणा का कहा, सो धारा चितमाहिं ।
ध्यान अंग बरणन करौं, मैं रहुँ चरणन छाहिं ॥

गुरुवचन ॥

चरणदास अब ध्यान सुन, कहूं तोहिं समुझाय ।
कहिशुकदेवसोमुनिसमुझि, करौ ताहि चितलाय ॥
ध्यान जु चारि प्रकार के, कहूं जु उनकी रीत ।
पदस्थ पिंड रूपस्थ है, चौथा रूपातीत ॥

अथ पदस्थध्यान ॥

हिय पदपंकज ध्यानकरि, फिरि करि सारी देह ।
नखशिखलौंछविनिरखिकै, चरणन में चितदेह ॥
कै कुंभकही कीजिये, ह्वां प्रणव का जाप ।
मन निश्चल हो सहजमें, भाजैं त्रैविधि ताद ॥
पदस्थ ध्यान याको कहैं, करै सो जानै भेव ।
पिंडस्थ ध्यान वर्णन करैं, खोलि खोलि शुकदेव ॥

अथ पिंडस्थध्यान ॥

ब्रह्म सोई यह पिंड है, यामें करि करि वास ।
कमलन के लखि देवता, लहो परापत तास ॥
सोधे सिगरे पिंडको, षट चक्रहु को ध्यान ।
शोधत शोधत आचढ़ै, भवँर गुफा अस्थान ॥
तिरवेणी संगम बहै, ज्योति जहां दरशाय ।
सातजन्म सुधि होय जब, ध्यान करै मनलाय ॥
आगे कमल हजार दल, सतगुरु ध्यान प्रधान ।
अमृत द्रवे बहिचलै, हंस करै जहँ न्हान ॥
ऊपर तेजहि पुंज है, कोटि भानु परकास ।
शून्य शिखर ताऊपरै, योगी करै विलास ॥

अथ रूपस्थध्यान ॥

रूपस्थ ध्यानको भेद सुनि, कीजै मन ठहराय ।
देखै त्रिकुटी मध्य है, निश्चल दृष्टि लगाय ॥
ध्यान किये पहिले जहाँ, अगन फूल दृष्टाय ।
केते द्यौसन माहिंहीं, दीप ज्योति प्रकटाय ॥
शनै शनै आगे जहां, दीपमाल दरशाय ।
फिरि तारों की मालसो, दामिनि बहु दमकाय ॥
बहुत चन्द सूरज घने, देखे कोटि अनन्त ।
अणुज्यों करि सूभर भरे, ध्यान माहिं दरशन्त ॥
झिलमिल झिलमिल तेजमय, भासै सब संसार ।
तन मन उपजै सुखघना, आनन्द अधिक अपार ॥
जल अथाह में डूबज्यों, देखै दृष्टि उघार ।
जो दीखै तौ नीरहीं, दश दिशि अपरम्पार ॥
यही ध्यान प्रत्यक्ष है, गुरू कृपासों होय ।
कहि शुकदेव चर्णदासकरि, तन मन आलस खोय ॥

अथ रूपातीतध्यान ॥

रूपातित शुन्यध्यानहिंजानो । शून्यहि को परब्रह्म पिछानो ॥
त्रिकुटी परै शून्य अस्थान । सो वह कहिये पद निर्वान ॥
चिदानन्द ताकी हिय आनो । वाहीं में मनहीं को सानो ॥
आठपहर जहं चित्त लगावो । याके कीन्हे सों लयपावो ॥
ज्यों अकाश में पक्षी धावै । धावत धावत दृष्टि न आवै ॥
बहुरि अचानक दीखै आई । वह ध्यानी ऐसा ह्वै जाई ॥
इसपरमशून्यकाअधिकीध्याना । सब ध्यानन में है परधाना ॥
सो योगी यह लहै ठिकाना । सायुज्यमुक्तिहोइ जायनिदाना ॥

दो० यासों लगै समाधिहीं, निद्रा कहिये योग।
ध्याता होवै लीनहीं, रहै न त्रिपुटी रोग॥
सतवाँ कहाजु ध्यानहीं, अठवीं कहूँ समाधि।
ज्ञान ध्यान जहँ वीसरै, तहां न विद्यावाद॥

इति ध्यानाङ्गसम्पूर्णम्॥

अथ आठवां समाधि अङ्गवर्णन॥

अष्टपदी छन्द॥

अठवीं कहूँ समाधि लक्षण वर्णन करूं।
तोको सब समुझाय तेरी दुविधा हरूं॥
जबहीं लगै समाधि योगी आनन्द लहै।
योग भया सिध जानि क्रिया कोइ ना रहै॥
मिलि ध्याता अरु ध्यान एक होव जहां।
दूजारहै न भाव मुक्ति वर्तें जहां॥
निरउपाधि निर्खेद ऐसा वह देश है।
करम भरम अरु धरम नहीं कोइ लेश है॥
आपार है न कोय सकल आशागरै।
चिन्ताका दुख नाहिं वासना सब जरै॥
पंच विषय जहं नाहिं नहीं गुणतीनहीं।
होवै ब्रह्म स्वरूप जीवता क्षीनहीं॥
जाग्रत स्वप्न सुषोप्ति जहां होवै नहीं।
चौथे पद को पाय होय जहँ लीनहीं॥

ऐसे कहै शुकदेव सुनौ चर्णदासही।
यह निर्द्वन्द्व समाधि करौ जहं वासही॥
दो० जहां कछू गम ना रहै, विद्या वेद न वाद।
ऋधिसिधि मिटि आनंदल है, ऐसी शून्य समाधि॥

अष्टपदी छन्द॥

तहां किये परवेश रहै न अकारही।
रूप नाम गुण क्रिया यही साकारही॥
पाप पुण्य सुख दुःख जहां नहिं पाइये।
सतमारग कुल धर्म न द्वैत दिखाइये॥
भूख प्यास अरु उष्ण जहां नहिं शीत है।
हर्ष शोक नहिं नेक वैर नहिं प्रीत है॥
इन्द्री मन नहिं रहत गलत ह्वै जात है।
सिध साधक गुरु शिष्य न भाव रहात है॥
उडुगन चन्द्र न सूर न दिवस न रात है।
त्वंपद ईश्वर ब्रह्म न जान्यो जात है॥
जैसे जल में नीर क्षीर में क्षीरही।
असि पद में यों जीव नीर में नीरही॥
अहं मिटै मिटि जाय जु आपा थोकही।
ना परमातम आतम बंध न मोषही॥
ऐसे कह शुकदेव यों होय समाधि में।
वैसोही ह्वै जाय सोई था आदि में॥
दो० हुता आदि परमातमा, विचउठि लगा विकार।
मिलि समाधि निर्मल भवै, लहै रूप ततसार॥

अष्टपदी छन्द

जहँ आतमदेव अभेव सेव्य नहिं सेवहै ।
स्वामीजी ह्वां नाहि पूजा नहिं देव है ॥
नौधा[1] नेम न प्रेम ज्ञान नहिं ध्यान है ॥
जड़ चेतन कछु नाहिं सुरति नहिं ज्ञान है ॥
विधि निषेध नहिं भेद अन्वैवितरेकना ।
निश्चय अरु व्यवहार कछू तामें न ह्वा ॥
उत्तम मध्यम भाव न शुभ ना अशुभहै ।
सिंह सर्प डरनाहिं औ शस्तर कोन भै ॥
पावक दग्ध न करै बहावै जल नहीं ।
ह्वाँ नहिं पहुँचै काल न ज्वालाहै तहीं ॥
ऐसा भवन समाधि भाग्य सों पाइये ।
तजि कै जक्त उपाधि तहां मठ छाइये ॥
यतन करै लख माहिं और सब भेषही ।
कोटिनमें कोइ होय समाधी एकहीं ॥
ह्वांतक पहुंचे जाय सोई सिध साध है ।
कहै शुकदेव पुकारि जु कठिन समाधि है ॥

दो० भक्ति योग अरु ज्ञान की, त्रैविधि कहूँ समाधि ।
गुरू मिलै तो सुगमहै, नाहीं कठिन अगाधि ॥

अथ भक्तिसमाधि ॥

सब इंद्रिन को रोंकिकै, करि हरि चरणन ध्यान ।
बुद्धि रहै सुरत रहै, तौ समाधि मत मान ॥
ध्याता बिसरै ध्यान में, ध्यान होय लय ध्येह ।
बुद्धि लीन सुरत न रहै, पद समाधि लखिलेह ॥

१ श्रवण कीर्त्तन स्मरण पादसेवन अर्चन वंदन दास्य सख्य आत्मनिवेदन ॥

अथ योगसमाधि ॥

आसन प्राणायाम करि, पवन पंथगहिलेहि ।
षट चक्कर को छेद करि, ध्यान शून्य मन देहि ॥
आपा विसरै ध्यान में, रहै सुरति नहिं नाद ।
लीन होय किरिया रहित, लागै योग समाध ॥

अथ ज्ञानसमाधि ॥

जबलगतत्त्व विचारि करि, कहैं एक अरु दोय ।
ब्रह्मव्रत बांधे रहै, ह्यांलग ध्यानहिं होय ॥
मैं तू यह वह भूलि करि, रहै जू सहज स्वभाय ।
आपा देहि उठाय करि, ज्ञान समाधि लगाय ॥
ज्ञान रहित ज्ञाता रहित, रहित ज्ञेय अरु जान ।
लगी कभी छूटै नहीं, यह समाधि विज्ञान ॥
पूछे आठों अंग तैं, योग पंथ की बात ।
शुकदेव कहै तामें चलौं, गुरू कृपा लै साथ ॥

इति समाधिअङ्गसम्पूर्णम् ॥

अथ छहौकर्महठयोग वर्णन ।

शिष्यवचन ॥

दो० अष्टांग योग वर्णन कियो, मोको भई पहिंचान ।
छहौकर्म हठयोग के, वरणौ कृपानिधान ॥

गुरुवचन ॥

पहिले ये सब साधिये, काया होवै शुद्धि ।
रोग न लागै देह को, उज्ज्वल होवै बुद्धि ॥

अरु साधा षटकर्म बताऊं । तिनके तोंको नाम सुनाऊं ॥
नेती धोती वसती करिये । कुंजर करम रोग सब हरिये ॥
न्योली किये भजै तन बाधा । देखिदेखि जिन गुरु सों साधा ॥
त्राटक कर्म दृष्टि ठहरावै । पलक पलक सों लगन न पावै

अथ नेतीकर्म ॥

कुं० मिही जु सूत मँगाय कै, मोटी बाटै डोर ।
ऊपर मोम रमाय कै, साधै उठकर भोर ॥
साधै उठकर भोर, डेढ़ बालिश्त की कीजै ।
ताको सीधी करै, हाथ अपने में लीजै ॥
नासा रंध्र में मेल कर, खींचै अँगुली दोय ।
फेरि विलोवन कीजिये, नेती कहिये सोय ॥

दो० कान नाक अरु दांत को, रोग न व्यापै कोय ।
उज्ज्वल होवै नैनही, नित नेती करि सोय ॥

अथ धोतीकर्म ॥

धोती कर्म यासों कहैं, पट्टी सोलह हाथ ।
कोढ़ अठारह नाभवैं, करै जु नित परभात ॥

कुं० चौड़ी अंगुल चारिकी, मिही वस्त्र की होय ।
जलमें भेय निचोय करि, निगल कंठ सों सोय ॥
निगल कंठ सों सोय, सिरा बाहर रहि जावै ।
फेरि निकासै ताहि, पित्त कफ दोऊ लावै ॥
काया होवै शुद्धही, भजै पित्त कफ रोग ।
शुकदेव कहै धोती करम, साधै योगी लोग ॥

अथ वस्तिकर्म

तीजे वस्ती कर्महीं, कहौं सुनौ चितलाय।
क्रिया करै गन्नेसही, कुंजी तहां लगाय॥
कुंजी तहां लगाय, मूल को धोवन कीजै।
पसारन संकोच सुरति दै यह करि लीजै॥
नीर गुदासों खैंच करि, थाँभै उदर मंझार।
कछू डोल अस बैठकर, फिरि दे ताहि उतार॥
दो० यहीं जु वस्ती कर्म है, गुरु बिन पावै नाहिं।
लिंगगुदा के रोग जो, गर्मी के नशिजाहिं॥

अथ गजकर्म

गज कर्म याहीं जानिये, पिये पेट भरि नीर।
फेरि युक्ति सों काढ़िये, रोग न होय शरीर॥

अथ न्योलीकर्म

न्योली पद्मासन सों करै। दोनों कर घुटनों पर धरै॥
पेटरु पीठ बराबर होय। दहने बायें नले बिलोय॥
मैल पेटमें रहन न पावै। अपान वायु तासों वश आवै॥
तापतिली अरु गोला शूल। होन न पावै नेक न मूल॥
जो गुरु करिकै ताहि दिखावै। न्योली कर्म सुगम करि पावै॥
और उदर के रोग कहावै। सोभी वै रहने नहिं पावै॥

अथ त्राटककर्म॥

त्राटक कर्म टकटको लागै। पलक पलक सों मिलै न ताकै॥
नन उघारेही नित रहै। होय दृष्टि थिर शुकदेव कहै॥
आँख उलटि त्रिकुटीमें आनो। यह भी त्राटक कर्म्म पिछानो॥
जेते ध्यान नैन के होई। चरणदास पूरण हो सोई॥

दो० कपाल भांति अरु धौंकनी, बाघी शंख पखाल ।
चारि कर्म ये औरहैं, इनहिं छहों के नाल ॥

इति त्राटककर्म ॥

अथ खेचरीमुद्रा ॥

शिष्यवचन

दो० एक बार फिरभी कहो, मुद्रा पांच दयाल ।
मोसे रंक अधीनपर, होकर बहुत कृपाल ॥

गुरुवचन ॥

अष्टपदी ॥

आगे मुद्रा तोहिं कही समुझाइया ।
फिरभि कहूँ अब खोलि सुनो चितलाइया ॥
पहिले मुद्राखेचरी को साधन भनूं ।
जैसे आगे करी सबी ऋषि मुनिजनूं ॥
ताते जलके कुरले करि जुबगाइये ।
तापाछे चौबस्त को चूरण लाइये ॥
जिह्वा हाथमें पकरि मर्दन छीलनकरै ।
दोहनताननकरै बहुरि दशनन धरै ॥
फिरि करि छीलन ताहि छेदनहिं कीजिये ।
तोतू ज्यों कटिजाय यत्न सोइ लीजिये ॥
ब्रह्मरंध्र को धोयकै मैल निवारिये ।
बायें अँगूठे ऊपर कागको धारिये ॥
सहज सहज सरकायकै आगे लाइये ।

यह सब साधन कठिन गुरुसे पाइये ॥
दो अँगुली कूंचीसूं करि मेलना ।
जिह्वा उलटी राख जु नितप्रति खेलना ॥
यह उपाय षट मास करै तजिमानही ।
रसना यों बँधिजाय चढ़ै अस्थानही ॥
दो० चार काज यासूं सरैं, फलदायक बहुभांति ।
योग माहिं बड़ भूपहै,अधिकीजाकीकांति ॥

अष्टपदी ॥

एक जु प्राणायाम जीभसूं कीजिये ।
दूजे बन्ध उड्यान यहीसूं दीजिये ॥
तीजे करि करि ध्यान निरखि जहूँ ज्योतही ।
चौथे अमृत पिवै खुलै तहँ सोतही ॥
खैंचे त्रिकुटी पाट सहज अरु फेरिये ।
द्रवै सुधा[1] रसनीर जहां मन घेरिये ॥
अमृतही के स्वादको कौन बखानई ।
जो कोइ अँचवै हंस सोइ पुनि जानई ॥
दिन दिन पलटै देह रक्त दूधाभवै ।
बीसबरस अरु चार माहिं ऐसा ह्वै ॥
इच्छाचारी होय बरस छत्तीसमैं ।
सब लोकन में जाय अपनी शक्ति ते ॥
दो० जेते विष व्यापै नहिं, रोग न दहै शरीर ।
जो कोइ पीवै युक्तिसूं, कामधेनु को क्षीर ॥
भूख प्यास अरु नींद के, रहै न तीनौ लेव ।
नाद बिन्दु गुटका बँधै, कहै यही शुकदेव ॥

---

१ अमृत ॥

तीन महीने चार का, बालक गोदी माय ।
ना वह पीवै नीरहीं, अन्न नही वह खाय ॥
वह तौ जीवै दूधसूं, वाकूं वही जुकाम ।
लगो रहै माताकुचन, निसरै एक न याम ॥
अमृत पीवै योगिया, ऐसे चरणहि दास ।
पहरहु यह छांड़ै नहीं, कामधेनु[1] को पास ॥
ऐसे धारै तौ बनै, सुधा रसाला संत ।
दिविकायाहोजायजब, धनिकहै कमलाकंत ॥
आठ पहर लागारहै, पीवै कै कै ध्यान ।
मैं कहा जैसाही बनै, परसै पद निरवान ॥
भेद गुरूसे ये लहै, और छिपावै वाहि ।
जोजोफलयाकेअधिक, होय परापति तांहि ॥
योगेश्वर अरु देवता, मुनी ऋषीश्वर जान ।
रखवारे वाके घने, करन न देवैं ध्यान ॥
टेक गहै सो जापियै, और करै ह्यां ध्यान ।
यति सती अरु गुरुमुखी, जाकी ऐसीआन ॥
बड़ी जु मुद्रा खेचरी, मुख में याका वास ।
जो कहिमैं शुकदेवजी, जानलेहु चरणदास ॥

अथ भूचरी मुद्रा ॥

दूजी मुद्रा भूचरी, नासा जाको वास ।
प्राण अपान जुदी जुदी, एक करै चरणदास ॥
जितकीतितरखप्राणको, वा घरलाय अपान ।
ताहि मिलावै युक्तिसूं, करि करि संयम ध्यान ॥
जब वह जीतै पवनकूं, मन चंचल ठहराय ।

१ इन्द्रकी गौ ॥

गगन चढ़न की आश हो, कहैं शुकदेव सुनाय ॥
गुदाद्वार बंध दीजिये, एँड़ी पांव लगाय ।
आसन सिद्धजुकीजिये, मन पवनावश लाय ।
अपान वायु जब वशभवै, ऊरध खैंच चलाय ।
सनई सनई जाचढ़ै, प्राण वायु ह्वैजाय ॥

अथ चाँचरीमुद्रा ॥

तीजी मुद्रा चाँचरी, जाको नैनन वास ।
नासा आगे दृष्टिकूं, राखै मन धर आस ॥
अंगुल चार नासिका आगे । चित अस्थिरकरि देखन लागे ॥
खुले पांच तत करै जु कोई । मन अरु पवन जहां थिर होई ॥
फिर ह्वांसूं नाशा परि आवै । अचल टकटकी तहां लगावै ॥
जहँ बहुतक अचरज दरसावै । विभव स्वर्ग के आगे आवै ॥
जितसूं पलट तिरकुटी माहीं । ध्यान करै कहुँ अन्त न जाहीं ॥
दीरघ तारासा परकासै । उदय होय सूरज ज्यों भासै ॥
चित चेतन दोउ मेला करै । लै उपजै अरु दुबिधा हरै ॥
यही चाचरी मुद्रा जानै । चरणदास याकूं पहिंचानै ॥

अथ अगोचरीमुद्रा ॥

कहूँ अगोचरि चौथि मुद्रा । तामें सुख पावै योगींद्रा ॥
यामुद्राका सँरवन बासा । शुकदेव कहैं सुन चरणहि दासा ॥
दो० ज्ञान सुरति दोउ एक है, पलट अगोचर जाय ।
शब्द अनाहद मैंरते, मन इन्द्री थिरपाय ॥

अथ उनमनीमुद्रा ॥

पँचवीं मुद्रा उनमनी, दशवें द्वारे वास ।
सिद्धसमाधि मिलै जहां, दग्धहोय सब आस ॥

आनंदहि आनँद जहां, तहां न काल कलेश।
तीनौं गुन नहि पाइये, ह्यांनहिं मायालेश ॥
जीवातम परमात्मा, होय जाय वा ठौर।
ध्याता ध्यानन ध्येह जहँ, तहांन किरिया और ॥

महाबन्धसाधनविधि ॥

महाबन्ध तोहिं पहल बताऊं। पाछे मूलवन्ध समझाऊं ॥
बायां पाँव सिवन गहि दीजे। मूल द्वार एँड़ी बँध कीजे ॥
दहिनी जंघ जंघपर लावै। गउमुख आसन नाम कहावै ॥
राखै चिबुक हृदय पर लाय। पवनराह पूरव को जाय ॥
ध्यान त्रिकूटी संयम करै। प्राण वायु हिरदे में धरै ॥
महाबन्ध ऐसे करि साधै। गुरू प्रताप याहि आराधै ॥
बिना पुरुष तिरियाकूं जानौ। बन्ध बिना मुद्रा पहिंचानौ ॥
निरफल जायपुरुष बिन नारी। महाबन्ध बिनु मुद्राधारी ॥
माहिं कण्ठके ध्यान लगावै। सुरत निरत ह्वाईं ठहरावै ॥
दो० महाबंध अस्थत करै, सो योगी ह्वै जाय।
पवन पंथ मुंदित करै, ध्यान कण्ठ में लाय ॥

शशियरकूं सूरज पर लावै। रेचक पूरक पवन फिरावै ॥
महाबंध करै अभ्यासा। अमृत अचवै बुझै पियासा ॥
जरा मृत्यु देही नहिं आवै। महा बंध तीनौ गुन पावै ॥
जठर अग्नि परचै बहुभारी। निशिदिन माहिं करै अठवारी ॥
पहर पहर भर पवन भरीजै। प्रथम अल्प अभ्यास करीजै ॥
तिय सेवन तापन नहिं करै। काम अग्नि काया नहि जरै ॥
दो० ऐसी विधि साधै पवन। योग पंथ धरि पाय।
पहर पीछला बनत जन आयुरदा बढ़िजाय ॥

अथ मूलबंध ॥

मूलबंध अब कहतहूं, अपान वायु वश होय।
ऊपर कूं खैंचन करै, मिलै प्राण मैं सोय॥
कमल कमल सीधे भवै, नाभि तले हो राह।
आगे मारग सुगम हो, पहुँचे योगीनाह॥

मूलबंध गुण ऐसा होई। वायुअधोगति जाय न कोई॥
रेता ऊरध यासूं सधै। दिन दिन आयु सवाई बधै॥
यासूं कारज सब वनिआवै। रोगरक्त को सभी नशावै॥
योगी पहिले मा आराधै। अपान वायु कूंनीके साधै॥
अब मैं मूलबंध बतलाऊं। ज्योंका त्यों साधन दिखलाऊं॥
गुदावास याका तुम जानो। गुदा द्वार बंधनदै ठानो॥
बायें पांव कि एँड़ीसेती। मूल द्वार रोकै करिहेती॥
ऊरधही[3] कूं खैंचन कीजै। शुकदेव कहै नीके सुनलीजै॥
अरु कबहूं मन ऐसीधरै। आसन पदम करन कूं करै॥
कपड़े की इकगेंद बनावै। गुदा मध्य कसबंध लगावै॥
योंभी वायु सधै वा भांती। जोपै लगारहै दिनराती॥
पवन तले की ऊपरजावै। प्राण अपान सहज मिलजावै॥
नाद बिंद रल मिलजा दोई। एकवर्ण साधै जो कोई॥
योग माहिं यह भी परधान। बूढ़ी देह पलटहो ज्वान॥
जठर अगन बाढ़ै अधिकाय। जो चाहै तौ बहुतै खाय॥
सुन चरणदास कहै शुकदेव। जो गुरु पूरा देवै भेव॥

अथ जलंधरबंध ॥

दो० मूलबंध तोसूं कहा, गुण कह तब समुझाय।
बंध जलंधर कहतहूं, सुन सरवन करि चाय॥

---

१ तोंदी २ बाढ़ै ३ ऊपर ४ पेट ॥

तीजा बंध जलंधर जानौ । कंठ वास ताका पहिचानौ ॥
ग्रीवा लटक चिबुक हिय लावै । कंठ पवन रोके परचावै ॥
हिरदै प्राण पूर करि रहिये । बंध जलंधर यासूं कहिये ॥
उरध पवन नीचे को जाय । अरध पवन ऊरधकूं लाय ॥
उदर मध्य लै ताहि बिलोय । ब्रह्मरंध्र जा पहुँचै सोय ॥
इह विधि ब्रह्मपंथकूं धावै । सहजै सहजै मध्य समावै ॥
जरा मरण जहँ भय नहि व्यापै । लहै अमरपद होरह आप ॥
चरणदास शुकदेव बतावै । जोपै बंध उड्यान लगावै ॥

अथ उड्यानबंध ॥

दो० बंध उड्यान आगे कहा, जिह्वा उलट लगाय ।
कान आंख मुख नाकके, स्वर सब बंधकराय ॥
इह सुबंध महिमा अधिक, लागै बजर किवाँर ।
सातद्वार की बाटहो, निकसै नाहिं बयार ॥
पांचौ मुद्रा बंध सब, दिखलाया यह देश ।
शुकदेव कहैरणजीत सुन, और कहूं उपदेश ॥

अष्टपदी छन्द ॥

चौरासीही जानि जुआसन योगके ।
सिद्ध पदम तिनमाहिं बड़ेही थोकके ॥
बहुनारिनके मांहिं जु नौनारीभनी ।
तिन में सुषमन जानबड़ी गुरुसूंसुनी ॥
तीनि बंधके माहि मूलकूं जानिये ।
मुद्रोही में बड़ी खेचरी मानिये ॥
वायुनमें परधान प्राणकूं देखिये ।
सबकुंभकहूं माहिं केवलबड़ि लेखिये ॥
बानी चारो मध्य पराही गाइये ।

चार अवस्थामाहिं तुर्या बड़िपाइये ॥
परम शून्यको ध्यान परेसूंहे परे।
याकीसम कोइ नाहिं ध्यान तिनको धरे॥
अजपाहीके जाप बराबर औरना।
शीलदयासे मीत न कोई देहमा॥
पूजन में बड़ि जान जुआतमकी करे।
ज्ञानसमान न दान सकल विपता हरे॥
गुरुसा रक्षक और नहीं कोइ लोकमें।
योग युक्तिसा स्वाद नहीं कोइ भोकमें॥
कह शुकदेव सुनौ रणजीतही।
बड़ी बड़ी जोगांसे खोल तुमकूं जुदी॥

छन्द॥

अमरी करते बजरी रोंके बजरी करतें बाई।
रोंकै छींक साधना करिकै नासालेहु जँभाई॥
जल संयमसूं नभकूं देखै संयम नादसुं ज्योती।
संयम पवन होय थिरकाया सो वश राखै मोती॥
जिया बिछावै मृत्यकत्रोढ़े बूढ़ी होय न काया।
संयम नींद बिंदनहि जावै यह शुकदेव बताया॥
दहिने स्वरमें भोजन कीजे बायें स्वरमें पानी।
दहिने स्वरमें अमरी रेचै देह न होय पुरानी॥
दहिने स्वरमें जलसूं न्हावै बायें स्वरमें लङ्गी।
शिव आसनसूं सोवन कीजे नारिन कीजे सङ्गी॥
पावकसूं तापन नहिं कीजे जो तापै तौ नैना।
भोजन गरम न खट्टा खावै फटै झिरै नहिं मैना॥

दो० गरमीही के रोग में, चन्द चला रवि बन्द ।
शीत रोग सूरज चला, शशि पर राखै बन्द ॥
तीन रोज कै पांच दिन, कै दिन राखै सात ।
रोग देखि जैसी करै, होय निरोगा गात ॥
सूरज रात चलाइये, द्योस चलावै चन्द ।
पवन फिरै ऊषा बधै, श्वास चलै जो मन्द ॥
कान आंख अरु दांतके, सबही रोग भजाहिं ।
श्याम वालनहिं श्वेतहों, करै 'जुनीकी दाहिं ॥
रुई पुरानी बहुतही, दिनकूं दहिने राखि ।
बायें राखै रैनिकूं, खोली साधन भाखि ॥
शीत उष्ण व्यापै नहीं, विष नहिं व्यापक होय ।
बीसबरस साधन किये, रहै विकार न कोय ॥
बासी भ्रष्ट न खाइये, सूक्षम करै अहार ।
जल बहुत पीवै नहीं, सपरस करै न नार ॥
तन मन साधै वचन ही, पाप न लगने देह ।
शुकदेवकहेचरणदाससुनि, अधकी साधन येह ॥
सब जीवन सुख दीजिये, सब सों मीठा बोल ।
आतम पूजा कीजिये, पूजा यही अतोल ॥
दया पुष्प चन्दन नवन, धूप दीप दे मन्न ।
भाँति भाँति नैवेद्य सूं, करै देव परसन्न ॥
जो कोइ आवै राजसी, देहु बड़ाई ताहि ।
जाकूं देखो तामसी, करो नम्रता वाहि ॥
जो कोइ होवै सात्त्विकी, मिलै ताहि तजिमान ।
गुद्दी खोल चर्चाकरो, लीजै ततमत छान ॥
औरन कूं परसन करै, आपहु रहौ परसन्न ।

बासलहो हरि धाम में, ह्यां वा हो धन धन्न ॥
राचस तामस सात्त्विकी, क्षेत्तर तीनहिं भाँति ।
क्षेत्रक आतम देवहै, सबको सहिये क्रांति ॥
सब में देखै आप कूं, सब कूं अपने मांहिं ।
पावै जीवनमुक्ति को, यामें संशय नाहिं ॥
सब में देखै आतमा, आपन मैं करि ध्यान ।
यही ज्ञान ब्रह्मज्ञान है, यही जु है विज्ञान ॥
अहंकार मिटि ब्रह्महो, परमातम निरवान ।
शुकदेवाहो कहतहूं, चरणदास हिय आन ॥
जो तैं पूंछा सो कहा, भेद कहा सब खोल ।
अरु तेरे हियमें कछू, सकुच खोल कर बोल ॥

शिष्यवचन ॥

अपना लखि किरपाकरी, समझायो बहुभांति ।
योग औरतैं गुरुजी, हिये में आई शांति ॥
तुम्हरी कह अस्तुति करूं, मोपै कही न जाय ।
इतनी शक्ति न जीभकी, महिमां कहै बनाय ॥
किरपाकरी अनाथ पर, तुमहो दीनानाथ ।
हाथ जोड़ि मांगौं यही, मम शिर तुम्हरा हाथ ॥
मोसे रंक गरीबकी, तुम गहि पकरी बांह ।
भव बूड़त राखा मुझे, चरण कमलकी छाहं ॥
आपहि तुम किरपाकरी, मैं कित लहता तोहिं ।
तुमको पाऊं ढूंढ़िकरि, इतनी शक्ति न मोहिं ॥
व्यास पुत्र शुकदेव तुम, जक्त माहिं विख्यात ।
तुम दर्शन दुर्लभ महा, पुरुषनको न दिखात ॥

बड़े भाग मेरे जगे, पूरबले परताप ।
किरपा श्रीगोपाल की, आय मिले तुम आप ॥
चरणदास अपनो कियो, दियो परम सन्तोष ।
बैठि करूंगो ध्यानही, अब कुछ रह्यो न शोक ॥
चलत फिरत ह्यां आइया, तुम भरि दीन्ह्यो मोहिं ।
नैन प्राण तन मनसभी, देखत अरपे तोहिं ॥
चाहमिटी सब सुख भये, रहा न दुखका मूल ।
चाहूं तो चाहूं यही, तुम चरणनकी धूल ॥

गुरुवचन ॥

योग तपस्या कीजियो, सकल कामना त्याग ।
ताको फलमत चाहियो, तजो दोष अरु राग ॥
अष्ट सिद्धि जो पै मिलै, नेक न कीजे नेह ।
धरि हिरदय परमात्मा, त्यागे रहियो देह ॥
जेती जगकी वस्तु है, तामें चित्त न लाय ।
सावधान रहियो सदा, दियो तोहिं समुझाय ॥
बार बार तोसे कहूँ, ह्यां मत दीजो चित्त ।
सिद्ध स्वर्गफलकामना, तजि कीजो हरिमित्त ॥
जो कीजे हरि हेतही, एहो चरणहि दास ।
भक्तियोग अरु शुभकरम, नीकी ठौर निवास ॥

शिष्यवचन

ऐसेही अब करूंगो, तुम चरणन परताप ।
अष्ट सिद्धि समझो चहौं, वर्णन कीजे आप ॥
समझौं तो त्यागूं उन्हैं, करवाओ पहिंचान ।

कहा नाम लक्षण कहा, कौन रहै अस्थान ॥

गुरुवचन ॥

कहि शुकदेव वर्णन करूं, अष्ट सिद्धि के नाउ ।
लक्षण गुण सबही सहित, नीके तोहिं समझाउ ॥

अथ अष्टसिद्धि के नाम ॥

प्रथमै अणिमा सिद्धि कहावै । चाहै तौ छोटा ह्वै जावै ॥
अणु समान छिपि जावै सोई । ऐसी कला जु पावै कोई ॥
दूजी महिमा लक्षण एता । चाहै बड़ा होय वह जेता ॥
तीजी लघिमा वह कहवावै । पुष्पतुल्य हलका ह्वै जावै ॥
चौथी गरिमा कहूँ बिचारी । चाहै जितना होवै भारी ॥
पँचवीं प्रापति सिद्धि कहावै । जित चाहै तितही ह्वै आवै ॥
छठवीं पराकाम्य गुण धरै । शक्ति पाय चाहै सो करै ॥
सतवीं सिद्धि ईशिता रानो । सबको अज्ञा माहिं चलानी ॥

दो० बशीकरण सिधि आठवीं, कहैं श्री शुकदेव ।
चाहै जिसको वश करै, अपनाही करि लेव ॥
चरणदास सिद्धैं कही, समझलेहि मनमाहिं ।
जो हैं जनुआं राम के, इनमें उरझैं नाहिं ॥

योग किये आठो सिधि पावै । कै भोगै कै चित न लगावै ॥
योग किये मन जीता जावै । पलटै जीव ब्रह्मगति पावै ॥
योगेश्वर चाहै सो करै । भरी रितावै रीती भरै ॥
योगेश्वर ईश्वर ह्वै जाई । दिन दिन बाढ़ै कला सवाई ॥
तजिये भोग योगही करिये । तिरगुण परै ध्यानही धरिये ॥
चौथे पद में करै निवासा । काहू विधि का रहै न साँसा ॥
योग करै सोई परवीना । शुकदेव कहैं प्रकट कहि दीना ॥

दो० पोथी माहीं देखि करि, करै जु कोई योग।
तन छीजै सिधि ना भवै, देहो आवै रोग॥
देखि देखि गुरु सों करै, लै अज्ञा रहु संग।
सिद्धि होय साधन सबै, कछू न आवै भंग॥
योग तपस्या में बड़ा, पहुँचावै हरि पास।
जन्म मरण बिपता मिटै, रहै न कोई आस॥

शिष्यवचन॥

मैं समझी जानी सभी, सूझभई हिय माहिं।
किरपाकरि जो जो कहा, ताको बिसरूं नाहिं॥
व्यासदेव श्री जनक जै, जै जै श्री शुकदेव।
जै जै यह सुकतारहै, समुझायो करि हेव॥
हियहुलसो आनँदभयो, रोम रोम भयो चैन।
भये पवित्तर कान ये, सुनि सुनि तुम्हरे बैन॥

छप्पै॥

गुरु ब्रह्मा गुरु विष्णु गुरू देवनके देवा।
सर्व सिद्धि फल देन गुरू तुम मुक्ति करेवा॥
गुरु केवट तुम होय करौ भवसागर पारी।
जीव ब्रह्म करिदेत हरौ तुम व्याधा सारी॥
श्रीशुकदेव दयाल गुरु चरणदास के शीश पर।
किरपाकरि अपनो कियो सबही विधिसों हाथधर॥

इति श्रीगुरुचेलासंवादअष्टाङ्गयोगसम्पूर्णम्॥

अथ श्रीचरणदासकृतयोगसन्देहसागरं प्रारम्भः ॥

दो० अर्थ बतावो पण्डिता, ज्ञानी गुणी महन्त।
जो तुम पूरे साधुहौ, भक्ता हरिके सन्त॥
चरणदास पूंछैं अरथ, भेदी होय कहौ।
समझौ तौ चर्चा करौ, नाहीं मौन गहौ॥

ब्रह्मण्डे सों पिण्डे जानौ। ठौर ठौर घट में पहिंचानौ॥
सात समुंदर घट में कहां। कछुवा रहै बतावो जहां॥
शेषनाग किहं ठौर विराजै। रूप वराह कौन छवि छाजै॥
कहा चार काया में खान। चौरासी लख योनि बखान॥
षट चक्कर को जो तुम जानौ। नाम सहित सब भेद बखानौ॥
नाभि कुण्डली का परमान। कैसे जागै कहौ बखान॥
सहज सहज वह कहां समावे। योगि होय सो भेद बतावै॥
चरणदास का गुरु शुकदेव। सो तौ जानै सबही भेव॥

दो० कहां जु वासा पवन का, मन कौनी अस्थान।
कहां हिये कीं आंखिहै, कैसे करै पिछान॥

प्राण पुरुष अन्तर्गत[1] कैसे। क्योंकरि भेद बतावो जैसे॥
इड़ा पिंगला सुषमन नारी। कैसे पलटैं बारी बारी॥
आठ प्रकार के कुम्भक जानै। सो जुगता मेरे मन मानै॥
चार अवस्था[2] चार शरीरा। वाणी चारि नाम कहा वीरा॥
कै प्रकार अजपा का जाप। कै अंगुल श्वासा का नाप॥
क्यों आवै अरु क्यों वह जय। याका ज्ञानी करौ लखाय॥

---

१ भीतरप्राप्त २ बाल किशोर पौगण्ड वृद्धादि चार अवस्था॥

परा पश्यती मध्यमाँ कहा । कहा वैषरी देहु बता ॥
चरणदास का गुरु शुकदेव । सो तौ जानै सबही भेव ॥

दो० पद तीनो कहुँ विष्णुके, स्वप्ना .. जाग्रत भेद ।
बामन अक्षर देह में, पुहुप द्वीप कहां स्वेत ॥

कहाँ इकीस काया में लोक । इन्द्र करैं कहाँ नित्त भोग ॥
ब्रह्मादिक शिव कहां त्रिदेवा । काविधि उनको पावैं भेवा ॥
षोड़श चन्द कहां परकाशा । बारह सूर्य्यनका कित बाशा ॥
तारामण्डल कैसे दरशैं । त्रिकुटी संयम कैसे परशैं ॥
त्रैवेणी को कैसे पावै । ररंकार कहाँ शब्द जगावै ॥
वर्णों अक्षर ॐकारा । तासे भयो सकल संसारा ॥
जाका कीजै कैसे ध्याना । कौन दिशा अरु कोअस्थाना ॥
चरणदास का गुरु शुकदेव । सो तौ जानै सबही भेव ॥

दो० निर्गम सुर्गम भेद कहु, श्वास उसास बताव ।
काया में विष कहां है, बिन्दु कुण्ड दर्शाव ॥

जीव ब्रह्म में केता बीच । कौन कौन काया में नीच ॥
अमृतकुण्ड कौन अस्थान । बङ्क नालकी कहु पहिंचान ॥
ब्रह्मरन्ध्र का भेद लखाव । कामधेनु का बरण बताव ॥
मानसरोवर ताल बताय । तामें हंसा कैसे न्हाय ॥
विना सीप कहाँ उपजै मोती । विनाघीव कहाँजगमग ज्योती ॥
बिन सूरज कहाँ नितही धूप । भवँर गुफा का कैसा रूप ॥
शून्य शिखरका कीधर द्वारा । कै खिरकी अरु कहाअकारा ॥
चरणदास का गुरु शुकदेव । सो तौ जानै सबही भेव ॥

दो० कहां दशौ दिगपाल हैं, कहाँ इन्द्रिन के देव ॥
अहार वास पँचतत्त्वको, बरणि बतावो भेव ॥

काशी अरु मथुरा है दोय । कहाँ देहमें कहिये सोय ॥

अरसठि तीरथ घट में ज्योंकर। सबका गुरु पुष्कर है क्योंकर॥
कहां बसै बाई उद्यान। कहां बन्ध लागै उड्यान॥
कहांकपाट का कुञ्जी ताला। द्वादशकला कौन मतवाला॥
कण्ठ कूप उलटाहै कौन। नेजू कहा बतावो जौन॥
पनिहारी कहा कैसे भरैं। घड़िया कहाँ कहाँ भरिधरैं॥
कै प्रकार अमृतका स्वाद। कौन ठौर सों अनहद नाद॥
अभ्र डोर कैसे करिपावे। मकर तारका भेद बतावे॥
चरणदासका गुरु शुकदेव। सोतौ जानै सबही भेव॥

दो० घण्ट ताल का लम्बका, और अम्ब का बोल।
चारि वस्तु ये कौन हैं, इन्हें बतावो खोल॥

कौन कमलपर गुरू विराजे। कै प्रकार अनहद धुनि बाजे॥
कै बाणी हैं अनहद तूरा। जानैगा कोइ साधू पूरा॥
तेजपुञ्ज कै योजन आगे। अमरलोक कब सूझनलागे॥
तीन शून्यकहाँ चौथा शून्य। जितही भूले पढ़ि अरु गून्य॥
कै कहिये कायाके द्वारे। भिन्न भिन्न कहु मेरे प्यारे॥
बहत्तरिहजारआठसैचौंसठिनारी। इनका भेद बहुतहै भारी॥
बहत्तरि कोठे कहां कहाँ। नाम बतावो जहाँ जहाँ॥
चरणदासका गुरु शुकदेव। सोतौ जानै सबही भेव॥

दो० सात द्वीप नौ खण्डको, भिन्न भिन्न कहु भेद।
काया में केहि ठौर हैं, कहाँ नाम किस हेत॥

चौरासी बाई का नावँ। कहाँ कहाँ है कैसी दावँ॥
जलका कोठा कीधर होय। कहाँ अग्नि का कहिये सोय॥
ब्रह्मज्वाल कहु कैसे जागै। किस आसन से निद्रा भाग॥
किस आसन से बीरज जीतै। दशमुद्रा कैसे कर नीतै॥

१ चार कोस का प्रमाण॥

नामरूप मुद्रों का जान। तीन बंध का नाम बखान॥
चौरासी आसन का नावँ। और बतावो मन के पावँ॥
स्वर्ग मर्त्य अरु कहां पताल। कहां सत्य अरु कहां तिताल॥
चरणदास का गुरु शुकदेव। सोतौ जानै सबही भेव॥

दो० कै प्रकार का योग है, कै प्रकारकी भक्ति।
पांच भूमिका ज्ञानकी, सातकलाका अर्थ॥

को नगरी का राज करै। को जीवै अरु कौन मरै॥
पेट बड़ा किसका है जान। पूजा बड़ी ताहि पहिंचान॥
सब में बड़ा कौन आहार। ताको सुरता लेहु निहार॥
ताबिन एक घड़ी नहिं रहै। भेदी होय सो भेदै कहै॥
सबमें बड़ी कहा जो पूजा। जाकी सम दीखै नहिं दूजा॥
कहा सो सबको लग्गमलग्गा। कौनपुरुष सो भग्गमभग्गा॥
कहा घटै सो घटैई घटै। कहा बढ़ै सो बढ़ैई बढ़ै॥
घटै न बढ़ै सो बस्तु कहा। घटै बढ़ै भी ताहि बता॥
चरणदास का गुरु शुकदेव। सो तौ जानै सबही भेव॥

दो० क्षरके कहा जु अर्थ हैं, अक्षर देहु दिखाय।
निअक्षर के रूपको, भिन्न भिन्न समझाय॥

ॐकारका अर्थ बतवो। महत्तत्त्व का रूप दिखावो॥
मन चक्कर का कैसा रंग। मन मनसा दोउ कैसे संग॥
कौन घाट हो लगे समाध। कित जा देखै खेल अगाध॥
चौबिस शुन्य हैं जहाँ जहाँ। बज्जर ताला लागै कहाँ॥
वज्रद्वार बिन पावै कहाँ। बिन पाये उरले घर रहा॥
आठ महलका करौ बखान। कासों कहिये पद निर्वान॥
जो तुम जानौ ऊरधरेता। तौ तुम भेद कहो अब केता॥
दीप मुद्रा अरु मुद्रा राज। जासों सुधरैं काया काज॥

काया महलके जो तुम भेदी । ठौर ठौर कहु घटमें जेती ॥
पाँचतत्त्व की इन्द्री दश । यही बतावो आगे बश ॥
चरणदासका गुरु शुकदेव । सोतो जानै सबही भेव[1]॥
दो० चारदूध चौदह चौबारे, भेदी होय सो जानै ।
चरणदास शुकदेवका, बालक सो यह भेद बखानै ॥

छप्पय ॥

चंदकला कित छिपे बढ़ै जब कितसों आवै ।
बादर कितसों होय फटै जब कहाँ समावै ॥
दीपलोय बुझिजाय जाय कित मोहिं बतावो ।
राति दिना कित जाय भुवा केहि ठौर लखावो ॥
चरणदास शुकदेव सों पूंछतहौं शिरनाय के ।
तन छूटै जीजाय कित आवतहै किहि ठाँयते ॥

कवित्त ॥

देखो है तमाशा देह समुझिकै बिचारिलेहु, मूरुखनरहोय जो या बातमें हँसैगो ।
चीतेको मारि मृग नखशिख सुखायगयो, बाघनीको मारिबोकसिंहको ग्रसैगो ॥
बिल्लीको मारि चूहे प्रेमको नगारोदियो, दादुरहू पांच सर्प मारिके बसैगो ।
कहै चरणदास ऐसे खेलसों लगाई आश, चिरिया के शीश टोरौ बाजको लसैगो ॥

दो० पगलागूं शुकदेव के, औंर वारने जावं ।
गुप्तभेद मोसों कह्यो, सबै नावं अरु ठावं ॥
सो तुमसों पूंछन करौं, हौं परषन के दाय ।
या सागर संदेह को, दीजै अर्थ बताय ॥

इति श्रीमहाराजसाहिबश्रीचरणदासकृतसंदेहसागरसंपूर्णम् ॥

००००००००

---

१ पृथ्वी जल अग्नि वायु आकाश ॥

अथ श्रीचरणदासकृतज्ञानस्वरोदय प्रारम्भः ॥

—०—

दो० नमो नमो शुकदेव जी, परणम करौं अनन्त ।
तुम प्रसाद स्वरभेद को, चरणदास वर्णन्त ॥
पुरुषोत्तम परमातमा, पूरण बिस्वा बीश ।
आदिपुरुषअविचल तुहीं, तोहिं निवाऊं शीश ॥
कु० क्षर ॐ सों कहत हैं अक्षर सोहं जान ।
निहअक्षर श्वासा रहितहै ताहि को मन आन ॥
ताही को मन आन रात दिन सुरति लगावो ।
आपा आप विचारि औरना शीश नवावो ॥
चरणदास मथि कहतहैंअगमनिगमकी सीख ।
यही वचन ब्रह्मज्ञान का मानो बिस्वाबीस ॥
ॐ सूं काया भई सोहं सो मन होय ।
निहअच्चर श्वासा भई चरणदास भल जोय ॥
चरणदास भल जोय खेंचि मनवाँ तहं राखो ।
क्षर अक्षर निहअक्षर एकै दुबिधा नाखो ॥
जब दरशै एकही एक भेष यह सभी तिहारो ।
डार पात फल फूल मूल सो सभी निहारो ॥
श्वासा सों सोहं भयो सोहं ॐकार ।
ॐ सों ररीं भयो साधो करो विचार ॥
साधो करो विचार उलटि घर अपने आवो ।
घट घट ब्रह्म अनूप सिमिटि करि तहाँ समावो ॥

१ पुराण २ वेद ॥

चारि वेद का भेद है, गीता का है जीव।
चरणदास लखि आपको, तो मैं तेरा पीव॥

दो० सब जोगन को जोग है, सब ज्ञानन को ज्ञान।
सर्वसिद्धि को सिद्धि है, तत्त्व स्वरनको ध्यान॥
ब्रह्मज्ञान को जाप है, अजपा सोहं साध।
परमहंस कोइ जानि है, ताको मतो अगाध॥
भेद स्वरोदय सो लहै, समझै श्वास उसास।
बुरी भली तामें लखै, पवन सुरति मन गांस॥
शुकदेव गुरू कृपा करी, दियो स्वरोदय ज्ञान।
जब सों यह जानी परी, लाभ होय कै हान॥
इड़ा[1] पिंगला[2] सुषमना[3], नाड़ी तीन विचार।
दहिने बायें स्वरचलैं, लखै धारणा धार॥
पिंगल दहिने अंग है, इड़ा सो बायें होय।
सुषमन इनके बीच है, जब स्वर चालैं दोय॥
जब स्वर चालैं पिंगला, तिहि मधि सूरज वास।
इड़ा सो बायें अंग है, चन्द्र करत परकास॥
उदय अस्त तिनकी लखै, निर्गम सुर्गम विद्धि।
और पावै तत बरणको, जब वह होवै सिद्धि॥
शुकदेव कहि चरणदाससों, थिरचर स्वर पहिंचान।
थिरकारज को चन्द्रमा, चरकारज को भान॥
कृष्णपक्ष जबहीं लगै, जाय मिलत है भान।
शुक्लपक्ष है चन्द्र को, यह निहचै करिजान॥
मंगल अरु इतवार दिन, और शनीचर तीन।

---

१ बाईं ओर की नाड़ी को कहते हैं २ दाहिनी ओर की नाड़ी को कहते हैं ३ दोनों के मध्य की नाड़ीको कहते हैं॥

शुभकारज को मिलत हैं, सूरज के दिन तीन ॥
सोमवार शुकर भलो दिन, बृहस्पति को देखि ।
चंदजोग में सुफल हैं, कहैं चरणदास बीशेखि ॥
तिथिऔरवार विचारकरि, दहिनो बाओं अंग ।
चरणदासकहै स्वर जो मिलै, शुभकारज परसंग ॥

कृष्णपच्छ के आदिहि, तीनि तिथ्य तक भान ।
फिरि चंदा फिरि भान है, फिरि चंदा फिरि भान ॥
शुक्लपक्ष के आदिही, तीनि तिथ्य लग चन्द ।
फिरि सूरज फिरि चन्द है, फिरिसूरज फिरि चन्द ॥

सूरजकी तिथि में चलै, जो सूरज परकास ।
सुख देही को करत हैं, लाहालाभ हुलास ॥
शुक्लपक्ष चन्दा चलै, परिवा लेहि निहार ।
फल आनँद मंगल करै, देही कूं सुखसार ॥
शुक्लपक्ष तिथि में चलै, जो परिवा को भान ।
होय क्लेश पीड़ा कछू, कै दुख कै कुछ हान ॥
सूरज की तिथि में चलै, जो परिवा को चन्द ।
कलह करै पीड़ा करै, हानि ताप कै द्वन्द ॥

ऊपर बायें सामने, स्वर बायें के संग ।
जो पूंछै शशि जोगमें, तौ नीको परसंग ॥
नीचे पीछे दाहिने, स्वर सूरज को राज ।
जो कोइ पूंछै आयकरि, तौ समझौ शुभकाज ॥

दहिनो स्वर जब चलत है, पूंछै बायें अंग ।
शुक्लपक्ष नहिं वार है, तौ निर्फल परसंग ॥
जो कोइ पूंछै आयकरि, बैठि दाहिनी ओर ।
चन्द चलै सूरज नहीं, नहिकारज बिधि कोर ॥

जो सूरज में स्वर चलै, कहै दाहिने आय।
७लग्नवार अरु तिथिमिलै, कहु कारज होइ जाय॥
जो चन्दा में स्वर चलै, बायें पूंछै काज।
तिथि अरु अक्षरवारमिलि, शुभकारज को साज॥
७सात पांच नव तीन गिन, पन्द्रह और पच्चीश।
काज बचन अक्षर गिनै, भानु जोग को ईश॥
चार आठ द्वादश गिनै, चौदह सोलह मीत।
चन्द्जोग के संग हैं, चरणदास रणजीत॥
कर्क मेष तुला मकर, चारौ चरती राश।
सूरज सों चारौ मिलत, चरकारज परकाश॥
मीन मिथुन कन्या कही, चौथी और धन मीत।
द्विस्वभाव को सुषमना, मुरलीसुत रणजीत॥
वृश्चिकसिंहवृषकुम्भ पुनि, बायें स्वरके संग।
चन्द जोगको मिलत हैं, थिरकारज परसंग॥
चित अपनो थिर करै, नासा आगे नैन।
श्वासा देखै दृष्टि सों, जब पावै स्वर बैन॥
पांचघड़ी पांचो चलैं, फिरि वा चारहि बार।
पांचतत्त्व चालै मिलै, स्वरबिच लेह निहार॥
धरती अरु आकाश है, और तीसरी पौन।
पानी पावक पांच यों, करत श्वासमें गौन॥
धरती तौ सोहीं चलै, अरु पीरौ रँग देख।
बारह अंगुल श्वास में, सुरत निरतकर पेख॥
ऊपर को पावक चलै, लाल बरण है भेष।
चारि सु अंगुल श्वास में, चरणदास औ रेष॥
नीचे को पानी चलै, श्वेत रंग है तासु।

सोलह अंगुल श्वास में, चरणदास कहै भासु ॥
हरो रंग है वायु को, तिरछी चालै सोय ।
आठ सुअंगुल श्वास में, रणजीत मीतकरिजोय ॥
स्वर दोनों पूरण चलैं, बाहर ना परकाश ।
श्याम रंग है तासु को, सोई तत्त्व आकाश ॥
जल पृथ्वी के जोग में, जो कोइ पूंछै बात ।
शशियर में जो स्वर चले, कहु कारज होयजात ॥
पावकऔर आकाश पुनि, वायु कभी जो होय ।
जो कोइ पूंछै आयकरि, शुभकारज नहिं होय ॥
जल पृथ्वी थिरकाज को, चरकारज को नाहिं ।
अग्नि वायु चरकाज को, दहिने स्वरके माहिं ॥
रोगी को पूंछै कोऊ, बैठि चन्द की ओर ।
धरती बायें स्वर चलै, मरै नहीं विधि क्रोर ॥
रोगी को परसंग जो, बायें पूंछै आन ।
चन्द बंध सूरज चलै, जीवै ना वह जान ॥
बहते स्वरसों आयकरि, शून्य ओर जो जाय ।
जो पूंछै परसंग वह, रोगी ना ठहराय ॥
शून्य ओर सों आयकर, पूंछै बहते श्वास ।
यह निश्चय करि जानिये, रोगी को नहिं नास ॥
शून्य ओर सों आय कै, पूंछै बहते पत्त ।
जेते कारज जगत के, सुफल होयँ यों सत्त ॥
बहते स्वर से आय करि, जो पूंछै सुन ओर ।
जेते कारज जगत के, उलटे हों विधि क्रोर ॥
कै बायें कै दाहिने, जो कोइ पूरण होय ।
पूंछै पूरण होरही, कारज पूरण सोय ॥

बरस एक को फल कहै, तत मत जानैं सोय।
काल समौ सोई लखै, बुरो भलो जग होय॥
संक्रायत पुनि मेष विचारै। ता दिन लगै सु घड़ी निहारै॥
तबहीं स्वर में करै विचारा। चलै कौन सो तत्त्व नियारा॥
जो बायें स्वर पिरथी होई। नीको तत्त्व कहावै सोई॥
देश वृद्धि अरु समै बतावै। परजा सुखी मेह बरसावै॥
चारा बहुत ढोर को उपजै। नरदेही कों अन्न बहु निपजै॥
जल चालै बायें स्वर माहीं। धरती फलै मेह बरसाहीं॥
आनँद मंगल सों जग रहै। आपतत्त्व चन्दामें बहै॥
जल धरती दोनों शुभ भाई। चरणदास शुकदेव बताई॥
तीन तत्त्वका कहौं विचारा। स्वर में जाको भेद निहारा॥
लगै मेष संक्रायत तबहीं। लगती घड़ी विचारै जबहीं॥
अग्नितत्त्व स्वरमें जब चालै। रोग दोषमें परजा हालै॥
काल पड़ै थोड़ोसो बरसै। देश भंग जो पावक दरसै॥
वायु तत्त्व चालै स्वर संगा। जग भयमान होय कछु दंगा॥
अर्द्ध काल थोड़ो सो बरसे। वायु तत्त्व जो स्वरमें दरसे॥
तत्त्व अकाश स्वर चालै दोई। मेह न बरसै अन्न न होई॥
काल पड़ै तृणं[1] उपजै नाहीं। तत अकाश जोहो स्वर माहीं॥
दो० चैत महीना मध्य में, जबहीं परिवा होय।
शुक्लपक्ष ता दिन लगै, प्रातस्वासं[2] में जोय॥
भोरहि परिवा को लखै, पृथ्वी होय सुथान।
होय समौ परजा सुखी, राजा सुखी निदान॥
नीर चलै जो चन्द में, यहीं समै की जीत।
मेह बरसै परजा सुखी, संबत नीको मीत॥

---

१ घास २ पहिला स्वासा॥

पृथ्वी पानी समो जो, बहै चन्द अस्थान ।
दहिने स्वर में जो बहै, समो सु मध्यम जान ॥
भोरहिजो सुषमन चलै, राज होय उतपात ।
देखनवारो विनशहै, और काल पड़िजात ॥
राजहोय उत्पात पुनि, पड़ै काल विसवास ।
मेह नहीं परजा दुखी, जो हो तत्त्व अकास ॥
श्वासा में पावक चलै, परै काल जब जान ।
रोग होय परजा दुखी, घटै राज को मान ॥
भय कलेश हो देश में, विग्रह फैलै अत्त ।
परै काल परजा दुखी, चलै वायु को तत्त ॥
संक्रायत अरु चैत को, दीन्हों भेद लखाय ।
जगतकाज अवकहतहूं, चन्द सूरको न्याय ॥

विवाहदान तीरथ जो करै । वस्तर भूषण घर पग धरै ॥
बायें स्वर में ये सब कीजै । पोथी पुस्तक जो लिखि लीजै ॥
जोगाभ्यासरु कीजै प्रीत । औषधि वाड़ी कीजै मीत ॥
दिक्षा[1] मंतर बोवै नाज । चन्द्र जोग थिर बैठे राज ॥
चन्द्र जोग में स्थिर जानौ । थिर कारज सबही पहिंचानौ ॥
करै हवेली छप्पर छावै । बाग बगीचा गुफा[2] बनावै ॥
हाकिम जाय कोट में बरै । चन्द्र जोग आसन पग धरै ॥
चरणदास शुकदेव बतावै । चन्द्र जोग थिर काज कहावै ॥

दो० बायें स्वर के काज ये, सो मैं दिये बताय ।
दहिने स्वरके कहत हूं, ज्ञानस्वरोदय गाय ॥

जो खांड़ो कर लीयो चाहै । जाकर वैरी ऊपर बाहै ॥
युद्ध वाद रण जीतै सोई । दहिने स्वर में चालै कोई ॥

१ गुरुसे मंत्र लेना २ कन्दरा ॥

भोजन करै करै असनाना । मैथुन कर्म्म ध्यान परधाना ॥
वही लिखै कीजै व्यवहारा । गज घोड़ा वाहन हथियारा ॥
विद्या पढ़ै नई जो साधै । मंतर सिद्धि ध्यान आराधै ॥
वैरीभवन गवन जो कीजै । अरु काहूको ऋण जो दीजै ॥
ऋण काहूपै जो तू मांगै । विष अरु भूत उतारन लागै ॥
चरणदास शुकदेव विचारी । ये चरकर्म्म भानु की नारी ॥

दो० चरकारज को भानु है, थिरकारज को चन्द ।
सुषमन चलत न चालिये, तहां होय कुछ दन्द ॥
गाँव परगने खेत पुनि, ईधर ऊधर मीत ।
सुषमन चलत न चालिये, वरजत है रणजीत ॥
क्षण वायें क्षण दाहिने, सोई सुषमन जानि ।
ढील लगै कै ना मिलै, कै कारज की हानि ॥
होय क्लेश पीड़ा कछू, जो कोई कहिं जाय ।
सुषमन चलत न चालिये, दीन्हों तोहिं बताय ॥
जोग करौ सुषमन चलै, कै आतम को ध्यान ।
और काज कोई करै, तौ कुछ आवै हान ॥
पूरव उत्तर मत चलै, वायें स्वर परकाश ।
हानि होय बहुरै नहीं, आवनकी नहिं आश ॥
दहिने चलत न चालिये, दक्षिण पश्चिम जानि ।
जोर जाय बहुरै नहीं, तहां होय कछु हानि ॥
दहिने स्वर में जाइये, पूरव उत्तर राज ।
सुख संपति आनँद करै, सभी होय शुभकाज ॥
बायें स्वर में जाइये, दक्षिण पश्चिम देश ।
सुख आनँद मंगल करै, जोर जाइ परदेश ॥

---

१ धन ॥

दहिने सेती आय करि, बावें पूछै कोय ।
जो बावों स्वर बंध है, सुफलकाज नहिहोय ॥
बायें सेती आय करि, दहिने पूछें धाम ।
जो दहिनों स्वर बंध है, कारज अफल बताय ॥
जब स्वर भीतरको चलै, कारज पूंछै कोय ।
पैजं बांधि वासों कहो, मनसा पूरण होय ॥
जब स्वर बाहर कूं चलै, तब कोइ पूंछै तोर ।
वाको ऐसे भाषिये, नहिंकाजविधिकरौर ॥
बाईं करवँट सोइये, जल बायें स्वर पीव ।
दहिने स्वर भोजन करै, तौ सुख पावै जीव ॥
बायें स्वर भोजन करै, दहिने पीवै नीर ।
दश दिन भूलो यों करै, आवै रोग शरीर ॥
दहिने स्वर झाड़े फिरै, बायें लघुशंकायँ ।
जुक्ती ऐसे साधिये, दीन्हों भेद बताय ॥
चन्द चलावै द्योस को, रात चलावै सूर ।
नित साधन ऐसे करै, होय उमर भरपूर ॥
जितनोहीं बावों चलै, सोई दहिनो होय ।
दशश्वासा सुषमनचलै, ताहि विचारो लोय ॥
आठ पहर दहिनो चलै, बदलै नहीं जु पौन ।
तीन बरस काया रहै, जीव करै फिरि गौन ॥
सोलह पहर चलै जभी, श्वास पिंगला माहिं ।
जुगल बरष काया रहै, पीछे रहनो नाहिं ॥
तीनरात अरु तीनदिन, चलै दाहिनो श्वास ।
संवत भर काया रहै, पाछे फिर होवै नास ॥

१ प्रण २ पेशाव करना ॥

सोलहदिननिशिदिन चलै, श्वास भानु की ओर ।
आयु जान इकमासकी, जीव जाय तन छोर ॥
नौ भृकुटी ससै श्रवण, पांच तारका जान ।
तीन नाक जिह्वा इकै, काल भेद पहिंचान ॥
भेद गुरू सों पाइये, गुरु बिनु लहै न जान ।
चरणदास यों कहत है, गुरुपर वारौं प्रान ॥
एक मास जो रैनि दिन, भानु दाहिनो होय ।
चरणदास यों कहत है, नर जीवै दिन दोय ॥
नाड़ी जो सुषमन चलै, पांच घड़ी ठहराय ।
पांच घड़ी सुषमन बहै, तबहीं नर मरिजाय ॥
नहीं चन्द्र नहिं सूर है, नहीं सुषमना बाल ।
मुख सेती श्वासा चलै, घड़ी चार में काल ॥
चारि दिना कै आठ दिन, बारह कै दिन बीश ।
ऐसे जो चंदा चलै, आंव जान बड़ ईश ॥
तीन रातअरुतीन दिन, चालै तत्त्व अकाश ।
एक बरस काया रहै, फेर काल बिसवाश ॥
दिन को तो चंदा चलै, चलै रात को सूर ।
यह निहचै करि जानिये, प्राण गमन बहूदूर ॥
रात चलै स्वर चन्द में, दिन को सूरज बाल ।
एक महीना यों चलै, छठे महीने काल ॥
जब साधू ऐसी लखै, छठे महीने काल ।
आगे ही साधन करै, बैठि गुफा ततकाल ॥
ऊपर खैंचि अपान को, प्राण अपान मिलाय ।
उत्तम करै समाधि को, ताको काल न खाय ॥

---

१ मृत्यु ॥

पवन पियै ज्वाला पचै, नाभि तले करि राह।
मेरुदण्ड[1] को फोरिकै, बसै अमरपुर जाय॥
जहां काल पहुंचै नहीं, जम की होय न त्रास।
गगनमण्डल[2]कोजायकरि, करै उनमनी वास॥
जहां काल नहिं ज्वालहै, छुटै सकल सन्ताप।
होय उनमनी लीनमन, बिसरै आपा आप॥
तीनों बन्ध लगाय कै, पांच वायु को साध।
सुषमन मारग ह्वै चलै, देखै खेल अगाध॥
शक्ति जाय शिवसों मिलै, जहां होय मन लीन।
महा खेचरी जो लगे, जानै जान प्रवीन॥
आसन पद्म लगाय करि, मूलबन्ध को बांधि।
मेरुदण्ड सीधो करै, सुरति गगन को साधि॥
चन्द सूर दोउ सम करै, ठोढ़ी[3] हिये लगाय।
षट चक्र को बेधिकरि, शून्य शिखर को जाय॥
इड़ा पिंगला साधिकरि, सुषमन में करिवास।
परमज्योतिझिलमिलतहां, पूजे मन विश्वास॥
जिन साधन आगे करी, तासों सब कुछ होय।
जब चाहै जबहीं तभी, काल बचावै सोय॥
तरुणअवस्थाजोग करि, बैठि रहै मन जीत।
काल बचावै साध वह, अन्त समय रणजीत॥
सदा आप में लीन रहु, करिकै जोगाभ्यास।
आवत देखै काल जब, गगनमण्डल कर वास॥
शनै शनै साधि करि, राखै प्राण चढ़ाय।

---

१ जो नाभि से लेकर मस्तक तक मिली हुई नाड़ी है २ आकाश ३ दाढ़ी का अर्द्धभाग॥

पूरो जोगी जानिये, ताको काल न खाय ॥
पहिले साधन ना कियो, गगनमण्डल को जान ।
आवत जाने काल जब, कहा करे अज्ञान ॥
जोग ध्यान कीन्हों नहीं, ज्वान अवस्था मीत ।
आगम देखै काल को, कहा सकै वह जीत ॥
काल जीति हरिसों मिलै, शून्य महल अस्थान ।
आगे जिन साधन करी, तरुण अवस्था जान ॥
काल अवधि बीतै तभी, जबै बीति सब जाय ।
जोगी प्राण उतारिये, लेहि समाधि जगाय ॥
काल जीति जगमें रहै, मौत न व्यापै ताहि ।
दशौद्वार[1] को फोरिकै, जब चाहै जब जाहि ॥
सूरज मण्डल चीरिकै, जोगी त्यागै प्रान ।
सायुज[2] मुक्ति सोई लहै, पावै पद निर्वान ॥
कृष्णपक्ष के मध्य में, दक्षिण होय जु भान ।
जोगी वपु[3] नहिं छांड़िये, राजा होय फिरि आन ॥
राज पाय हरिभक्तिकरि, पूरबली पहिचान ।
जोग जुक्ति पावै बहुरि, दूसर मुक्ति निदान ॥
उतरायण सूरज लखै, शुक्ल पक्ष के माहिं ।
जोगी काया त्यागिये, यामें संशय नाहिं ॥
मुक्ति होय बहुरै नहीं, जीव खोज मिटिजाय ।
बुन्द समुन्दर मिलि रहै, दुतिया ना ठहराय ॥
दक्षिणायन सूरज रहै, रहै मास षट जानि ।
फिर उतरायणजाय करि, रहै मास षट मानि ॥
दोनों स्वरको शुद्ध करि, श्वासा में मन राखि ।

---

१ दशौ इन्द्रिय २ परब्रह्ममें योजित होजाना ३ देह ॥

भेद स्वरोदय पायकरि, तब काहू सों भाखि ॥
जो रण ऊपर जाइये, दहिने स्वर परकाश।
जीति होय हारै नहीं, करै शत्रु को नाश ॥
दुर्जन को स्वर दाहिनो, तेरो दहिनो होय।
जो कोई पहिले चढै, खेत जीति है सोय ॥
सुषमन चलत न चालिये, जुद्ध करन सुन मीत।
शीश कटावै कै फँसै, दुर्जन की होय जीत ॥
जो बायें पृथ्वो चलै, चढ़ि आवैं कोइ भूप।
आप बैठि दल पेलिये, बात कहत हौं गूप ॥
जल पृथ्वी स्वर में चलै, सुनै कान दै वीर।
सुफल काज दोनों करै, कै धरती कै नीर ॥
पावकअरु आकाश तत, वायु तत्त्व जो होहिं।
कछू काज नहिं कीजिये, इन में बरजौं तोहिं ॥
दहिनों स्वर जब चलतहै, कहीं जाय जो कोय।
तीन पाँव आगे धरै, सूरज को दिन होय ॥
बायें स्वर में जाइये, बायें पग धरि चार।
बावों डग पहिले धरै, होय चन्द्र को बार ॥
दहिने स्वर में जो चले, दहिने डग धरि तीन।
बायें स्वर में चारि डग, बावीं कर परवीन ॥
गर्भवती के गर्भ को, जो कोइ पूंछै आय।
बालक होय कै बालकी, जीवै कै मरिजाय ॥
प्रश्न[1] बालक होनकी, जो कोउ पूंछै तोहिं।
बायें कहिये छोकरी, दहिने बेटा होहिं ॥
दहिने स्वर के चलतही, जो वह पूंछै आय।

१ प्रश्न ॥

वाको बावों स्वर चलै, बालक होय मरिजाय ॥
दहिने स्वर के चलतही, जो वह पूंछै वैन ।
वाहू को दहिनो चले, लरिका होय सुख चैन ॥
बायें स्वर के चलत ही, आय कहै जो कोय ।
बेटी होय जीवै नहीं, वाको दहिनो होय ॥
बायें स्वर के चलतही, जो वह पूंछै बात ।
वाहू को बावों चलै, बेटी होय कुशलात ॥
तत अकाश के चलतही, कहै गर्भ की आय ।
होय नपुंसक हींजड़ा, कै सतवांसो जाय ॥
लेन परीक्षा गर्भ की, जो कोइ पूंछै आय ।
अग्नि होय जो तासमै, ओछाही गिरिजाय ॥
क्षण बायें क्षण दाहिने, दो स्वर सुषमन होय ।
पूंछन वारे सों कहो, बालक उपजैं दोय ॥
वायु तत्त्व के चलतही, जो कोउ पूंछै आय ।
छाया होय बाढ़े नहीं, पेटहि माहिं बिलाय ॥
जो कोइ पूंछै आयकै, याको गर्भ कि नाहिं ।
दहिनों बावों स्वर लखै, साधि श्वास के माहिं ॥
बन्ध ओर जो आय करि, है पूंछै जो कोय ।
बन्ध ओर तौ गर्भ है, बहते स्वर नहिं होय ॥
इड़ा पिंगला सुषमना, नाड़ी कहिये तीन ।
सूरज चन्द बिचारिकै, रहै श्वास लवलीन ॥
जैसे कछुआ सिमिटिकरि, आपी माहिं समाय ।
ऐसे ज्ञानी श्वास में, रहै सुरति लवलाय ॥
श्वास बाण वै क्रोड़ की, आव जान नरलोय ।
बीतजाय श्वासा जबै, तबहीं मृत्युक होय ॥

इक्कीस हजार छः सौ चले, रात दिना जो श्वास ।
बीसा सौ जीवै बरष, होय अघन को नास ॥
अकाल मृत्यु कोई मरै, होय करि भुक्कै भूत ।
श्वास जहां बीतै सभी, जब आवै यमदूत ॥
चारौ संजम साधिकरि, श्वासा जुक्ति चलाय ।
अकाल मृत्यु आवै नहीं, जीवै पूरी आय ॥
सूक्षम भोजन कीजिये, रहिये ना पड़ि सोय ।
जल थोरो सो पीजिये, बहुत बोल मत खोय ॥

कुं० मोक्ष मुक्ति तुम चहत हौ तजौ कामना काम ।
मनकी इच्छा मेटिकरि भजो निरञ्जन नाम ॥
भजो निरञ्जन नाम तत्व देह अध्यांस मिटावो ।
पञ्चन के तजि स्वाद आप में आप समाओ ॥
जब छूटै झूठी देह जैसे के तैसे रहिया ।
चरणदास यहि मुक्ति गुरूने हमसों कहिया ॥

दो० देह मरै तूहै अमर, पारब्रह्म है सोय ।
अज्ञानी भटकत फिरै, लखै सो ज्ञानी होय ॥
देह नहीं तू ब्रह्म है, अविनाशी निर्बान ।
नित न्यारो तू देह सों, देह कर्म सब जान ॥
डोलन बोलन सोवनो, भक्षण करन अहार ।
दुख सुख मैथुन रोग सब, गरमी शीत निहार ॥
जाति वरण कुल देहकी, सूरति मूरति नाम ।
उपजें विनशै देह सो, पांच तत्त्व को गाम ॥
पावक पानी वायु है, धरती और अकास ।
पांच तत्त्व के कोट में, आय कियो तैं वास ॥
पांच पचीसौ देह सँग, गुन तीनों हैं साथ ।

घट उपाधि सो जानिये, करत रहैं उतपाथ ॥
जिह्वा इन्द्री नीरकी, नभको इन्द्री कान ।
नासा इन्द्री धरणि की, करि विचार पहिंचान ॥
त्वचा सुइन्द्री वायु की, पावक इन्द्री नैन ।
इनको साधै साधु जो, पद पावै सुख चैन ॥
निद्रा संगम आलकस, भूख प्यास जो होय ।
चरणदास पांचो कही, अग्नि तत्व सों जोय ॥
रक्त बिन्द कफ तीसरो, मेद मूत्र को जान ।
चरणदास परकिरत ये, पानी सों पहिंचान ॥
चाम हाड़ नाड़ी कहूं, रोम जान और मास ।
पृथ्वी की परकिरत ये, अन्त सबन को नास ॥
बल करना अरु धावना, उठना अरु संकोच ।
देह बढ़ै सो जानिये, वायु तत्त्व है शोच ॥
काम क्रोध मोह लोभ मैं, तत अकाश कों भाग ।
नभकी पांचौ जानिये, नित न्यारो तू जाग ॥
पांच पचीसौ एकही, इनके सकल स्वभाव ।
निर्विकार तू ब्रह्म है, आप आपको पाव ॥
निराकर निर्लिप्त तू, देही जान अकार ।
आ।नि देही मान मत, यही ज्ञान ततसार ॥
शस्तर छेदि सकै नहीं, पावक सकै न जारि ।
मरै मिटै सो तू नहीं, गुरुगम भेद निहारि ॥
जलै कटै काया यही, बनै मिटै फिरि होय ।
जीवऽविनाशो नित्य है, जानै बिरला कोय ॥
आंख नाक जिह्वा कहूं, त्वचा जान अरु कान ।
पांचो इन्द्री ज्ञान ये, जानै जान सुजान ॥

गुदा लिंग मुख तीसरो, हाथ पाँव लखि लेह।
पांचौ इन्द्री कर्म हैं, यह भी कहिये देह॥
पृथ्वी काल जो ठौर है, मुखै जानिये द्वार।
पीलो रँग पहिंचानिये, पीवन खान अहार॥
पित्ते में पावक रहै, नैन जानिये द्वार।
लालरंग है अग्नि को, मोह लोभ आहार॥
जल को बासा भाल है, लिंग जानिये द्वार।
मैथुन कर्म अहार है, धौलो रंग निहार॥
पवन नाभि में रहत है, नासा जानि दुआर।
हरो रंग है वायु को, गन्ध सुगन्ध अहार॥
अकाश शीश में वास है, श्रवण दुआरो जान।
शब्द कुशब्द अहार है, ताको श्याम पिछान॥
कारण सूक्षम लिंग है, अरु कहियत अस्थूल।
शरीर तीन सों जानिये, मैं मेरी जड़ मूल॥
चितबुद्धिमनअहंकार जो, अन्तःकरण सुधार।
ज्ञान अग्नि सों जारिये, करिकरि मीत विचार॥
शब्द सपरसरु गन्ध है, अरु कहियत रस रूप।
देह कर्म्म तनमात्रा, तू कहियत निहरूप॥
निराकार अद्वै अचल, निरबासी तू जीव।
निरालम्ब निर्वैर सो, अज अविनाशी सीव॥
बावों कोठा अग्नि को, दहिने जल परकास।
मन हिरदय अस्थान है, पवन नाभि में वास॥
मूल कमल दल चारको, लाल पैंखरी रङ्ग।
गौरीसुत वासो कियो, छस्यै जाप इकङ्ग॥
षटदल कमलपियरे वरण, नाभी तले संभाल।

षट सहस्र जपि जापले, ब्रह्म सावित्री नाल ॥
दशम पंखरी कमल है, नील वरण सो नाथ ।
विष्णुलक्ष्मिमी वासकिनो, षट सहस्र पर जाप ॥
अनहद चक्र हृदय रहै, द्वादश दल और श्वेत ।
षट सहस्र जपि जापले, शिव शक्ती जहां हेत ॥
षोड़शदल को कमल है, कण्ठ वास शशि रूप ।
जाप सहस्र जहाँ जपै, भेद लहै अति गूप ॥
अग्नि चक्र दो दलकमल, त्रिकुटी धाम अनूप ।
जाप सहस्र जहां जपै, पावै ज्योति स्वरूप ॥
दल हजार को कमल है, गगन मण्डल में वास ।
जाप सहस्र जहां जपै, तेज पुंज परकास ॥
जोग जुक्तिकरिखोजिले, सुरत निरत करचीन ।
दश प्रकार अनहद बजे, होय जहाँ लवलीन ॥

कुं० एक भंवर गुंजारसी दूजे घुंघुरू होय ।
तीजे शब्द जु शंखका चौथे घण्टा सोय ॥
चौथे घण्टा सोय पाँचवें, ताल जु बाजै ।
छठे सुमुरली नाद सातवें भेरि जु गाजै ॥
अठवें शब्द मृदंग का नाद नफीरी नोय ।
दसवें गरजनि सिंहसी चरणदास सुनि लोय ॥

दो० दश प्रकार अनहद घुरै, रजत जोगी होय लीन ।
इन्द्री थकि मनुआँ थकै, चरणदास कहि दीन ॥
तीन बन्ध नौनाटिका[1], दशवाई[2] को जान ।
प्राण अपान समान है, और कहिदेत उद्यान ॥
व्यानवायुऔरकिरकिरा, कूरम वाई जीत ।

१ शारदा २ नाड़ी ॥

नाग धनंजय देवदत, दशवाई रणजात ॥
नवों द्वार को वन्ध करि, उत्तम नाड़ी तीन ।
इड़ा पिंगला सुषमना, केलि करैं परबीन ॥
करते प्राणायाम के, तिरगये पतित[1] अनेक ।
अनहद ध्वनि के बीचमें, देखै शब्द अलेख ॥
पूरक करि कुम्भक करै, रेचक पवन उतार ।
ऐसे प्राणायाम करि, सूक्षम करै अहार ॥
धरती बन्ध लगायकर, दशौ वायु को रोक ।
मस्तक प्राण चढ़ायकरि, करै अमरपुर भोग ॥
पांचौ मुद्रा साधि करि, पावै घट को भेद ।
नाड़ी शक्ति चढ़ाइये, षट चक्कर को छेद ॥
जोग जुक्तिकै कीजिये, कै अजपा को ध्यान ।
आपा आप विचारिये, परम तत्त्व को ज्ञान ॥
शूद्र वैश्य शरीर है, ब्राह्मण और राजपूत ।
बूढ़ा बाला तू नहीं, चरणदास औधूत ॥
काया माया जानिये, जीव ब्रह्म है मित्त ।
काया छुटि सूरत मिटै, तू परमातम नित्त ॥
पाप पुण्य आशा तजो, तजो मान और थाप ।
काया मोह विकार तजि, जपै सु अजपा जाप ॥
आप भुलानो आपमें, बँधो आपही आप ।
जाको ढूंढ़त फिरत है, सो तू आपहि आप ॥
इच्छा दुई विसारिकर, होय न क्यों निर्वास ।
तूतौ जीवनमुक्त है, तजो मुक्ति की आस ॥
पवन भई आकाश सों, अग्नि वायुसों होय ।

---

१ पापी ॥

पावक सों पानी भयो, पानी धरती सोय ॥
धरती मीठे स्वाद है, खारी स्वाद सुनीर।
अग्नि चरपरो स्वाद है, खट्टो स्वाद समीर ॥
खट्टा मीठा चरपरा, खारी पर मन होय।
जबहीं तत्त्व विचारिये, पांच तत्त्व में कोय ॥
स्वाद नाप ओर रंग है, और बताई चाल।
पांच तत्त्वकी परख यह, साधि पाव ततकाल ॥
तिरकोनी पावक चलै, धरती तौ चौकोर।
शून्यस्वभाव अकाशको, पानी लांबो गोल ॥
अग्नि तत्त्व गुण तामसी, कही रजोगुण बाय।
पृथ्वी नीर सतोगुणी, नभ है अस्थिर[1] भाय ॥
नीर चलै जब श्वास में, रण ऊपर चढ़िभीत।
वैरी को शिर काटकरि, घर आवै रणजीत ॥
पृथ्वी के परकास में, युद्ध करै जो कोय।
दोउ दल रहैं बराबरी, हारि वायु में होय ॥
अग्नि तत्त्वके बहतही, युद्ध करन मति जाव।
हारि होय जीतै नहीं, अरु आवै तन घाव ॥
तत अकाश में जो चलै, तौ हाई रहिजाय।
रणमाहीं काया छुटै, घर नहिं देखै आय ॥
जल पृथ्वी के जोग में, गर्भ रहै सो पूत।
वायु तत्त्व में छोकरी[2], आंवर सूतक सूत ॥
पृथ्वी तत्व में गर्भ जो, बालक होवे भूप।
धनवन्ता सोइ जानिये, सुन्दर होय स्वरूप ॥
अग्नि तत्त्व जब चलत है, कभी गरभ रहिजाय।

---

१ न चलसकै २ लड़की ॥

गर्भ गिरे माता दुखी, हो माता मरिजाय ॥
वायु तत्त्व स्वर दाहिने, करै पुरुष जब भोग ।
गर्भ रहै जो तासमै, देही आवे रोग ॥
आसन संयम साधिकरि, दृष्टि श्वास के माहिं ।
तत्त्व भेद यों पाइये, बिन साधे कुछ नाहिं ॥
आसन पद्म लगायके, एक बरत नित साध ।
बैठे लेटे डोलते, श्वासाही आराध ॥
नाभि नासिकामाहिंकरि, सोहं सोहं जाप ।
सोई अजपा जाप है, छुटै पुण्य अरु पाप ॥
भेद स्वरोदय बहुत है, सूक्षम कह्यो बनाय ।
ताको समझिविचारिले, अपनो चित मनलाय ॥
धरणि टरै गिरिवर टरै, ध्रूव टरै सुन मीत ।
वचन स्वरोदय ना टरै, कहै दास रणजीत ॥
शुकदेव गुरूकी दया सों, साधु दया सों जान ।
चरणदास रणजीत ने, कह्यो स्वरोदय ज्ञान ॥

छप्पै—डहरे में मेरो जनम नाम रणजीत पिछानो ।
मुरली को सुत जान जात दूसरि पहिंचानो ॥
बाल अवस्था माहिं बहुरि दिल्ली में आयो ।
रमत मिले शुकदेव नाम चरणदास धरायो ॥
जोग जुक्ति हरि भक्तिकरि ब्रह्मज्ञान दृढ़करि गह्यो ।
आतम तत्त्वविचारिकैअजपा में मन सनिरह्यो ॥

इति श्रीचरणदासजीकृतज्ञानस्वरोदयसंपूर्णम्

—•—

अथ श्रीचरणदासकृत पंचउपनिषद् अथर्वणवेद भाषा प्रथम हंसनाथलिख्यते ॥

दो० बन्दत श्री शुकदेव को, उनको हिय में लाय ।
छिप्यो भेद परगट कियो, परमारथ के दाय ॥
संस्कृत भाषा करि, ताको यह दृष्टान्त ।
खोलि खोलि सबही कही, समझै छूटै भ्रान्त[1] ॥
ज्यों कूएं सों नीर लैं, बाहर दियो भराय ।
बिना यतन कोई पियो, तिरषावन्त[2] अघाय ॥
यो दीन्ही शुकदेव ने, मैं जल काढ़नहार ।
प्यासा कोइ न जाइयो, टेरों वारंवार ॥
ब्राह्मण क्षत्री वैश्य जो, अरु शूद्रहु जो होय ।
वह पीवैगा हेत करि, बहु प्यासा जो कोय ॥
मुक्तिहु नीकी प्यास जो, काहूही को होय ।
और मनुष जग प्यास में, रहे जु मृत्यक होय ॥
यह जग ऐसो जानिये, मृगतृष्णा को नीर ।
निकट जाय प्यासा कोई, कभी न भागै पीर ॥
उनकी प्यास बुझै नहीं, होय नहा हिय चैन ।
ज्ञान सुधा तजि जात है, धोखे को जल लैन ॥
ज्ञान नीर तिरपत भये, निश्चल बैठे दास ।
संसारी प्यासे गये, पूरी भई न आस ॥

१ भ्रम २ पियासा ॥

संस्कृत था कूप सम, भाषा नीर निकास ।
प्याऊं जिज्ञासून को, तिनकी भगै पियास ॥

अष्टपदी ॥

वेदहि की उपनिषद् जु मैं भाषा करी ।
जो कुछ था वहिमाहिं सोई जैसे धरी ॥
सुनि समझै मन माहिं और करनी करै ।
आवागमन मिटाय नहीं देही धरै ॥
जगकी व्याधा[1] छूटि मुक्तिपद पावई ।
जाग्रत पहुँचै ठौर स्वप्न बिसरावई ॥
तिमिर[2] सभी भजिजाय उजारा होय है ।
सूझै आतम रूप द्वैतता खोय है ॥
उपजै अति आनन्द द्वन्द दुख जाय है ।
तिरपति निर्मलज्ञान विज्ञान अघाय है ॥
जोपै करै विचार और गुरुसों लहै ।
वाकी गहनी गहै और रहनी रहै ॥
गुरु शुकदेव प्रताप सो चितते गाइया ।
चरणहिदासा होय सबन शिर नाइया ॥

दो० पूजे ऋषि मुनि देवता, पूजे इन्द्रहु भूप ।
पूजा सबही इष्ट को, देखा हरि के रूप ॥
सर्वत्रहि प्रभु देखिकरि, सबको शीश नवाय ।
उपनिषदें जो वेद की, परगट कहीं बनाय ॥

अष्टपदी ॥

प्रथम प्रगट करी छिपेही भेदकी ।
हंस नामऽहंनाम अथर्वणवेद की ॥

---

१ दुःख २ अन्धकार ॥

गौतमऋषि करि चाव ऋषीश्वर पै गये।
संत सुजातजु नाम बहुत आदर किये॥
गौतम स्तुति करी बहुतही प्रीति सों।
फिरि पूछी यह बात जु लघुता रीति सों॥
परमेश्वर पहिंचान मोहि समुझाइये।
मुक्तहोन के पन्थ सबै जु दिखाइये॥
ह्वैकर बहुत प्रसन्न[1] ऋषीश्वर बोलिया।
गौरा अरु महादेव की चरचा खोलिया॥
सब देवन के देव महादेव हैं सही।
उपनिषदैं जो वेद कि गौरा सों कही॥
सो मैं तुमसों कहौं प्रीति के भाव सों।
तुमहूं नीके सुनौ अधिकही चाव सों॥
गुप्त महा यह भेद हिये में राखिये।
जो जड़ मूरुख होय तासु नहिं भाखिये॥

दो० हरिभक्ता अरु गुरुमुखी, तप करने की आस।
सतसंगी सांचा यती, ताहि देहु चरन्दास॥

अष्टपदी॥

अब मैं कहौं सँभाल सुरत ह्यां दीजिये।
यह तो अचरज कथा श्रवण सुनि लीजिये॥
यही स्वास कहि हंस आय अरु जाय है।
पूरा सतगुरु मिलै तो भेद लखाय है॥
जो कोउ याको समझि करै अरु ध्यानहीं।
ऋद्धि सिद्धि सुखहोहिं जु उपजै ज्ञानहीं॥
अन्त मुक्तिही होय अभैपद में रहै।

---

१ योगी॥

बहुरौ जन्म न होय परम आनँद लहै ॥
अब मैं वरणों हंस और परमहंसही ।
जो समझै है ब्रह्म जाय सब संशही ॥
हंस हंस जो मंत्र अर्थ पहिंचानिये ।
वह मैंहूँ यों कहै निश्चय करि जानिये ॥
यह मंतर सब माहिं सदाही भरि रह्यो ।
कोटिन में कोइ जानि ध्यान सोइ धरि रह्यो ॥
जैसे काठ में आगि तिलों में तेल है ।
तैसे सब घटमाहिं इसी का मेल है ॥
दो० दूध मध्यज्यों घीव है, मेहँदी माहीं रंग ।
यतन बिना निकस नहीं, चरणदास सो ढंग ॥
जो जानैं या भेदको, और करै परवेश ।
सो अविनाशी होत है, छूटै सकल कलेश ॥

अष्टपदी ॥

तन मथने को यतन कहूँ अब जानिये ।
ज्यों निकसै ततसार विलोवन ठानिये ॥
पहिले चक्कर जानि मूल द्वारे बिषे ।
जितही पाँव की एँडी सूं बन्ध दे रखे ॥
मूल चक्रसों खैंचि अपान चलाइये ।
दूजे चक्कर पास जु आनि फिराइये ॥
दहिनी ओरसों तीनि लपेटे दीजिये ।
तीजे चक्कर माहिं गमन फिरि कीजिये ॥
चौथे चक्कर माहिं पवन जो लाइये ।
बहुरौ पँचवें चक्र में जू पहुंचाइये ॥
षष्ठम चक्कर माहिं जु ताहि चढ़ाइये ।

सो त्रिकुटी के मध्य तहां ठहराइये ॥
रोकै त्रिकुटी माहिं आनिके वायुको ।
षट्चक्कर को छेदि चढ़ै जब धायको ॥
अपान वायु चढ़िजाय वहीं अस्थान है ।
प्रान वायु ह्वै जाय साधु कोइ जान है ॥
रोकै प्रानहि वायु त्रिकुटी मध्यही ।
ओं का करै ध्यान शीश में मध्यही ॥
यह तौ ऊंचा ध्यान जु अधिक अनूपही ।
चरणाहदासा होय जु ब्रह्म स्वरूपही ॥
दो० नाम ब्रह्म का है नहीं, है तो ॐकार ।
जानै आपन को वही, मैं हौं तत्त्व अपार ॥

अष्टपदी ॥

अनहद शब्द अपार दूर सों दूर है ।
चेतन निर्मल शुद्ध देह भरपूर है ॥
ताहि निःअक्षर जानि और निष्कर्म है ।
परमातम तेहि मानि वही परब्रह्म है ॥
हृदय कमल के माहिं ध्यान सोहं करै ।
वाहि को अजपा जान सुरति मन लै धरै ॥
बिनहिं जपे जप होय सुसांची बातही ।
सहस इकीस अरु छस्से जहां दिन रातही ॥
याको कीजै ध्यान होत है ब्रह्मही ।
धारै तेज अपार जाहि सब भर्महीं ॥
वा पटतर कोइ नाहिं जु योंहीं जानिये ।
चन्द सूर्य अरु सृष्टि के माहिं पिछानिये ॥
सो वह तेज अपार आपको मानिये ।

निश्चय अरु वहि सांच जु मनमें आनिये ॥
जब लग वाही भेद जो जाना था नहीं ।
जीवातम अरु हंस होरहा था तहीं ॥
जभी अगोचर[1] भेद जु मनमाहीं लहा ।
परमातम परमहंस रूप निश्चय भया ॥

दो० जो जीवातम सो भया, परमातम अरु ब्रह्म ।
वाकी सरवर को करै, पाई परै न गम्य ॥
पहुँचै ना वा तेज को, कोटिकोटि ही भान ।
चरणदास कोइ जानहीं, ताको निर्मलज्ञान ॥

अष्टपदी ॥

परम ज्योति को प्रापत सो नर होत है ।
जिन मन जीता होय लगाया गोत[2] है ॥
जिन मन जीता नाहिं विषय आशा वहै ।
हृदय कमलदल आठ हुई फिरता रहै ॥
अष्ट पैंखरी जान जु आठौ अंगही ।
वही दिशा हैं आठ करै मन भंग ही ॥
पैंखरी पूरब दिशा जवै मन जात है ।
तव इच्छा हिय पुण्य करन की आत है ॥
अग्नेय दिशा है पैंखरी जव जावै मना ।
ऊंघ नींद अरु आलस जित आवै घना ॥
दक्षिणहिं जु दिशा पैंखरी राजई ।
उपजै वहुत किरोध कठोरता साजई ॥
दिशा जु नऋत पैंखरी पै मन रंगही ।
पाप करन की उपजै हिये तरंग ही ॥

---

१ न देखपड़ना २ डुब्बी ॥

पश्चिम दिशा जु पैंखरी पै मन आरहे।
होय खुशी परफुल्ल जु लीला को चहे॥
दो० बायब दिशा जु पैंखरी, जब मन पहुँचे जाय।
हलन चलन उपजै हिये, बैठे देहि उठाय॥

अष्टपदी॥

उत्तर दिशा जु पैंखरी पै मन आवई।
मैथुन करनकि चाह हिये उपज़ावई॥
ईशान दिशा पैंखरी पर मन आवै जभी।
दान करन की चाह अधिक उपजे तभी॥
हृदय कमल के बीच जबै मन जारहे।
उपजि त्याग वैराग तजन जगको कहे॥
हृदय कमल को छेदि बाहर मन फिरतही।
आंसे पांसे जानि होय जाग्रत ही॥
हृदय कमल के घेर के मध्यम जातही।
जब आवै वह स्वप्न जहां बहु भांति ही॥
धान बराबर छेदि तहां मन जात है।
होहि सबै गुण लीन सखो पतियात है॥
हृदय कमल को छोंड़ि होय जब न्यारही।
तुरिया में मन जात जु तत्त्व अपारही॥
यों जीवातम जान जु अनहद लीन हो।
सो परमातम होय जीवता जाय खो॥
दो० अजपाही के जापको, सिद्ध भयो जब जान।
पहुँचे या अस्थानहीं, रहै न दूजा ज्ञान॥
यह जो सब कुछ मैं कहो, हिरदे जाना जाय।
ताही को पहिंचानिये, चरणदास चितलाय॥

अष्टपदी ॥

कैसे अनहद उठै हिये अस्थान सों ।
यह जीवातम सुनै हृदय बल ध्यान सों ॥
दश प्रकार के नाद कहूं भिन्न भिन्नही ।
सो उपनिषदहि माहिं कहे सब चिह्नही ॥
पहली ऐसे होय चिड़िया ज्यों चीला ।
एकबार कहै चिह्न सुनौ सोई सुरंतला ॥
ऐसेही दोबारा जु दूजी जानिये ।
चिह्न चिह्नही होत ताहि पहिंचानिये ॥
क्षुद्रघंटिका तीसरि चौथी शंख ज्यों ।
पंचम ऐसी जान बजत है बीन त्यों ॥
छठीं बजै ज्यों ताल सातवीं बाँसुरी ।
अठवें शब्द मृदङ्ग लगै मन गाँसुरी ॥
नवें नफीरी नाद जु दशवें सिद्धि है ।
बादर कीसी गरज ददह दंहंद है ॥
करते में अभ्यास जु नाद सब खुलैं ।
जैसे बटाऊ[1] चलत नगर नौ मग मिलैं ॥
दशवें पहुँचै जाय नवें बिसराइया ।
रहत किया वा देश जहां घर छाइया ॥
ऐसेही नौ छोड़ नाद दशवां गहै ।
बादल कीसी गर्ज जहां मन दे रहै ॥
वाको छोड़ै नाहिं सदा रहै लीनहीं ।
यही जु अनहद सार जानि परबीनहीं ॥
याको प्रापत कहूं जो मन में आनिये ।

---

१ रास्ता चलनेवाला ॥

गौरासों शिव कह्यो सांच करि जानिये ॥

दो० चरणदास ने अब कही, जुदी जुदी दशनाद।
वही परापत को लहै, जो कोई साधै साध ॥

अष्टपदी ॥

पहिलि परीक्षा जान जु अनहद नादकी।
सबै रोमावलि उठै जु वाके गातकी ॥
अरु दूजी जब सुनै नाद चित लावई।
सब तन अंगन माहिं आलकस छावई ॥
तीजी अनहद नाद सुनै जितही जुटै।
सब अंगन हियमाहि प्रेम पीड़ा उठै ॥
चौथि सुनै जब नाद परीक्षा पावई।
तब शिर घूमनलगै अमल[1] ज्यों खावई ॥
पचवीं उठै जो नाद सुनै तामें पगै।
वाके शीश सों जानि अमी[2] उतरन लगै ॥
छठा उठै जब नाद सुरति वामें धरै।
कण्ठ सों नीचे उतरि अमी पीवन करै ॥
सतवीं खुलै जो नाद विना श्रवणन सुनै।
अन्तर्य्यामी होय लखै सबके मनै ॥
दूर दूर के वचन सुनै कोई कहै।
होय परे की दृष्टि छिप्यो कछु ना रहै ॥
अठविं परीक्षा जानि परापत जो बनै।
सब माहीं सबठौर नाद अनहद सुनै ॥
है सबही के मांझ बैन समझै सुनै।
यह समझै अरु सुनै ताहि नीके गुनै ॥

नशा २ अमृत ॥

दो० खुलै नवा जब नादहीं, लक्षण यह पहिंचान।
सूक्ष्म होय जित तित गमन, करै धरै जो ध्यान॥
काहू हीकी दृष्टि सों, चहै अगोचर होन।
होय सकै दीखै नहीं, वह सब देखै जौन॥
जैसे सुर सबको लखैं, उन्हें न देखै कोय।
रणजित कहै अस्थूलहो, चाहै सूक्षम होय॥

अष्टपदी॥

दशवीं खुलै जो नाद परे सोहंपरे।
पारब्रह्म होइजाय ध्यान ताको करे॥
ध्यानी को मन लीन होय अनहद सुनै।
आप अनाहद होय वासना[1] सब भुनै॥
पाप पुण्य छुटिजाय दोऊ फल ना रहैं।
होय परमकल्याण जु त्रैगुण[2] ना गहैं॥
होवै बोध स्वरूप तेज ह्वै जात है।
अटक रहै नहिं कोय सबै ठां समात है॥
अज अविनाशी शुद्ध पवित्तर सत्तही।
होवै आनँदरूप परम जो तत्त्वही॥
निर्विकार निर्लेप और निर्बानहीं।
आनँद सबको देत आपको जानहीं॥
या ध्यानी को नाम जु ॐकार है।
सब नामनमें बड़ा किया जु विचार है॥
याको ऐसे मानै कि वह जो मैंहीं हूँ।
रूप नाम गुण जान कि यह सब वाहीसूं॥
दो० करतै अनहद ध्यानही, ब्रह्मरूप ह्वै जाय।

१ मनकी इच्छा २ सत् रज तम॥

चरणदास यों कहत है, बाधा सब मिटिजाय ॥

इति हंसनाद् उपनिषद् सम्पूर्णम् ॥

अथ सर्वोपनिषद् द्वितीय प्रारंभः ॥

दो० दूसरि जो उपनिषद है, ताको कहौं बनाय ।
सर्व नाम तिहि जानिये, ताहि देहुँ प्रकटाय[1] ॥

अष्टपदी ॥

परजापति[2] के शिष्य जो पूंछी आयके ।
बन्ध मुक्ति का भेद देहु समझायके ॥
काहि कहत हैं बन्ध मोक्ष कासों कहैं ।
विद्याऽविद्या[3] भेद कहौ कैसे लहैं ॥
जाग्रत स्वप्न सुषुप्ति मोहिं बतलाइये ।
अरु तुरिया को भेद सभी जु सुनाइये ॥
कोठे पांच को भेद गुरू वर्णन करो ।
जुदा जुदा समझाय तिमिर[4] दुबिधा हरो ॥
पहिल अन्न सों भरा दुजा भरा प्रान सों ।
तीजा मन सों भरा चौथ बुधि रानिस ॥
पँचवाँ आनँद भरा मोहिं कहि दीजिये ।
हौं तौ चरणहिंदास कृपा जो कीजिये ॥
आतम को जो अकर्ता कैसे कै कहैं ।
किन अनर्थ सों जीव जु याही को ठहैं ॥
अरु कहैं याको देहका जाननहार है ।

---

१ जाहिर करना २ ब्रह्मा ३ माया ४ अँधियारा ॥

देह को साक्षी कहै सो कौन विचार है॥

दो० ऐसो यह बन्धन बँधो, कहैं तज्ञ निर्बन्ध।
अन्तर्यामी क्यों कहैं, मोहिं बताओ सन्ध॥
आतमहीं को क्यों कहैं, जीव आतमा मान।
माया यासों कहत हैं, दूरि करो अज्ञान॥

अष्टपदी॥

परजापति सब सुनिकै यह उत्तर दिया।
आतमहीं का ज्ञान सभी परगट किया॥
जीव आतमा देह मानिकै मैं कहैं।
ताते परो अज्ञान सबै दुख सुख सहैं॥
आपको लम्बाजान कि ठिंगना[1] जानई।
कबहूँ दुबला जान कि मोटा मानई॥
आपको जानै वृद्ध कि बालक तरुन[2] है।
जानत नारी पुरुष जु मानत बरन है॥
देह संग ह्वै देह करै जु विहार है।
आपन कोगयो भूलि रहै न विचार है॥
वाको बन्धन यही सुनो चितमें धरो।
देह भाव छुटिजाय मुक्ति निश्चय करो॥
जाही वस्तु सों उपजै तन अभिमान है।
वही अविद्या जान वही अज्ञान है॥
यही भरम उठिजाय जिसी जु विचार सों।
वाही विद्या जानि वही को ज्ञानहूँ॥

दो० चौदह इन्द्री देवता, मिलि जो करैं व्योहार।
चरणदास यों कहतहैं, जाग्रत यही निहार॥

---

१ छोटा २ ज्वान॥

जीव जु अन्तःकरणके, चारो देवत संग ।
सूक्षम देही साथही, देखै स्वपना रंग ॥
चौदहही सब लीनहै, जीव आतमा माहिं ।
यही सुषुप्ति जानिये, कछु भी सूझै नाहिं ॥

अष्टपदी ॥

तीन अवस्था मिटैं मिटैऽहंकार है ।
तुरियाही रहिजाय जु तत्व अपार है ॥
परमातम जो पुरुष सदा निर्लेव है ।
केवल ज्ञान स्वरूप जु ब्रह्म अभेव[1] है ॥
अब कोठौं की बात कहूं चितदीजिये ।
जुदा जुदा विस्तार सबै सुनिलीजिये ॥
पहला कोठा कहूँ अन्नसेती भरो ।
छह कोठे तेहि माहिं सोई श्रवणन धरो ॥
तीन पिताकी ओर सो लाया संगहीं ।
बीरज मींगी हाड़ सफ़ेद जु रंगही ॥
अब माता के अंश तीनिहीं जानिये ।
लोह त्वचा अरु मांस अरुण पहिंचानिये ॥
प्रानसे कोठा भरा दशौ जहां वायु है ।
अगले भी छः कहे जु रहे समाय है ॥
तीजा कोठा जानि धरो तहँ शुद्धिही ।
मन चित अरु अहंकार भरी जहँ बुद्धिही ॥
चौथा कोठा देख इन्हीं का जानना ।
तामें भरो है ज्ञान सभी को पिछानना ॥
पँचवाँ कोठा जानि जो आनँद सों भरा ।

१ जो न जानाजाय ॥

जैसे सगरो वृक्ष बीजमाहीं धरा ॥

दो० चारो कोठे जो कहे, अरु कारण को देखि ।
जहाँ सभी ये रहत हैं, वा ठौरी को पेखि ॥
वा ठौरी को जानिये, ज्यों तरुवर को बीज ।
डाल पात फल फूलही, रहे जु वाके बीच ॥
ऐसे वाको समझिकै, रहैं जु आनँद आहि ।
आनँदही आनँद भरा, पँचवें कोठे मांहि ॥

अष्टपदी ॥

आतम करता जानु जु जामें बुधि रहै ।
दुख सुख वाही माहिं सभी आशा गहै ॥
इच्छा पूरी भये होत मन मोद[1] है ।
जब पूरी नहिं होय घना दुख होत है ॥
दुख सुख दोनों होत जो पांचन के बिषे ।
सो वे इन्द्री जान विना इनके कसे ॥
सरवन[2] सों सुनि शब्द बुरा भल को यही ।
और त्वचा सों जान सपर्श[3] कि होयही ॥
आंखन सों लखि होय जु रूप कुरूपसों ।
अरु जिह्वा सो होय जु षटरस[4] स्वाद सों ॥
नासासेती होय बुरी भलि गंध ले ।
इनसे उतपति होय जु दुख सुख भै अभै ॥
आतम को जीवातम इस कारण कहैं ।
सूक्षम[5] अरु अस्थूल[6] देह सँगही रहैं ॥
बुरे भले जो करमन के फल में बँधा ।

१ आनन्द २ कान ३ छूना ४ खट्टाखारी मीठा कडुआ चरपरा कसैल ५ हलका ६ मोटा ॥

बीचहि लिया लगाय नहीं धुरसों फँधा ॥
ज्यों कञ्चन के संग जु टांका जानिये ।
¹धौले बस्तर साथ जु मैल पिछानिये ॥
शोधे से ह्वै दूर शुद्ध ह्वै जात है ।
अपनेहिं अङ्गन आय जु श्वेत दिखात है ॥
जीवातम इहि भांति फलन त्यागन करै ।
आतमहीं रहिजाय जीवता ना रहै ॥
खोटे कर्म जु त्यागि भले सहजै करै ।
तिनका फल जो होय नहीं आशा धरै ॥
दो० जीव ब्रह्म यों होत है, रहै न कछू लगाव ।
चरणदास यों कहत हैं ऐसा किये उपाव ॥

अष्टपदी ॥

देह को जाननहारा ऐसे मानई ।
सूक्षम अरु अस्थूल को अपनो जानई ॥
कबहुँ कहै मम शीश आंख मुख हाथ है ।
कभी बतावै पांव कहै मेरा गात है ॥
मन बुधि चित ऽहङ्कार समझ ये चार हैं ।
अरु पांचों है वायु जु कोइ निहार है ॥
प्राण अपानहि व्यान उदान समान हैं ।
सात्त्विक राजस तामस तीनों जानि हैं ॥
वैर प्रीति अरु तीसरि इनकी ढूँढ़ है ।
चौथा मनोरथ तीनिक सब मिलि झुंड है ॥
भले बुरे जो कर्म और मन आनिये ।
सूक्ष्म शरीर को मूल ये सब पहिंचानिये ॥

---

१ सफेद ॥

अरु यह सूक्ष्म शरीर आतमा साथ जो ।
ताते भासत सत्य सत्य है बात सो ॥
जब आतम पहिंचान हिये में आवई ।
तब सूक्षम को सांच सबै उठि जावई ॥

दो० सूक्ष्म शरीररु आतमा, भिन्न लखै नहिं कोय ।
यही जु मन की गांठ है, खुलै मुक्ति ही होय ॥
जाने जाननहारही, और तीसरी जान ।
इन तीनों को जो लखै, सो साक्षी परधान[२] ॥
उपजै तीनों द्वैत सों, मिटै एकता होय ।
उपजन मिटना तीनका, जानै न्यारा सोय ॥
अपनेही परकाश में, आप रहा परकास ।
सोई साक्षी जानिये, कहै चरणहीं दास ॥
यद्यपि बन्धन में बँधा, कहै जु निर्बंध दूर ।
चींटी ब्रह्मा आदिलौं, हिरदय में भरपूर ॥
सबही हिरदय के मिटे, वही एक ठहराय ।
ना कुछ आया ना गया, ज्योंका त्यों रहिजाय ॥
बन्धन में आवै सही, लीला करन दयाल ।
निरबँध[३] का निरबँध रहै,अजअबिनाशिअकाल ॥
अंतर्यामी के अरथ, सब घट रहो समाय ।
जैसे डोरेके विषे, भांतिभांति मणिकाय[४] ॥
सबही के भीतर बसै, सबका जाननहार ।
वाहीते परगट भई, नाना वस्तु अपार ॥
घनेरूप किरिया घनी, घनेनाम दृष्टान्त[५] ।

१ दिखात २ मुख्य जाननेवाला ३ जो बँधा हुआ न हो ४ मणि समूह ५ मिसाल ॥

सूझ ज्ञानप्रकाश सूं, जब गुरु मेटै भ्रान्त[1] ॥
रूप नाम किरियालगी, जबलग याके साथ ।
याहीते जी आतमा, कहलावै यह बात ॥
जैसे कञ्चन मृत्तिका, भांड़े किये संचार ।
नामरूप किरिया भई, देखो दृष्टि निहार ॥
रूपनाम किरिया मिटै, रहै न कछू विचार ।
जो था सोई रहगया, परमातम ततसार ॥
आतम अरु जीवातमा, देह धरे से दोय ।
ताते वढ़ो उपाधही, मैं तू तू मैं होय ॥
तत्त्वमसी जो यह कहा, ताको याहीं अर्थ ।
वह तूही है जानले, परम तत्त्व है सत्य ॥

अष्टपदी ॥

अरु वह ज्ञान स्वरूप अनन्द अनन्त है ।
उपजावन सब सृष्टि को जीवन कन्त है ॥
वस्तु काल अस्थान तीनों मिटि जातु है ।
वह इकरस सतरूप ब्रह्म रहिजातु है ॥
सब को जाननहार मिटै उपजै नहीं ।
तासूं कहैं वहि ज्ञान अर्थ जानो तहीं ॥
और कहैं जु अनन्त सो यासूं जानिये ।
सब भांड़े में इक माटी जु पिछानिये ॥
कनक के बरतन बहुत जु सोना एकिये ।
सब वसनन के माहिं जु सूतहि देखिये ॥
ऐसेहि आदिरु अन्त ब्रह्म सब माहिं है ।
कहिये याहि अनन्त भेद कछु नाहिं है ॥

---

१ हृदय का संदेह २ वेदान्त ॥

अरु जो आनँद कहै समुझ लीजौ वही ।
वाही को अंश पिछान जु आनँद हो कही ॥
ऐसेही मोहिं समझायो गुरु शुकदेव ने ।
चरणहिंदासा होय लखो या भेवने ॥

दो० चार पते ये ब्रह्म के, सत आनन्द अनन्त ।
चौथा ज्ञानस्वरूप है, कहैं वेद अरु सन्त ॥

अष्टपदी ॥

सर्व समय सब ठौर जु इकरस नित्त है ।
तत्वंमसी के अर्थ वही तू सत्य है ॥
जब तू करिकै ज्ञान होय परब्रह्महीं ।
आपनहीं कूं पाय जाय सब भर्महीं ॥
मैं तू वह उठिजाय दूसरी वासही ।
आपकु व्यापक जान ज्यों शुद्ध अकाशही ॥
अरु जानै निर्लेप सत्त अरु एकही ।
जब परमातम होय रूप नहिं रेखही ॥
माया याते कहैं भरम अरु अन्त है ।
ज्ञान भये उठिजाय कछू न रहन्त है ॥
ज्यों रसरी को साँप भरम सूँ मानिये ।
समझ लखा जब झूठी माया जानिये ॥
सांच सो लागै झूठ झूठ सच जान है ।
माया यही सुभाव भरम अज्ञान है ॥
रसरी कूं कहैं सर्प्प जु अपने भरम सूं ।
ऐसेही जड़ कहत सनातन ब्रह्म कूं ॥

दो० झूठ जगत दीखत रह, दीखै ना सत ब्रह्म ।

१ मतलब २ वेदान्त ॥

यही जु माया जानिये, यही तिमिर यहि भर्म ॥
गुरु शुकदेव प्रताप सूं, कही चरणहीं दास ।
यह जु अथर्वणवेद की, सर्व उपनिषद भास ॥

इति सर्वउपनिपद् दूसरीसम्पूर्णम् ॥

अथतृतीयतत्त्वयोगउपनिषद्प्रारम्भः ॥
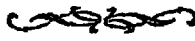
अष्टपदी ॥

तीजी अरु जो कहूँ अथर्वणवेद की ।
तत्त्वयोग जिहि नाम गुपत[1] ही भेद की ॥
अपने शिषसूं कहा जु परजापत्ति[2] ने ।
योगसार में कहूँ जु पावैं तत्वने ॥
योगेश्वर कूं लाभ होय जाके किये ।
पढ़े पाप भजि जाय सुने राखे हिये ॥
निश्चय होवे मुक्त यही तू जानियो ।
चौथे पद लहै वास सांच करि मानियो ॥
बड़ा योगेश्वर विष्णु अधिक तप ज्ञान है ।
जाकी मायागद्ध नहीं परमान है ॥
योगी करिकै योग सुज्योति निहारही ।
दीपक कीसी लोय लखै होय पारही ॥
सो वह विष्णु सरूप सबन के माहिं है ।
घट घट में भरपूर खाली कोई नाहिं है ॥
ऐसी ज्योति कुं छोड़ि और मन लावई ।

---

१ छिपा हुआ २ ब्रह्मा ॥

वै नर भोंदू जान जु कूर कहावई ॥

दो० दूध पिया जिन कुचनसूं, उनकूं मल सुख लेत ।
जन्म खोय खाली चलै, नारिनसूं करि हेत ॥

अष्टपदी ॥

जिस द्वारेसूं निकस जन्म जग में लिया ।
ताही में परवेश करन फिर मन किया ॥
वही नारिको रूप जु तासूं मां कही ।
लगे भार्य्या कहन जु अपने संग लई ॥
जाही पुरुष स्वरूप कुं कहते बापहो ।
फिर लगे पुत्तर कहन वाहीकूं आपही ॥
वही पुत्र जो जगत में पिता कहावई ।
सोई पुत्तर भया बढ़ो अति चावई ॥
जैसे कूप का रहंट लोट रीते भरे ।
वस्तु एकही जान कभी ऊपर तरे ॥
याही भरम अज्ञानसूं आशाही दहै ।
बहुलोकन के माहिं सदा भरमत रहै ॥
अब मैं कहूँ उपाय जगतसूं ज्यों छुटै ।
आवागमन का फंद शिताबीही कटै ॥
जासूं भरमैं नाहिं रहै थिर होयकै ।
पावै निज अस्थान बिपति सब खोयकै ॥

दो० ॐकार बड़ नाम है, हिरदै ध्यान करै ।
शुकदेव कहै चरणदाससूं, सबही ब्याधि टरै ॥

अष्टपदी ॥

ॐकार के अक्षर कहिये तीन हैं ।
अकार उकार मकार जानै परवीन[1] हैं ॥

---

१ बुद्धिमान् ॥

तीनों अक्षर माहँ तीनों हैं थोकही ।
पहले अक्षर में जु रहै भू लोकही ॥
दूजे अक्षर बीच जानौ आकाशही ।
तीजे अक्षर माहिं वैकुंठ निवासही ॥
तीनों अक्षर माहिं जो तीनों वेद हैं ।
ऋग्यजुवेदरु साम तिहूं जो भेद हैं ॥
तीनों अक्षर माहिं तिहूँ जो देव हैं ।
ब्रह्मा विष्णु महेश वड़े जो अभेव हैं ॥
तीनप्रकार कि अग्नि तीन अक्षर महीं ।
एक अग्नि यह जान दिखे प्रत्यक्ष हीं ॥
दूजी अग्नि प्रचंड सूर्य की भासई ।
तृतिय अग्नि सब माहिं जठर परकासई ॥
तीनों गुण तिनमाहिं समझ जानौ यही ।
रजगुण सतगुण और तमोगुण है सही ॥

दो० अक्षर ॐकार[1] को, जिनका चौथा भाग ।
अर्द्धमात्रा बोलिये, ऊपर बिन्दी लाग ॥

अष्टपदी ॥

जो कोउ याको जपै समझ अरु ध्याय है ।
ऊपर कही जो वस्तु सबन को पाय है ॥
अक्षर साढ़े तीन प्रणव के माहिं है ।
सब वस्तू वा माहिं वाह्य[2] कछु नाहिं है ॥
ऐसे रह वा माहिं पुष्प में गंध ज्यों ।
जैसे तिल में तेल दूध में घीव त्यों ॥
जैसे पाहन[3] माहिं जु कनक[4] बताइये ।

१ ॐकार २ बाहर ३ पत्थर ४ सोना ॥

ऐसेही ॐकार में सबको पाइये ॥
वाही को किये ध्यान परमपद को लहै ।
वेद पुराणन माहिं साखि योंहीं कहै ॥
अब परणव का ध्यान जु देहुँ बतायकै ।
सबही याकी सूझ कहूँ समझायकै ॥
हिरदयही के माहिं जु कमल पिछानिये ।
ऊपरको है नाल नीच मुख जानिये ॥
वाही के छिद्र बीच रहत मनभूप है ।
कहैं चरणहीं दास जु भेद अनूप है ॥

दो० अक्षर ॐकार के, पहिला है जु अकार ।
ताहि कहे सों होत है, हिरदा शुद्ध विचार ॥

अष्टपदी. ॥

दूजा जपै उकार कमल विकसैं कली ।
शनै शनै खुलिजाय बसै तामें अली[1] ॥
तीजा जपै मकार प्रकट हो नादही ।
सुनि सुनि आनँद होहि जु परम अगाधही ॥
अर्द्धमात्रा बन्दु सदा थिर जानिये ।
हलन चलन कछु नाहिं यही चित आनिये ॥
वामें मन ह्वै लीन ज्योति ह्वैजाति है ।
निर्मलहू अरु शुद्ध बिलौर की भांति है ॥
सूरज कीसी किरण महा उज्ज्वल वही ।
जोई करै वह ध्यान पुरुष पावै सही ॥
सब में ज्योति स्वरूप सकल भरपूर है ।
निकट निकट सों निकट दूरसों दूर है ॥

१ भ्रमर ॥

जो इसकाही ध्यान हृदय किया जापना ।
तौ करै मस्तक माहिं होय पारायना ॥
शीश में जब सिद्ध होय रोकै नौद्वारही ।
निकसन देवै वायु न काहू बारही ॥
दो० दोय पगण्डी बाँधिये, नीचे के दो द्वार ।
दोउ अंगूठे हाथ के, रोको सरवन बार ॥

अष्टपदी ॥

[1]तर्जनि अंगुली द्रऊ हगन पर दीजिये ।
मध्यम[2] से दोउ नाक छेद बँद कीजिये ॥
अनामिका[3] दोउ हाथ कि और कनिष्ठिका[4] ।
होंठन को बंद करै जु नीके पुष्टका ॥
नासा के दोउ छेद एकही जित भये ।
दोउ भौंहन के बीच चरणदासा कहे ॥
निश्चय ताह बना रस देह कि जानिये ।
वाहीकी तौ ओर हृष्टि को तानिये ॥
महाकुम्भक इहि नाम इसी विधि साधिये ।
ध्यान किये होय मुक्ति यही अवरा[5]धिये ॥
इन्द्रिनहूँ के मारग को जो बंद करै ।
वायु विना घट[6] माहिं यथा दीपक बरै ॥
होय घना परकाश इसी जो देह में ।
इसही ध्यान प्रताप मिलै जा गेहमें ॥
पावै चेतन शुद्धि किये इस योगही ।

---

१ अंगूठा के पासकी अंगुली की तर्जनी संज्ञा है २ तर्जनी के पासकी अंगुली की मध्यमा संज्ञा है ३ चौथी अंगुली की अनामिका संज्ञा है ४ छगु-नियाँको कहते हैं ५ सेइये ६ देह ॥

कर्मन को है नाश मिटै मन रोगही ॥

दो० उपनिषदा पूरी भई, नाम योगही तत्त्व।
अंग अथर्वणवेद की, चरणदास कहि सत्त ॥

इति तृतीयतत्त्वयोग उपनिषद्सम्पूर्णम्॥

अथयोगशिखाउपनिषद्चतुर्थ प्रारम्भः॥

दो० योगशिखा चौथी कहूँ, तामें अद्भुत ध्यान।
परजापति ऐसे कही, शिष्य सुनो दै कान ॥

अष्टपदी ॥

यामें अद्भुत राह बड़ेही ज्ञानकी।
कांपन लागै देह कठिन सुनि ध्यानकी ॥
जब आवै मनमाहिं मोह तन ना रहे।
पांच नहीं की आग नहीं हियमें दहै ॥
वाकी विधि मैं कहूं सभी सुनि लीजिये।
बैठि इकांतहि ठौर जु आसन कीजिये ॥
आसनपद्म[3] लगाय कि सुख आसन करो।
सीधो राखै मेर नैन नासा धरो ॥
दोउ पावन के साथ जु हाथ मिलाइये।
सब स्वादन को रोंकि जो मनको लाइये ॥
प्रणवैही का जाप जु मनमें राखिये।

---

१ ब्रह्मा २ काम क्रोध लोभ मद मात्सर्य्य ३ पल्थी मारकर बैठना स
को समेट कर उसको पद्मासन कहते हैं ४ ॐकार।

इस बिन और उपाय सबनको नाखिये ॥
जाका है ॐनाम ध्यान ताका करै ।
आठपहर संग्राम विना खांड़े[1] लरै ॥
देह यही अस्थूल बड़ा घर जानिये ।
तामें दीरघ थंभ एक पहिंचानिये ॥
दो० अरु यामें नौ द्वार हैं, छोट थंभ हैं तीन ।
पांच[2] देवता तेहि विषे, लहैं साध परवीन ॥
यह घर जो मैंने कहा, सोइ पुरुषन की देह ।
कहैं गुरू शुकदेवजी, चरणदास सुनि लेह ॥

अष्टपदी ॥

एक बड़ा जो थंभ मेरु[3]ही डंड है ।
सोइ पीठीका हाड़ जासु सब मंड है ॥
अरु वाहीके बीच नाड़ि सुषमन भली ।
सब नाड़िन शिरमौर योगी मानैं रली ॥
नौ द्वारे अब कहूं तिन्हैं पहिंचानिये ।
दो सरवन दो आंख भली विधि मानिये ॥
नासा छिद्दर दोय जु मुखका एक है ।
लिंग गुदा दो जान नवोका लेखहै ॥
तीन जु छोटे थंभ तीन गुणहा कहे ।
सतगुण तमगुण और रजोगुणहीं लहे ॥
पांच देवता कहे सो पांचों प्रान हैं ।
प्राणापानरु व्यान उदान समानहैं ॥
ऐसे मंदिर माहिं हृदय में छेद है ।

१ तलवार की सदृश्य २ प्राण अपान उदान व्यान समान ३ कि पैरों से लगाकर पृष्ठभाग से मस्तक तक मिली हुई है ॥

तामें सूरजमण्डल अचरज भेद है ॥
ताकी बड़िही ज्योति किरण उजियारि है ।
पूरा योगी होय सो ताहि निहारि है ॥

दो० ज्योतिमयी मंडल लखै, हृदय कमल में होय ।
तामें दीखे और इक, दीवे की सी लोय ॥

अष्टपदी ॥

दीपककीसी ज्योति मानु ऊपर चलै ।
रहै अपनिहीं ठौर भांति ऐसे हिलै ॥
वाही ज्योति को जानै ब्रह्म स्वरूपही ।
यही समझिकै ध्यान करै जु अनूपही ॥
योगी करै जो ध्यान यही हिय माहिंहीं ।
अंतसमय तन छूटि उपर को जाहिंहीं ॥
सूरजहू का मंडल जावै बेधही ।
सुषमन मारग जाय शीश को छेदहीं ॥
सायुज[2] मुक्तिको जाय परापत होयही ।
कोटिन माहीं लहै जु बिरला कोयही ॥
सब ज्योतिन की ज्योति बड़ी जो ज्योतिहै ।
ताको पाये होय एकही गौत है ॥
आलस सों दुर्भाग्य ध्यान करि ना सकै ।
तौ दिनमें तिरकाल पाठ करनेलगै ॥

दो० प्रातकाल अरु मध्य में, संध्याही की बार ।
उपनिषदन तीनोंसमै, पढ़ै विचार विचार ॥
करम कटे यमही डटे, चौरासी हटजाय ।
देही पावै मनुषकी, पूरा गुरु मिलजाय ॥

---

१ लपक अर्थात् टेमि २ ब्रह्ममें लीन होजाना ॥

फिर पावै यह ध्यानही, पीछे कहा जु खोल ।
जावै परमहि धामकूं, छोड़ै सब झकझोल ॥
थोड़ासा यह ध्यानही, मैं समझायों तोहिं ।
परजापति शिष्यसोंकहै, बड़ा जो निश्चय मोहिं ॥
यह पदवी मोकूं मिली, इसी ध्यान परताप ।
जीवन मुक्ताही रहूं, छुटै आप अरु थाप ॥
निश्चल हो या ध्यानकूं, करै जो कोई और ।
जगत छुटै आपामिटै, पावै निरभय ठौर ॥
आनन्दहि आनन्द जहाँ, अवधिन काल कलेश ।
चरणदास या ध्यानसों, पावै ऐसा देश ॥
बहुलोकन में जन्मधरि, पाप मिटा नहिं भूर ।
चरणदास इस ध्यानसों, सबै होत है दूर ॥
दूर करन दुख जगत के, आन उपाव न होय ।
योगी कूं या ध्यानसम, और वस्तु नहिं कोय ॥
उपनिषदा चौथी यही, भई समापत येह ।
चरणदास कहैं पांचवीं, हित चितदै सुनिलेह ॥

इति योगशिखा चौथी सम्पूर्णम् ॥

अथ तेजविन्दउपनिषद्पांचवीं प्रारम्भः ॥

दो० उपनिषदा जो पांचवीं, वेद अथर्वण माहिं ।
तेजविन्द जिहि नाम है, समझ मुक्ति होजाहिं ॥

अष्टपदी ॥

तेजविन्दके अर्थ यही हिय गूंध है ।

बड़े ध्यानके तेजहि की यह बूंद है ॥
उसका है यह ध्यान जो सबसे ऊंच है ।
सबसूं पर निहरूप शुद्ध अरु शूच है ॥
हिरदयहीं के मध्य और सूक्ष्म महा ।
अरु केवल आनन्द किन्हीं ज्ञानी लहा ॥
अनंतशक्ति जिहिमाहिं निराअस्थूल है ।
बहुत पिण्ड ब्रह्मांड सबनका मूल है ॥
बड़ा विना परमान गहा नहिं जात है ।
वाकि तपस्या ध्यान कउन जु दिखात है ॥
वाका देखन दुलभ सुलभ नहिं जानना ।
वह तो समुद अथाह कछू परमान ना ॥
ज्ञानी पण्डित और सबै बुद्धिवानहीं ।
पावैं आदि न अन्त और मध्यानहीं ॥
कै बांधे ब्रह्मव्रत करै के ध्यानहीं ।
वाही के हो रूप पावै तब जानहीं ॥

दो० जीतै पहिल अहारही, दूजे और किरोध ।
बहु मनुषों का संग तजि, छांड़े प्रीति विरोध ॥

अष्टपदी ॥

परबल इन्द्री जान सबनकूं वश करै ।
शीत उष्ण दुख सुख स्तुति निन्दा हरै ॥
छोड़े ही अहंकार वासना आसही ।
अपने कारण वस्तु रखै नहिं पासही ॥
पूरी राखै पैज धारणा धारिकै ।
गुरुआज्ञा गुरु सेव करै जु विचारिकै ॥
सकल मनोरथ कामना कूं करै क्षीनहीं ।

ऐसे जिज्ञासूकूं चाहिये द्वारे तीनहीं ॥
एक जो द्वारा त्याग दुजा जो उपावही ।
तीजा गुरु की निश्चय ऐस सुभावही ॥
इन द्वारों में राह जु आगे की खुले ।
लुटै थकै वह नाहिं सुखालाही चलै ॥
जीवातम जो हंस कहावत है यही ।
याके हैं स्थान जो तीनोंहों सही ॥
जाग्रत स्वपन सुषोपत परगट जानिये ।
तुरिया निज अस्थान गुप्त पहिंचानिये ॥
दो० इन तीनों से बड़ा है, तुरिया कूं नितजान ।
चरणदास पोषण[1] जगत, वाके ना अस्थान ॥

अष्टपदी ॥

जैसे भूत अकाश यों व्यापक ह्वै रहो ।
सब इन्द्रिन के माहिं जो सूक्षम जो रहो ॥
वाकी सत्तासेती चेतनहीं रही ।
वही बड़ापद जान विष्णु का है सही ॥
वाके नेत्र हैं तीन जो तीनों वेदही ।
अरु वाके गुण[2] तीन जो किया न खेदही ॥
है सबका आधार[3] त्रिलोकी धारई ।
आप रहै निरधार[4] जो अपरमपारई ॥
है निहरूप अडोल अखंड अगाधही ।
है तौ निस्सन्देह पहुँचे न उपाधही ॥
करि न सकै परवेश वरण गुण रूपही ।

---

१ पालन करनेवाला २ सत रज तम ३ धारण कियाजाय ४ जो न धारण कियाजाय ॥

अरु सब गुण वा माहिं जु अधिक अनूपही ॥
पावै केवल[1] ज्ञानसुं आप में आपही ।
बावन अक्षर माहिं नाम नहिं थापही ॥
वह तौ निर आनन्द काहु से है नहीं ।
कठिन परापत होय सुलभ देखै नहीं ॥
दो० वह उपजै विनशै नहीं, अज[2] अविनाशीसोय ।
विन इच्छा थिरही रहै, चरणदास नित जोय ॥

अष्टपदी ॥

वह सबही को विराट पिण्ड अरु जीव है ।
नाना कौतुक होयं अन्त वहि सीव है ॥
ज्ञान से जुदा न जान निरा वह ज्ञान है ।
वही महा आकाश नहीं परमान है ॥
सबमाहीं परवेश जो आतम सत्त है ।
आपमें पूरण आप परमही तत्त है ॥
अज्ञानी जानै झूंठ झूंठ पहुंचै नहीं ।
वह तौ सदा नित जान कभी विनशै नहीं ॥
वाकूं कहा नहिं जाय जाप जापक कभी ।
अरु सारे हैं जाप उसी माहीं सभी ॥
और जपाभीगया जाप जापक वही ।
सबकुछ उसकूं जान गुप्त[3] परगट सही ॥
वह निर्गुण निर्लिप्त कोई गुण नाहिंनै ।
परसूं पर तापरै जानिले वाहनै ॥
वासूं पर नहिं और विचारा जायना ।
कहैं चरणहींदास कछू वा माहिंना ॥

---

१ सूक्ष्म २ जो पैदा न हो ३ छिपाहुआ ॥

दो० वाकूं जाग्रत है नहीं, वाकूं स्वप्न न कोय ।
सोवन स्वप्ना है नहीं, जाग्रत कैसे होय ॥

अष्टपदी ॥

दुओं से न्यारा जान जाग्रत अरु स्वप्नसूं ।
ऐसा कोई नाहिं न जानै सत्तहूं ॥
सबका जानत मूल जु ज्ञानी लोयही ।
दीरघ अरु परकाशी जानै सबको यही ॥
जाकूं लोभ न होय अविद्या[1] होयना ।
भै अभिमान कुकर्म वासना कोयना ॥
गरमी जाड़ा भूख प्यास व्यापै नहीं ।
पइये क्रोध न मोह नेक वामें कहीं ॥
वाहन इच्छा होय न पूरी चाहहीं ।
कुल विद्या अभिमान न उनके माहिहीं ॥
मान नहीं अपमान न मन में लावई ।
सबसूं होय निवृत्त ब्रह्मकूं पावई ॥
तेजविन्द उपनिषद् संपूरणही भई ।
गुरु शुकदेव के दास चरणदासा कही ॥
ताहि सुनै मनराखि विचाराही करै ।
निश्चय होवै मुक्त जगत में ना परै ॥

दो० कही गुरू शुकदेव ने, मेरी कछू न बुद्धि ।
पढ़ो नहीं मूरख महा, मोकूं नेक न शुद्धि ॥
मेरे हिरदय के बिषे, भवन[2] कियो गुरु आय ।
वई विराजत हैं सदा, मेरी देह दिखाय ॥
जबसूं गुरु किरपाकरी, दर्शन दीन्हों मोय ।

---

१ माया २ घर ॥

रोम रोम में वे रमे, चरणदास नहिं कोय ॥
जातिवरणकुलमनगया,गया देह अभिमान ।
अपने मुखसों कह कहौं, जगही करै बखान ॥
रहे गुरू शुकदेवजी, मैं मैं गई नशाय ।
मैं तैं तैं मैं वही है, नखशिखरहो समाय ॥

इति श्रीचरणदासकृतपंचोपनिषद्संपूर्णम् ॥

अथ चरणदासजीकृत भक्तिपदार्थ प्रारम्भः ॥

दो० प्रणवों श्रीमुनि व्यासजी, मम हिरदय में आय ।
भक्तिपदारथ कहत हूं, तुमहीं करो सहाय ॥
प्रेम पगावन ज्ञान दे, योग जितावन हार ।
चरणदास की बीनती, सुनियो बारंबार ॥
तुम दाता हम माँगता, श्रीशुकदेव दयाल ।
भक्ति दई व्याधा गई, मेटे जग जंजाल ॥
किसू कामके थे नहीं, कोऊ न कौड़ी देह ।
गुरु शुकदेव कृपाकरी, भई अमोलक देह ॥
को है कोई न जानता, गिनती में नहिं नावँ ।
गुरु शुकदेव कृपाकरी, पूजन लागे पावँ ॥
सीधी पलक न देखते, छूते नाहीं छाहिं ।
गुरु शुकदेव कृपा करी, चरणोदक लेजाहिं ॥
दूसरे के बालकहुते, भक्ति विना कंगाल ।

---

१ उपद्रव ॥

गुरु शुकदेव दयाकरी, हरिधन किये निहाल ॥
जा धन कूं ठग ना लगै, धारी सकै न लूट ।
चोर चुरायसकै नहीं, गाँठ गिरै नहिं खूट ॥
बलिहारी गुरु आपने, तन मन सदकै जावँ ।
जीव ब्रह्म क्षणमें कियो, पाई भूली ठांवँ ॥
हरिसेवा सोलह बरस, गुरुसेवा पल चार ।
तौभी नहीं बरावरी, वेदन कियो विचार ॥

गुरुकी सेवा साधू जानै । गुरु सेवा कहा मूढ़ पिछानै ॥
गुरु सेवा सबहुन पर भारी । समझ करो सोई नर नारी ॥
गुरु सेवा सों विघन विनाशै । दुरमति भाजै पातक नाशै ॥
गुरु सेवा चौरासी छूटै । आवागमन का डोरा टूटै ॥
गुरु सेवा यमदण्ड न लागै । ममता मरे भक्ति में जागै ॥
गुरु सेवासूं प्रेम प्रकाशै । उनमत होय मिटै जग आशै ॥
गुरु सेवा परमातम दरशै । त्रैगुण तजि चौथापद परशै ॥
श्रीशुकदेव बतायो भेवा । चरणदास कर गुरुकी सेवा ॥

दो० गुरु सेवा जानैं नहीं, पाँय न पूजै धाय ।
योगदान जप तप कियों, सभी अफल हो जाय ॥

योगदान जप तीरथ न्हाना । गुरु सेवा बिन निरफल जाना ॥
गुरु सेवा बिन बहु पछितैहो । फिर फिर यम के द्वारे जैहो ॥
गुरु सेवा बिन अतिदुख पैहो । जग में पशु दारिद्री ह्वैहो ॥
गुरु सेवा बिन कौन उतारै । भवसागर सूं बाहर डारै ॥
गुरु सेवा बिन जड़ कहा करिहो । काकी नाव बैठि करि तरिहो ॥
गुरु सेवा बिन कछु नहिं सरि है । महाअंध कूप में परि है ॥
गुरु सेवा बिन घट अँधियारा । कैसे प्रकटै ज्ञान उजियारा ॥
नरक निवारण गुरु शुकदेवा । चरणदास करि तिनकी सेवा ॥

दो० इन्द्रीजित निरवैरता, निरमोही निरबन्ध ।
ऐसे गुरु की शरणसूं, मिटै सकल दुखद्वन्द ॥

राग द्वेष दोनों से न्यारे । ऐसे गुरू शिष्य कूं तारे ॥
आशा तृष्णा कुबुधि जलाई । तन मन वचन सबन सुखदाई ॥
निरालम्ब निर्भरम उदासी । निरविकार जानौ निरवासी ॥
निरमोहत निरवन्ध निशंका । सावधान निरवाण अशंका ॥
सारग्रही और सर्वंगी । संतोषी ज्ञानी सतसंगी ॥
अयाचीक जत निर अभिमानी । पक्ष रहत स्थिर शुध बानी ॥
निहतरंग नाहीं परपंचा । निहकरम निरलिप्त जो संचा ॥
शीतल तासु मती शुकदेवा । चरणदास कियो सो गुरुदेवा ॥

दो० सतवादी अरु शीलवत, सुहृदै अरु योगीश ।
निहचल ध्यान समाधि में, सो गुरु विस्वेबीश ॥
भरम निवारण भय हरण, दूरकरन सन्देह ।
गुठिया खोलै ज्ञानकी, सो सतगुरु करलेह ॥
सतगुरु के लक्षण कहे, ताकूं ले पहिंचान ।
निरखपरख करदीजिये, तनमन धन अरु प्रान ॥
ऐसा सतगुरु कीजिये, जीवत डारै मारि ।
जनम जनम की वासना, ताकूं देवै जारि ॥
सतगुरु के ढिग जाइकै, सन्मुख खावै चोट ।
चकमक लग पथरीझरै, सकल जरावै खोट ॥
सतगुरु मेरा शूरमा, करै शब्द की चोट ।
मारै गोला प्रेम का, ढहै भरम का कोट ॥
मुखसेती बोलन थका, सुननें थका जू कान ।
पावनसूं फिरबा थका, सतगुरु मारा बान ॥

---

१ यन्त्रुता ॥

मैं मिरगा गुरुपारधी, शब्दलगायो बाण।
चरणदास घायल गिरे, तन मन बींधे प्राण॥
शब्दबाण मोहिं मारियो, लगी कलेजे माहिं।
मार हंसे शुकदेवजी, बाकी छोड़ी नाहिं॥
सतगुरु शब्दी तेग है, लागत दो करदेहि।
पीठि फेरि कायर भजै, शूरा सन्मुख लेहि॥
सतगुरु शब्दी सेल[1] (धर्मों का साध।
कायर ऊपर जो चलै, तौ जावै बरबाद॥
सतगुरु शब्दी तीर है, तन मन कीयो छेद।
बेदरदी समझै नहीं, विरही पावै भेद॥
सतगुरु शब्दी लागिया, नावक का सा तीर।
कसकत है निकसत नहीं, होत प्रेमकी पीर॥
सतगुरु शब्दी बाण है, अंगअंग डालातोड़।
प्रेम खेत घायल गिरे, टांका लगै न जोड़॥
सतगुरु शब्दी मारिया, पूरा आया वार।
प्रेमी जूझे खेत में, लगा न राखा तार॥
ऐसी मारी खैंचकर, लगी वार गइ पार।
जिनका आपा ना रहा, भयेरूप ततसार॥
सतगुरु के मारे मुये, बहुरि न उपजै आय।
चौरासी बन्धन छुटे, हरिपद पहुँचे जाय॥
सतगुरु के वचनों मुये, धन्यजिन्हों के भाग।
त्रैगुणते ऊपर गये, जहाँ दोष नहिं राग[2]॥
वचन लगा गुरुदेवका, छुटे राजके साज।
हीरा मोती नारि सुत, गज घोड़ाअरु बाज॥

---

१ हथियार का नाम है २ प्रेम॥

वचन लगा गुरु ज्ञानका, रूखे लागे भोग ।
इन्द्र पदवी लौ उन्हैं, चरणदास सब रोग ॥
सतगुरु ढूंढ़ा पाइये, नहीं सुहेला होय ।
शिष्य भी पूरा कोइहै, सानी माटी जोय ॥
जाति बरन कुल आश्रम, मान बड़ाई खोय ।
जब सतगुरु के पग लगैं, सांच शिष्य है सोय ॥

गुरु के आगे राखै माथा । कहै पाप ताप दुख मेटों नाथा ॥
मैं आधीन तुम्हारों दासा । देहु आपने चरणन वासा ॥
यह तन मन ले भेंट चढ़ायो । अपनी इच्छा कुछ न रहायो ॥
जो चाहो सों तुमहीं करो । या भाँड़े में जो कुछ भरो ॥
भावै धूप छांह में डारो । भावै डोबो भावै तारो ॥
गुण पौरुष कुछ बुधि नहि मेरी । सबविधि सरणगहीं प्रभु तेरी ॥
मैं चकई अरु तुम किये डोरा । मैं जो फिरूं सब तुम्हरे जोरा ॥
म आ बैठा नाव तुम्हारी । आशा नदी सुं करिये पारी ॥
भ्रमरजाल जग सूं मोहिं काढ़ों । हाथ जोरि चरणदासा ठाढ़ो ॥

दो० गुरु के आगे जाय करि, ऐसे बोलै बोल ।
कछूकपट राखै नहीं, अर्ज करै मन खोल ॥
यह आपा तुमकूं दिया, जितजानों तितराख ।
चरणदास द्वारे परों, भावैं झिड़को लाख ।

ऋद्धि सिद्धिफल कछू न चाऊं । जगत कामना कूं नहिं लाऊं ॥
और कामना मैं नहिं राखूं । रसना[1] नाम तुम्हारो भाखूं ॥
राज भोग का मोहिं न सांसा । इन्द्र पदवी लौ नहिं आसा ॥
चौरासी में बहु दुख पायो । ताते शरण तिहारी आयो ॥
मुक्त होन की मन में आवै । आवागमन सों जीव डरावै ॥

---

१ जिह्वा ॥

रामभक्ति की चाह हमारे। याते पकड़े चरण तुम्हारे॥
प्रेम प्रीति में हिरदा भीजै। यही दान दाता मोहिं दीजै॥
अपना कीजै गहिये बाहीं। धरिये शिरपर हाथ गुसांई॥
चरणदास को लेहु उबारे। मैं अंडा तुम सेवनहारे॥

दो० अंडा ज्यों आगे गिरै, जब गुरु लेव सेइ।
करै बराबर आपनी, शिष्य को निस्सन्देह॥
अपना करि सेवन करै, तीनि भांति गुरुदेव।
पंजा पक्षी कुंजमन, कछुवा दृष्टि जु भेव॥
जो वे बिसरैं घड़ी भी, तौ गंदा होइ जाय।
चरणदास यों कहत है, गुरु को राखि रिझाय॥
पितु सों माता सौ गुना, सुत को राखै प्यार।
मनसेती सेवन कर, तन सों डाटरुगार॥
जो देवैं दुरशीश भी, होहो लगै अशीश।
सेवन करि समरथ कियो, उनपर वारौं शीश॥
माता सों हर सौगुना, जिन से सौ गुरुदेव।
प्यार करैं औगुण हरैं, चरणदास शुकदेव॥
काचे भांड़े सों रहै, ज्यों कुम्हार को नेह।
भीतर सों रक्षा करै, बाहर चोटैं देह॥
दृष्टि पड़ै गुरुदेव की, देखत करैं निहाल।
औरे गति पलटैं जबै, कागा होत मराल॥
दया होय गुरुदेव की, भजै मान अरु मैन[1]।
भोग वासना सब छुटै, पावै अतिही चैन॥
जबसतगुरु किरपा करैं, खोलि दिखावैं नैन।
जग झूठा दीखन लगै, देह परे की सैन॥

---

१ कामदेव॥

अष्टपदी ॥

गुरु बिन और न जान मान मेरो कहो।
चरणदास उपदेश बिचारतही रहो॥
वेदरूप गुरु होय कि कथा सुनावई।
पण्डित को धरिरूप कि अरथ बतावई॥
गुरु हो शेश महेश तोहिं चेतन करै।
गुरु ब्रह्मा गुरु विष्णु होय खाली भरै॥
कल्पवृक्ष गुरु देव मनोरथ सब सरै।
कामधेनु गुरुहोय क्षुधा तृष्णा हरै॥
गंगासम गुरु होय पाप सब धोवई।
शशियर सम गुरू होय तपन सब खोवई॥
सूरजसम गुरु होय तिमिर सब लेवई।
पारब्रह्म गुरु होय मुक्ति पद देवई॥
गुरुही को करि ध्यान नाम गुरु को जपौ।
आपा दीजे भेंट पूजन गुरुही थपौ॥
समरथ श्रीशुकदेव कहा महिमा करौं।
अस्तुति कही न जाय शीश चरणन धरौं॥

दो० हरि रूठैं कुछ डर नहीं, तूभी दे छुटकाय।
गुरु को राखौ शीशपर, सबविधि करैं सहाय॥

अष्टपदी ॥

गुरुकोतजि हरि सेव कभी नहिं कीजिये।
वे मुख को नहिं ठौर नरक में दीजिये॥
गुरुनिंदक नहिं मुक्त गर्भ फिरि आवई।
चौरासी लख भुक्ति महा दुख पावई॥

१ सिखावना २ भूख ३ अंधकार॥

प्रथम करै गुरु देख परखि चरणौं परै ।
उनकी धारण ध्यान टेक उर में धरै ॥
गुरु को रामहिं जान कृष्ण सम जानिये ।
गुरु नृसिंह अवतार जु बामन मानिये ॥
गुरु कोपूरण जान जु ईश्वर रूपही ।
सब कुछ गुरुको जान ये बात अनूपही ॥
हरि गुरु एकहा जानयह निहचै लाइये ।
दुबिधाही को बोझ जु वेग वगाइये ॥
धर्म्म पिता गुरुजान जु दृढ़ता राखिये ।
लाज़ सकुच करि कान ढीठता नाखिये ॥
मेरा यह उपदेस हिये में धारियो ।
गुरु चरणन मनराखि सेवातन गारियो ॥
जो गुरु झिरकै लाख तौ मुख नहिं मोड़ियो ।
गुरुसों नेह लगाय सबन सों तोड़ियो ॥
जो शिष सांचा होय तो आपा दीजियो ।
चरणदास की सीख समझकर लीजियो ॥
मोको श्रीशुकदेव यही समझाइया ।
वेद पुराणन माहिं जुयोहीं गाइया ॥

दो० गुरु अस्तुति कहकहिसकै, चरणदास कहाबुद्धि ।
भक्तौं की अब कहत हौं, जो वै देवैं शुद्धि ॥
भक्तनकी अस्तुति किये, तन मन हियो सिराय ।
कलिका मैल रहै नहीं, बुधि उज्ज्वल ह्वैजाय ॥
साधों की सेवाकरो, चरणदास चित लाय ।
जनम मरण बंधन कटैं, जगतब्याधि छुटिजाय ॥

---

१ दुःख ॥

जो भक्तों की सेवा करै। यमके कंधे नाहीं परै॥
जिन साधौं का दरशन देखा। ताका यमसों रहा न लेखा॥
जो भक्तनको शीश नवावै। तन छूटै जब दुख नहिं पावै॥
जो कोइ साथ संगमें रलै। जठर[1] अग्नि में नाहीं जलै॥
जो साधौंकी अस्तुति भाखै। पाव भक्ति प्रेमरस चाखै॥
जो भक्तों सो प्रीति लगावै। वह हरिको निश्चय अपनावै॥
जो भक्तों की वाणी गावै। समझै अर्थ परमपद पावै॥
साधुसंगतबिन गति नहिं होनी। क्या तपसी अरु क्या भया मौनी॥
चरणदास भक्तोंकी शरना। ह्वाई जीवन ह्वाईं मरना॥

दो० भक्तिवान निर्मल दशा, संतोषी निर्वास।
मनराखै नवधा बिषे, और न दूजी आस॥

दयावान दाता गुण पूरे। पैज धारणा बचनौं शूरे॥
मुक्त कामना फल नहिं चाहैं। रिद्ध सिद्ध अरु त्यागै लाहैं॥
हानि लाभ जिनके नहिं टोंटा। वैरी मित्र खरा नहिं खोंटा॥
मान अपमान कछू नहिं तिनके। दुख सुख एक बराबर जिनके॥
शुभअरु अशुभ कछू नहिं जानैं। राव रंक को ना पहिंचानैं॥
कंचन कांच बराबर देखैं। जग ब्योहार कछू नहिं लेखैं॥
हार जीत नहिं वाद विवादा। सदा पवित्र समझ अगाधा[2]॥
हरष शोक जिनके नहिं कबहीं। लख चौरासी प्यारे सबहीं॥
हिंसा[3] अकस भाव नहिं दूजा। सब जीवनकी राखै पूजा॥
चरणदास शुकदेव बतावै। ऐसे लच्छण साधु कहावै॥

दो० भक्तों की पदवी बड़ी, इन्द्रहुसे अधिकाय।
तीन लोकके सुख तजे, लीन्हें हरि अपनाय॥
अनन्यभक्त[4] निहकाम जो, करै सोइ चरणदास।

---

१ गर्भ २ जिसकी थाह न मिलै ३ वैरभाव ४ जो दूसरेका भक्त न हो॥

चार मुक्ति[1] वैकुण्ठ लौ, सबसे रहै निरास ॥
प्रभु अपने मुख से कहो, साधू मेरी देह ।
उनके चरणन की मुझे, प्यारी लागै खेह ॥
आठ सिद्धि वै लें नहीं, कनक कामिनी नाहिं ।
मेरे सँग लागे रहैं, कभी न छोड़ैं बाहिं ॥
सब तजि कर मौं को भजै, मोहीं सेती प्रीति ।
मैं भी उनके कर बिक्यो, यही जु मेरी रीति ॥
साधु हमारी आतमा, सबसे प्यारे मोंहि ।
नारद निश्चय कीजिये, सांच कहत हौं तोहिं ॥
जिनके कारण मैं रचौं, अद्भुत यह संसार ।
उनहीं की इच्छा धरूं, हर युग में अवतार ॥
प्रेमी को ऋणियां रहौं, यही हमारो सूल[2] ।
चारि मुक्ति दई ब्याज में, दे न सकौं अब मूल ॥
सर्वस दीन्हों भक्त को, देख हमारो नेह ।
निर्गुण सों सगुण भयो, धरी पशूकी देह ॥
मेरे जन मोमें रहें, मैं भक्तन के माहिं ।
मेरे अरु मेरे सन्तके, कछु भी अन्तर नाहिं ॥
साध सोवै तहाँ सोयरहुं, भोजन सँगही जेवँ ।
जो वह गावै प्रेम सों, मैंहूँ ताली देवँ ॥
मम भक्ता जित जित फिरें, गवनें लागाजावँ ।
जहां तहां रक्षा करौं, भक्तवछल मेरो नावँ ॥
भक्त हमारो पग धरै, जहां धरूं मैं हाथ ।
लारे लागोही फिरौं, कबहुँ न छोड़ूं साथ ॥
मोको वश कियो जो चहै, भक्तन की करि सेव ।

---

१ सारूप्य, सालोक्य, सामीप्य, सायुज्य २ प्रण ॥

उनमें ह्वै कर मैं मिलौं, करौं बहुतही हेव[1] ॥
पृथ्वी पावन होत है, सबही तीरथ आदि ।
चरणदास हरि यों कहैं, चरण धरैं जब साध ॥
जिनकी महिमा प्रभुकरैं, अपने मुख सों भाखि ।
तिनकी कौन बराबरी, वेद भरत हैं साखि[2] ॥
जिनकी आशा करत हैं, स्वर्ग माहिं सब देव ।
कबहूँ दरशन पाय हैं, चरण कमल की सेव ॥
अपने अपने लोक में, सभी करैं उत्साह ।
साधूकाया छोड़ करि, गगन करै किस राह ॥
धनि नगरी धनि देश है, धनि पुर पट्टन[3] गाँव ।
जहाँ साधूजन उपजियो, ताके बलि बलि जावँ ॥
भगत जुआवैं जगत में, परमारथ के हेत ।
आप तरैं तारैं परा, मंडैं भजन के खेत ॥
भवसागरसों तारि करि, लै जावैं बहु जीव ।
साधू केवट[4] राम के, पार मिलावैं पीव ॥
काम क्रोध मोह लोभहनि, गर्भ तजै जो साध ।
राम नाम हिरदै धरै, रोम रोम औराध ॥
साधू महिमा को कहै, शोभा अधिक अपार ।
रसना[5] दोय हजार सों, शेषहु जावैं हार ॥
अनन्य भक्ति करि प्रेमसों, जीति लिये गोविन्द ।
चरणदास हो वश किये, पूरण परमानन्द ॥
तप के बरष हजारहू, सतसंगत घड़ि एक ।
तौभी सरिवर ना करै, शुकदेव किया विवेक ॥
सतसंगति महिमा बड़भाई । स्मृति वेदपुराणन गाई ।

१ स्नेह २ गवाही ३ शहर ४ नाव खेनेवाला मल्लाह ५ जीभ ॥

मुनि वशिष्ठ कहो यही भेवा । साधु संग को तरसै देवा ॥
साधु संगको नारद जानै । सो वह पिछलो जन्म पिछानै ॥
देखी संगति की अधिकाई । बालमीकि अरु शबरी गाई ॥
अजामील सतसंगति परिया । अनगिनपाप कियेसब जरिया ॥
सतसंगति बहु पतित[1] उधारे । अधम सरीखे मुक्ति पधारे ॥
जात जुलाहा अरु रैदासा[2] । संगति साधु हुआ परकासा ॥
साधों की संगति मुकताई । चरणदास शुकदेव बताई ॥

दो० जब जब दरशन राम दें, तब मांगौं सतसंग ।
चाहौं पदवी भक्तकी, चढ़ै सुनवधा रंग ॥

कूवा सदना सैना नाई । बहुतक नीच भये ऊँचयाई ॥
जैसे ठौर ठौर को पानी । सुरसरि मिलि भयो गंगारानी ॥
तैसे काठ लोह को तारै । ऐसे संगति मिलि भया पारै ॥
जैसे पारस लोहा लागा । सो वह कंचन भया सुभागा ॥
देवल तीरथ बहु मग धावे । साधुसंग बिन गति नहिं पावें ॥
ढाकापात[3] पान के साथा । संगति मिलि गयो भूपनहाथा ॥
त्यों गोविन्दसँग गाईकुबरी । सूवा के सँग गणिका उबरी ॥
हरि भगतन में दीजै बासा । जन्म जन्म मांगै चरणदासा ॥

दो० ऊंची पदवी साधुकी, महिमा कही न जाय ।
सुरनर मुनि जग भूपही, देखत रहे लजाय ॥

रागसारंग ॥

करौ नर हरिभक्तन को संग ।
दुख बिसरै सुख होय घनेहीतन मन पलटै अंग ॥
ह्वै निष्काम मिलौ संतन सों नाम पदारथ मंग ।
जिहिपाये सब पातक नाशैं उपजैं ज्ञान तरंग ॥

---

१ नीच २चमार ३ टेसू ॥

जो वै दया कर तेरे पर प्रेम पिलावैं भंग।
जाके अमल दरश है हरिको नैनन आवै रंग॥
उनके चरण शरणहीं लागो सेवा करो उमंग।
चरणदासतिनकेपगपरसन आश करत है गंग॥

दो० बिनहोनी हरि करिसकैं, होनी देहिं मिटाय।
चरणदास करु भक्तिही, आपा देहु उठाय॥

हरि चितवै सो सांची बाता। औरन सों नहिं टूटै पाता॥
जो कछु चाहा सो उन करई। अब चाहै सोभी सब सरई॥
अग्नि माहिं तृण घास बचावै। घटमें सगरो सिंधु समावै॥
पावक राखै पानी माहीं। जल राखै जहँ धरती नाहीं॥
गिरिवर सागर माहिं तरावै। चाहै हलका काठ डुबावै॥
सुई के नाके हस्ती काढ़ै। मूल[1] पात बिन लकड़ी बाढ़ै॥
नरकी छाती दूध निकासै। उपजावै वह खेत अकासै॥
चाहै गूंगे वेद पढ़ावै। अँधरे आंखैं खोलि दिखावै॥
सब लायक सामर्थ गुसाईं। चरणदास शुकदेव बताई॥

दो० प्रभु चाहै सोई करै, ताकूं टोकै कौन।
देखि देखि अचरजरहा, चरणदास गहि मौन॥

महल पवनपर रचै मुरारी। अग्निके माहिं करै फुलवारी॥
चाहै बिन बादल बरसावै। बिन सूरज दिनकरि दिखलावै॥
खाली भरै भरे निघटावै। जो चाहै सोई प्रगटावै॥
पाथर पानी करै बहावैं। छिनमें सगरो सिंधु सुखावै॥
चाहै जलका थल करिडारै। राईकूं परबत करै भारै॥
रंकन[2] कूं करै छत्तर धारी। चाहै भूपन देह उजारी॥
जो चाहै सो आपहि करै। औरनके शिर झूठे धरै॥

---

१ जड़ २ दरिद्री॥

चरणदास शुकदेव जनावै । सांचे गुणावाद जो गावै ॥

दो० यह अस्तुति करतार की, जिन रचिया संसार ।
अद्भुत कौतुक[1] करि रह्यो, लीला अगम अपार ॥

उपजावै पालै विनशावै । अनगिन चन्द सूर दरशावै ॥
कोटिक अंड पलकमें करै । जब चाहे जब कुछना रहै ॥
जब फैले तब रूप अनेका । जब समिटै जब एकहि एका ॥
बटक बीज़ का खेल निहारा । एक बीजका सकल पसारा ॥
तामें बीज अनंतहि देखा । गिनूं कहांलौं रहा न लेखा ॥
ऐसे हरि आपा विस्तारा । कहत सुनत देखतहूँ हारा ॥
अपरमपार पार नहिं पाऊं । अस्तुति करता मैं सकुचाऊं ॥
समझिसमझि मनमें रहिजाऊं । चरणदास हो शीश नवाऊं ॥

दो० लीला सिन्धु अगाधगति, मोपै कही न जाय ।
चरणदास यों कहत है, शोचत गयो हिराय ॥

कोटिक ब्रह्मा अस्तुति करहीं । वेद कहत प्रभु परे परेहीं ॥
कोटिक शम्भू करैं समाधा । जानि परैं नहिं रूप अगाधा ॥
कोटिक नारद से यश गावैं । गुण अगाध[2] कछुअंत न पावैं ॥
कोटिक ध्यानी ध्यान लगावैं । हरिके सो कछु रूप न पावैं ॥
ज्ञानी कोटिक कथैं वह ज्ञाना । समझ थकी उनहूं नहिंजाना ॥
कोटिक शारद करैं बिचारा । बुद्धि थकी जब कहा अपारा ॥
सुरनरमुनि वा भेद न लहिया । शोचिशोचिबकिबकिथकिरहिया ॥
निरगुण सरगुण कहा न जावै । चरणदास शुकदेव सुनावै ॥

दो० चरणदास वा रूप की, पटतर[3] दई न जाहि ।
राम सरीखे राम हैं, और बतावों काहि ॥

वाकी अस्तुति कहा बखानूं । जैसा वह जैसा नहिं जानूं ॥

---

१ तमाशा २ जिसका थाह न हो ३ बराबरी ॥

बुधि विचार करिहारा ज्ञाना । अनभै थकी नाहिं पहिंचाना ॥
आदि न अंत मध्य नहिं जाका । दहिना बावां पीठ न आगा ॥
हरा पीत श्वेत नहिं काला । नारी पुरुष न बूढ़ा बाला ॥
रूप न रंग मिहीं नहिं मोटा । नया पुराना बड़ा न छोटा ॥
नाम रूप किरियासूं न्यारा । नहिं हलका नहिं कहिये भारा ॥
बानी चार परै निरबाना । काहूविधि वह जाय न जाना ॥
पुहुप गंध नादनतैं झीना । गुरु शुकदेव सुनाय जु दीना ॥

दो० कौन लखे को कहि सकै, अचरज अलख अभेव ।
ज्ञान ध्यान पहुँचै नहीं, निर्विकार निर्लेव ॥

सुनत अचम्भा मोकूं आया । जाके वचन रूप नहिं काया[1] ॥
निराकार[2] नहिं ना आकारा । नहिं अडोल नहिं डोलनहारा ॥
पांचतत्त्व तिरगुण ते आगे । अद्भुत अचरज ध्यान न लागे ॥
नहिं परगट नहिं गूपन ठाऊं । समझसकौंनहिंथकिथकिजाऊं ॥
जैसो आगे मैं कहि आयो । फिर समझौ वैसो नहिं पायो ॥
जो कुछ कहिया नाहीं नाहीं । सो सब देखा वाके माहीं ॥
सकल सर्वदा ह्वां पहिंचानी । चरणदास शुकदेव बखानी ॥

दो० वामें गुण अनगिनत हैं, अपरमपार अगाध ।
देखौ परगटही भये, रूप नाम अरु नाद ॥

वृक्ष बीज का नाम बताऊं । भिन्न भिन्न परगट दिखलाऊं ॥
जो कोइ निराबीज कूं बूझै । ताकूं वह निरगुणही सूझै ॥
जब समझै तब सब गुणमाहीं । तामें डाल[3] मूल[4] फल छाहीं ॥
ऐसे पूरणब्रह्म पिछानौ । निराकार निरगुण मत जानौ ॥
वै निरगुण सरगुण ते न्यारे । निरगुण सरगुण नाम विचारे ॥
अकथ कथा कछु कथिय न जाई । जो भाषूं सोई मुरखाई ॥

१ शरीर २ जिसका आकार नहीं ३ जड़ ४ जो कहने लायक न हो ॥

कोई कहो सुनो मन आनो । वैसा नहिं निश्चय करि जानो ॥
बड़बड़ ऋषि मुनि पण्डित भारे । चरणदास सब खोजत हारे ॥

दो० वहि निरगुण सरगुण वही, वहि दोनों से न्यार ।
जो था सो जाना नहीं, शोचा वारंवार ॥
अनंत शक्ति लीला अनंत, गुण अनंत बहुभाव ।
कौतुक रूप अनंत हैं, चरणदास बलिजाव ॥
नाम भेद किरिया अनंत, अनंत धरे अवतार ।
बीस चार तिनमें अधिक, कहै शुकदेव विचार ॥
राम कृष्ण पूरण कला, चौबीसो में दोय ।
निरगुण से सरगुण वही, भक्तौं कारण होय ॥

रागविलावल ॥

अलख[2] निरंजन अगम अपार ।

एक अनेक भेष बहु कीन्हे सुन्दर रचना रची सँवार ॥
निरगुण हरि सरगुण हो खेलौ अचरज लीला करि विस्तार
अपनो चरित आपही देखै ऐसो अद्भुत कौतुकधार ॥
रूप बराह पकरि हिरण्याक्षहि धरती लाये ताहि संहार ।
यज्ञपुरुष अरु दत्तात्रेयी अरु श्रीबद्रीपति हि विचार ॥
सनत्कुमार ऋषभदेव ध्रुव वर पृथू मच्छ कूर्म उदार ।
हयग्रीवा अरु हंसरूप ही महाबली नरसिंह बलधार ॥
हरि परगट ह्वै गजै छुटायौ बामन कपिल सरस गुणसार ।
मन्वन्तर धन्वतर प्रगटे परशुराम रामचन्द्र मुरार ॥
पूरण कला ईश तिहुंपुर को कृष्ण प्रगट हो कंस पछार ।
वेद्व्यास अरु बोध कलंकी ये भये सब चौबीस अवतार ॥
युग युग माहिं आप परगट ह्वै दुष्ट दलन सन्तन रखवार ।

---

२ जिसका अन्त नहीं २ जो देखि न परै ॥

चरणदास शुकदेव श्यामकी बाँकी गतिको वार न पार ॥
दो० एक एकसों आगरो, महिमा कही न जाय ।
अनंत रँगीले महल में, आपहि बैठे आय ॥
अनन्त रँगीले महल बनाये । तामें आप रामहीं आये ॥
नांव रूप गुण न्यारे न्यारे । गिनत शारदा गणपति हारे ॥
मन्दिर रूप बहुत छवि सोहै । जहां तहां मेरो मन मोहै ॥
हरे श्वेत पीत अरु लाले । पिसताकी ऊदे अरु काले ॥
बेलदार लहरा छवि बूटे । चीतमताले और तिखूटे ॥
बूंद बूंद अरु गंडे दारे । जानो चित्तर हाथ सँवारे ॥
रँगा रंग बहु चित्तरकारी । कहूं कहाँलों मों बुधिहारी ॥
दो पाये अरु पुनि चौपाये । बहु पाये कछु कहे न जाये ॥
वृक्षरूप अरु पक्षीनाना । कीट[1] पतंगा[2] थिर[3] चर[4] जाना ॥
जलमें मीन[5] बहुत परकारे । चरणदास शुकदेव विचारे ॥
दो० थावर जंगम चर अचर, बहुत छबीली भांति ॥
राजस तामससात्विकी, बहु अर्धान बहु क्रांति ॥
बानर नर असुरा सुरा, यक्षगण गन्धर्व प्रेत ।
सबही महल बराबरी, सबही सेती हेत ॥
खिरकी नैन चावसों खोलै । मुख द्वारे नाना विधि बोलै ॥
बहुत भांति की नाना बानो । चतुर कूड भोली अरु यानी[6] ॥
कहिं अबाल नहिं बोलन आवै । पै सब महलन वह दरशावै ॥
साचात हरिही कूं जानो । भवन भवनमें ताहि पिछानो ॥
काया चेतर ज्ञानी जानै । चेत्रग आतमरूप बखानै ॥
देही क्षर गीता में गायो । अक्षर जीव खोल दिखलायो ॥

---

१ किरवा २ पाखीं ३ न चलनेवाले ४ चलनेवाले ५ मछली ६ न जाननेवाली ॥

काया[1] मन्दिर आप रमायो। ताते राम नाम धरवायो॥
देह सँयोग राम कहलायो। चरणदास शुकदेव बतायो॥

दो० सूरज चींटी आदि दै, लघु दीरघ के माहिं।
सब में पोइ आतमा, बाहर कोई नाहिं॥
छोटे भांड़े में करै, छोटाही परकाश।
बड़े जु भाँड़े में करै, जेता होय उकाश॥
ज्ञानवन्त कूं मैं दियो, दीपक को दृष्टान्त।
जो वह समझ चावसूं, मिटैतिमिर[2] अरुभ्रान्त॥
जैसेही है पिण्ड में, जैसे ही ब्रह्मण्ड।
भीतर बाहर रमिरह्यो, सात द्वीप नव खण्ड॥

आप लखेते वाकूं पावै। जो पै सतगुरु भेद बतावै॥
ज्ञान दृष्टि सेतीं दरशावै। आपा मिटै ब्रह्म ठहरावै॥
ज्ञाता ज्ञान ज्ञेय जहँ नाहीं। ध्याता ध्यान ध्येय मिटि जाहीं॥
जबहो एक दूसरा नासे। बन्ध मुकत के रहैं न सांसे॥
मृतक अवस्था जीवत आवै। करम रहित अस्थिर गति पावै॥
तब कोइ मिन्तर वैरी नाहीं। पाप पुण्यकी परै न छाहीं॥
हरष शोक सम होजा दोऊ। रक्षाकरो कि मारो कोऊ॥
कोऊ हाथ में भोजन देजा। कोउ छीनकर योंहीं लेजा॥
दोनों एक बराबर वाके। जगव्योहार कछू नहिं जाके॥
हरि बिन और पिछान न कोई। तिनके इच्छा रही न दोई॥
ज्ञान दशा ऐसे करि गाई। चरणदास शुकदेव बताई॥

दो० ज्ञानदशा आवन कठिन, बिरला जानै कोय।
ज्ञान दशा जब जानिये, जीवत मृत्यक होय॥

वाचक[3] ज्ञानी बहुतक देखे। लक्षं[4] ज्ञानी कोइ लेखे लेखे॥

---

१ वर्त्तनरूपी शरीर २ अँधेरा ३ कहनेवाले ४ हृदयान्तर से देखनेवाले॥

ज्ञानी बिगड़ै विषयी होई। कथै एक अरु चालै दोई॥
बुरे करम औगुण चितलावै। भले करम गुण सब बिसरावै॥
विषय वासना के रँगरातो। झूंठ कपटछलबल मदमातो॥
इन्द्री वश मन हाथ न आवै। पाप करन सों नाहिं डरावै॥
ज्ञानकथै अरु वाद बढ़ावै। रहन गहन का भेद न पावै॥
ब्रह्मज्ञान का आवन भारी। चरणदास शुकदेव बिचारी॥

दो० उनतीसौ लक्षण लिये, भक्त सहत हो ज्ञान।
ज्ञान दशा जब आय है, करै आतमा ध्यान॥
भक्तदशा अब कहत हौं, बिसरै आपा आप।
चरणदास यों कहत हैं, छूटैं तीनों ताप[1]॥

अष्टपदी॥

नवधा भक्ति सँभारि अंग नौ जानिले।
शरवंण चितवन और कीर्त्तन मानिले॥
सुमिरण बन्दन ध्यान और पूजा करो।
प्रभुसों प्रीति लगाय सुरति चरणन धरो॥
होकरि दासहि भाव साध संगति रलो।
भक्तन की कर सेव यही मत है भलो॥
आपा अर्पण देय धीर्य्य दृढ़ता गहौ।
क्षमा शील सन्तोष दया धारे रहौ॥
यह जो मैंने कहा वेद का फूल है।
योग ज्ञान वैराग्य सबन का मूल है॥
प्रेम भक्ति का तात पात तीनों नसैं।
अर्थ धर्म काम मोक्षसकल तामें वसैं॥
जो राखै मन माहिं विवेक विचारसों।

१ दैहिक दैविक भौतिक॥

पावै पद निर्वाण बचै जग भारसों ॥
कहैं गुरू शुकदेव मयाके भाव सों।
चरणहिं दासा होय सुनौ बहु चाव सों ॥

राग सोरठ व गौरी व आसावरी ॥

साधो नवधा भक्ति करौ रे।
कलियुग में यह बड़ो पदारथ गहिगहि ताहि तरौरे
जेजे यासों भये शिरोमणि तिन को नाम सुनाऊं।
बढ़ै कथा विस्तार कहूं तो याते सूक्षम गाऊं ॥
जन प्रहलाद तरो सुमिरण ते बन्दनसों अक्रूर।
चरण कमल की सेवा सेती लक्ष्मी रहत हजूर ॥
चन्दन चर्चतहूं पृथुराजा उतरो भव जलपारा।
बलि राजा तन अर्पण कीन्हों सदा रहैं हरि द्वारा ॥
परमदास हनुमतहू उबरो उत्तम पदवी पाई।
सखा सुभाव तरो है अर्जुन ताकी महिमा गाई ॥
मुक्त भयो है परीक्षित राजा सुनि भागोत पुराना।
श्रीशुकदेव मुनी से वक्ता हुये रूप भगवाना ॥
ज्ञान योग वैराग्य सबन सों प्रेम प्रीति है न्यारी।
चरणदास ने गुरु किरपा सों सांची बात बिचारी ॥

दो० नवो अङ्ग के साधते, उपजै प्रेम अनूप।
रणजीता यों जानिये, सब धर्मन का भूप ॥

सब मत अधिकी प्रेम बतावैं। योग युगत सूं बड़ा दिखावैं॥
प्रेमहिंसूं उपजै वैराग। प्रेमहिंसूं उपजै त्याग ॥
प्रेम भक्तिसूं उपजै ज्ञाना। होय चांदना मिटै अज्ञाना ॥
दुरलभ प्रेम जु हाथ न आवै। हरि किरपा करिदें तौ पावै ॥
प्रेम प्रीतिके वश भगवाना। सकल शास्तर कियो बखाना॥

किसी भक्त हिये प्रेमजु जागे । तौ हरि दरशत रहे जु आगे ॥
प्रेमहिंसूं जग कूं उपजावै । निरगुन सरगुन हो हो आवै ॥
सकल शिरोमणि प्रेमहि जानौ । चरणदास निहचै मन आनौ ॥

दो० प्रेम बरांबर योग ना, प्रेम बराबर ज्ञान ।
प्रेम भक्तिविन साधुवा, सबही थोथा ध्यान ॥
प्रेम छुटावै जगतकूं, प्रेम मिलावै राम ।
प्रेम करै गति औरही, लै पहुँचै हरिधाम ॥

अष्टपदी ॥

वह करै काग सूं हंसा । एकरहै पिया का संसा ॥
वह जात वरन कुल खोवै । अरु बीज बिरह का बोवै ॥
जों प्रेम तनक चित आवै । वह औगुण सबै नशावै ॥
प्रेमलता जब लहरै । मन विना योगहीं ठहरै ॥
कोई चतुर खिलारी खेलै । वह प्रेम पियाला झेलै ॥
जो धड़ पै शीश न राखै । सोई प्रेम पियाला चाखै ॥
तन मन सूं जा बौराई । वह रहै ध्यान लौलाई ॥
वह पहुँचै हरिके पासा । यों कहैं चरण ही दासा ॥

दो० प्रेमीजन हरि आपहो, आपा निकसै नाहिं ।
गुरु शुकदेव दिखावई, समझ देखि मनमाहिं ॥
हिरदे माहीं प्रेम जो, नैनौं झलकै आय ।
सोइ छका हरिरस पगा, वा पग परसो धाय ॥
गदगद वाणी कंठमें, आंसू टपकैं नैन ।
वहतौ बिरहिनि रामकी, तलफत है दिनरैन ॥
हाय हाय करि कब मिलैं, छाती फाटी जाय ।
ऐसा दिन कब होयगा, दरशन करैं अघाय ॥
विन दरशन कल ना पड़ै, मनुआँ धरै न धीर ।

चरणदासकी श्याम बिन, कौन मिटावै पीर ॥
पींवविना ना जीवना, जगमें भारी जान ।
पिया मिलै तौ जीवना, नहीं तो छूटै प्रान ॥
मुख पियरो सूखै अधर, आखैं खरी उदास ।
आहिज्ञु निकसै दुख भरी, गहिरे लेत उसास ॥
वह बिरहिनि बौरी भई, जानत ना कोइ भेद ।
अगिनि बरै हियरा जर, भये कलेजे छेद ॥
अपने वश वह ना रही, फँसी बिरह के जाल ।
चरणदास रोवत रहै, सुमिरिसुमिरि गुणख्याल ॥
बातन को बिरहा लगो, ज्यों घुन लागो दारै ।
दिन दिन पीरी होतहै, पिया न बूझै सार ॥
वै नहिं बूझैं सारही, बिरहिनिकौन हवाल ।
जब सुधि आवै लालकी, चुभत कलेजे भाल ॥
पीव चहौ कै मत चहौ, वहतौ पीकी दास ।
पियके रँगराती रहै, जग सों होय उदास ॥
पीपी करते दिन गया, रैनि गई पिय ध्यान ।
बिरहिनिके सहज सधै, भक्तियोग अरु ज्ञान ॥
बिरहिनि एकैरामबिन, और न कोई मीत ।
आठ पहर साठौ घड़ी, पियामिलनकी चीत ॥
जाप करै तौ पीवका, ध्यान करै तौ पींव ।
पींव बिरहिनिका जीवहै, जीबिरहिनिका पीव ॥

---

१ ओंठ २ काष्ठ ॥

अथ चारौंयुगवर्णन ॥

कुंडलिया ॥

सतयुग सांचा बोलते परमहंस को ध्यान ।
सतवादी सत राखते सत नहिं देते जान ॥
सत नहिं देते जान प्रान जोपै तजि देही ।
निश्चय होती मुक्ति दरशते राम सनेही ॥
शुकदेव कहि चरणदाससों अबहीं सतयुगजान ।
सत बोलौ सतसों रहो सतकी गहिये आन ॥
त्रेता में तप साधते आसन संयम धार ।
पांचौ इन्द्री रोकते जब मन जाता हार ॥
जब मन जाता हार खैंचि अनहद में धरते ।
कै अपनोही इष्ट ध्यान ताही को करते ॥
आप विसर्जन होय मुक्ति निश्चय करि पाते ।
चरणदास शुकदेव तपस्या चाल दिखाते ॥
द्वापर पूजा वंदना प्रेम सहितजो होय ।
कहा राजसी मानसी पूजा कहिये दोय ॥
पूजा कहिये दोय जैसि जाके मन भावै ।
धरै नेम आचार अंत ना चित्त डुलावै ॥
हित करि पूजा कीजियें द्वापर को यह भेव ।
चरणदास निश्चय करौ कहिया श्रीशुकदेव ॥
कलियुग हरि गुण गाइये गुणावादही सार ।
भजनकरो मन मगन ह्वै भय अरु सकुच निवार ॥
भय अरु सकुचनिवार जाति कुल गर्व वहावो ।
साज बाज लै संग रामको गाय रिझावो ॥

कथा कीर्त्तन सों तरै कलियुगही के माहिं ।
शुकदेवकहिचरणदाससों तारौगहिगहिबाहिं ॥

इति श्रीचारौयुगसम्पूर्णम् ॥

अथ नाम अंग वर्णन ॥

दो० प्रणऊं[1] श्री शुकदेव कूं, वाणी कहूँ अगाध ।
महिमा गाऊं नाम की, सबमिलिसुनियोसाध ॥
ज्योंकी त्योंहीं कहत हूँ, कछू न राखूँ भेद ।
निश्चय आवे नाम की, छूटैं सबही खेद ॥
जनम मरनजम दंड के, गर्भवास की त्रास ।
नाम रटे सबही छुटैं, लख चौरासी गाँस ॥
कई बार जो यज्ञ करि, योग करै चितलाय ।
चरणदास कहैं नाम बिन, सभी अफल होजाय ॥
आठ धात में गुण नहीं, जो पारस के माहिं ।
तप तीरथ व्रत साधना, राम नाम सम नाहिं ॥
ज्यों सेमर का सेवना, ज्यों लोभी का धर्म्म ।
अन्न बिना भुस कूटना, नाम बिना यों कर्म्म ॥
छोड़ै सबही वासना, हो बैठे निष्काम ।
चरण कमल में चित धरै, सुमिरै रामहिं राम ॥
ऐसा हो जब संत हो, तब रीझै करतार ।
दरशन दे अपना करै, कभी न छोड़ै लार ॥
चार वेद[2] किये ब्यास ने, अर्थ बिचार विचार ।
तामें निकसी भक्तिही, राम नाम ततसार ॥
जिन कहिया शुकदेव कूं, सुनिया प्रेम प्रतीति ।

---

१ नमस्कार २ ऋगवेद सामवेद यजुर्वेद अथर्वणवेद ॥

तिनजगमेंपरगट कियो, जैसी चहिये रीति ॥
ब्रह्महत्या अरु नारि की, वालक हत्या होय।
राम नाम जो मन बसै, सब कूं डारै खोय ॥
हियआवत जगदुख टरै, कंठ आय अघ जाय।
मुख सूं बोलै आयकरि, ताकी कौन चलाय ॥
ऐसाही हरि नामहीं, मोहि रामकी सौहिं।
जाकूं होवै परखही, सो समझैयां लौहिं ॥
विन समझे पातक नशै, समझ जपै हो मुक्त।
चरणदास यों कहत हैं, जो कोइ जानै युक्त ॥
नामहिं लैजल पीजिये, नामहिं लेकर खाह।
नामहिं लेकर वैठिये, नामहिं लै चल राह ॥
जवलग जागैराम कहु, तन मन सूं यहिचीत।
चरणदाम यों कहत है, हरिविन और न मीत ॥
तेरा तौ कोइ है नहीं, मात पिता सुत नार।
ताते सुमिरौ राम कूं, हे मन वारंबार ॥
जिहिकारण भटकतफिरै, घरघर करत सलाम।
तेरे तौ वैहैं नहीं, ये मन सुमिरौ राम ॥
जीवतही स्वारथ लगै, मूये देह जराय।
ऐ मन सुमिरौ राम कूं, धोखे काहि पराय ॥
हाथी घोड़े धन घना, चंदमुखी वहु नार।
नाम विना यमलोक में, पावे दुःख अपार ॥
जवलग जीवै राम कहु, रामहिं सेती नेह।
जीव मिलैगो राम में, पड़ी रहैगी देह ॥
अचरज साधन नामका, भक्तियोग का जीव।
जैसे दूध जमाय कै, मथिकरिकाढ़ा घीव ॥

कुंडलिया ॥

आठ मास मुखसूं जपै सोलह मास कँठ जाप ।
बत्तिस मास हिरदै जपै तनमें रहै न पाप ॥
तनमें रहै न पाप भक्ति का उपजै पौधा ।
मन रुकजावै जहां अपरबल कहिये योधा ॥
शुकदेव कही चरणदास सूं यही भेद ततसार ।
बहुरु आवै नाभिमें ताका कहूं विचार ॥

दो० पांच बरष जंप नाभिसों, रग रग बोलै राम ।
देह जीव निज भक्तहो, पहुँचै हरिके धाम ॥
त्रिकुटी में जप रामकूं, जहां उजाला होय ।
श्वासा माहीं जपेते, द्विविधा रहै न कोय ॥
गगन मँडलमें जापकरि, जितहै दशवांद्वार ।
चरणदास यों कहत हैं, सो पहुँचै हरिदरबार ॥
नासा अग्रे जापकरि, देखै नूर अगाध ।
बहुतकअचरजअरुखुलै, चरणदास कहेसाध ॥
नाम उठाकर नाभिसूं, गगन माहिं लेजाय ।
जहां होय परकाशही, शुकदेव दिया बताय ॥
मनही मनमें जापकरि, दरपण उज्ज्वल होय ।
दरशन होवै रामका, तिमिर[1] जाय सबखोय ॥
कूककूक कर नाम जप, छुटै सात अरु पांच ।
जासों मन ठहरा रहै, चरणदास कहैं सांच ॥
सुरत माहि जो जप करै, तन सूं न्यारा जौन ।
मिलै सच्चिदानन्द में, गहे रहै जो मौन ॥
सकलशिरोमणि नामहै, सब धर्मन के माहिं ।

---

१ अँधेरा ॥

अनन्य[1] भक्त वहि जानियें, सुमिरण भूलै नाहिं ॥
आन धरम मानै नहीं, आन देव नहिं ध्यान ।
ऐसे भक्त अनन्य कूं, कोई पावै जान ॥
पतिव्रता वह जानिये, अज्ञा करै न भंग ।
पिय अपने के रँग रते, और न सून ढंग ॥
अपने पियकूं सेइये, आन पुरुष तजिदेह ।
परघर नेह निवारिये, रहिये अपने गेह ॥
आज्ञाकारी पीव की, रहै पिया के संग ।
तन मनसूं सेवा करै, और न दूजो रंग ॥
रंग होय तो पीव को, आन पुरुष विषरूप ।
छाहँ बुरी परधर्मकी, अपनी भली जु धूप ॥
अपने घरका दुख भला, परघरका सुख छार ।
ऐसे जानै कुलवधू, सो सतव[2]न्ती नार ॥
पतिकी ओर निहारिये, औरन से कह काम ।
सबै देवता छोड़करि, जपिये हरिका नाम ॥
खसम तुम्हारो राम है, इत उत झख मत मारि ।
चरणदास यों कहत हैं, यही धारणा धारि ॥
यह शिर नवै तो रामकूं, नाहीं गिरियो टूट ।
आन देव नहिं परसिये, यह तन जावो छूट ॥
पतिव्रता को व्रत गहो, व्यभिचारिणि अँगटार ।
पति पावै सब दुख नशैं, पावै सुक्ख अपार ॥
जब तू जानै पीवही, वह अपनी करिलेहि ।
परमधाम में राखि करि, बाँह पकरि सुख देहि ॥
यही सिखाये देतहूँ, धारो हिरदय माहिं ।

१ जो दूसरे को न जानै २ पतिव्रता ॥

ऐसा पौधा बोइये, ताकी बठो छाहिं ॥
सतवादी सतसूं रहो, सतही मुखसूं बोल ।
एक ओर हरिनाम रख, एक ओर जग तोल ॥
सभी निचोरे कहतहूं, भक्ति करो निष्काम ।
कोटि तपस्या यही है, मुखसूं कहिये राम ॥
रामनाम मुखसूं कहै, रामनाम सुन कान ।
रोम रोम हरिकूं रटो, ऐसी गहिये बान ॥
विद्या माहीं वाद है, तपके माहीं ऋद्धि ।
राम नाम में मुक्त है, योगमाहिं यों सिद्धि ॥
ताते त्यागो वासना, राखो रामहिं नाम ।
कोटिबन्ध छुटि जायँगे, पहुँचो हरि के धाम ॥
राम नाम में ये सबै, ऋद्धि सिद्धि अरु मोक्ष ।
ऐसा इष्ट सँभारिये, चरणदास कहि सोच ॥
जाका कीया सब बना, सात द्वीप नवखण्ड ।
चरणदास यों कहत हैं, तीन लोक ब्रह्मण्ड ॥
तवकारण सब कुछ किया, नाना विधि सुख दीन ।
तैं वाकूं जाना नहीं, नाम न कबहूं लीन ॥
अबकै औसर फिरिबन्यो, पाई मानुष देह ।
चरणदास यों कहत हैं, राम नामहीं लेह ॥

राग केदारा ॥

सुनौ भाई नाम की महिमा ।
मुक्ति चारौं सिद्धि आठौं बसत हैं तहिमा ॥
बालमीकि सो बनके बासी किये थे जिन पाप ।
भयो है सब ऋषिशिरोमणि जपे उलटे जाप ॥
गणिका सी अति महापापी सो पढ़ावत कीर ।

नामके परताप सेती कियो हरिपुर सीर ॥
अजामिल से पतित कामी वेश्यासों रति कीन ।
चढ़ि विमानै गयो सुरपुर नाम सुतहित लीन ॥
और बहुतै पतित तारे गिने कापै जाहिं ।
दान जप तप योग संयम नाम सम तुल नाहिं ॥
व्यास नारद शिव ब्रह्मादिक रटत जाकूं शेश ।
गुरू शुकदेव नाम को चरणदासकूं उपदेश ॥

कवित्त ॥

नामके प्रताप नन्दलाल आप भये प्रभु नामके प्रताप सुत दशरथ को कहायो है ।
नामके प्रताप पैज राखी प्रह्लादजूकी नामके प्रताप दौरो द्वारका सूं धायो है ॥
नामके प्रतापकी न महिमा मोपै कहीजात नामके प्रताप सब सन्तन सहायो है ।
सोई नाम वास सब आस लगो चरणदास सोई नाम चारवेद विमल २ गायो है ॥
नामके प्रताप शबरी सुरन तैं सरस करी नामके प्रताप अधम लोककूं पठायो है ।
नामके प्रताप अजामीलकूं विमान आयो नामके प्रताप गज ग्राहसूं छुटायो है ॥
नामके प्रताप सब दीनन को दुख हरो नामको प्रताप शुकदेवजी दृढ़ायो है ।
सोई नाम वास अब आस लगो चरणदास सोई नाम चारवेद विमल २ गायो है ॥

दो० नामअंगमहिमाअधिक, मोपै कही न जाय ।
पांच प्रेत अब कहत हूं, जाकूं सुनिचितलाय ॥
योग तपस्या भक्ति कूं, ज्ञान बिगाड़न पांच ।
जीवत दुखदै जगत में, मुये नरक दै आंच ॥
काम क्रोध मोह लोभसे, और पांचवां गर्व्व ।
राज करै वसुधा विषे, इन वश कीने सर्व्व ॥
काम बली वर्णन करूं, जिन मारे बलवन्त ।
जाका बकसी नारि है, जीते गुणी महन्त ॥

राग सोरठ ॥

साधो नारि सबलरे भाई । नहिं मान राम दुहाई ॥
बांदर ज्यों पकरि नचावै । हरिजी सूं नेह छुटावै ॥
दया धर्म सब खोवै । जब नैनकजल भरि जोवै ॥
जिनका चित चोरा रांड़ी । तिनकी जग थू थू भांड़ी ॥
उन सबही सरवस खोया । नरशीशपकरि करि रोया ॥
जनम पदारथ छीना । स्याही का टीका दीना ॥
दोनों मुखसों खाया । फिर फिरके गरभ दिखाया ॥
काम कटक मैं सूरी । वह सांवत कहिये पूरी ॥
बड़े बड़े योधा मारे । अरु बहुतक शूर पछारे ॥
गुरु शुकदेव बतावै । बटमारन तोहिं दिखावै ॥
चरणदास कहे जानौ । तुम छलबल कला पिछानौ ।

नारी ने हरि सुमिरण सूं खोये ।
राजा परजा मुंडत चुंडत नैनकटाक्षन मोहे ॥
राती चूनर चटक मटकले भूषण काजल साधै ।
मुड़ मुसकावै मधुरी वाणी प्यार प्रीतकर बांधै ॥
बहुतनको उन योग छुटायो बहुतनकोतप छीन्हों ।
बहुतनकी उन भक्ति बिगारी अंग विषयरस दीन्हों ॥
बंदुवां करि बहु नाच नचायो फंदा मोह लगायो ।
याते सावधानही रहियो मैं तुमकूं समुझायो ॥
गुरु शुकदेव बतावै साधो निश्चय ठगिनी जानौ ।
चरणदास कहैं हाथ न आवो नीकै ताहि पिछानौ ॥

साधौ परतिरिया[1] सूं डरियो ।
जाके दरश परशके कीये जीवत नरकमें परियो ॥
गौतम घरनीसुन्दरि सुनिकै इन्द्रासन तजि आयो ।

---
[1] स्त्री ॥

जो गति भई जगत में जानी भलो कलंक लगायो ॥
शृङ्गी ऋषि वन में तप कीन्हों सुरपति देखि डरायो।
रंभा[1] भेजि हरो सत जाको सबही तेज सिरायो ॥
दैंयत देवत नर जो हूये नारी देख लुभाये।
ताको फल ऐसोही पायो अजहूं कुयश सुनाये ॥
चरणदास शुकदेव गुरूने दे उपदेश बचाये।
यती सती कोइ हाथ न आयो कामी पकरि नचाये ॥

अरे नर परनारी मत तक रे।

जिन जिन ओर तको डायनकी बहुतन कूं गई भखरे ॥
दूध आक[2] को पात कटइया झाल अँगनकी जानौ।
सिंह मुछारे विष कारेको ऐसे ताहि पिछानौ ॥
खानि नरककी अतिदुख दाई चौरासी भरमावै।
जनम जनमकूं दाग लगावै हरिगुरु तुरत छुटावै ॥
जगमें फिटफिटि महिमा खोवै राखै तन मन मैला।
चरणदास शुकदेव चितावै सुमिरो राम सुहेला ॥

दो० नर नारी सब चेतियो, दीन्हो प्रकट दिखाय।
परतिरिया परपुरुष हो, भोग नरकको जाय ॥
परनारी कै आपनी, दोनों बुरी बलाय।
घर बाहर का आग ज्यों, देवै हाथ जलाय ॥
चटक मटक सब छोड़दे, देही रूप बिगार।
देख न कोई रीझ हैं, ना होवै लगवार ॥
यही ढाल है जत्तकी, लगै न शस्तर काम।
आठ अंग हैं काम के, तासूं रहु निष्काम ॥
काम कान में आय करि, फिर आवत है नैन।
बहुरि हिये में आय करि, लगै बहुत दुख दैन ॥

---

१ अप्सरा २ मदार ॥

वह काम बुरारे भाई। सब देवै तन बौराई॥
पंचों में नाक कटावै। वह जूती मार दिलावै॥
मुँह काला गधे चढ़ावै। बहुलोग तमाशे आवै॥
झिड़का ज्यों डोलै कूता। सबही के मन सूँ ऊता॥
कोई नीके मुख नहिं बोलै। शरमिंदा[1] जग में डोलै॥
वह जीवत नरक मँझारी। सुन चेतौ नर अरु नारी॥
काम अंग तजि दीजै। सतसंगतिही करि लीजै॥
कहैं चरणहीं दासा। हरि भक्तन में कर वासा॥

दो० तन मन जारै कामहीं, चित करै डावांडोल।
धरम करम सब खोय कै, रहै आप हिय खोल॥

वह दया क्षमा को मारै। जत सतको पकरि पछारै॥
शुचि[2] नेमको दूरि कढ़ावै। मुख ऊपर धूरि उड़ावै॥
जग भीतर महिमा खोवै। पापों की माला पोवै॥
वह धीरज नाहीं राखै। वह मुखसों झूठी भाखै॥
वह चाल चलै विपरीता[3]। करि विषय भोगकी चीता॥
काम बली जहँ आवै। अरु बहुतक औगुण लावै॥
यह मैनखोट का पूरा। कोइ जीतै गुरुमुख शूरा॥
साधु भक्ति वह गुनियां। जिन कामदुष्ट को हनियां॥
चेत कही शुकदेवा। सब चरणदास सुनिलेवा॥

दो० सुनिकै जो चित में धरै, फेरि चलै वह चाल।
खांड़ा पकरै शीलका, काम हनै ततकाल॥

अथ क्रोध अंग॥

क्रोध महाचण्डाल है, जानत है सब कोय।
जाके अँग वरणन करूं, सुनियो सुरतिसमोय॥

---

१ लज्जित २ पवित्र ३ उलटो॥

रागभैरवँ ॥

क्रोधभूतके चरित सुनाऊं। भिन्न भिन्न परगट दिखलाऊं ॥
क्रोध भूत जव तापर आवै। तन मनकी सव सुधि बिसरावै ॥
नैनालाल वदन सव कारो। रोम रोम व्यापै हत्यारो ॥
महाचण्डाल नीच अतिघोरी। अति विपरीत वुद्धि करिऔरी ॥
अपने हाथ आपको मारै। अपने कपड़े आपहि फारै ॥
मुहड़े[1] झाग मरोड़ै हाथा। कहै वहकती फूहर बाता ॥
हाफैं वहुत आपको गाली। जेंवत आवै पटकै थाली ॥
कवहुँ शस्त्र सों मारन लागै। कवहूं कूंये पड़ने भागै ॥
भली कहै ताहि भोग सुनावै। बुरे भले पर ईंट चलावै ॥
सवल देख शीला हो जावै। निवल देखि वहु दुन्दि मचावै ॥
याका यतन करो मन भावै। चरणदास शुकदेव वतावै ॥

दो० जिहि घट आवै घूमरू, करै वहुतही खुमार ॥
पति खोवै वुधिकूं हनै, कहा पुरुष कह नारि ॥

वह वुद्धि भ्रष्ट करि डारै। वह मारहि मार पुकारै ॥
वह सव तन हिंसा छावै। कहिं दया न रहने पावै ॥
वह गुरु से वोलै वेंड़ा। साधों सूं डोलै ऐंड़ा ॥
वह हरसूं नेह छुटावै। वह नरक माहिं लेजावै ॥
वह आतमघाती जानौ। वह महामूढ़ पहिंचानौ ॥
सोंटोंकी मार दिलावै। कबहूं कै शीश कटावै ॥
वह नीच कमीना कहिये। ऐसे सूं डरता रहिये ॥
वह निकट न आवन दीजै। अरु क्षमा अंक[2]भर लीजै ॥
जव क्षमा आय किया थाना[3]। तव सवही क्रोध हिराना ॥
कहैं गुरु शुकदेव खिलारी। सुनु चरणदास उपकारी ॥

---

१ मुखको कहते हैं २ गोदी ३ मुकाम ॥

अथ मोहअंग ॥

दो० क्रोध अंग पूरो कियो, कहूं मोहका अंग ।
जाहि लगै दुखदे घना, कबहुं न छोड़ै संग ॥
माया मोह बिछाइया, जाल संभारि सँभारि ।
आय आय तामें फँसे, बहुत पुरुष बहुनारि ॥
फँसे आय करि चावसूं, लेन गया नहिं कोय ।
चरणदास यों कहत हैं, पछिताये कह होय ॥
छूट सकै नहिं जालसूं, मिरगा ज्यों अकुलाय ।
कूद कूद निकसो चहै, ज्यों ज्यों उरझत जाय ॥
मोह शहदसम जानिये, मक्खी सम जिय जान ।
लालच लागे जितफँसे, शीश धुनैं अज्ञान ॥
बन्दी खानो भवन[1] है, सब दिन धंधे जाइ ।
मोह छुटावै राम सूं, डारै नरक मँझाइ ॥
लख चौरासी योनि में, फिर वह भरमैं जाय ।
हाँसे निकसै कठिन सूं, कबहूं औसर पाय ॥

तिरिया मोह महाबलदायी । मोह संतान सदा दुखदायी ॥
मोह कुटुंब अरु भाई बंधा । समझै नहीं मूढ़ मति अंधा ॥
देव भूत जिहि कारण धावै । ठग चोरी करि खोट कमावै ॥
वस्तर भूषण वाहन मोहा । सबामलि किया जीव संद्रोहा[2] ॥
द्रव्य लाल अरु हीरा मोती । सब मिलि मोह लगावैं गोती ॥
मोह महल धरती[1] अरु गाऊं । बड़ा मोह जू अपना नाऊं ॥
जामें फँसे रंक[3] अरु राजा । तिहिकारण धंधा दुखसाजा ॥
परकाजैं बहुतै दुख पाया । अपना सबही मूल गवाँया ॥
बड़े बड़े खेद उठाये सबहीं । भूले ध्यान राम का जपहीं ॥

घर २ वैर ३ दरिद्री ॥

जीते मोह शूरमा कोई। मिलै रामकूं साधू सोई ॥
होय मुक्ति जग बहुरि न आवे। चरणदास शुकदेव बतावें ॥

दो० मोह बड़ा दुख रूप है, ताकूं मार निकास।
प्रीति जगतकी छोड़ दे, जब होवै निरवास[1] ॥
जग माहीं ऐसे रहो, ज्यों जिह्वा मुखमाहिं।
घींव घना भक्षण करै, तौभी चिकनी नाहिं ॥
जग माहीं ऐसे रहो, ज्यों अम्बुज सर[2] माहिं।
रहै नीर[3] के आसरे, पै जल छूवत नाहिं ॥
ऐसा हो जो साधु हो, लिये रहै वैराग।
चरण कमल में चित धरै, जगमें रहै न पाग ॥
मोहबली सब सूं अधिक, महिमा कही न जाय।
जाको बांधो जग सबै, छूटै ना बौराय ॥

अथ लोभअंग ॥

लोभ नीच वर्णन करूं, महापाप को खानि।
मंत्री जाका झूठ है, बहुत अधर्मी जानि ॥
तृष्णा जाकी जोय[4] है, सो अंधा करि देय।
घटो बढ़ो सूझै नहीं, नहा कालका भेय ॥
दम्भ मकर छल भगल जो, रहत लोभके संग।
मुये नरक लै जायँगे, जीवत करै उदंग ॥
देहैं धर्म छुटाय ही, आन धर्म ले जाय।
हरि गुरु ते बेमुख करैं लालच लोभ लगाय ॥
चहूं देश भरमत फिरै, कलह[5] कलपना साथ ॥
लोभ काज उठउठ लगैं, दोउ पसारै हाथ ॥
लोभी भक्त होय नहिं कबहीं। साधु पुराण कहत हैं सबहीं ॥

---

१ वासना से रहित २ तालाब ३ जल ४ स्त्री ५ लड़ाई ॥

लोभी सती न होवै शूरा। लोभी दाता सन्त न पूरा॥
लोभी हितू न होव सांचा। लोभी रहै जगत में रांचा॥
लोभी रहै द्रव्य के माहीं। तन छूटै पै निकसै नाहीं॥
लोभी करै जीवकी घाता[1]। लोभी करै कपटकी बाता॥
लोभी पाप न करता डरै। लोभी जाय कष्ट में परै॥
लोभी बेंचै अपना शीसा। लोभी डूबै बिसवैबीसा॥
गुरु शुकदेव बतावैं हमकूं। सो यह कथा कही मैं तुमकूं॥
चरणदास कहैं लोभ न कीजै। हरि के पदपंकज मनदीजै॥

दो० चींटी बांदर खगन[2] कूं, लोभ बहुत दुखदीन।
याकूं तजि हरि कूं भजै, चरणदास परवीन॥
लोभ घटावै मानकूं, करै जगत आधीन।
बोझघटा भिष्टल करै, करै बुद्धिको हीन॥
लोभ गये ते आवई, महाबली संतोष।
त्याग सत्यकूं संगले, कलह निवारण शोक॥
घट आवै सन्तोषही, कहा चहै जग भोग।
स्वर्गआदिलो सुखजिते, सबकूं जानै रोग॥
संतोषी निश्चल दिशा, रहै राम लवलाय।
आसन ऊपर दृढ़रहै, इत उतकूं नहिं जाय॥
काहूसे नहिं राखिये, काहूविधि की चाह।
परमसंतोषी हूजिये, रहिये बेपरवाह॥
चाह जगतकी दासहै, हरि अपना न करै।
चरणदास यों कहतहैं, व्याधा नाहिं टरै॥

अथ अभिमानअंग॥

चार अंग पूरे किये, कहूं गर्व गुण गाय।

---

१ मारना २ पक्षी॥

बहुत सिकंडी मारिया, शिरपर छत्र फिराय ॥
अभिमानी चढ़िकरिगिरे, गये वासनामाहिं।
चौरासी भरमत भये, क्योंहीं निकसै नाहिं ॥
अभिमानी भींजेगये, लूट लिये धन धाम।
निरअभिमानी होचले, पहुंचे हरिके धाम ॥
चरणदास कहै आपाथपै, गिनै आपको पांच।
मान बड़ाई कारने, सहै जगतकी आंच ॥
करै बड़ाई कारने, परपंची छल धूत।
अभिमानी फूले फिरैं, ज्यों मर्कटका भूत ॥

अभिमानीकी मुक्ति न होई। अभिमानी मति अपनी खोई ॥
ऐंठ अकड़ अभिमानी माहा। अभिमानी नीचा हो नाहीं ॥
बिन नान्हापन सुख नहिं पावै। आनंदपदकूं कैसे जाव ॥
झूठ कपट अभिमानी खेलै। कंचन बरतन माटी मेलै ॥
भगल दंभ नितहि मन माहीं। निकट सांच कभु आवे नाहीं ॥
हूँ हूँ हूँ करताही डोलै। काहूते सीधा नहिं बोलै ॥
इन लक्षण जीवत दुख पावै। नरक माहिं तन छूटै जावैं ॥
चरणदास शुकदेव बतावै। पूरा सो अभिमान नशावै ॥

दो० चरणदास यों कहत हैं, सुनियो सन्त सुजान।
मुक्तिमूल आधीनता, नरकमूल अभिमान ॥

रूपवन्त गरबावै। कोइ मोसम दृष्टि न आवै ॥
तरुणापा गरवाना। वह अंधरा होवै राना ॥
कहै धन मधि में परबीना। सब मेरेहो आधीना ॥
कहै कुल अभिमानी सूचा। मैं सब जातिनमें ऊंचा ॥
वह विद्या गर्व जु भारी। करै वाद विवाद अनारी ॥

---

१ स्त्री ॥

अरु भूप करै अभिमाना। उन आपैही कूं जाना ॥
उन काल नहीं पहिंचाना। सो मार करै घमसाना ॥
गुरु शुकदेव चितावै। तोहिं परगट नैन दिखावैं ॥
यम बांधि पकरि, लेजावैं। वै बहुतै त्रास[1] दिखावैं ॥
जब कहां जाय अभिमाना। मेरा नीका सुन यह ताना ॥
फिर डारै नरक मँझारी। सुनि चेतौ नर अरु नारी ॥
तौ मद मत्सरता[2] तजि दीजै। साधौं के चरण गहीजे ॥
हरि भक्ति करौ चितलाई। जब सकल व्याधि छुटिजाई ॥
कर जाति वरणकुल दूरा। हो सतसंगति में पूरा ॥
जब मुक्तधामकूं पावै। फिर गर्भ योनि नहिं आवै ॥
कहैं गुरु शुकदेव बखानौ। यह चरणदास मन आनौ ॥

दो० मनमें लाय विचारकूं, दीजै गर्व निकार।
नान्हापन जब आय हैं, छूटै सकल विकार ॥
पांचौ उतरैं भूत जब, ह्वैहौ ब्रह्म अरूप।
आनँद पद कूं पायहौ, जितहै मुक्तस्वरूप ॥
पांच प्रेत जो ये कहे, सतगुरुके परताप।
शील अंग अब कहतहूँ, जासूं छूटै पाप ॥

अथ शीलअंग वर्णन ॥

दो० अब मैं गाऊँ शीलकूं, येहो सन्त सुजान।
नर नारी सबही सुनौ, दै दै चित बुधिकान ॥
रूपगुणी कुलवंत जो, अरु होवै धनवन्त।
शील बिना शोभा नहीं, भिष्टै नरक पड़न्त ॥
शील विना जो तप करै, करै शील बिन दान।
योग युक्तिकरै शील बिन, सो कहिये अज्ञान ॥

१ डर २ काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, मात्सर्य ॥

शील बड़ोही योगहै, जो कर जानै कोय ।
शीलविहीनो चरणदास, कबहुँ मुक्ति नहिं होय ॥
सब गुण लक्षण तो विषे, शील न आया एक ।
जपतप निष्फल जाहिंगे, चरणहिं दास विवेक ॥
पूजा संयम नेम जो, यज्ञ करै चितलाय ।
चरणदास कहैं शील बिन, सबी अकारथ जाय ॥
सोइ सती सोइ शूरमा, सोइ दाता अधिकाय ।
शील लिये नितही रहै, तौनिष्फल नहिंजाय ॥
शील अंग ऊंचो अधिक, उन तीसौं के बीच ।
जाघट शील न आइया, सो घट कहिये नीच ॥
शील न उपजै खेत में, शील न हाट बिकाय ।
जो हो पूरा टेक का, लेवै अँग उपजाय ॥
शील विना नरकै परै, शील बिना यम दण्ड ।
शील विना भरमत फिरै, सात द्वीप नौ खण्ड ॥
शील विना भटकत फिरै, चौरासी के माहिं ।
पहिले होवै प्रेत ही, यामें संशय नाहिं ॥
सब तजि सेवो शील कूं, राम नाम लौलाय ।
जीवत शोभा जगत में, मुये मुक्ति ह्वै जाय ॥
जाको शील सुभाव है, ताकी दूर बलाय ।
ताकी कीरति जगत में, सुनहो कान लगाय ॥
शील रहेते सब रहैं, जेते हैं शुभ अंग ।
ज्यों राजा के रहेते, रहै फौज को संग ॥
सत्यगया तौ क्या रहा, शील गया सब झाड़ ।
भक्त खेत कैसे बचै, टूट गई जब बाड़ ॥

---

१ शरीर २ यश ॥

ज्वानी शील न राखिया, बिगड़ गई सब देह ।
अब पछितावा क्या करै, मुख पर उड़िया खेह[1] ॥
शील गये शोभा घटै, या दुनिया के माहिं ।
कूकरज्यों झिड़क्यों फिरै, कहीं भी आदर नाहिं ॥
शील गये गुरु सूं फिरै, हरि सों बेमुख होय ।
चरणदास कहाँ लौं कहैं, सर्वस डारै खोय ॥
धिक जीवन संसार में, ताको शील नशाय ।
जग में फिट फिट होत है, मुये ताचना पाय ॥
शील कसैला आँवला, और बड़ों के बोल ।
पाछे देवै स्वाद वै, चरणदास कहि खोल ॥
शील निरोगा नींवसा, औगुण डारै खोय ।
पहिलै करुवा दुख लगै, पाछे गुण सुख होय ॥
लाख यही उपदेश है, एक शील कूं राख ।
जन्म सुधारौ हरि मिलौ, चरणदास की साख ॥
शीलवंत के चरण का, जो चरणोदक[2] लेय ।
रोग दोष मिटि जायँ सब, रहै न यमका भेय ॥
आठ अंग सूं शीलही, जाघट माहीं होय ।
चरणदास यों कहत हैं, दुर्लभ दर्शन सोय ॥
शीलवंत दर्शन बड़े, देखत पातक जाय ।
वचन सुनै मन शुद्ध हों, खोटीदृष्टि[3] सिराय ॥
शील सरोवर न्हाय करि, करौ राम की सेव ।
यासम तीरथ और ना, कहिया गुरु शुकदेव ॥
शील अंग पूरो कियो, महिमा अधिक अपार ।
दया अंग वरणन करूं, समझै छुटै विकार ॥

---

१ धूरि २ पावोंका धोया हुआ जल ३ बुरीनज़र ॥

अथ दयाअंग वर्णन ॥

दो० परमारथ में दया बड़, जो घट उपजै आय।
परगट हो निर्वैरता[1], कर्म गांठि खुल जाय ॥
थावर जंगम चर अचर, या जग में हो कोय।
सबही पै हित राखिये, सुखदानीही होय ॥
भोजन करौ सँभाल करि, पानी पीजौ छान।
हरावृक्ष नहिं तोड़िये, कर्म बचै यों जान ॥
औरौ वहुत विचारले, जामें लगै न कर्म।
यही तपस्या जानिये, यही दया यहि धर्म ॥
इक इन्द्री दो इन्द्रियां, ती इन्द्री अरु चार।
पंच इन्द्री लौं जीवकी, हिंसा अकस निवार ॥
खावै वस्तु विचारि कै, वैठै ठौर विचार।
जो कुछकरै विचारकरि, किरिया यही अचार ॥
मन सों रहु निर्वैरता, मुख सूं मीठा बोल।
तन सूं रक्षा जीव की, चरणदास कहि खोल ॥
करुवा वचन न बोलिये, तन सूं कष्ट न देहु।
अपनासा जी जानिकै, बनै तौ दुख हरिलेहु ॥
मुख सूं जो करुवा कहै, तन सूं देवै कष्ट।
यही जु हिंसा जानिये, दया धर्मजा नष्ट ॥
दश इन्द्री मन ग्यारवां, करि विचारि ले जान।
इनहीं सूं सुख दीजिये, चरणदास पहिंचान ॥
काहू दुख नहि दीजिये, दुर्जन हो कै मीत।
सुखदायी सब जगतको, गहो दया की रीत ॥
कोमलता परपीरता, सज्जनता निर्दोष।

१ किसी से लड़ाई न मानना ॥

सबही दया के अंग हैं, इन ते पावै मोष ॥
दया ज्ञान का मूल है, दया भक्ति का जीव।
चरणदास यों कहत हैं, दया मिलावै पीव ॥
दया नहीं तौ कुछ नहीं, सबही थोथी बात।
बाहर कथनी सोहनो, भीतर लागी घात ॥
छापे तिलक बनायकै, माला पहिरी दोय।
दया बिना बक[1] सम वहो, साधुरूप नहिं होय ॥
दया न आई घट बिषे, हीया बड़ा कठोर।
यह नगरी कैसे बसै, तामें हिंसा[2] चोर ॥
पँडिताई बहुतै करी, दया न राखी जीव।
छाँछि[3] छाँछि तैं लैलई, डारि दिया तत घीव ॥
तोहिं पण्डितमैं कहूं कहूं, मूरख कै परवीन।
लिया न तैं मत सूपका, चलनीका मतलीन ॥
दया गहेते सब नशैं, पाप ताप दुख द्वन्द।
ऐसी परम पुंनीतकूं, तजै सो मूरख अन्ध ॥
दया बिना नर पतित है, दया बिना नर दुष्ट।
दया बिना सुनवत बनै, सबही थोथी गुष्ट ॥
जन्म मरण छूटै नहीं, नाहीं कर्म्म नशाहि।
दया बिना बदला भरै, चौरासी के माहिं ॥
काम क्रोध मोह लोभये, गरबआदि भजिजाहिं।
चरणदास कहैं दया जो, घट में पहुंचै आहिं ॥
जितने वैरी जीव के, तिनमें रहै न एक।
चरणदास यों कहत हैं, दया जो आवै नेक ॥
दुख भाजैं सुख हों घने, काया नगरी ढंग।

---

१ बगुला २ जीवमारना ३ मट्ठा ४ पवित्र ॥

अथ दयाअंग वर्णन ॥

दो० परमारथ में दया बड़, जो घट उपजै आय ।
परगट हो निर्वैरता[1], कर्म गांठि खुल जाय ॥
थावर जंगम चर अचर, या जग में हो कोय ।
सबही पै हित राखिये, सुखदानीही होय ॥
भोजन करौ सँभाल करि, पानी पीजौ छान ।
हरावृक्ष नहिं तोड़िये, कर्म बचै यों जान ॥
औरौ बहुत विचारले, जामें लगै न कर्म ।
यही तपस्या जानिये, यही दया यहि धर्म ॥
इक इन्द्री दो इन्द्रियां, ती इन्द्री अरु चार ।
पंच इन्द्री लौं जीवकी, हिंसा अकस निवार ॥
खावै वस्तु विचारि कै, बैठै ठौर विचार ।
जो कुछकरै विचारकरि, किरिया यही अचार ॥
मन सों रहु निर्वैरता, मुख सूं मीठा बोल ।
तन सूं रक्षा जीव की, चरणदास कहि खोल ॥
करुवा वचन न बोलिये, तन सूं कष्ट न देहु ।
अपनासा जी जानिकै, बनै तौ दुख हरिलेहु ॥
मुख सूं जो करुवा कहै, तन सूं देवै कष्ट ।
यही जु हिंसा जानिये, दया धर्मजा नष्ट ॥
दश इन्द्री मन ग्यारवां, करि विचारि ले जान ।
इनहीं सूं सुख दीजिये, चरणदास पहिचान ॥
काहू दुख नहि दीजिये, दुर्जन हो कै मीत ।
सुखदायी सब जगतको, गहो दया की रीत ॥
कोमलता परपीरता, सज्जनता निर्दोष ।

---

१ किसी से लड़ाई न मानना ॥

सबही दया के अंग हैं, इन ते पावै मोष ॥
दया ज्ञान का मूल है, दया भक्ति का जीव।
चरणदास यों कहत हैं, दया मिलावै पीव ॥
दया नहीं तो कुछ नहीं, सबही थोथी बात।
बाहर कथनी सोहनो, भीतर लागी घात ॥
छापे तिलक बनायकै, माला पहिरी दोय।
दया बिना बक[1] सम वहो, साधुरूप नहिं होय ॥
दया न आई घट बिषे, हीया बड़ा कठोर।
यह नगरी कैसे बसै, तामें हिंसा[2] चोर ॥
पँडिताई बहुतै करी, दया न राखी जीव।
छाँछि[3] छाँछि तैं लैलई, डारि दिया तत घीव ॥
तोहिं पण्डित मैं कइ कहूं, मूरख कै परवीन।
लिया न तैं मत सूपका, चलनीका मतलीन ॥
दया गहेते सब नशैं, पाप ताप दुख द्वन्द।
ऐसो परम पुनीत[4] कूं, तजै सो मूरख अन्ध ॥
दया बिना नर पतित है, दया बिना नर दुष्ट।
दया बिना सुनवत बने, सबही थोथी शुष्ट ॥
जन्म मरण छूटै नहीं, नाहीं कर्म्म नशाहिं।
दया बिना बदला भरै, चौरासी के माहिं ॥
काम क्रोध मोह लोभये, गरवआदि भजिजाहिं।
चरणदास कहैं दया जो, घट में पहुंचे आहिं ॥
जितने वैरी जीव के, तिनमें रहै न एक।
चरणदास यों कहत हैं, दया जो आवै नेक ॥
दुख भाजैं सुख हों घने, काया नगरी ढंग।

---

१ बगुला २ जीवमारना ३ मट्ठा ४ पवित्र ॥

हिंसा रानी जो भजे, लेकर अपनो संग ॥
धन्य दया धनि शील कूं, जिनसे रीझै राम ।
गुरु शुकदेव बतावई, सबही सुधरै काम ॥

इति दया का अंग सम्पूर्णम् ॥

(माया अंग वर्णन)

राग भैरव ॥

बैठा गुरु सूं चलता चेला । सुखी होय रहै रैन अकेला ॥
दया क्षमा रख राम सुहाती । बात कहै करुई नहिताती ॥
बिन जांचे उपदेश न दीजै । तर्की[1] सूं चर्चा नहिं कीजै ॥
मौन गहै थोरासा बोले । पलक न मिलै नैनरहै खोले ॥
दृष्टिराख नासाके आगे । सत्य वचन मीठा मुख भाषे ॥
रसना उलट अकाश चढ़ावै । बिनहीं बादल जल बरसावै ॥
पवन साधि मनकूं ठहरावै । कामिनि कनक रूप बिसरावै ॥
आसन अडिग[2] सुरत अनहद में । अन्तर खोल मिलै नहिं जगते ॥
चरणदास शुकदेव बतावै । ऐसा होय महन्त कहावै ॥

दो० जो बोलै तौ हरिकथा, मौन गहै तौ ध्यान ।
चरणदास यह धारणा, धारै सो सज्ञान ॥
माया की अस्तुति करूं, होय रही संसार ।
अद्भुत लीला कर रही, शोभा अगम अपार ॥
माया सकल पसार है, नाना रँग बहु क्रान्ति ।
जहँलग यह आकारही, चंचल मिथ्या भ्रान्ति ॥
जसे सुपना रैन का, मुख दर्पण के माहिं ।
भासै है पर है नहीं, ज्यों तरवर की छाहिं ॥

---

१ तर्क करनेवाले अर्थात् पाखण्डी २ किसी का लगाव न हो जिससे डिगे नहीं ३ मर्मना ॥

यह माया सबकूं मोहै। वस होय न ऐसा कोहै॥
यह बहुत सोहनी लागै। सबही नरनारी पागै॥
कहिं चमक दमक बहुरूपा। अरु कहीं रंक कहिं भूपा॥
अरु जहँ तहँ अधिक तमासे। वह भांति भांतिही भासे॥
अरु जहँ लग सकल सवादा। कोइ करै जु वाद विवादा॥
अरु काम क्रोध मोह लोभा। अरु मान बड़ाई शोभा॥
अरु पांचौ इन्द्री जानौ। सब माया रूप पिछानौ॥
अरु पांच[1] तत्त्व गुण तीनो[2]। सो माया ही कूं चीन्हौ॥
वह मकर पेच छल जानै। अरु पहर पहर बहुबानै॥
गुरु शुकदेव जनावै। सब माया खेल दिखावै॥

दो० जेते सुख संसार के, सबही माया जार।
तामें दो कणका धरे, एक द्रव्य एक नार॥
लालच लागै चावसूं, गिरे आय करि लोय।
फँसे आपसूं आपही, गहि नहिं लाया कोय॥
पांचौ इन्द्री सों लखै, सो माया आकार।
याहीसेती सब भयो, जहाँ लगहै साकार॥

अरु माया रूप अनन्ता। कोइ जानै साधू सन्ता॥
कहा सुना अरु देखा। सब माया रूप विशेखा॥
आठ सिद्ध नौ माया। जहाँ जोगी तपी भुलाया॥
अरु माया फंदे मांहीं। सब जीव आइ फँसि जाहीं॥
वे नरक माहिं दुख पावैं। यम छप्पन त्रास दिखावैं॥
फिर भुगतै लख चौरासी। वे गरभ योनि के वासी॥
वे पशू देह धरि धावैं। नहिं मुक्त ठिकाना पावैं॥
चरणदास कहैं नर चेतौ। तजौ मायाहीं सूं हेतौ॥

---

१ पृथ्वी अप् तेज वायु आकाश २ सात्त्विक राजस तामस॥

दो० जगत वासना के तजे, माया की न वसाय ।
कर्म्म छुटै मिटै जीवता, मुक्तरूप हो जाय ॥
फँसे न इन्द्री स्वाद में, चरणकमल में ध्यान ।
पर आशा कोइ नारहे, लगै न माया वान ॥
सवमें अधिकी ज्ञान है, तासे ऊंचो ध्यान ।
ध्यान मिलावै पीवकूँ, पावै पद निरवान ॥
ध्याता ध्येय कैसे मिलैं, होय न विचमें ध्यान ।
तीनों एक हुये विना, लहै न पद निरवान ॥
इन्द्रिन के वश मन रहै, मनके वश रहै बुद्ध ।
कहो ध्यान कैसे लगै, ऐसा जहां विरुद्ध[1] ॥
जित जित इन्द्री जातहैं, तित मनकूँ लेजात ।
बुधिभी संगहि जात है, यह निश्चयकरि वात ॥
जित इन्द्री मनहूं गया, रही कहाँसूं वुद्धि ।
चरणदास यों कहत हैं, करि देखो तुम शुद्धि ॥
इन्द्री मनके वश करै, मन कर बुधिके संग ।
बुधि राखै हरि पद जहाँ, लागै ध्यान अभंग[2] ॥
इन्द्री मन मिल होत है, विषय वासना चाह ।
उपजै जैसे कामही, नारी मिल अरु नाह[3] ॥
न्यारे न्यारे तत रहैं, होत न कछू उपाध ।
जुदे राखमन इन्द्रियन, गुरुगम साधन साध ॥
इन्द्रीसूं मन जुदाकरि, सुरत निरतकरि शोध ।
उपजै ना विप वासना, चरणदास को वोध ॥
इन्द्री रोकेते रुकै, और जतन नहिं कोय ।
मन चंचल रिझवार है, रसिक सवादी सोय ॥

१ वैर २ जो भंग न हो ३ पति ॥

चलौ करै थिर ना रहै, कोटि यतनकरि राख ।
यह जबही वश होयगा, इन्द्रिन के रसनाख ॥
न्यारे न्यारे चहतहैं, अपने अपने स्वाद ।
इन पांचौमें प्रीति है, कछू न वाद विवाद ॥
दुर्जन के फूटे विना, तेरी होय न जीत ।
चरणहिंदास विचारिकरि, ऐसी कहिये रीत ॥
जुदी जुदी पांचौ कहौं, एक एक का भेद ।
जो कोइ इनकूं वशकरे, सबही छूटै खेद ॥

यह इन्द्री आंख विचारो । सो देत महा दुख भारो ॥
वह रागद्वेष उपजावे । अरु हरष शोक लै आवै ॥
सो रूप माहिं फँस जावै । तन मन में व्याधि उठावे ॥
वह देह औरके हाथा । करि डारै बहुत अनाथा ॥
वह फंदे माहीं डारै । अरु काम अगिनि में जारै ॥
यह डोलै दौरी दौरी । करचित बुधिकी गति औरी ॥
कोइ साधु शूरमा मोड़ै । जग सेती नैना तोड़ै ॥
कहैं चरणदास सुनि लीजै । कछु याका यतन करीजै ॥

दो० दीपक त्रिया निहारि करि, गिरै पतंग ज्यों जाय ।
कछू हाथ आवै नहीं, उलटी आप जराय ॥

उन तन मन सभी जराया । कछु भोंदू[1] हाथ न आया ॥
अरु विषय वासना फैला । जब छुटा रामका गैला[2] ॥
तौ मुक्ति कहां सों होई । दिया जन्म अकारथ खोई ॥
अब क्या शिरमारै कोई । घरहीं में दुर्जन सोई ॥
यह दृष्टि सदा की वैरी । जो सुरत बिगारै तेरी ॥
वह माया मोह लगावै । अरु चौरासी भरमावै ॥

---

१ पांखी २ रास्ता ॥

शर्म सकुच सब खोवै । अरु बीज कुबुधि का बोवै ॥
यह ठग चोरी की बानी । अरु जार[1] करम अगवानी ॥
यह पानप सभी घटावै । यमपुर के त्रास दिखावै ॥
कहैं गुरू शुकदेवा । ये आंख महादुख देवा ॥

दो० ऐसी इन्द्री आंख की, सो अपनी नहिं होय ।
गुरु शुकदेव बतावई, चरणदास सुन लोय ॥
दर्शन कीजै साधु का, कै गुरु का कर लोय ।
जहाँ तहाँ ब्रह्म देखिये, दुबिधा दुर्मति खोय ॥
वैरी मितर एकै सा, एके रूप कुरूप ।
एसी होवै दृष्टिही, जब समझै मन भूप ॥

सुन दूजै इन्द्री काना । सो गुरु परतापै जाना ॥
जब सुनै काम रस रीता । तब भूलै पढ़ सुन गीता ॥
मन उपजै काम तरंगा । जब होत ध्यान में भंगा ॥
फिर लोभ वचन सुन औरै । जब तृष्णा चहुँदिशि दौरै ॥
कहिं द्रव्य हाथ लगि जावै । यों शोचि शोचि दुख पावै ॥
कहै ठग चोरी कर लाऊं । कहिं गड़ा दबाहो पाऊं ॥
काहू सुनै जु दौलत बंधा । मनही मन रोवै अंधा ॥
यों उपजै अधिकी लोभा । जब बढ़ै पापको गोभा ॥
कहैं चरणहिंदास विचारी । सुन चेतो नर अरु नारी ॥
फिर सुनै वड़ाई कुल की । जब पुलक हंसत है मुलकी ॥
जो अपनी सुनै वड़ाई । जब अहुँ होत अकड़ाई ॥
फिर करन वड़ाई लागै । सोता ज्यों कूकर जागै ॥
जब उपजै बहु अभिमाना । अरु नेक न होवै नान्हा ॥
पर निन्दा वहुत सुहावै । नहिं और वड़ाई भावै ॥

---

१ छिनारा ॥

अहंकार बढ़ा मन माहीं। आधीन विना गति नाहीं॥
सुनि उपजै तामस अंगा। जब करै बहुतही दंगा[1]॥
मन क्रोधरूप हो जावै। उठ उठकर मारन धावै॥
कभी सुनै मोह के बैना। लगै हर्ष शोक दुख दैना॥
जब सुनै कुटुँब की नीकी। तब करै खुशी बहु जीकी॥
कोइ कुटुँब माहिं दुख पावै। सुन रोरो नैन गवाँवै॥
जो हिरन कानवश हुवा। तौ तीर लाग करि मूवा॥
शुकदेव कहैं यह जानौ। सब कान विकार पिछानौ॥

दो० मन दै सुनिये हरि कथा, सुनिये हरियश कान।
ताहि विचारिजु कीजिये, होय भक्ति का ज्ञान॥

उपजै ज्ञान भक्ति अरु योगा। सुन सुन उपजैराम वियोगा॥
उपजै प्रेम अनन्य उमाहा। होय उछाह दरशका चाहा॥
सुन सुन उपजै लक्षण साधू। सुन २ पावै भेद अगाधू॥
उपजै साधु संतकी सेवा। गुरुमुख होय सुनै यहि मेवा॥
सुनि २ उपजै भय अरु लाजा। सोवै सकल सँवारन काजा॥
सुनि सुनि यती सती हो जावै। नान्हाहो अभिमान नशावै॥
सुनि सुनि छूटै यमकी त्रासा। चौरासी में सहै न बासा॥
सुनि सुनि चार पदारथ पावै। आवागवन के बीज जरावै॥
सुनि सुनि काग हंस होजाई। चरणदास शुकदेव बताई॥

दो० सुनि २ उपजै सुबुधिही, लागै हरिका रंग।
सुनिसुनिउपजैकुबुद्धिही, खोटी उठै तरंग॥
ऐसी इन्द्री कानकी, जाके युगल सुभाव।
कथा कीरतनहीं सुनौ, करि२ कोटि उपाय॥

---

1 फिसाद॥

वचन सुनो गुरु साधुके, मनकूं लावो मोर।
विषय वासनासूं निकस, आवै हरिकी ओर॥
सरवन इन्द्री में कही, दोनों अंग दिखाय।
जिह्वा इन्द्री कहत हैं, चरणदास चितलाय॥
कुटिल जु इन्द्री जीभकी, चाहे षटरस स्वाद।
यावश हो अवगुण करै, जन्म जाय वरवाद॥

यह वहुत चटोरी कहिये। याही ते डरते रहिये॥
यह चोरी भी करवावै। यह पकड़ वन्ध में पावै॥
करै याही कारण जारी। यह करे वहुतही ख्वारी॥
यह अपल[1] खान सिखलावै। अरु गाली मार दिलावै॥
अरु वहुते झूठ वुलावै। हो मीत नरक लेजावै॥
खेलै याही कारण जुवा। दुनियां में फिट फिट हूवा॥
ये पांचो ऐव सुनाऊं। रसना में सभी दिखाऊं॥
यह महा अपरवल जानौ। अरु रणजीता हो मानौ॥

दो० जिह्वा के जीते विना, गये जन्म सव हार।
चरणदास यों कहत हैं, भये जगत में ख्वार॥
वंशी डारी ताल में, मछरी लागी आय।
जिह्वाकारणजियदियो, तलफितलफि मरिजाय॥
तजा न जिह्वा स्वादकू, वा संग दीन्हे प्रान।
जो कोइ ऐसा जगत में, सो अज्ञानी जान॥
यासूं ले हरनामहीं, गुणावादही भाख।
जो वोलै तौ सांचहीं, नाहीं मुखमें राख॥
मीठा वचन उचारियो, नवता सवसूं वोल।
हिरदेमाहिं विचारिकरि, जवमुख वाहरखोल॥

1 नशा॥

विना स्वादही खाइये, राम भजन के हेत ।
चरणदास कहै शूरमा, ऐसे जीतौ खेत ॥
जिन जीताहै जीभकूं, जिन जीती सब देह ।
कहै गुरू शुकदेवजी, मुक्ति धाम फल लेह ॥
रसना जीतै भक्ति जो, सो योगी सो साध ।
अगम पन्थ रांह पगधरे, पहुँचै देश अगाध ॥
त्वचा सुइन्द्री काम की, नितही खेलं दाव ।
पशुपक्षी असुरा नरा, फँसे आपकरि चाव ॥

यह त्वचा सु मल मल मांजे । अरु काजल सुरमा आंजे ॥
यह तेल फुलेऊ लगावै । अरु चिकना गात बनावै ॥
अरु वस्तर भूषण पहिरे । करै अंजन मंजन गहिरे ॥
अरु लपरस की विधि ठानै । सब याही कूं सुखमानै ॥
अरु फँसे आय करि दोऊ । अब निकसन कैसे होऊ ॥
हिन गांठ पेंच गहि दीन्हा । दोउ नेह वचन बहु कीन्हा ॥
अरु एक एकनै बांधा । वह समझै नाहीं आधा ॥
अब शीश धुनै पछितावै । दोउ चले नरक कूं जावै ॥
कहै चरणदास नहिं जानौ । तुम औगुण ना पहिचानौ ॥

दो० त्वचास्वाद सब वश भये, फँसे जगत के माहिं ।
जो कोई निकसो चहै, सोभी निकसै नाहिं ॥
धोखे की हथिनी लखी, आयोगज ललचाय ।
खंदक माहीं रुकिगयो, शीशधुनै पछिताय ॥
कछू हाथ आयो नहीं, परो फन्द में जाय ।
मैन महावत वश भयो, शिरमें अंकुश खाय ॥
जङ्गल में आनन्दसूं, बहुतै केलि कराय ।
अबतौ द्वारे भूपके, परो बन्ध में आय ॥

ऐसेही यह नर फँधो, देखि कामिनी रूप।
जन्म गँवायो दुखभरो, पड़ो अविद्या कूप॥
करी न हरिकी भक्तिही, गुरु सेवा तजिदीन।
सुनी न हरिकी गुणकथा, सतसंगत नहिंकीन॥
फिर ऐसो कब होयगो, पावै मानुष देह।
अबतौ चौरासी विषे, जाय कियो उन गेह॥
जीतौ इन्द्री त्वचाकी, कहिया श्रीशुकदेव।
यासे तपही कीजिये, चरणदास सुनलेव॥

शीत उष्णका दुख नहिं मानै। कोमल सकत[1] एककरि जानै॥
तपसूं काया उमर गवाँवै। अष्टसुगन्ध निकटनहिं जावै॥
आन त्वँचा रूपरस नहिं करै। कामअग्निनि हियमें ना जरै॥
काया तावन करनी ठानै। यही तपस्या मन में आनै॥
त्वचा सु इन्द्री जीतौ ऐसे। मैं यह भेद बतायो जैसे॥
गुरु शुकदेव बतावै सबही। चरणदास करितन सूं तपही।

दो० त्वचासुं इन्द्रीं वश किये, छूटै काम कलेश।
यत शत शील सँतोषसूं, लगै न माया लेश॥
त्वचा अंग पूरो कियो, कहूँ नासिका अंग।
तावशअलिसुत जीदियो, जाको कहूँ प्रसंग॥
बास आस गुंजत फिरो, बैठो कमल मँझार।
सूर[3] छिपेसे मुदिगयो, अब शिर देदै मार॥
कुंजर[4] आयो तालपै, जल पीवन के काज।
प्यासबुझी करने लगो, खेलकरिनको साज॥
खेलकरत कमलहिगह्यो, लीन्ह्यो ताहि उपाड़ि।
फेरिदियो मुख माहिहीं, चाबिगयो देजाड़ि॥

---

१ कड़ा २ देहकी खाल ३ सूर्य ४ हाथी॥

ऐसेही ये नर फँसे, परे काल मुख जाय ।
चरणदास यों कहत हैं, चाले जन्म गवाँय ॥
सुगंध ओर हरषे नहीं, दुरगन्धे न रिसाय ।
ऐसे जीते नासिका, मन भवँरा ठहराय ॥
समझनकूँ तुक एक है, भूलनकूँ तुकलाख ।
गुण अवगुण इन्द्री कहैं, सो तू मन में राख ॥
जो इन्द्रिनके वश भयो, बांधो नरके जाय ।
चौरासी भरमत फिरै, गर्भयोनि दुख पाय ॥
जो इन्द्रिनके वशभयो, पावै ना आनन्द ।
बार बार जगमाहँहीं, छूटै ना सम्बन्द ॥
भक्तिमाहिं चित ना लगै, सबही बिगड़ैं काम ।
जो इन्द्रिनके वश भयो, ताको मिलैं न राम ॥
चरणदास यों कहत हैं, इन्द्री जीतन ठान ।
जग भूलै हरि कूँ मिलै, पावै पद निरबान[1] ॥

इन्द्री जीतै सो ब्रह्मज्ञानी । इन्द्री जीतै सोई ध्यानी ॥
इन्द्री जीतै सो हरिदासा । अमरलोक में पावै बासा ॥
इन्द्री जीतै सोई सिद्धा । अष्ट कला अरु पावै ऋद्धा ॥
इन्द्री जीतै सोई शूरा । इन्द्री जीतै सो जन पूरा ॥
इन्द्री जीतै सो सतवन्ता । इन्द्री जीतै गुणी महन्ता ॥
इन्द्री जीतै राम रिझावै । इन्द्री जीतै सब कुछ पावै ॥
इन्द्री जीतै सो सन्यासी । इन्द्री जीतै सोइ उदासी ॥
इन्द्र जीतै सब फल दायक । इन्द्री जीतै सब कुछ लायक ॥
इन्द्री जीतै छुटै विदेशा । याजग में कुछु लगै न लेशा ॥
इन्द्री जीतै परम सुखारा । निश्चय पहुँचै हरि दरबारा ॥

---

१ ब्रह्मपद ॥

इन्द्री जीतै सो रणजीता । इन्द्री जीतै आतम मीता[1] ॥
इन्द्री जीतै ध्यान लगावै । सो निश्चय ईश्वर ह्वै जावै ॥
इन्द्री जीतै मिलै भगवन्ता । इन्द्री जीतै जीवनमुक्ता ॥
चरणदास मुनि कहैं शुकदेवा । इन्द्री जीतै सो गुरुदेवा ॥

दो० मन इन्द्रिन के वशभयो, होय रह्यो बेढंग ।
आपा बिसरो जग रलो, हुवो जो नाना रंग ॥
आवै तरंग क्रोधकी, होत जुवा[2] के रूप ।
काम लहर कबहूं उठै, ताके होत स्वरूप ॥
लोभ कामना जब उठै, जभी लोभ रँग होय ।
मोह कलपना के उठे, मोह वरण हो सोय ॥
मनहीं खेलै खेल सब, मनहीं कर अभिमान ।
मनहीं यह जगह्वै रहो, अबसुनिमनकाज्ञान ॥

कबहूं यह मन होवै गिरही । कबहूं यह मन होवै विरही ॥
कबहूं यह मन होवै रोगी । कबहूं यह मन होवै शोगी ॥
कबहूं यह मन होवै नारी । कबहूं यह मन राखै ख्वारी ॥
कबहूं यह मन दौरा डोलै । कबहूं यह मन टेढ़ा बोलै ॥
कबहूं यह मन कुलका ऊंचा । कबहूं यह मन नकटा बूंचा ॥
कबहूं यह मन दुन्द मचावै । कबहूं क्षमा शील घर आवै ॥
कबहूं यह मन होवै दाता । कबहूं करै सूमसी बाता ॥
चरणदास कहैं मनकूं जानो । ऐसी विधिमनकूं पहिंचानो ॥

दो० बहुरूपी बहु रंगिया, बहुतरंग बहु चाव ।
बहुतभांति संसार में, करि करि घने उपाव[3] ॥

यह मन राजा होवै भोगी । यह मन त्यागी होवै योगी ॥
यह मन होवै हरिका भक्ता । यह मन होवै योगरु युक्ता ॥

---

१ आत्माका जाननेवाला २ जवानी. ३ उपाय करनेवाला ॥

यह मन होय विवेकी[1] ज्ञानी । यह मन तपिया जपिया ध्यानी ॥
यह मन करै दयाकी बातैं । यह मन करै जीव की घातैं ॥
यह मन यती सती अरु शूरा । यह मन काशी पण्डित पूरा ॥
यह मन तीरथ वर्त्त उपासी । यह मन ठकुरानी अरु दासी ॥
यह मन होवै देवी देवा । या मनका कोइ लहै न भेवा ॥
यह मन प्रेमी नेमी जनहीं । चरणदास कहैं सब कुछ मनहीं ॥

दो० या मनके जाने विना, होय न कवहूँ साध ।
जक्त वासना ना छुटै, लहै न भेद अगाध ॥
तैं मनकूं जाना नहीं, करी न याकी सार ।
चौरासी छूटी नहीं, उपजा वारंवार ॥

मनकूं सतसंगति लै जावो । कानो हरियश कथा सुनावो ॥
भांति भांति के रँग ललचाव । तौ हरिके रँग क्यों न रँगावै ॥
तौ याको ज्ञानीही कीजै । जक्त ओर जानै नहिं दीजे ॥
कै दीजे हरिहीका ध्यानू । राम भक्ति में याकूं सानू ॥
कै कीजे यह योगी पूरा । याहि सुनावो अनहद[2] तूरा ॥
या मनकूं कीजै वैरागी[3] । याकूं कीजे सर्वस त्यागी ॥
जग रँग उतरि ब्रह्म रँग लागै । जातें कर्म भर्म भय भागै ॥
चरणदास शुकदेव बतावै । मन फेरनि की राह दिखावै ॥

दो० मन ने आप गवाँइया, ज्ञान बुझाया दीव ।
करमलगा भरमतफिरो, मिला न अपना पीव ॥
दौरि दौरि रसओरही, होय रहा कंगाल ।
नातरु आगे भूपथा, ऊंचा बड़ा दयाल ॥
पांचौ इन्द्री स्वाद में, भयो निपट आधीन ।
राजवड़ाई सब नशी, भयो मूढ़ मति हीन ॥

१ विचार करनेवाला २ ब्रह्मशब्द का बाजा ३ प्रेमसे अलाहिदा ॥

सरकिजाय विषओरही, बहुरि न आवै हाथ ।
भजनमाहिं ठहरै नहीं, जो गहि राखूं बाथ ॥
मन निश्चल आवै नहीं, निकसि २ भजिजाय ।
चरणदास यों कहत हैं, काहूकी न बसाय ॥
पचिहारे ज्ञानी तपी, रहे बहुत शिर मार ।
मन परेत सूं डर लगै, लै डूबै मँझधार ॥
यह मन भूत समान है, दौड़े दांत पसार ।
बांस गाड़ि उतरै चढ़ै, सब बल जावै हार ॥
यों आतम में मन धरै, होय जहां लौ लीन ।
ठहरि रहै फिरि ना चलै, सकल विकल हो क्षीन ॥
भजै तौ जानि न दीजिये, घेरि घेरि करि लाव ।
या मन कूं परचाय करि, ध्यानहिं माहिं लगाव ॥
और कहौं विधि दूसरी, सुनियो चित्त लगाय ।
रामनाम मनसूं जपै, चंचलता थकिजाय ॥
पवन रुकै जब मन थकै, और दृष्टि ठहराय ।
ऐसी साध न साधिये, गुरुगम भेद मिलाय ॥
इन्द्री रोकै मन रुकै, अरु उत्तम विधि एहु ।
चरणदास यों कहत हैं, यह साधन करि लेहु ॥
इन्द्रिन कूं मन वश करै, मनकूं वशकरै पौन ।
अनहद वशकर वायुकूं, अनहदकूं लै तौन ॥
याको नाम समाधि है, मन तामें ठहराय ।
जन्म जन्मकी वासना, ताकूं दग्ध[1] कराय ॥
इन्द्री पलटै मन विषे, मन पलटै बुधि माहिं ।
बुधि पलटै हरिध्यानमें, फेरि होय लै जाहिं ॥

---

१ जलाना ॥

दग्ध वासना होय जब, आवागमन नशाय ।
कहैं गुरू शुकदेवजी, मुक्तरूप ह्वै जाय ॥
मनके सगरे भेदही, जाको दियो जिताव ।
चरणदास अब कहत हैं, झूंठ सांच को न्याव ॥
जो कोइ बोलै झूंठही, ताकूं लागै पाप ।
जन्म जन्म छूटै नहीं, दुखदे तीनौ ताप[1] ॥

बोल झूठ महा अपराधी । धरम छुटै उठिलागै बाधी ॥
झूठा सौ सौ सौगँद खाय । झूठा लेवै कर्म लगाय ॥
झूठा करै बिराना बुरा । झूठा रहै जक्त में गिरा ॥
झूठे की परतीति न होई । झूठा बोल न बोलै कोई ॥
झूठा हरिकी भक्ति न पावै । झूठा घोर कुण्ड में जावै ॥
झूठेकूं लागै यम मार । झूठा चौरासी में ख्वार ॥
झूठ वचन का भारी दोष । झूठे की होय गती न मोष ॥
झूठे के नहिं गुरू न राम । झूठेकूं नाहीं विश्राम ॥
चरणदास शुकदेव बताव । झूठे सबी नरककूं जावैं ॥

दो० झूठे के मुँह दीजिये, नौसादर का बाप ।
डरा करै सकुचा रहैं, वह शरमिंदा आप ॥

झूठेकूं हत्यारा जानौ । झूठेकूं ठग चोर पिछानौ ॥
झूठा कुटिल शराबी होय । झूठा कहिये कामी सोय ॥
झूठेही को जानो ज्वारी । समझि देखि सबही नर नारी ॥
सकल ऐब झूठ में पाऊं । एक एक क्या खोल दिखाऊं ॥
पांचौ खोंट सबन के राजा । सो मैं कहे चितावन काजा ॥
झूठ पाप की कहिये खानि । सो यह करै पुण्यकी हानि ॥
सबही अवगुण झूठे माहीं । चरणदास शुकदेव बताहीं ॥

---

१ दैहिक दैविक भौतिक ॥

दो० सांच विना साधू नहीं, कवहुं न मिलिहैं राम।
सांच विना गतिनाळहै, पावै ना निजधाम॥
सत सतमुखसूं बोलिये, सतही चलिये चाल।
सतही मनमें राखिये, सतही रहिये नाल॥
सांचे कूं ग्रह ना लगै, सांचे कूं नहिं दाग।
सांचे शाप न लागई, सब दुख जावै भाग॥
बड़ी तपस्या सांच है, बड़ा बरत है सांच।
जासों पाप सभी जरैं, लगै न गर्मको आंच॥
जाका वचन मुड़ै नहीं, सांचे सब व्यवहार।
चरणदास त्रयलोक में, कभी न आवै हार॥

सांचे के मनहीं में राम। सांचा करै न छल के काम॥
सांचा होकर सुमिरण करै। आप तरै औरन लै तरै॥
सतवादी की पति है सांच। ताकूं लगै न दिव की आंच॥
सांचे चोर चुराया घोड़ा। परमेश्वर ताका रँग मोड़ा॥
और चोर चोरीसूं गया। सांच प्रताप अचम्भा भया॥
औरे सांच प्रताप अनन्ता। सबही जानै साधू सन्ता॥
लाख बातका एकहि जोड़। सांचा पुरुष सबन शिरमोड़।
आवै सांच परम सुख पावै। चरणदास शुकदेव सुनावै॥

दो० सांचे की पदवी बड़ी, दुष्ट साध के माहिं।
दोनों अस्तुतिही करैं, निन्दक कोई नाहि॥
गुरू कहै सो कीजिये, करै सो कीजै नाहिं।
चरणदास की सीखसुन, यही राखि मनमाहिं॥
कथा सुनी व्रतहू किये, तीरथ किये अघाय।
गुरुमुख के होये विना, जप तप निर्फल जाय॥

अब गुरुमुख के लक्षण गाऊं, जुदे जुदे करि सब समझाऊं॥

इन कूं समझ धरै हिय कोई । पूरा गुरुमुख कहिये सोई ॥
प्रथमहिं गुरुसों झूठ न बोलै । खोटी खरी करै सब खोलै ॥
दूजे गुरुको पय न लगावै । निश्चय गुरुके चरण मनावै ॥
तीजे अज्ञाकारी जानौ । इन लक्षण गुरुमुखी पिछानौ ॥
जो कोइ गुरुका लेवै नाम । ताको निहुरि करै परणाम ॥
जो कहुं देखै गुरुका बाना । जाकूं जानै गुरू समाना ॥
चरणदास शुकदेव बखानै । गुरुभाई कूं गुरुसम जानै ॥

दो० गुरुभाई कूं पूजिये, धरिये चरणन शीश ।
चरणोदक फिरि लीजिये, गुरुमत बिस्वाबीश ॥

जो कहुं गुरुका वस्तर पावै । हिये लगाय चूम दृगत्यावै ॥
गुरू देश का मानुष आवै । दै परिक्रमा बलि बलि जावै ॥
कहै दया करि दर्शन दीन्हें । मेरे पाप भये सब क्षीन्हे ॥
जो अपने गुरुद्वारे जइये । देखत पौरि बहुत हरषइये ॥
ह्वांई सूं दण्डवत जु कीजे । दर्शन करिकरि सर्वस दीजे ॥
फिर ठाढ़ो रहै जोरे हाथा । बैठे तब आज्ञा दे नाथा ॥
जो बोलैं सो मन में धरिये । अपने अवगुण सबही हरिये ॥
चरणदास शुकदेव बतावै । ऐसा गुरुमुख राम रिझावै ॥

दो० साधुन की निंदा बुरी, मत कोइ कीजो भूल ।
दुनिया में दुख पायहैं, रहैं नरक में झूल ॥

साधुका निन्दक तन मन दुखी । साधुका निन्दक होय न सुखी ॥
निन्दक साधु दरिद्री होय । निंदक डारै सर्वस खोय ॥
साधुका निंदक नरक मँझार । निश्चय खावै यमकी मार ॥
साधुका निंदक पूरा पापी । साधुका निंदक डूबै आपी ॥
मूरख होय सो निन्दा करै । साधु संत कूं अवगुण धरै ॥

---

१ किसी प्रकार का झूठा दोष २ चरणों का धोयाहुआ जल ॥

साधुका निन्दक श्वान समान । साधुका निन्दक शूकर जान ॥
साधु रामकी कहिये देह । निन्दक के मुख माहीं खेह ॥
चरणदास निन्दा तजि दीजै । भक्तोंकी अस्तुतिही कीजै ॥

दो० साधोंकी अस्तुति किये, हरिकी अस्तुति होय ।
भक्तों की निन्दा किये, प्रभुकी निन्दा सोय ॥

श्रीनिकुंजविहारिणो नमः ॥

अथ श्रीशुकदेव मुनिराज महाप्रभु के शिष्य श्रीश्यामचरणदास जी महाराज रचित वेदस्तुति लिख्यते ॥

दो० भक्ति पदारथ कारने, देहुं वेद की साख ।
ताको भेद मिलाइये, चरणदास कहें भाख ॥
गुरु शुकदेव प्रताप सों, कहूं वेद को वाक ।
संस्कृत भाषा करी, आदि सनातन साख ॥
नारद सू नारायनहि, देव लोक सनकाद ।
शुकदेव परिक्षित सों कही, मैं कहुं सुनियो साध ॥

अष्टपदीछन्द ॥

श्री शुकदेव गुरु के बचन विचार के ।
वेद स्तुति की कथा कहूं उरधार के ॥
भक्ति प्रापत होय जक्त व्याधा नसे ।
अंत मुक्ति पद पाय अमरपुर जा बसे ॥
श्री भागवत पुराण दस्म असकंध में ।
कही कथा सुखदान हिये के हुलास तें ॥
राजा परिक्षित कहत श्रीशुकदेव कों ।
मोहिं कहो समझाय सकल याभेव कों ॥
हरि स्तुति भलिभांति सूं वेदन गाइहैं ।
निर्मल परम पुनीत सो मोमन भाइहैं ॥

निरगुन स्तुति अधिक जू सरगुन में कही।
मेरे मन में समझि न आवत कछु यही॥
बोले गुरु शुकदेव ये सुन के बात कूं।
राजा मनचितलाय सुनों या काथ कूं॥
हरि इच्छा सों जबहि उन्ह शिक्षा भई।
तब अधिकारी होय स्तुति वेदन कही॥

दो० नारायण पै जाय के, नारद चरणहि दास।
यही बात पूछत भए, कर कर उमंग हुलास॥

अष्टपदीछन्द॥

हरि भक्तन के मांहि महा मुनि अति गुनी।
एक दिवस कर चाव श्री नारद मुनी॥
श्री नारायण पास जु वह चल कर गयो।
दरशन उनके पाय मुदित मन में भयो॥
नमस्कार कर जोर ऋषी ज्ञानी महा।
नारायन सों बोल बचन ऐसे कहा॥
स्तुति श्रीभगवान की वेदन गाई है।
सो सब हम को आज कही समझांईए॥
श्रीनारायण बोल वचन मुखते कहे।
नारदसों यहि भांति वचन भाखत भये॥
एक दिवस सनकादि ऋषी शिरमौरही।
सुत ब्रह्मा के जान न उन सम औरही॥
बैठ सभा के मांहि देवही लोक में।
राजत जैसे चंद तारन संयोग में॥
तहां चली यह बात सकल मन भांवती।
वेदन स्तुति कही किहिं भांति सुहावती॥

चारों भैया जान सनक कूं आदि दे ।
परम पुनीत प्रवीन सकल गुन आगरे ॥
भगवत कथा सब कोऊ सुने चित लायके ।
जो पे ज्ञानी होंहिं ज्ञान को पाय के ॥
तिहि कारनहीं बैठ सकल भ्राता तहां ।
बोले अति परवीन सनक इहि बिधि जहां ॥
वेदन ऐसी भांत सूं यह स्तुति करी ।
जै जै जै तुम आदि पुरुष नित हो हरी ॥
त्यागो निद्रा जोग जागो करतार जू ।
निज माया बिस्तार सृजो संसार हू ॥
जो पै माया रहत तुम्हारे संगही ।
तुम कबहु करतार जु वाके बस नहीं ॥
खोटी अधम जो नारि कहीं कोई होत है ।
अपने पति को दोष लगावत है वहै ॥
यह कारन मन लाय के माया परिहरो ।
जग सिरजन के काज आप अज्ञा करो ॥
तुम तिरबिधि भगवान रहत ब्रह्मण्ड में ।
प्रथम सूक्षम प्रान रहत है पिण्ड में ॥
दुतिय रूप बिराट तुम्हरो जानिये ।
धारन हारो सृष्टि को उर में आनिये ॥
तीजो व्यापक होय सबनही जीव में ।
जानत पंडित लोय जू आपने हीय में ॥
तुमही सबके आदि जक्त करतार हो ।
और सकल या सृष्टि के भरतार हो ॥
छिनमें जग उपजाय फेर परल करो ।

घटो बढ़ो तुम नाहिं सदा पूरन रहो॥
आदि अंत सब सृष्टि के पुरुष अनन्त जू।
नितही इकरस रहत तुमही भगवंत जू॥
जो तुम ऐसी भांति कहो हरि देव जू।
हमसो उत्पति भई तुम्हारी भेव जू॥
तुमतो कैसी भांति हमें पहचानई।
स्तुति ऐसी भांति कैसे के बखानई॥
दो॰ ऐसी बुद्धि हमरी भई, तुम्हरे ही परताप।
हम तो चरणहिं दास हैं, तुमही करता आप॥

अष्टपदीछन्द॥

यह सब किरपा नाथ तुम्हारी जानियै।
ना तो केतिक बुद्धि हमारी मानियै॥
तुमही सगरी सृष्टि के कारन रूप हो।
तुम उपजावन पालन मारन रूप हो॥
ज्यों घट नाना भाँति यों ही संसार है।
फूटे मांटी होय सभी यों विचार है॥
ऐसेही इक ब्रह्म सकल व्यापक सदा।
नाम अनेक कहाय हम बरने कहा॥
निराकार निरलिप्त निरगुन करतार हो।
अपने भक्तन हेत लेत अवतार हो॥
तुमरी लीला नाथ जो परम सुहाई।
जो जन कहै और सुनै हिये में लावई॥
ते जन लहत पुनीत जो पद निरबान कूं।
अंतकाल तुम्हें मिलत जो ऐसे ज्ञान सूं॥
तुमरी भक्ति अनन्य जो कोई जन करै।

जन्म सुफल तिहि होय मुक्ति पर पग धरै ॥
प्रेम मगन ज्यों साधु तेरो गुन गावई ।
होय सु महाप्रसाद प्रीति सों पावई ॥
जोगेश्वर चित लाय जू तुमकूं ध्यावई ।
प्रान वायु कूं खैंच त्रिकुटी लावई ॥
हृदय कमल के मांह तुमहि कूं देखई ।
अद्भुत रूप सरूप अनूपम पेखई ॥
अगम पंथ भगवान तुम्हारो जानिये ।
कहन शक्त परमान कोउ हिय आनिये ॥
अगम पंथ इह भांति तुम्हारो नाथ जू ।
पहुँच सके किहिं भांति सुनो यह बात जू ॥
भक्ति तुम्हारी नाथ स्मृति वरनन करैं ।
पावें इस विधि तोहि प्रीति तुमसों करैं ॥
तुम्हरी भक्ति अनूप हिये में धारई ।
चार पदारथ संत कबहु चाहत नहीं ॥
ऐसे लक्षन होहिं तुम्हारे भक्त के ।
अंतर प्रेम अगाध बाहर जड़ रूप से ॥
मन के मांहीं ध्यान तुम्हारो ही बसे ।
कबहुँ रोवे आप कबहु आपहि हंसे ॥
हंसत तुम्हारे ध्यान बहु हरखाय के ।
देख दशा संसार रोवे पछताय, के ॥
कबहु मगन मन होय ध्यान दृढ़ कर गहे ।
साजे तुम्हरी भक्ति जहां चित्त दे रहै ॥
बिना भक्ति कुछ और न जिय में जानई ।
बिरले ऐसे कोय जक्त में मानई ॥

तुम्हरो रूप अरूप
जहाँ कर्म मन वचन
हम हूँ जो पे वेद
तो पै तुम्हरो भेव क
तुम्हरो रूप अरूप न
पंथ तुम्हारे की देह बताय
ज्ञान भक्ति बैराग्य जु ... ऊपजै।
तब तुम्हरी पहिचान हिये में नीपजै॥
दस इन्द्रिन कूँ रोक जु मन के बस करै।
सो मन अपनी बुद्धि मांझही ले धरै॥
जब वह अपनी बुद्धि तुमहीं सो लावई।
सोई जोगी होय वे साधु कहावई॥
जो पै नाम प्रकाश तें बहु विधि संचरे।
भक्ति बिना निर्वान को पद नाहीं लहै॥
जो पै काल परयन्त जो जीवे नर कोई।
तो भी होवे नाश ब्रह्मा के संगवही॥
जोपै देवन मांहिं जाय के अवतरे।
तो भी न छूटैं कर्म मुक्ति घर ना करें॥
बेडी लोहे की होहि सोने की जानिये।
दोऊ एक समान उहि विधि मानिये॥
तुम्हरो पुरुष स्वरूप प्रगट जब होय जू।
ब्रह्मादिक सब देव पूजत में सोय जू॥
कर कर यज्ञ उपाय जगत के लोय हैं।
देवन पूजा साज करत सब कोय हैं॥
स्वर्ग लोक में जाय ताको फल पावई।
मृत्यु लोकहीं मांहिं बहुरि फिर आवई॥

ग वह निहकर्महीं जो होय है ।
क पदारथ पंथ न पावत कोय है ॥
विषय भोग रस स्वाद जोई जन पर हरै ।
भक्ति जोग दृढ़ होय जहां मन लै धरै ॥
तुम बिन और न चहै गहै पर नाम को ।
लहै तुम्हारो नाम रहै विश्राम सों ॥
जो नर जग के मांहिं इन्द्रिन के बस रहै ।
कीट योनि के मांहिं जन्म सोई लहै ॥
बहुर लेत जड़ योनि मांहिं अवतारहीं ।
फिर आवत है पशुकी योनि मझारही ॥
तिहि पीछे नर देह वही जो पावई ।
पहिले हीं वह नीच योनि में आवई ॥
बहुरो ऐसे च्यार चरण में अवतरै ।
ऐसे बिषई लोय बहुत भरमत फिरै ॥
माया तुम्हरी अपार सुचतुर कहावई ।
एकै रूप अनेक भांति दिखलावई ॥
विविध वरन सों होंय भासे साकारही ।
उनही रच्यो सब जक्त जहां लौं आकारही ॥
वृक्ष की छाया देख सरोवर नीरही ।
छेरी मन ललचाय आई वा तीरही ॥
वह तो इतनी शक्ति कहां सों पावई ।
जासों ही वह निकट वृक्ष के आवई ॥
या विधि प्रानी सबै माया में डूबई ।
नाहीं तो वह आप काहू व्यापत नहीं ॥
माया ही के माहिं जो कोऊ जन बंधे ।

चौरासी के माहिं सदा भरमत रहै ॥
जों जन मन ते आप माया को परिहरै।
हरि के चरनों मांहिं ले चित अपनो धरै ॥
परम भक्त जो होय जक्त के मध्य ही।
जीवन मुक्ति को पाय कछू संशय नहीं ॥
माया ही के संग मोह उन लाइया।
तिहि कारन नर जीव जु नाम कहाइया ॥
अहंकार के संग सों छूटत हैं जबै।
परमातम अरु ब्रह्मरूप होवें तबै ॥
मनुष रूप को जन्म दुर्लभ जग मांहिं है।
देवन हूं को कठिन परापत नाहिं है ॥
सकल देव ईहिं भांति मनोरथ नित करैं।
मनुष जन्म को पाय के भवसागर तरैं ॥
नर शरीर को नवका समझी जानिये।
वेद पुरानन मांहिं जु साख पिछानिये ॥
सतगुरु खेवट रूप हिये में आनिये।
या नवकाको पार लगावन जानिये ॥
अलख ईश भगवान जो कृपा निधान है।
भवसागर के तरन को रूप विधान है ॥
तिन के शरने आय चरणही दास हो।
प्रेमा भक्ति अनन्य करे निरवास हो ॥
याही विधि सों पार न होवे नर कोई।
आतम घाती जीव जान लीजे सोई ॥
पुनि चौरासी लक्ष कि योनि मझारही।
भ्रमत रहत इहिं भांति जु बारंबारही ॥

दारा सुत अरु बंधु हितू मन आनिये ।
मिथ्या सब व्यवहार जक्त को जानिये ॥
जो जन इन के मांहिं बंधे चित देवई ।
कबहूं मुक्ति न होय जन्म फिर लेवई ॥
मन बच करके प्रीति जो तुमसों साजई ।
कर्म बन्ध कट जांय मुक्ति पुर राजई ॥
तुमरे जन जे लोय जु गिरह को परहरें ।
तुम कारनही नाथ बहुत तीरथ करें ॥
जेते तीरथ होहिं गंग कूं आदि दे ।
तुम चरणोदक होय वहै तीरथ सबै ॥
तुम चरणन के ध्यान मगन निशि दिन रहैं ।
तुम्हरी अमृत कथा सुनैं नित सुख लहैं ॥
इहि बिधि तुमसों प्रीति सदा जु निबाहई ।
बिना. भक्ति वे मुक्ति कबहुँ नहिं चाहई ॥
और वस्तु की चाह कहा मन लावई ।
छिन में सबको नाश न कुछ ठहरावई ॥
उनके मनके मांहिं कछू इच्छा नहीं ।
बन में कारन कोन रहै निशि दिन वहीं ॥
तन मनहू की आप कछू उन सुधि नहीं ।
वे तो मृत्यु समान फिरें जग मांहि ही ॥
इहि बिधि ऐसी भांति जु कोऊ जन रहै ।
जन्म सुफल तिहि होय जक्त में सुख लहै ॥
बिमुख होहिं तुमसों जो प्रानी मूढ़ही ।
पशु समान वे लोय अज्ञानी गूढ़ही ॥
याहि जक्त के मांहिं कर्म नहिं होय जू ।

का बिधि तुमरी भक्ति करैं सब लोय जू॥
जब लग तुम्हरी भक्ति हिये नहिं लावई।
तब लग कैसी भांति मुक्ति पद पावई॥
कीजै सबही कर्म धर्म की रीतिही।
याही बिधि भगवान सों उपज प्रीतिही॥
जब लग भक्ति की रीति न मन में आवई।
तब लग कर्म की रीति न छोड़ गंवावई॥
बिधि सों सगरे कर्म सोई नर साजई।
अंत होय निहकर्म मुक्ति पुर राजई॥
कर्म भक्ति को त्याग जु कोऊ जन करै।
घोर नर्क के मांहिं सोई प्रानी परै॥
जग में मनुष शरीर बृक्ष सम जानिये।
तिहि ऊपर द्वै पक्षी ही पहिचानिये॥
एक पक्षी तिही मांहिं ताको फल पावई।
अतिही दुर्बल छीनि दृष्टि में आवई॥
दूजो पक्षी कछु न जाको फल लहै।
मन में अति आनन्द लसत नितही रहै॥
वसुधा में जो भक्त तुम्हारे कहावई।
रैन दिवस चित आप तुम्हीं सों लगावई॥
तिनकूं सगरे देव बहुत भरमावई।
अष्ट सिद्धि नव निद्धि को लोभ दिखावई॥
लोभ कर सिध देख निद्धि पर मन वहै।
भक्ति पदारथ सोय जो कैसी बिधि लहै॥
अति अद्भुत इहि भांति ब्रह्मण्ड बनाइया।
सातही तत्त्व के संग सोई लिपटाइया॥

पहिले धरती तत्त्व हिये में आनिये।
ताते दस गुनों नीर जीय में जानिये॥
बहुर अग्नि अरु पवन और आकाश है।
षष्ठस् अहस् जु तत्त्व सदा परकाश है॥
महत्तत्त्व रोसी भांत जु चित में जनिये।
अष्टम मायारूप सकल पहिचानिये॥
जो नहिं होत अशक्त जक्त व्यवहार में।
मन में तुम्हरी भक्ति धरै संसार में॥
माया के शिर पांव जो धर के भक्तही।
लोक तुम्हारे मांहिं जाय पहुँचत वही॥
आदि अंत अरु मध्य संपूरण सकल में।
घटत बढ़त तुम नाहिं कबहुँ कल विकल में॥
प्रभु महिमा हम नाथ हिये नहीं जानई।
और लोक किहि भांति सोबरन बखानई॥
सरगुण स्तुति करि जु यह निरबानही।
निरगुन रूप अरूप कूं कैसे बखानई॥
या धरती के रज सभी गुन लीजिए।
तो सरूप गुन सकै न गिनती कीजिए॥
और बहुत पखंड तुमहीं माहीं रहै।
तिनहूँ को हम अंत कछू नाहीं लहैं॥
तिहि कारन हम करें तुम्हें परनाम हो।
जय जय श्री भगवान जागो सुखधाम हो॥
वेद स्तुति इह भांति सबन मन भाइ है।
सकल ऋषिन को भाष जु सनक सुनाई है॥
तबै सकल ऋषि चाव सों मिल पूजा करी।

बेद स्तुति भलि भांति सो लैकर चित धरी ॥
श्री नारायण बचन कहै इस रीति सों ।
नारद श्रोता भये अधिकहीं प्रीति सों ॥
श्री नारद वह कथा सकल मनभावती ।
वेदव्यास सूं कही जु अधिक सुहावती ॥
जैसी विधि जेहि भांति जो तिन सों हम सुनी ।
वाही विधि वाही रीति सों तुम आगे भनी ॥
ऐसे कहि शुकदेव परिक्षत राजसों ।
भाषा कर मैं कही मुक्ति के काज कों ॥
सब मिलि सुनियो संत बिबेक विचारियो ।
भक्ति हिये में राख आन सब डारियो ॥
भक्ति किये बस होय जक्त करतारही ।
ब्राह्मण शुद्ररु पुरुष करो कै नारही ॥
साधु सती अरु सूर बहुत दाता भये ।
इन की नाहीं जात चरनदासा कहे ॥
यह स्तुति जो कहै सुनै चित लायकै ।
सतसंगति लहै बास जो अघहि नसायकै ॥
समझ धरै मन मांहिं मुक्ति सोई पावई ।
भवसागर दुखरूप जहां नहीं आवई ॥

दो० वेद स्तुति पूरी करी, भेद दिया गुरुदेव ।
चरनदास के शीश पै, सदा रहो शुकदेव ॥

इति श्री भाषावेदस्तुति ॥

श्रीमदाचार्य्यचर्य्य श्यामाचरणदासजी रचित संपूर्णम् शुभम् ॥

श्रीराधाकृष्णार्पणमस्तु ॥

—:०:—

अथ चीर हरण लीला ॥

(पद) पैयां लागूं मोहन प्यारे दीजे म्हारो चीर, जाड़ो लागै छैजी म्हांने जमुना के तीर। कहां सीखे ऐसी टेव अहो बलवीर, हम अबला ठाढ़ी नगन शरीर॥ कदम के ऊपर बैठे वसन चुराय, माखन लै लै खाते हम सों सौ सौ हाहा खाय। विनती करते अति शीश नवाय, रखिये अब लाज हमारी हूजिये सहाय॥ तब बोले अंतरयामी अंतर उघार, लै लै जावो वस्त्र अपने एहो ब्रजकी नार। प्रेम की भक्ति करी तुम सुकुमार, प्रेम के आधीन फिरों भक्तन के लार॥ अपनो भायो कियो प्यारे श्याम सुजान, वस्त्र देदीने सखी छाड़ी कुलकी कान। तन मन माहीं रमें कृष्ण भगवान, प्रीति की परीक्षा करी नंद जू के कान॥ यशोदा को छैया श्याम भैया बलदेव, मानलई सत्य प्रीति सखियन की सेवा। हरि की लीला कही शुक मुनि देव, चरनदास सखि पायो निज भेव॥

अथ श्रीशुक मुनिराज अष्टक प्रारभ्यते

षोडशवर्ष किशोर मूरति श्याम वरण दिगम्बरम्।
घूँघरवाले केश झलके शुकमुनि चरण प्रणमहं॥
पद्म आसन उदर त्रिवली चरण पंकज शोभितं।
आजानु भुज मुसकात मुखसों शुकमुनि चरणप्रणमहं॥
गूढ़ यंत्र विशाल उर छबि नाभि गंभीर राजितं।
जलजलोचन सुखदनासा, शुकमुनि चरण प्रणामहं॥
व्यासनंदन जक्तवंदन मोह ममत्व निकंदनं।
काम क्रोध मद लोभ न जिन में शुकमुनि चरणप्रणामहं॥
ब्रह्मरूप अनूप मुनिवर पराशर कुल भूषणं।
कृष्ण चरित पुनीत वरणत शुकमुनि चरण प्रणामहं॥

त्रिभुवन उजागर कृपासागर द्वंद संकट मोचनं ।
प्रेम मदमाते रहैं नित शुकमुनि चरण प्रणामहं ॥
निरालम्भ निहभर्म निशि दिन स्थिर बुद्धि निकेतनं ।
धर्मधारीं ब्रह्मचारी शुकमुनि चरण प्रणामहं ॥
पतितपावन भर्म नशावन शरणागत सुखदायकं ।
मायाजीतं गुणातीतं शुकमुनि चरण प्रणामहं ॥
श्रीशुकदेव अष्टक परम सुन्दर पठत पाप नशायकं ।
चरणदास शुकदेव स्वामी भक्ति मुक्ति फलदायकं ॥

इति अष्टक ॥

अथ मोह छुटावन अंग वर्णन ॥

कुंडलिया ॥

भक्ति दृढ़ावनकूं कहे नानाही परसंग ।
शुकदेव कृपा सों अब कहूं मोह छुटावन अंग ॥
मोह छुटावन अंग कोई हियमाहीं धारै ।
कुटुँब जालसूं छूटि लगै हरिचरणों लारै ॥
चरणदास यों कहत हैं उपजै मन वैराग ।
जक्त नींदही सूं खुलै चौथे पदमें जाग ॥

दो० गुरू पूजि जग छोड़िये, भवसागर के द्वन्ध ।
साधुनकी संगति करो, तजो जाति कुलबन्ध ॥
बन्धु नारि सुत कुटुँब सब, यमकी फांसी जान ।
तोहिं छुटावैं रामसूँ, इनका कहा न मान ॥
खैंचि पकड़ि ह्यां राखिहैं, जहां मोह का जाल ।
जीवत दुख बहु भांतिके, मुये नरक ततकाल ॥
या प्राणीकूं ठग लगै, सकल कुटुँब परिवार ।

तिनमें दो बलवन्त हैं, एक द्रव्य इक नार ॥
नारि किये दुख बहुत हैं, बन्धन बँधे अनेक ।
जो सुख चाहे जीवका, तिरियाकूं मत पेख ॥
द्रव्य माहिं दुख तीन हैं, यह तू निश्चय जान ।
आवत दुख राखत दुखी, जात प्राणकी हान ॥
ताते इनकी प्रीति मन, उठै तभी निरवार ।
ये दुर्जन दुख रूप हैं, ऐसो करो विचार ॥
जो कोई इनमें पगै, तिन सें छूटै राम ।
चरणदास यों कहत हैं, क्यों पावै हरिधाम ॥
हेरि फेरि धनको करत, बीतै पहर इकरात ।
तीनपहर निशिके रहैं, खोवै नारी साथ ॥
नारी के फैलाव को, दीखै ओर न छोर ।
द्रव्य माहिं तृष्णा रहै, चाहै लाख किरोर ॥
द्रव्य जोरि मरिजाय जब, हो बैठे तहँ नाग ।
नारी में जो चित रहै, ह्वै है कूकर काग ॥
ऐसेही भरमत फिरै, लख. चौरासी देह ।
कनक कामिनीकूं तजै, जबलग नाहीं नेह ॥
मूरख त्याग न करिसके, ज्ञानवन्त तजि देह ।
चौंकायल मृग ज्यों रहै, कहीं न साजै गेह ॥
जो कोइ छोड़ै कुटुँबही, ऐसीं कर पहिंचान ।
जैसे छूटै बन्ध सूं, यम जोरासूं जान ॥
जीवत यम तो कुटुँब है, घेरि घेरि दुख देय ।
ऐसे मानुष देहकूं, लूटै ही नित लेय ॥
कै ठग सबकूं जानिये, कै धाड़ी के चोर ।

रणजित कहै तु देखले, लूटत हैं निशि भोर ॥
बाहर कलकल करत हैं, भीतर लावहिं लाव।
ऐसो बांधौ खैंचकरि, छुटै हाथ नहिं पाव ॥
लाजतौंक गलमैं पड़ा, ममता बेरी पांय।
रसरी मूरख नेह की, लीन्हे हाथ बँधाय ॥
डारि दियो अज्ञान में, परो परो बिललाय।
निकसनकूं जबहीं चहै, कुतका मोह लगाय ॥
रखवारे जहँ पांच हैं, इन्द्रिन के रस जान।
तबहीं देह भुलायकै, जो कुछ उपजै ज्ञान ॥
कुटुँब और इन पांच को, एक मतोही जान।
प्राणी कूं जग में फँसा, चहै खान अरु पान ॥
ये सब स्वारथही लगैं, इसका सगा न कोय।
जो शिर मार धरणि पर, कल्प कल्प करि रोय ॥
मात पिता सुत नारि की, इनकी उलटी रीति।
जग में देह फँसाय कै, करिकै प्रीतिहि प्रीति ॥
जैसे बधिक बिछाय कै, जाल माहिं कण डार।
प्रीति करै पक्षी गहै, पाछे करै जु ख्वार ॥
जैसे ठग बहु प्यार करि, भोलापनहीं देह।
पहिले लड्डू खवाय कै, पाछे सरबस लेह ॥
हित सूं हिरण बुलाय कै, गोली मारै तान।
चरणदास यों कहतहैं, ऐसे इन कूं जान ॥
जलमें बंशी डारिया, अटकाया जहाँ मास।
मछरी जानै हित कियो, लखो न अपनो नास ॥
भौंदू यह गति ना लखी, पड़ो कुमति के फंध।

ज्यों की त्यों सूझी नहीं, किया मोह ने अंध ॥
सब ठग यह देखी नहीं, कपट हेत नहिं जान।
इनही में मिलकर चलौ, समझौ ना अज्ञान ॥
अब इनके छल कहत हूँ, समझै होय उदास।
जानै ना ह्वाई रहै, कहै चरणही दास ॥

अब इनके छल कहि समझाऊं। भिन्न भिन्न परगट दिखलाऊं ॥
पिता कहै तुम पुत्र हमारे। बहुत भरोसे मोहिं तुम्हारे ॥
अब तुम ऐसी विद्या पढ़ो। अपने कुल में ऊंचे चढ़ो ॥
सतसंगति में कभी न जइये। अपने घर में चित्त लगइये ॥
हम तो हैं दुनियां के कूते। जाति वरण में होहिं सपूते ॥
कृत्य करो पालौ सुत वाम। कथा कीरतन सूं क्या काम ॥
अब तुम ठौर हमारी हूजे। हमने किये सो तुमहूँ कीजे ॥
ऐसी बुद्धि बड़ाई दीन्ही। इनहू हिरदय में धरि लीन्ही ॥
चरणदास कहैं देखो प्यार। मुये नरक जीवितहो ख्वार ॥

दो० पिता बुद्धि ऐसी दई, रहिये कुटुंब मँझारि।
जो कुछ है सो जक्तमें, धन सम्पति सुत नारि ॥
हरिकी राह भुलाय करि, दीन्हो कुटुंब चिताय।
ताते दुख जगमें घने, चौरासी भरमाय ॥

अब सुन माताहू की बातैं। अपना जान खियावैं तातैं ॥
द्रव्यकाज उद्यमहीं कीजे। ला माता की गोदी दीजे ॥
करै कमाई सोई सपूता। नाहीं तौ वह पूत कपूता ॥
नारी कूं भूषण पहिनावो। सुत पुत्री को व्याह रचावो ॥
पूजो पित्तर देवी देवा। सकल कुटुंब की कीजे सेवा ॥
अपने कुलकोन्योति जिमावो। ताते बहुत बड़ाई पावो ॥

बहु विधि स्वारथही सिखलावै । परमारथ की राह भुलावै ॥
बारबार जग में उरझावै । ऐसे तौ नितही चलि आवै ॥
जितका तितह्वांई रखि लीन्हा । चरणदासकहैं जान न दीन्हा ॥
दो० माताहू ने प्यार करि, बहुत दिया शिरभार ।
यही जो नीको धारियो, महल द्रव्य सुत नारि ॥
अब नारि की गति सुनि लीजे । तामें चित्त कबहुँ नहिं दीजे ॥
छल बलकरि वश अपने राखै । मधुर वचन रससने जु भाखै ॥
कहै कि शिर के छत्र हमारे । हम तौ लागीं शरण तुम्हारे ॥
तुमतौ बहुतै लगौ पियारे । मोकों तजि मत हूजो न्यारे ॥
ऐसे कहि कहि बांधा चाहै । आठौ अंग काम के वाहै ॥
वस्तर भूषण देह शिंगारै । नानाविधि करि रूप सँवारै ॥
करै कटाक्ष बहुतही भारै । वश करने को टोना डारै ॥
काजल भरी आंखसूं जोहै । अंग बिषे रस दै दै मोहै ॥
ह्वांसूं निकसन कैसे पावै । चरणदास शुकदेव सुनावै ॥
दो० तिरियाही के जाल में, आय फँसै जो कोय ।
तलफि तलफि ह्वांई रहै, निकसी सकै नहिं सोय ॥
सुत पुत्री बनितासूं जानौं । समधाने वासूं पहिंचानौं ॥
और बँधै बहुतै बँधवार । नाई ब्राह्मण बहु परिवार ॥
सेढ़ मसानी देवी भूत । ग्रह नक्षत्रहु लगै अऊत ॥
चौथ अहोई लागे सौन । तिरिया कारण साजो भौन ॥
औरौ बहुत बखेड़े जान । नारी से तोहीं पहिंचान ॥
महा अपरबल दुख तेहिमाहीं । मरिकै चौरासी में जाहीं ॥

ताते हूजे वेगि उदास। समुझितजौ तिरियाकीआस॥
कहि शुकदेव चरणहीं दासा। सभी कुटुंब है नरक निवासा॥

दो० सुतकी वोली तोतली, करै चोचले चाव।
मन मोहै वाँधै घनौ, छूटे को न उपाव॥
हँसि गोदी में आयकरि, वहुत बढ़ावै नेह।
तामें घने विकार हैं, अन्तकाल दुख देह॥
मोह लगा मरजाय जव, तन मन लागै आग।
चरणदास यों कहतहैं, सुख चाहै तौ त्याग॥
जिहिकारण चिन्तालगै, जवलग घटमें प्रान।
हरिगुरु हिये न आवई, यही जु पूरी हान॥
तन छूटै सुत में रहै, एक नर तेरी आस।
जनम जु शूकर को लहै, मुये नरकही जास॥

कुटुंव वंध ऐसे करि जानौ। फांसीगर तिनकूं पहिंचानौ॥
तोकूं डारै नरक मँझारा। ताते होहि सवन से न्यारा॥
वहुतक दुर्जन हैं घटमाहीं। तू उनकूं जानतहै नाहीं॥
हैं वैरी तू जानत मीता। स्वपनेहूँ इनकी नहिं चीता॥
काम क्रोध लोभ अरु मोहा। सवहीं राखैं तोसूं द्रोहा॥
जिनसे गर्व मछरता भारी। जक्त वड़ाई तिनकी नारी॥
आपा लिये सदाहीं रहै। टेढ़े वचन झूठ वहु कहै॥
इनके संग घनेही दुष्टी। तेरे तन में रहैं अदृष्टी॥
नितही करै अकारज तेरा। चरणदास कहैं यहविधि घेरा॥

दो० वहु वैरी घट में वसैं, तू नहिं जीतत कोय।
निशिदिन घेरेही रहैं, छुटकारा नहिं होय॥

जो कहुं निकसि वाहर आवै, अरु विरक्त का रूप वनावै॥

कुटुंब छोड़ उपजै बैराग। जक्त रहा चरणों से लाग॥
कछू वासना मनमें धँसी। जबहीं लोक बड़ाई हँसी॥
पुष्ट भयो आपा अभिमान। सहजहि आया मोह दिवान॥
सबही संगी लिये बुलाय। या विरक्त कूँ घेरो आय॥
ताकूं बांधि मुरंडा कीन्हा। फेरि कुटुंब के माहीं दीन्हा॥
कुटुंब मित्र गाढ़ा करि बांधा। बड़िबड़ि आंखौं ऐसा आंधा॥
चरणदास कहैं घरमें आया। घट के दुर्जन वाहि बँधाया॥

दो० कुनवे में से निकसि करि, फिर कुनबे में जाय।
निश्चय नरकी होयगा, दुनियां में दुख पाय॥

एक तपोवन में जा रहा। शीत उष्ण पावस शिर सहा॥
सूखे पातों किया अहारा। छूटे सबही जग व्यवहारा॥
रहे ध्यान में निशिदिन लागा। हरिके चरण कमलमें पागा॥
महिमा सुनि राजा तहँ आया। दे परिक्रमा शीश नवाया॥
हाथ जोरि ठाढ़ो फिरि भयो। तपसी मुख ना बैठन कह्यो॥
ठाढ़े भये बार बहु भई। तब राजा ने मनमें कही॥
यह तपसी है बहु अभिमानी। मोआवन महिमा नहिं जानी॥
ऐसी कहि मनमाहीं ऐंठा। आपहि आप भूप वह बैठा॥

दो० जो हरिके रँग में रँगे, भूपन सूं क्या काम।
चरणदास कुछ भय नहीं, ना कुछ चहिये दाम॥

तपसी कछू न मुखसूं भाषा। राजाउठि चढ़ि मारग लागा॥
क्रोध भरा महलन में आया। खोटा मनमें मता उपाया॥
पातुरि भेजि वाहि अजमाऊं। भेद झूंठ सांचे को पाऊं॥
जबहीं पातुरि लई बुलाई। ये बातैं वाकूं समझाई॥
कहै पातुरी आज्ञा दीजै। देखि तमाशा वाका लीजै॥
आयसु लै पातुरि घर आई। प्रथमैं लौंड़ी एक पठाई॥

वा तपसी का लावो भेद । कौन वस्तु से वाको हेत ॥
कहा सुभोजन करै अहारा । छुटै भजन सूं कौनी बारा ॥
बांदी गई भेद सो लाई । पातुरि कूं सब बात सुनाई ॥

दो० झारै जा मुख धोयके, फिरि तलाव में न्हाय ॥
चरणदास फलपात जों, गिरे पड़ेही खाय ॥

पातुरि सुनि मनमें डरपाई । कैसे वाकूं वश करुं जाई ॥
बिन वश किये भूप नहिं रीझै । काढ़ि नगर सूं बहुतै खीझै ॥
ताते मकर पेंच कछु कीजै । तपसी का मन करमें लीजै ॥
जो कहुँ इच्छा नेकहु पइये । छलबल करिवामदन[1] जगइये ॥
यह विचार पातुरि जब कियो । नानाविधि भोजनकरिलियो ॥
गई तहां तपसी अस्थान । वहतौ करत हतोहरि ध्यान ॥
बैठ रही धीरज उर धारि । जबलग उठै ध्यान निरवारि ॥
उठे ध्यानते आंखैं खोली । करिदण्डवत नारियों बोली ॥
पुत्र नहीं हमरे घरमाहीं । जिस कारण दर्शन कूं आई ॥
यह कहि भोजन आगे राखा । तपसी भोजन लिया न भाखा ॥
वादिन तौ योंही उठिआई । अंगुली टिकन ठौर नहिंपाई ॥
दूजे दिन गइ बहुत सबारा । न्हाकर आये थे उंहिबारा ॥
कहा कि भोजन हमरा कीजै । हमरे नैनन को सुख दीजै ॥
तपसी कहे न चित्त डुलाऊं । सूखे पात और फल खाऊं ॥
पातुरि कहै दूर सूं आई । तुमतौ दयावंत सुखदाई ॥
यही मान मेरो तुम राखो । बहुत नहीं अंगुली भरिचाखो ॥
कहिकरवचन वाहिपघिलाया । अंगुलीभरि भोजन चटवाया ॥
चाटत चाटत चाटत रहा । रणजीत कहैंयोंमनवहिगया ॥

---

१ काम ॥

दो० पातुरिने कर जोरि करि, बहुरो वचन सुनाय।
एकबार अरु लीजिये, इन्द्रीजित ऋषिराय॥

फिरि भारी अँगुली भरि लीन्हा। बहुरो मुखके माहीं दीन्हा॥
अँगुली टिकन कामकरि आई। घर आकर बहुतै हुलसाई॥
फिर ह्वां दिना चार ठहराई। उत नहिं गई यही मन आई॥
पातुरि चतुर ढील सूं गई। तपसी कही कहां तुम रही॥
जबहीं पातुरि प्रीति पिछानी। अपनी कला पैठती जानी॥
वादिन व्यंजन कछू न लाई। बहुविधि भोजन बात सुनाई॥
घर ठाकुर सेवा चित लाऊं। नानाविधि के भोग लगाऊं॥
लै आज्ञा निज भवन पधारी। चरणदास कहैं छल कियो नारी॥

दो० तपसी कूं जीतन कियो, टेक बांधि करि वाद।
हौरै हौरै लाय हूं, या जिह्वा के स्वाद॥
नानाविधिकेस्वादकरि, लैगई वाही पास।
कह्यो कि यह परसादहै, लीजै कोई ग्रास॥

ठाकुरको प्रसाद जु लीजे। याको नाहीं कबहुँ न कीजे॥
नाहीं किये होय अपराध। तुमतौ कहियो पूरे साध॥
कछूक पातुरि वचन सुनायो। कछूक तपसी के मन आयो॥
डारो हाथ थार के माहीं। ज्यों ज्यों खात सराहत जाहीं॥
पातुरि कहो सदा लै आऊं। जो जो ठाकुर भोग लगाऊं॥
यामें कछू दोष नहिं लागै। तन मनका सब पातक भागै॥
वाकूं वश करिकै घर आई। सखियन कूं यह कथा सुनाई॥
कामदेवकी सौगंद खाऊं। तपसी बँदुवाकरि दिखलाऊं॥

दो० रसनास्वादहिवशकिये, मनमें जीतन वाद।
कभी आप बांदी कभी, पहुँचायों परसाद॥

कबहूँ वा तपसी ढिग जावै । नानाविधि के भोजन खावै ॥
कबहूँ भेजै बांदी हाथा । कहियो छुट्टी मोंहिं न नाथा ॥
वह जानै मम सेवा करै । यह तौ भजन तपस्या हरै ॥
एक दिना पातुरी ह्वां गई । हाथ जोरि भाषत यों भई ॥
कहो कि मेरे भवन पधारो । करो पवित्तर जूंठनि डारो ॥
खावन की बहु बात बनाई । सो तपसी के मन नहिं भाई ॥
ह्वांई रही टोना सो कीन्हो । तपसीको मनवश करिलीन्हो ॥
दूजे रस की कला दिखाई । मोह बढ़ो अरु आँख लजाई ॥
भोरभये फिर बात सुनाई । छलबल करि घरही लै आई ॥
चरणदास तपसी नहिं जानी । अजहूं ठगनी ना पहिंचानी ॥

दो० घरमें ला बहु सुखदिया, दिना आठही राखि ।
तपसीहू वा वश भयो, पांचन सूं रस चाखि ॥

इन्द्रीवश पातुरि घर आया । अपने तपका तेज घटाया ॥
सिमटामन भया फूटक फूटा । लागा ध्यान रामका छूटा ॥
देखै घरके वैरी किया । पकड़ बांधि और कर दिया ॥
फिर पातुरि राजापै गई । तपसी ठगन बात सब कही ॥
नेक नेक सब समझाई । तब राजाकूं हांसी आई ॥
योंहीं कही वेगि लै आवो । वाकी सूरत हमैं दिखावो ॥
फिर पातुरि उलटीही धाई । तपसी कूं इक बात सुनाई ॥
राजा दर्शन करन बोलावै । जितसेती खाने कूं आवै ॥
वाकूँ चलकरि दर्शन दीजै । किरपा प्यार बहुतही कीजै ॥
हमतौ उनकी सदा कहावैं । नितउठिकरि मुजरेको जावैं ॥
ह्वांतौ अपना घरही जानौ । उठिये चलिये सकुच न मानौ ॥
पाछे तपसी आगे बाला । ऐसे राज दुआरे चाला ॥

ज्ञा राजा कूं दई अशींशा । राजा बैठे नायो शींशा ॥
हँसिकरि कहीजु किरपा कीन्ही । यह नगरी अपनी करि लीन्ही ॥
घर बैठे हम दर्शन पाये । वै धन हैं जो तुमको लाये ॥
तपसी कही धन्य तुम राजा । बहुतन को सारतहौ काजा ॥
तुम्हरो तेज देखि हम चीन्ही । तुमहुँ तपस्या आगे कीन्ही ॥
विना तपस्या राज न पावै । वेद पुराणन में यों गावै ॥
हमहूँ दर्शन तुम्हरे पाये । तपसी कहि यों वचन सुनाये ॥
भूपति बहुत अचम्भा कीन्हा । बहुत द्रव्य पातुरि को दीन्हा ॥
फिरि राजा तपसीसूं बोला । खोंट हिये का सबही खोला ॥
एक दिना हम तुम ढिग धाये । वनमें तुम्हरे दर्शन पाये ॥
ठाढ़ा रह्यौं हौं बहुती बारा । ना तुम बोले नैन उघारा ॥
आजघोस ऐसा हरि कीन्हा । ह्याईं आ तुम दर्शन दीन्हा ॥
यह सुनि तपसी शोचि विचारा । तबहीं पातुरि सूं भयो न्यारा ॥
वेगहि उठि जंगल कूं गया । चरणदास कहैं रमता भया ॥

दो० जो इन्द्रिन के वश भयो, यही हाल है जाय ।
पछतावा मन में रहै, करै हाय दुख हाय ॥

छैहौं चोर महा दुखदाई । सो या जगमें देह फँसाई ॥
तन मन कूं बहु व्याधि लगावैं । कायिक बाचिक पाप जढ़ावैं ॥
करम लगा बहुते भरमावै । यम के छप्पन त्रास दिखावै ॥
फिर चौरासी माहिं फिरावै । जठर अगिनिमें ताहि तपावै ॥
जन्म मरण भारी दुख देवै । मानुष देहका सर्बस लेवै ॥
तीन लोकमें डोलै हाला । सुरपुर मृत्यु बहुर पताला ॥
कैसे मुक्ति धाम कूं पावैं । जो इन्द्रिन के वश होजावैं ॥

छूटै जब गुरु किरपा करैं । चरणदास के शिर कर धरैं ॥

दो० स्वारथही के सब सगे, कुटुंब मित्र कुल गोत ।
परमारथ समझावई, जो दयाल गुरु होत ॥
परमारथ में दुख मिटै, कलह कलपना जाय ।
स्वारथ माहीं सुख नहीं, तामें चित्त न लाय ॥
स्वारथ में चिन्ता घनी, जो ह्वांकर हो गेह ।
विना आगकी चिता में, जीवत जरि है देह ॥
चिन्ता घट में नागिनी, ताके मुख हैं दोय ।
निशि दिन खाये जात हैं, जानसकै नहिं कोय ॥
ताघट चिन्ता नागिनी, जामुख जप नहिं होय ।
जो टुक आवै यादभी, उहीं जाय फिरि खोय ॥
चिन्ताही सूं लगत है, चरणदास उर आग ।
तहां ध्यान हरि चरण को, कैसेही अब लाग ॥
जक्त वासना के विषे, घर चिन्ता का जान ।
जगकी आशा छोड़ि करि, हरि सुमिरणही ठान ॥
आशा नदिया में चलै, सदा मनोरथ नीर ।
परमारथ उपजै वहै, मन नहिं पकड़ै धीर ॥
धीर विना नहिं ध्यान है, निश्चल जप नहिं होय ।
जो चाहै हरिभक्त कूं, जक्त वासना खोय ॥
जबलग जगसूं प्रीति है, तबलग दुःख अपार ।
भय भारी चिन्ता घनी, भवन पिछानौदार ॥
जग सूं छुटि बाहर परै, उसी समय सब चैन ।
उपजै आनँद परमहीं, तहाँ कुछ लैन न दैन ॥

---

१ मनोरथ ॥

रहै एक हरिभक्तिही, बाधा सब छूटि जाहिं।
जबै राम अपनो करैं, वेगहि पकरैं बाहिं॥

ताते सुन मन मेरे मीत। जक्त छुटनकी राखो चीत॥
ऐसा अवसर फिर नहिं पावों। काहे मानुष देह गँवावों॥
संगी तेरा नहिं धनधाम। तू क्यों पचै मूढ़ बेकाम॥
पिछली गई तासकूं रोय। आगे रही ताहि मत खोय॥
इकइक घड़ी अमोलक जान। चेत चेत मत होय अजान॥
अपने घरका करो सँभाल। ललकारत आवत है काल॥
याते कीजे यही विचार। डारि सिदौसी जगजंजार॥
शुकदेव कहीहो चरणहिं दास। हरिके चरणकमल करि वास॥

दो० यामें ढील न कीजिये, यह विचार मन आन।
चरणदास यों कहत हैं, यह गो यह मैदान॥
आयुर्दा यों जात है, जस तरुवर की छांह।
चेत सिताबी भक्ति में, तजो जक्त की बांह॥
तूनही पकरो जक्त ने, तैंहीं पकरो आय।
ज्यों नलिनी को सूवटा, धोखे पकड़ो जाय॥

जैसे बाँदर आपहि फँसिया। समझावन मनमाहीं हँसिया॥
मूठ चनों की जो वह तजता। तौ काहेकूं फँसा जु रहता॥
ज्यों कांटेसूं मच्छी लागी। आपहि आई चली अभागी॥
सरवर में तरवर की छाहीं। अजया देखि गिरी वा माहीं॥
जैसें पक्षी जाल मँझारा। आपहि आय फँसा बजमारा॥
खन्दक में हाथी आ परिया। लेनगयो कोउ आपहि गिरिया॥
बाजत बीण मृगा चलि आया। पकर कौन चंचल कूं ल्याया॥
योंही तुम अपनी गति जानो। आपहि बधे यही पहिचानो॥

ऐसे जगने तू नहिं पकड़ा । चरणदास कहैं नाहीं जकड़ा ॥

दो० छोड़ जक्तकी वासना, यही जु छुटन उपाव ।
ये मन ऐसी धारिये, अवहीं नीको दाव ॥
अवकी चूके चूक है, फिर पछितावा होय ।
जो तुम जक्तन छोड़िहो, जन्म जायगो खोय ॥
जग माहीं न्यारे रहो, लगे रहो हरिध्यान ।
पृथ्वी पर देही रहै, परमेश्वर में प्रान ॥
ज्यों तिरिया पीहरवसै, सुरति पिया के माहिं ।
ऐसे जन जग में रहैं, हरिकूं भूलैं नाहिं ॥
ज्यों किरपण वहुदामही, गाड़ि जिमींके नीच ।
सदा वाहि तकतौ रहै, सुरति रहै तावीच ॥
तन छूटे हो सरपही, जा वैठे वा ठौर ।
जहां आश तहाँ वास है, कहूँ न भमैं और ॥
चितरहै गोविंद के विषे, जग में सहज सुभाय ।
तनछूटे हरिकूं मिलै, चरणकमल लिपटाय ॥
जग त्यागो वैरागलै, निश्चय मनकूं लाव ।
आठ पहर साठो घरी, सुमिरन सुरति लगाव ॥
सवसूं रहु निरवैरता, गहौ दीनता ध्यान ।
अंत मुक्तिपद पाइहौ, जगमें होय न हान ॥
चरणदास यों कहत हैं, वड़ी दीनता जान ।
औरन की तौ क्या चलै, लगै न मायावान ॥
दया नम्रता दीनता, क्षमा शील संतोष ।
इनकूं लै सुमिरण करै, निश्चय पावैं मोष ॥
ये सब लक्षण राम में, प्रकटत दीखैं मोहिं ।

जो वै आवैं तुझ बिषे, प्यार करैं हरि तोहिं ॥
हरिसूं प्रीति लगायकै, सब सूँ लेहि उठाय ।
रहै सदा इक रामहीं, और सकलमिटि जाय ॥
मिटते सूंमत प्रीतिकरि, रहुते सूं करि नेह ।
झूठे कूं तजि दीजिये, सांचे में करि गेह ॥
सांचा हरिका नाम है, झूठा यह संसार ।
शुकदेव कहिचरणदासहो, सुमिरण करो विचार ॥
दशइन्द्रिन कूं खैंचकरि, अभय अमर फल चाख ।
सहजहि सुमिरण होतहै, तामें मनकूं राख ॥
मानसरोवर देह में, मुक्ताहल जो श्वास ।
चुगिये हंस स्वरूप ह्वै, खुलै कर्म्मकी गांस ॥
अजपा को यहि अर्थ है, विना जपेही होत ।
कछुवाकी ज्यों सिमट करि, तहां लगावो गोत ॥
आवतही कूं देखिये, जाते कुं जो निहारि ।
ऐसे सुरत लगाइये, चरणदास हियधारि ॥
सकारेतन सींचिये, हकारे सुख होय ।
ऐसे सुमिरण संत कूं, जानै बिरला कोय ॥
नाभिहि[1] सेति उठति है, फिर तामाहिं समाय ।
याको भेद अपारहै, सतगुरु देहिं बताय ॥
नाभि नासिका माहिं करि, घाल हिंडोला झूल ।
उपजै अति आनन्दही, रहै न दुखका मूल ॥
ब्रह्म सिन्धुकी लहरहै, तामें न्हान सजोय ।
कलिमल सब छुटि जायँगे, पातक रहै न कोय ॥
अरसठ तीरथ तो बिषे, बाहर क्यों भटकाव ।

---

१ तोंदी ॥

चरणदास यों कहत हैं, उलटाहो घर आव ॥
श्वासासँभलबिचारिकार, तहां करो विश्राम।
जाते हरिही हरि कहो, आवत कहिये श्याम ॥
श्वासा लेवै नाम बिन, सो जीवन धिक्कार।
श्वास श्वासमें राम जप, यही धारणा धार ॥
उलट पलट जप रामही, टेढ़ा सीधा होय।
याका फल नहिं जायगा, कैसेही लो कोय ॥
खाते पीते नाम ले, बैठे चलते सोय।
सदा पवित्तर नाम है, करै ऊजला तोय ॥
नीचन कूं ऊंचा करै, ऊंचन को कर देव।
देवन कूं हरिही करै, रहै न दूजा भेव ॥
भरमत भरमत आइया, पाई मानुष देह।
ऐसो अवसर फिरि कहां, नाम शिताबी लेह ॥
कै घरमें कै बाहरे, जो चित आवै नाम।
दोनों होहिं बराबरी, कै जंगल कै ग्राम ॥
करै तपस्या नाम बिन, योग यज्ञ अरु दान।
चरणदास यों कहत हैं, सबही थोथे जान ॥
अधिकी ऊंचा नाम है, सब करणी का जीव।
अष्टादश अरु चारिका, मथिकरि काढ़ा घीव ॥
चारौयुग में देखिले, जिन जपिया जिन नाव।
टेक पकरि आगे धँसै, परा न पीछे पाँव ॥
जैसी गति उनकी भई, गावत साधु पुरान।
वैसी तेरी होयगी, यह निश्चय करि जान ॥
दुख धन्धे कूं छोड़करि, कलह कल्पना त्याग।

शुकदेव कहि चरणदास कूं, राम भजन में लाग ॥
हरिके गुण माला करो, रसना ऊपर लाव ।
कियाकियाहीदेखिकरि, ताहि सराहत जाव ॥
देखि देखि देखत रहो, अस्तुति मुखसूं भाख ।
वाकी चतुराई सबै, लैकरि मनमें राख ॥
वैसा तौ रँगरेज ना, वैसा छीपी नाहिं ।
वैसा कारीगर नहीं, या दुनिया के माहि ॥
अजब अजब अचरज किये, अद्भुत अधिक अपार ।
जल थल पवन अकाशमें, देखै दृष्टि उघार ॥
सृष्टि बाग माली रचौ, भांति भांति गुलज़ार ।
रीझरीझ शिर दीजिये, एहो निरख बहार ॥
कबहूं जग परगट करै, कबहूं करै अलोप[1] ।
नानाविधि बाजी करै, आप रहत है गोप ॥
बाजीगर बाजी रची, सब गति पूरण साज ।
किये तमाशे बहुतही, तोहिं दिखावन काज ॥
देखि होय परसन्नहीं, तू वाको गुण मान ।
चरणदास जो बुद्धि है, अधिक सुघरता जान ॥
बहुत प्यार तोपै करै, तू नहिं जानत सार ।
वाहि भुलायेही फिरै, नेक न करै सँभार ॥
राम बिसारो आदि सूं, लियो द्रव्य अरु नार ।
याही ते भरमत फिरो, तन धरि वारंवार ॥
गइ सु गई अब राखिले, एहो मूढ़ अयान ।
निष्केवल हरिकूं रटौ, सीख गुरूकी मान ॥
सोवन में नहिं खोइये, जन्म पदारथ पाय ।

---

१ छिपा हुआ ॥

चरणदास ह्वै जागिये, आलस सकल गँवाय ॥

सोवनही में हानि है, जागन में बहु लाभ ।
बुद्धि उज्ज्वल होत है, मुखपर चढ़ै जु आभ ॥

दिन कूं हरिसुमिरणकरो, रैनि जाग करि ध्यान ।
भूखराखि भोजनकरो, तजि सोवन की वान ॥

चारि पहर नहिं जगिसकैं, आधी रात सूजाग ।
ध्यानकरो जपही करो, भजन करन कुं लाग ॥

जो नहिं श्रद्धा दोपहर, पिछिले पहरे चेत ।
उठ बैठे रटना रटौ, प्रभुसूं लावहि हेत ॥

जागै ना पिछिले पहर, ताके मुखड़े धूल ।
सुमिरै ना करतार कूं, सभी गँवावै मूल ॥

जागै न पिछले पहर, करैं न आतमध्यान ।
ते नर नरकै जाइगे, बहुत सहैं यमसान ॥

जागै ना पिछिले पहर, कर न गुरु मत जाप ।
पोह फाटै सोवत रहै, ताको लागै पाप ॥

पिछिले पहरे जागिकरि, भजन करै चितलाय ।
चरणदास वा जीवकी, निश्चय गति ह्वै जाय ॥

पिछिले पहरे जागिकरि, भरि भरि अमृत पीव ।
विषयजक्तकी न रहै, अमर होय करि जीव ॥

जन्म छुटै मरणा छुटै, आवागवन छुटिजाय ।
एक पहर की रात सूं, बैठा हो गण गाय ॥

पहिले पहरे सब जगै, दूजे भोगी मान ।
तीजे पहरे चोरही, चौथे योगी जान ॥

मरयादा की यह कही, क्या विरक्त परमान।
आठ पंहर साठौ घरी, जागै हरि के ध्यान॥
जो कोइ विरही राम के, तिनकूं कैसी नींद।
शस्तर लागा नेह का, गया हियेको बींध॥
तिनसे जग सहजै छुटा, कहा रंक कह भूप।
चलेगये घर छोड़िकै, धरि विरक्तका रूप॥
जिनको मन विरकत सदा, रहो जहाँ चितहोय।
घर बाहर दोउ एकसा, डारी दुबिधा खोय॥
सोये हैं संसार सूं, जागे हरिकी ओर।
तिनकूं इकरसही सदा, नहीं सांझ नहिं भोर॥
उनकूं नींद न आवई, राम मिलनकी चीत।
सोवै ना सुखसेज पै, तजिकै हरिसों मीत॥
कै सोवै हरिसूं मिले, जिनके ऊंचे भाग।
कै सोवैं हरि त्यागिकै, रहे जक्त सूं लाग॥
सोवन जागन भेदकी, कोइक जानत बात।
साधूजन जागत तहां, जहां सबनकी रात॥
जो जागै हरि भक्ति में, सोई उतरे पार।
जो जागै संसार में, भवसागर में ख्वार॥
कै जागत हुक्का भरा, कै जागा वश काम।
कै जागा जग टहल में, लाग रहा धनधाम॥
ऐसे जन्म गँवाय दिय, महा मूढ़ अज्ञान।
चौरासी में फिरि चले, मनका कहा जु मान॥
सतगुरु शरणै आयकरि, कहा न मानै एक।
ते नर बहु दुख पाइहैं, तिनकूँ सुखनहिं नेक॥
सतगुरु शरणो ना लगे, किया न हरिका खोज।

सो खर कूकर शूकरा, अरु जंगल कारोझ॥
पेट भरे भर सोइया, ते नर पशू समान।
परनारी कै आपनी, तिनका नाहीं ज्ञान॥
जैसा तैसा खाय करि, पेट भरे भरि लेह।
पड़कर सोवै भोरलौं, सो शूकर की देह॥
हरिचरचा बिन जो बकै, सो कूकर की भूस।
कहि रणजीत वह साँझलौं, खाय धूंसही धूंस॥
जो पावै सोई चरै, करै नहीं पहिंचान।
पीठ लदै हरि ना जपै, ताकूं खरही जान॥
रोझ जान वा देहकूं, ताकूं नहिं विचार।
फिरै विना मर्य्यादही, बहुता करै अहार॥
बहुता किये अहारही, मैली रहै जु बुद्धि।
हरि के निर्मल नामकी, कैसे आवै शुद्धि॥
सूक्षम भोजन खाइये, रहिये ना परि सोय।
ऐसी मानुष देह कूं, भक्ति विनामत खोय॥
जन्म चलोही जात है, ज्यों कूवे सैलाव।
दौरत मृगकी छाँह को, नेक नहीं ठहराव॥
समझ शिताबी भक्तिले, नेक न ढील लगाव।
आपा हरिकूं दे चुको, याको यही उपाव॥
जगका कहा न मानिये, सतगुरु सों लै बुद्धि।
ताकूँ हिय में राखिये, करो शिताबी शुद्धि॥
गुरु सेती सतगुरु बड़े, परमेश्वर के रूप।
मुक्ति छाँह पहुंचाय दें, जक्त छुटावैं धूप॥

कुण्डलिया

पहिला गुरु दाई कहूँ दूजे माई जान ।
तीजा गुरू खिलावड़ी चौथा पिता पिछान ॥
चौथा पिता पिछान पाँचवें पाधा जानौ ।
कनफूका गुरु छठा तास पूजा दे मानौ ॥
सतवां सतगुरु जानिये जगसूं करैं उदास ।
मुक्तिधाम सोइ देतहैं कहैं चरणहींदास ॥

दो० गुरु मिलते ऐसे कहै, कछू लाय मोहिं देह ।
सतगुरु मिल ऐसे कहै, नाम धनी कालेह ॥
कनफूका गुरु जगतका, राम मिलावन और ।
सो सतगुरु को जानिये, मुक्तिदिखावन ठौर ॥
गलियारे गुरु फिरतहैं, घर घर कंठी देत ।
और काज उनकूं नहीं, द्रव्य कमावन हेत ॥
सतगुरु डंका देत हैं, भक्ति रामकी लेहु ।
पहिले हमकूं भेंटही, शीश आपनो देहु ॥
सो सतगुरु शुकदेव हैं, समझि हिये में राखि ।
तिनके शरणै आवमन, चरणदास कहैं भाखि ॥
यह सिगरो उपदेशही, मैं आपन कूं कीन ।
मो मन कूं आपाघना, कहीं होय आधीन ॥
सतगुरुसूं मांगौं यही, मोहिं गरीबी देहु ।
दूर बड़प्पन कीजिये, नान्हाहीं करिलेहु ॥
जनक परम गुरुदेवजी, सुनु सतगुरु शुकदेव ।
यही अर्ज मैं करतहूँ, मोहिं साधु करिलेव ॥
चारौयुग के भक्तजन, तुमहौ सुख के धाम ।

चरणहिं दासा होयकै, तुम्हैं करूं परणाम ॥
आदि पुरुष किरपा करौ, सबअवगुण छुटिजाहिं ।
साधहोन लक्षण मिलैं, चरणकमलकी छाहिं ॥
तुम्हरी शक्ति अपार है, लीला को नहिं अंत ।
चरणदास यों कहत हैं, ऐसे तुम भगवंत ॥

छप्पै ॥

रच्यो आप में जगत रूप नारायण कीन्हो ।
दूजे लक्ष्मी भई बहुरि पानी रँग भीन्हो ॥
नाभि कमल फिरि भयो जहां ब्रह्माजी उपजे ।
विधिकी त्रिकुटि माहिं तहां शंकरजी निपजे ॥
चारि वेदअरु विष्णुह्वै सकल जगत छिनमें कियो ।
निराकार आकार सों चरणदासजिहिमनदियो ॥

कवित्त ॥

वहीतो अडिग्ग राम चौथे पदवास जाको वही तौ अडिग्ग राम मथुरा में आयो है । वही तौ अडिग्ग राम योगी जाको ध्यान धरैं वही तौ अडिग्ग राम सीतापति पायो है ॥ वही तौ अडिग्ग राम सभी ठाम रमि रह्यो वही तौ अडिग्ग राम संतन सहायो है । वहीं तौ अडिग्ग राम चरणदास चेरो जाको वही तौ अडिग्ग राम काया खोजि पायो है ॥

माया भ्रम फंद देख साधनको संगपेख रामजूको पहिरि भेख कंचन तनतावरे । मनकूं पहिंचान ज्ञान एकाएकी सबे जान नादके गहेते तू अनाहद वजावरे ॥ उलटि पलटि काया बीच चारो कर दूर नीच ऐसी विधि मेरुपै समीर कूं चढ़ावरे । कहैं चरणदासा गगनमध्य करौ वासा जहां नहीं शीत उष्ण निर- पद धावरे ॥

दो० दुर्योधन रावण गये, अरु यादव परिवार।
चरणदास थिरको नहीं, होय मिटै संसार॥

कवित्त॥

भोरसो बिहानो जात ढरैगी दुपहरीसी समझकै विचारि देखि चली आवे रातहै। भवँतहै शुचा[1]न काल तेरेपर तकिरहो छिन पलकी खबर नाहिंकरै आय घातहै॥ दारासुत सम्पति सब सुपने को सुख भयो जानौगे जभी जब छूटिजाय गातहै। कहैं चरणदास अब तजै क्यों न विषय वास पानीहूं में नाव जैसे आयु चलीजातहै॥

कुमारगसूं भाज और लाज खोटे करमन सूं चौरासी के त्रासनसूं मूढ़ क्यों न लजरे। साधुन के संग बैठी धर्महूकी नाव लेटि गुरुहूको ज्ञान राखि प्रेम भक्ति सजरे॥ छूटै जब नारी यम देवैं दुखभारी डारैं नरकहू मँझारी आवागमन क्यों न तजरे। कहैं चरणदास अब तजै क्यों न विषय वास रामके सँवारे तू राम राम भजरे॥

सवैया॥

भूलिरहो जगमें जड़ता वश दारा सुता सुत प्रीति बढ़ावै।
इनसूं मन बांटिरहो गृहबीच सो अन्तसमै कोइ पास न जावै॥
आनि गहै यमराज जबै सबही मिलि प्रीतम राम बतावै।
चरणदास कहैं चेतो नर मूरख रामबिना कोइ काम न आवै॥

कवित्त॥

धावै भरम देवनकूं भीतनके लेवन कूं कोई संग साथी नाहिं भीरपरे तेराहै। परसताहै चंडकी भूत अरु शीतला कूं भजै क्यों न रामनाम कटै यमबेराहै॥ भैरों अरु वराही पाखंड पूजा

---

१ बाज॥

सभी करैं लगीहै बहीर किन्हूं नैनन न हेराहै । चरणदास कूर सब सन्तनको चेरो कहै ऐसो जग अन्धा जानि कर्मनने घेराहै ॥

दो० यंतर टोना मूड़हलावन, और कीमियाँ झूठ ।
चरणदास कहैं सब भगल है, यह जग लीन्हालूट ॥

कवित्त ॥

भूतनकूं सेवे सो भूतनमें जाय मिलै जादूको सेवै सो चमार ताकी माईसूं । देवतोंकूं सेवै तौ देवलोक वास लहै औषधी कूं सेवै तौ मिलाप रावराईसूं ॥ कीमियां कूं सेवै तौ खराव होय दुनियां में ऐसे धन खोवैं जो सुनावैं नहिं भाईसूं । कहैं चरणदास हम इतने कूं मानैं नाहिं देखि सवी छांड़ि मन लगो है कन्हाई सूं ॥

कुण्डलिया ॥

पारा मारा ना मरै गंधक होय न तेल ।
केते पचिपचि मरि गये शिरमें मिट्टी मेल ॥
शिरमें मिट्टीमेल भटककरि जन्म सिरायो ।
जड़ी बूटि कूं फिरे कहीं कुछ हाथ न आयो ॥
बौरे हरि क्यों न भजे काहेको जन्म गवायो ।
चरणदास कीमियां झूठी मोको गुरूशुकदेव सुनायो ॥

अरिल्ल ॥

सात पांचकी सेव तजो लगि एकसूं ।
साधनकी करि सेव मुड़ोमत भेषसूं ॥
भेषी माहिं अलेख यही तू जानियो ।
चरणदासकी सीख निहचै करि मानियो ॥

दो० आप भजन करैं नहीं, औरे मने करैं ।
चरणदास कहैं वे दुष्टनर, भर्म भर्म नरकै परैं ॥

औरनकूं उपदेश करि, भजन करैं निहकाम ।
चरणदास कहैं वे साधुजन, पहुँचैं हरि के धाम ॥
शून्य शहर हम बसतहैं, अनहद है कुलदेव ।
अजपा गोत विचारिले, चरणदास यहि भेव ॥
भक्तिपदारथ उदयसूं, होय सभी कल्याण ।
पढ़ै सुनै सेवन करै, पावै पद निरबाण ॥
भक्तिपदारथ में कही, कछु इक भेद बखान ।
जो कोइ समझै प्रीतिसूं, छूटै यमदुख खान ॥
पाठ करै मन में धरै, बहुरूं करै विचार ।
कहैं गुरू शुकदेवजी, उतरै भवजल पार ॥
जय जय श्रीशुकदेवजी, तुम्हैं करूं परणाम ।
तुम प्रसाद पोथी कही, भये जो पूरणकाम ॥
हिरदय में शीतल हुये, तपन गई सब दूर ।
या वाणी के कहेते, कायर मन भयो शूर ॥
चन्दन चरचै पुहुपधरि, बहुरि करै परणाम ।
कथावांचि सबही सुनी, कहा पुरुष कहा बाम ॥
कहै सुनै जो प्रेमसूं, वाकूं राखै याद ।
चरणदास यों कहतहैं, बनिहो पूरे साध ॥

इति श्रीचरणदासजीकृतभक्तिपदार्थसंपूर्णम् ८ ॥

अथ मनोविरक्तकरणगुटकासार प्रारम्भः ॥

दो० ननो नमो श्रीव्यासजी, सतगुरु परमदयाल ।
ध्यान किये आशा नशै, लगै न जगत बयाल ॥

अष्टपदी ॥

नमो नमो शुकदेव तुम्हें परणाम है ।
तुमकिरपासों आय मिलैं घनश्याम है ॥
तुम्हरी दयासों होय जु पूरण योग है ।
तनकी व्याधा छुटै मिटै मन रोगहै ॥
तुव किरपासों ज्ञान पदारथ पावई ।
उपजै सार विचार असार छुटावई ॥
तुम्हरी दयासों होय भक्ति निसभोरहै ।
हिये सरोवर उठत जु प्रेम हिलोरहै ॥
तुम किरपा वैराग दूरलगि आवई ।
सकल वासना छूटि परमपद पावई ॥
सब गुणदायक लायक परमदयालहो ।
मम हिरदय में आय भेद सबही कहो ॥
मोसे कछु नहिं होय जु मेरे नाथजू ।
नितहि रहै तुव हाथ जु मेरे माथजू ॥
अरजकरै रणजीत सुनो गुरुदेवजी ।
मोमुख सेती भाषि कहो सब भेवजी ॥

दो० एकादश भागवत में, जाकी यह मति जान।
दत्तात्रेयी ने कह्यो, राजा यदु सों ज्ञान॥
अब मैं भाषा कहतहौं, तुमहीं करौ सहाय।
ज्योंकी त्यों मुखसे निकसि, पूरी ही ह्वै जाय॥
सुनियो ज्ञानी सन्तजन, रहन गहन की चाल।
जो कोइ लै हिरदय धरै, होवै तुरत निहाल॥
चरणदासहौं कहतहौं, परमारथ के काज।
जो अँग श्रीभागवतमें, साधु होन के साज॥
गुरु शुकदेव प्रताप सों, कहूँ विचार विवेक।
दत्तात्रेयी ने किये, चौबीसौ गुरु देख॥

कुण्डलिया॥

एक दिना यदु भूपही खेलन गये शिकार।
तहाँ नगर के निकट जो ह्वां थी अधिक उजार॥
ह्वां थी अधिक उजार एक अवधूता लेटे।
मूरति पुष्ट प्रसन्न जक्तके भय सबमेटे॥
राजा देखि प्रणाम करि पूछा शीश नवाय।
पाये आनँद कहो तुम मोसे कहौ सुनाय॥

दो० बोले दत्तात्रेय जब, सुनु हो भूप विशाल।
चौबिस परिक्षा गुरु किये, तासों भये निहाल॥

कुण्डलिया

पृथ्वी पवन अकाशहै नीर अग्नि शशिभान।
कपोत गुरू अजगर लखो और सिन्धुको जान॥
और सिन्धुको जान पतंगा भँवरा कहिये।

माखी हाथी मृगा मीन अरु पिंगला लहिये ॥
चील्ह बाल कन्या कहूं तीर बनावनहार ।
सांप माकरी भृंग जो चौबीसौं उरधार ॥

दो० भिन्न भिन्न अब कहतहौं, जुदा जुदो विस्तारि ।
ताको सुनि करि चेतियो, चरणदास नरनारि ॥

अष्टपदी ॥

दत्तात्रेय कि बात सकल अब गायहौं ।
बीसचारि गुरु किये ताहि समुझायहौं ॥
जिसकारण जिसहेतु जु उन ऐसी करी ।
जो जो शिक्षालई समझ हिरदयधरी ॥
जासों भजै मन रोग जक्त ब्याधानसी ।
उपजि परम संतोष क्षमा हिय आ बसी ॥
परम भये आनंद परमपद पाइया ।
जीवन्मुक्ता होय कि चाह उठाइया ॥
सोइ कहूं अब साध सबै सुनि लीजिये ।
शुकदेव परीक्षित सों कहो सांच पतीजिये ॥
दत्तात्रेय अवतार श्री भगवान के ।
राजा यदुसों बोलि वचन भाषत भये ॥
हमने गुरू चौबीस करे संसार में ।
तिनको ज्ञान विचार कहूं निरधारमें ॥
पहिले गुरुकी शरणगही बहुप्रीति सों ।
उन दीनो उपदेश मंत्र जो रीतिसों ॥

दो० सतगुरु ने किरपा करी, धरो हाथ मम शीश ।
यही कही सुमिरण करो, ध्यान करो जगदीश ॥

अष्टपदी ॥

काया छीजत देखि यही मनमें धरो ।
बिरथा खोवत आयु नेम तप को करो ॥
गहि विरक्तकी रीति तभी गृहको तजो ।
रामभक्ति को चाव हमारे मन रचो ॥
जगसों रहो उदास वास हरिपद जहां ।
छुटि छुटि जावैं ध्यान न मन लागे जहां ॥
बालक गारी देइ कोई बेलानहीं ।
शिरपै डारै खेह सोई बेकाजहीं ॥
हँसि हँसि ताली पीट जु हमरे सँगलगैं ।
मैंहूं चलो उठाय तौ वे आगे भगैं ॥
ताते निशिदिन क्रोध आपने मनधरूं ।
हरि सुमिरण गो भूलि जक्तमें यों फिरूं ॥
अब शिक्षा गुरु किये चौबीसौ भेदही ।
सो अब वर्णन करूं छुटै सब खेदही ॥
तिनसों सीखी चाल सभी उरमें धरी ।
चरणहिं दासा होय सुरति आनँद भरी ॥

दो० पहिले गुरु पृथ्वी किया, तीन सींख लइ तास ।
गिरिवर तरुवर मही जो, भयो चरण को दास ॥

अष्टपदी ॥

पहिले पृथ्वी गुरू हमारो जानिये ।
ताते लइ मति तीन साच हिय आनिये ॥
पहिले पर्वत एक मही ऊपर लखा ।
जाके निकटै जाय जु चढ़ि बैठा शिखा ॥

कोइ ऊपर चढ़ि जाय कोई आवै तले ।
जल बरषै ना बहै पवन सों ना हिलै ॥
वा पर्वतकी सीख बुद्धि में मानियां ।
देह लोभ दियो त्याग जु थिरता आनियां ॥
क्रोध दियो बिसराय जो तामस डारई ।
कोउ कहौ दुर्वचन कोउ क्यों न मारई ॥
क्रोध लोभ जो होय करै मन भंग है ।
कैसे सुमिरण होय लगे हरिरंग है ॥
क्रोध लोभ छुटिजाय रहन ये अगाध है ।
पर्व्वत की सम होय जो निश्चल साधहै ।
वृक्ष कहूँ अब जान जासु मति पाइया ॥
कहै चरणको दास जो चित्त लगाइया ।

दो० तरुवर ने काया धरी, परमारथ के हेत ।
कोऊ बैठे छाहँ में, कोऊ कारज लेत ॥

अष्टपदी ॥

दूजे देखे वृक्ष धरणि ऊपर भले ।
उनहूंकी लइ सीख गयो उनके तले ॥
मननहुती यह बात जु परकारज करूं ।
या प्राणी के काज नहीं करतो फिरूं ॥
जब आई यह रीति वृक्षकी दृष्टिमें ।
मैं लीन्हीं सोइ धारि भलीविधि सृष्टिमें ॥
कोई बैठे छाहँ कोई डारी हनै ।
कोई ले फल फूल वृच्छ कछु ना भनै ॥
परमारथ के काज वृक्षदेही धरी ।

सकल जीव ब्योसाय यही मनसा करी ॥
जो विरक्तसों काज कोई अपनो कहै।
वाको नाटै नाहिं सभी शिर पर सहै ॥
काहुको कछु काज जो काया सों सरै।
यह शिक्षा भलिभांति वृक्षकी मनधरै ॥
तीजे शिक्षा और मही की धारिया।
चरणहिंदासा होय अहूँ को मारिया ॥
दो० कोई खोदै नीवको, कोई खोदै कूप।
अरु ऐसे कारज किये, ऐसो धरो स्वरूप ॥

अष्टपदी ॥

काहूको वह भलो बुरोहू ना कहै।
ऐसे विरक्त रहै सभी दुख सुख सहै ॥
हरि सुमिरण में मगन सदा आनँद रहै।
भलो बुरो नहिं मान एकता दृढ़ गहै ॥
दूजे गुरु कियो पवन सीख लइ जासुकी।
दोय भांति पहिंचान हिये धरि तासुकी ॥
इक दिन बाग के माहिं सहजही में गयो
देखन लाग्यों फूल जाय ठाढ़ो भयो ॥
पुष्पन सों लगि पवन वास मोहिं आइया।
जबहीं कीन्हों ज्ञान बात सब पाइया ॥
वह तौ अतिहि सुगन्ध हरष उपजावई।
फिर आई दुर्गन्ध बहुत अनखावई ॥
गन्धहि सों लगि पवन आप गन्धहि भई।
पुनि आई बिन गन्ध शुद्ध निर्म्मल वही ॥

वाको देखि स्वभाव यही मन आइया।
चरणहिं दासा होय अंग उपजाइया॥

दो० एक दिना इच्छा करी, भिक्षा मांगी जाय।
अपनी श्रद्धा उन दियो, भोजन करमें लाय॥

अष्टपदी॥

वाकी अस्तुति नाहिं कछू मुखते कही।
फिरि गयो दूजे द्वार दई भिक्षा नहीं॥
जाकी निंदा नाहिं कछूक उचारिया।
अस्तुति निन्दा त्याग यही जु विचारिया॥
जिन कछु दीन्हो नाहिं नहीं औगुण धरो।
जो कछु पहिले आयो सोई भोजन करो॥
जो कहु अपने काज गयो भलि ठांवहीं।
गिरहण कीन्हो नाहिं रंग नहिं लावहीं॥
जो गयो भोंड़ी ठोर बुरो नहिं जानियां।
आतमरूप सँभाल जहाँ मन आनियां॥
सबही सों निर्लेप सबन के माहिंहूं।
सहज भवन में आय सहज कहि जाहिंहूं॥
परालब्ध जो पाय ताहि भोजन कियो।
नातौ करि परणाम बैठि योंही रह्यो॥
जिह्वालौहीं जान स्वाद भोजन सभी।
इकसम सबही होयँ उदर जावैं जभी॥
अब आयो सन्तोष कल्पना सब गई।
चरणहिंदासा भयो जभी यह मति लई॥

दो० तीजे गुरु आकाश को, कीन्ह्यो समझ सँभार।
जाकी मति के लेतही, पायो ब्रह्म विचार॥

अष्टपदी॥

तामें बरसै मेह और आंधी चलै।
बिजली चमक वामाहिं और पावक जलै॥
सदा रहै निर्लेप और निर्मल रहै।
सबही जग वामाहिं आप निर्लम्ब है॥

पवन हलावै नाहिं अग्नि जारै नहीं।
ताहि न भिजवै नीर मरै मारै नहीं॥
लघुदीरघ नहिं होय पुरुष नहिं नार है।
नहिं सूक्षम नहिं भार वार नहिं पार है॥
शब्द उठै बहु भांति वही जो अबोल है।
उतपति परलय माहिं सदा जो अडोल है॥
यह नभ ब्रह्मसमान लखो दृष्टान्त है।
निरखि हिये की आंखि गयो सब भ्रान्त है॥
भाँड़े कनक के होहिं चाँदी के देखिया।
कांसी पितल के होयँ मट्टी के पेखिया॥
सब माहीं आकाश एकही जानिया।
यों घट घट में ब्रह्म सकल पहिंचानिया॥
थिर चरही के माहिं जु थावर जंगमें।
न्यारा अरु सब बीच भली विधि रंगमें॥
जो बर्तन गयो फूटि रहो आकाशहूं।
ऐसेहि काया बिनशि रहै नित ब्रह्मजू॥
नित्य अनित्य विचार जभी निश्चय भई।

सदा गुप्तही रहै प्रगट किये होत है ।
ऐसे साधूभेद छिपावै जोत है ॥
षष्ठहु गुरु कियो चंद सदा इक समवहै ।
कला घटै अरू वढ़ै मावस लगना रहै ॥
पूनोको सब होहिं कला भरपूरही ।
चांदनि सब जगमाहिं विराजत नूरहीं ॥
शशिमण्डल इकभांति रहै नाहीं घटै ।
योंही आतम रूप चरणदासा रटै ॥

दो० उतपति परलय देहको, घटै बढ़ दुख होय ।
आतम इकरस जानिये, अविनाशी है सोय ॥

अष्टपदी ॥

ताते कियो विचार ये काया ना रहै ।
जन्म मरणही होय कलाके ज्योंयहै ॥
परमातम इकभांति सदाही जानिये ।
घटै वढ़ै वह नाहिं यों मनमें आनिये ॥
कायाछोटी होय वड़ी पुनि होत है ।
कवहूँ हो मनमगन कबौं रोवै वहै ॥
आतमहीं नित जानि जु कायामें रहै ।
वही सदा इकभांति कोई ज्ञानी लहै ॥
ताते श्रीभगवानको सबठां पेखिकै ।
मनमाहीं गहिराखि फिरतहूँ भेखिकै ॥
सतवें गुरुकिया सूर जु शिचा दोलई ।
आठमहीने किरणि नीर सोखतवही ॥

चारमास वह आप फेरि बरषा करै ।
वा जलको कछु लोभ नहीं मनमें धरै ॥
ऐसे साधू होय जु कछु कोइ देतहै ।
वाको आछी भांति सोई वह लेत है ॥
मोह न कबहूँ करै जु कोई कछु चहै ।
चरणहिंदासा जानि सोई यह गति लहै ॥
दो० लेते कछु हरपै नहीं, देते दुख नहिं होय ।
ऐसे निर्लोभी रहै, चरणदास है सोय ॥

अष्टपदी ॥

दूजे जो प्रतिबिम्ब सूर को देखिये ।
जल भांड़ौं के माहिं सबन अवरेखिये ॥
खोजिकै देखौ वाहि सूर तौ एकहै ।
घट घटमें प्रतिबिम्ब विचारि अनेकहै ॥
ना काहूसे वैर प्रीतिहू ना करै ।
सूरज एक निहारि सकल घट छवि धरै ॥
ऐसेही निर्मोह सदा निर्लेप है ।
वाको साधूजान सो ऐसी विधिरहै ॥
अठवेंकियो कपोत गुरू मैं विचारिकै ।
निर्मोहित मन भयो तभी जु निहारिकै ॥
उठी एक मनमाहिं नारि सुत कीजिये ।
जगमें ह्वै निश्चिन्त बहुत्त सुख लीजिये ॥
सहज बागके माहिं जाय ठाढ़ो भयो ।
वृत्तपै एक कपोत कपोतिनि को लह्यो ॥
ता ऊपर उन गेह आपनो साजिया ।
बहुत प्रीति सुखमानि सकल दुख भाजिया ॥

पायो आतमज्ञान सभी दुविधा गई ॥
ना काहू से वैर नहीं कहुँ प्रीति है।
ना काहू दुख देहुं नहीं सुख रीति है ॥
काहूसे नहिं डरूं न काहू सँग लगूं।
काहु कि शरण न जावँ न काहूसे भगूं ॥
कहैं श्रीशुकदेव विवेक विचार सों।
दत्तात्रेयी कह्यो यथा यदुराज सों ॥
यह शिक्षा आकाशसों लीन्हीं जानिकै।
चरणहिंदासा भयो यही मत मानिकै ॥

दो० चौथे गुरु कियो नीरहीं, जाको सुनिय प्रसंग।
आप महा उज्ज्वल रहै, मिलिजावै सब रंग ॥

अष्टपदी ॥

जल ज्यों निर्मल होय सदा विरक्त वही।
तजै न शीतल अंग बसै नितही मही ॥
गृही संग जो चलै बाट कबहूं कहीं।
मनसों न्यारा रहै लेह लागै नहीं ॥
ऐसो रखै विचार यथा बरषा समै।
जल मैला ह्वै जाय खेह सँगही रमै ॥
संगति गुण सों होय जु गँदला आपही।
जाड़े में ह्वै शुद्ध लगै नहिं पापहीं ॥
समझो यों चितमाहिं संगको गुण यहै।
निर्म्मल नीर स्वभाव सदा उज्ज्वल रहै ॥
संसारी के संगसों जब मन फिरगयो।
तब नारायण रूप ध्यान आनँद लयो ॥
कछू मैल मनमाहिं कबहुँ व्यापै नहीं।

जल अरु साधू भांति एक जानौ तहीं ॥
जो कुचील कछु होय सो जलसों धोइये ।
वाको कीजै शुद्ध मैल सब खोइये ॥
साधू ऐसा होय ज्ञान मुख उच्चरै ।
श्रोताके सब पाप ताप व्याधा हरै ॥
तातेही उपदेश भक्तिका कीजिये ।
नीच ऊंच मतदेख वृक्ष ज्यों सींचिये ॥
मीठे शीतल नीरको यह गुण लीजिये ।
मीठा सबसों बोलि परमसुख दीजिये ॥
गुरु शुकदेव प्रतापसों जल गुण गाइया ।
चरणहिंदासा होय न मनता आइया ॥

दो० पंचमगुरुकियो अग्निको, समझ निहारि निहारि ।
उत्तम मध्यम जारदे, राखै कछुन विचारि ॥

अष्टपदी ॥

ब्राह्मणहूँ करै होम शूद्र जोपै करै ।
दोउपवित्र करि देइ दोऊ के अघ हरै ॥
ऐसे साधूलोग जहां भोजन करैं ।
वाको पावन करैं पाप सबही हरैं ॥
गृही जु सेवा करैं आश ऐसी धरै ।
विरकत भोजन किये पाप निश्चय जरै ॥
धान्य हमारी खाय जु साधूजन कभी ।
हमरे प्राछतजाहिं और व्याधा सभी ॥
साधूजन जो होय अग्नि के भांतिही ।
सकल पाप करै क्षार जु वाकी क्रांतिही ॥

सदा गुप्तही रहै प्रगट किये होत है ।
ऐसे साधूभेद छिपावै जोत है ॥
षष्ठहु गुरु कियो चंद सदा इक समवहै ।
कला घटै अरू बढ़ै मावस लगना रहै ॥
पूनोको सब होहिं कला भरपूरही ।
चांदनि सब जगमाहिं विराजत नूरहीं ॥
शशिमण्डल इकभांति रहै नाहीं घटै ।
योंही आतम रूप चरणदासा रटै ॥

दो० उतपति परलय देहको, घटै बढ़ दुख होय ।
आतम इकरस जानिये, अविनाशी है सोय ॥

अष्टपदी ॥

ताते कियो विचार ये काया ना रहै ।
जन्म मरणहीं होय कलाके ज्योंयहै ॥
परमातम इकभांति सदाही जानिये ।
घटै बढ़ै वह नाहिं यों मनमें आनिये ॥
कायाछोटी होय बड़ी पुनि होत है ।
कबहूँ हो मनमगन कबौं रोवै वहै ॥
आतमहीं नित जानि जु कायामें रहै ।
वही सदा इकभांति कोई ज्ञानी लहै ॥
ताते श्रीभगवानको सबठां पेखिकै ।
मनमाहीं गहिराखि फिरतहूँ भेखिकै ॥
सतवें गुरुकिया सूर जु शिक्षा दोलई ।
आठमहीने किरणि नीर सोखतवही ॥

चारमास वह आप फेरि बरषा करै ।
वा जलको कछु लोभ नहीं मनमें धरै ॥
ऐसे साधू होय जु कछु कोइ देतहै ।
वाको आछी भांति सोई वह लेत है ॥
मोह न कबहूँ करै जु कोई कछु चहै ।
चरणहिंदासा जानि सोई यह गति लहै ॥

दो० लेते कछु हरपै नहीं, देते दुख नहिं होय ।
ऐसे निर्लोभी रहै, चरणदास है सोय ॥

अष्टपदी ॥

दूजे जो प्रतिबिम्ब सूर को देखिये ।
जल भांड़ौं के माहिं सबन अवरेखिये ॥
खोजिकै देखौ वाहि सूर तौ एकहै ।
घट घटमें प्रतिबिम्ब विचारि अनेकहै ॥
ना काहूसे वैर प्रीतिहू ना करै ।
सूरज एक निहारि सकल घट छवि धरै ॥
ऐसेही निर्मोह सदा निर्लेप है ।
वाको साधूजान सो ऐसी विधिरहै ॥
अठवेंकियो कपोत गुरू मैं विचारिकै ।
निर्मोहित मन भयो तभी जु निहारिकै ॥
उठी एक मनमाहिं नारि सुत कीजिये ।
जगमें ह्वै निश्चिन्त बहुत्त सुख लीजिये ॥
सहज बागके माहिं जाय ठाढ़ो भयो ।
वृत्तपै एक कपोत कपोतिनि को लह्यो ॥
ता ऊपर उन गेह आपनो साजिया ।
बहुत प्रीति सुखमानि सकल दुख भाजिया ॥

दो० करि विचार मनमें धरी, धन्यभाग सुख होय ।
हम समान या जगतमें, और न दीखै कोय ॥

अष्टपदी ॥

भयो कपोतिनि गर्भ अण्ड द्वै वा दिये ।
प्रीतिसों सेवन किये फूटि द्वै सुत भये ॥
केतक दिवसन माहिं पंख निकसे सभी ।
उड़िकै बैठन लगे डार ऊपर तभी ॥
निरखत बहुसुख मानि कपोत कपोतिनी ।
हमरे अति वड़भाग दियो यह सुख धनी ॥
एक रहे घर माहिं जु रक्षा धारने ।
दूजे वन में जाय जीविका कारने ॥
बनसे चूगालाय बचन मुखं डारई ।
बाते उनकी क्षुधा सकल निरवारई ॥
जन्म सुफल मन जानि रैनदिन यों रहै ।
वसुधामें कछु शोच न हियमाहीं लहै ।
इकदिन कह्योकपोत कपोतिनि साथही ।
ये बच्चा अब बड़े भये सब गातही ॥
एतौ रहैं गृहमाहिं दोऊ हम वन चलैं ।
चूगा लावैं बहुत करैं भोजन भलैं ॥
है करि निस्संदेह दोऊ वन को चले ।
कहैं चरणहींदास चुगन लागे भले ॥

दो० पाछे वधिक जु आइया, दीनो जाल बिछाय ।
पकरन की मनमें करी, बैठ्यो घात लगाय ॥

अष्टपदी ॥

दोऊ गये वनमाहिं वधिक इक आइया।
उन बच्चनको देखिके जाल बिछाइया॥
तापर किणका डारि आपतौ छिपिरह्यो।
बच्चन चूगा देखि भेद कछु ना लह्यो॥
यह कण कारण मात पिता वनको रमैं।
सो पायो यहि ठौर चुगैं क्यों ना हमैं॥
दोऊ उतरे तहां जबै सुख डारिया।
तब वहि वधिकने जाल फंदको मारिया॥
आय कपोतिनि जबै शब्द नाहीं सुनो।
घरमें पाये नाहि शीश तबहीं धुनो॥
बच्चन कारण शब्द कियो हंकारिकैं।
बोले पिंजर माहिं जु वचन निहारकै॥
देखि कपोतिनि जालमें यह मन आनिया।
अपना जीवन अफल जगतमें जानिया॥
तनमें अतिदुख पाय कल्पना बहु करी।
कहैं चरणहींदास बुरी आशा धरी॥

दो० जाल माहिं मोसुत फँसे, जाय परौं वा ठौर।
विकल होय चाली तबै, कियो विचार न और॥

अष्टपदी ॥

मोह फंद वश होय जाल माहीं परी।
वाहू को गहि वधिक पिंजर माहीं धरी॥
आयो बहुरि कपोत लख्यो सुत बालहूँ।
इन बिन कैसे जिऊं मरौं बेहालहूँ॥

परो जाल के माहिं बहुत दुख मानिकै ।
चारौ गहिलै चलो वधिक सुख जानिकै ॥
राजा मो मनहुती जु सुत दाराकरूं ।
निरखिलई यह सीख बहुरि नहिं चितधरूं ॥
वाको कीन्हो गुरू चरित यह देखिकै ।
हरि सुमिरण से पगोरहूं जु विशेषिकै ॥
मोह महादुखरूप सकल बिसराइया ।
लिये रहूं वैराग परमसुख पाइया ॥
सदा रहूं निर्बंध दुःख सब भाजिया ।
चरण कमलको ध्यान हियेमें साजिया ॥
तहां बसौं निशिभोर अंत नाहीं बहूं ।
चरणहिंदासा होयके निज आनँद लहूं ॥

दो० नवां गुरू अजगरकियो, लियो परम संतोष ।
परालब्ध दृढ़ करि गही, रहा राग नहिं दोष ॥

अष्टपदी

जिहि कारण गुरु कियो कहूँ कारण सभी ।
जासों रहौं दृढ़ बैठि भयो धीरज तभी ॥
आगे भिक्षा काज ध्यान तजि डोलतो ।
कोऊ देतो भीख कोउ दुर्बोलतो ॥
जो कोउ भोजन दियो मगन होतो तहां ।
जो कोउ नाहीं दियो क्रोध करतो तहां ॥
अजगर इकदिन लखो जहां उतपति भयो ।
निशिदिन ह्वांईं रह्यो कहूं नाहीं गयो ॥
आय अचानक मृगा सिंह वा मुख धँसै ।
चौपाये यों आय तासु मुखमें फँसै ॥

जो वह जागत होय उन्हैं मुख सों गहै ।
तिनको भोजन करै उदर योंही भरै ॥
परालब्ध जो होय सोई ह्वां आरहै ।
परो रहै वहि ठौर सभी दुख सुख सहै ॥
वाकी लीनी रहनि बहुत सुखपाइया ।
चरणहिंदासा होय अधीर गँवाइया ॥

दो० जबसों पर आशा तजी, गृही द्वार नहिं जावँ ।
लगो रहौं हरि ध्यान में, सहज मिलै सो खावँ ॥

अष्टपदी ॥

मन राखौं प्रभु ध्यान सदा आनंदमें ।
ज्ञान दिशा अब भई रहो नहिं द्वन्दमें ॥
याचक घर घर फिरै न भिक्षा पावई ।
साधुनको वनमाहिं भोजन हरि ख्वावई ॥
जब भइ ऐसी समझ निचल बुधि आइया ।
जहँलग जिह्वा स्वाद सभी जु गँवाइया ॥
स्वादी अरु बिन स्वाद जो भोजन आवई ।
करि सब अंगीकार सुरुचि सों पावई ॥
सूखो गीलो होय जु भूनोहो कछू ।
ताको फेरौं नाहिं सभी लेकर भछूं ॥
जो कछु आवै नाहिं ह्वांई बैठो रहूँ ।
परालब्धही जानि बुरो भल ना कहूं ॥
सकल बिकल नहिं होय न आशा कछु कहीं ।
नारायण के ध्यान रहूँ लागो वहीं ॥
अजगर की सी वृत्ति निरी मेरे रही ।

चरणहिंदासा होय भक्ति दृढ़करि गही ॥

दो० दशवें गुरु कियो सिन्धुको, कहूँ सोई परसंग ।
लीन्हे समझ बिचारिकै, जाके तीनों अंग ॥

अष्टपदी ॥

खारी नीर स्वभाव सदा इक रस वही ।
मीठी सरिता बहुत चली आवै वही ॥
मिलि नहिं फिरै स्वभाव तासु को जानिये ।
ऐसे विरक्तरहे जगत में मानिये ॥
बहुतै होय गँभीर थाह नहिं पावई ।
ऐसा साधू जानि राम मन भावई ॥
वर्षाऋतुकी नदी रलैं बहु वादसों ।
घटै बढ़ वह नाहिं रहै मर्यादसों ॥
एकादश जो पतंग कहूँ मैं सुनायकै ।
देखि दीपकी ज्योति गिरोहै आयकै ॥
दीन्हो आप जराय हाथ कछु ना लगो ।
समुझि कामिनी रूप सो मैं दूरीभगो ॥
ज्ञान जाय अरु नरकपरै इस रीति को
सुन्दररूप निहारि करो मत प्रीति को ॥

दो० फूल फूलपर बैठिकै, उदर भरै तिस नाल ।
सो भवँरा गुरु बारवां, लई जू वाकी चाल ॥

अष्टपदी ॥

भिक्षा कारण मांगन घर घर जात हो ।
कोऊ देते आनि कोऊ जु रिसात हो ॥
ताते शिक्षा भवँर कि यह उरमें लही ।

सूक्षम सबही पुष्पसों उन रस मांगही ॥
तब में कियो विचार इकट्ठो लेनते ।
देनहार को दुःख बहुतही होतहै ॥
नेक नेकही लेहु बहुत घरजायकै ।
उदर पूरणा करूं जु आनँद पायकै ॥
जितना होय अहार सोई अब लेत हौं ।
बासी नेक न राखि न काहू देत हौं ॥
अलिसुतकी यह रीति भूखभरि खावई ।
और दिना के काज न नेक बचावई ॥
फूलन को रस चाटि नहीं उनसों बँधै ।
ऐसे विरकत रूप जगत में ना फँधै ॥
चरणहिंदासा होय त्याग मन राखई ।
राजा सों इहिभांति ऋषीश्वर भाखई ॥

दो० देखि दशा माँखीनकी, तजो सकल संग्रेह ।
मिटिदुविधा निर्भयहुये, भई सुखारी देह ॥

अष्टपदी ॥

तेरह सहतकी माँखी ताहि पिछानियाँ ।
सब वृक्षनको मीठो इकठाँ आनियाँ ॥
जब छत्ता भयो पूर किसीने तोरिया ।
सब रस लीन्हो काढ़िकै वाहि मरोरिया ॥
बहुत भयो उन कष्ट जुवै भागी फिरीं ।
बहुत मरीं वहि ठावँ बहुत सिसकैं गिरीं ॥
ताते माँखी गुरू हिये माहीं धरो ।
कोउ जक्तकी वस्तुको संग्रह ना करो ॥

चौदह हाथी जानि काम वश होयकै ।
आपा आप बँधाय जन्म दियो खोयकै ॥
इक गज मातो हुतो जँगल के बीचही ।
अति बलवंत विशेषि कोऊ वा सम नहीं ॥
वा ढिग हस्ती और कोई नहिं जातहो ।
मानुष पशुजिय योनि कहूं कह बातहो ॥
वाकी आई बात जु राजापै चली ।
इक कुंजर वनमाहिं रहतहै अतिबली ॥
भूपति आज्ञादई पकरि वा लीजिये ।
जामें आवै हाथ यतन सोइ कीजिये ॥

दो० पीलवान आज्ञा लई, खोदी खंदक जाय ।
चरणदास तहाँ छल कियो, दीन्हीं घास बिछाय ॥

अष्टपदी ॥

भगल की हथिनि बनाय सँवारी बुद्धिसों ।
खंदक ऊपरधरी खरी करि शुद्धिसों ॥
जल पीवनके काज जु हस्ती आइया ।
वा हथिनीको देखिकै अधिक लोभाइया ॥
जब हथिनी की ओर चलो मतिहीनहीं ।
सपरश इच्छा धारि परो खंदकमहीं ॥
निकसन कैसे होय बहुत लंघन करे ।
अतिदुर्बल तन भयो पराक्रम सब हरे ॥
तब वापर चढ़ि बैठ महावत आयकै ।
बाहर लायो काढ़ि जु ताहि सधायकै ॥
फिर राजाके पास खड़ो कियो लायकै ।

अंकुश शिरके माहि जु बेड़ी पायँके ॥
शीश धुनै पछिताय वै आनँद कितगये।
जो सुख वनके माहिं सभी स्वपना भये ॥
सदाहुतो निर्वन्ध आय बंधन बँधो।
कहैं चरणहींदास काम फंदन फँधो ॥

दो० सपरशकी इच्छा किये, भया जु ऐसा हाल।
पशु पक्षी नर नारिही, फँसे कामके जाल ॥

अष्टपदी ॥

भापत दत्तात्रेय जु साधूजन कभी।
कामिनि ओर निहारि करै सपरश तभी ॥
हस्ती कैसो हाल साधुको होय है।
सुमिरण ज्ञानरुध्यान जु सबही खोय है ॥
जो कहे हमहैं साधु जु कोई भार्य्या।
चूमै हमरे चरण तासु होयहै कहा ॥
चरणन चूमै आय हाथ धरि पायँ पै।
साधूमन चलिजाय स्पर्श सुख पायकै ॥
वाको सुख उरधारि करै इक कामिनी।
वाते पुत्र कलत्र बहुतही यामिनी ॥
वनमें तप अरु योग जु करतो निशदिना।
सो सबही गयो भूलि नहीं सुख इकक्षना ॥
ताते हस्ती गुरू हिये में धारिया।
कामिनि को परसंग सकल निर्वारिया ॥
काठ कि पुतली होय कै कागज में रची।
चरणहिंदासाहोय सोभी देखन तजी ॥

दो० पन्द्रहवों गुरु मृग कियो, ताकी गति सुनिलेहु ।
औगुणहीं को छोड़िकरि, गुणहीं में चितदेहु ॥

अष्टपदी ॥

मृग देखो वन माहिं तासु मति आनियां ।
जीव दियो वहि ठौर सोई हम जानियां ॥
वधिक बजाई बीण राग गावनलगो ।
स्रवण सुनि वह हिरण रीझि आयो भगो ॥
पहुँचो पारधि पास बाण उन मारिया ।
ता दिन रागको चाव सकल निर्वारिया ॥
जो विरक्त सुनै राग जु रस शृङ्गारको ।
ऐसहि होवै ख्वार नरकमें जायसो ॥
सुनिये गुण गोपाल चरित कर्त्तारको ।
जासों दुख छुटिजाय ये मायाजारको ॥
तासों उपजै ज्ञान ध्यान दृढ़ करि गहै ।
पावै पद निर्वाण जहां सुखसों रहै ॥
निश्चयही तू जान जु मैंने यह कही ।
चंचलता गइ छूटि जु बुधि निश्चल भई ॥
ताना रीरी राग नाच बिसराइया ।
चरणहिंदासा होय चरण चित लाइया ॥

दो० कहूं सोलवीं मीनकी, बुरी जीभ की स्वाद ।
जो कोई यामें फँसै, लगै बहुत उठि ब्याध ॥

अष्टपदी ॥

सोलहौं गुरु सुन मीन जो ऐसे देखिया ।
वा मच्छी को एक वधिक अवरेखिया ॥

थोरो मांस लगाय जु बंशी साथही ।
जलमें दी छुटकाय डोर गहि हाथही ॥
जिह्वा स्वाद के काज मीन वह खाइया ।
गई उदर के माहिं हिये अटकाइया ॥
तीक्ष्ण कांटा लोह उदरको फारिया ।
ताहीक्षण वह मीन प्राण तजि डारिया ॥
ताते मच्छी गुरू हिये माहीं करो ।
जिह्वाको कछु स्वाद नहीं मनमें धरो ॥
जो विरक्त को स्वाद जीभको चाहिये ।
बहुत भांति दुख होय नहीं सुख पाइये ॥
जिह्वा स्वाद के काज गृही घर जायहै ।
आछो भोजन पाय तौ रुचिसों खायहै ॥
भोंड़ो भोजन होंय तौ नाक चढ़ावई ।
हरि सुमिरण को त्यागिकै जिततित जावई ॥
ताते साधूलोग नहीं घर घर फिरैं ।
जिह्वा को कछु स्वाद नहीं चितमें धरैं ॥
ऐसे भोजन खाय लखै ज्यों औषधी ।
सबही रोग नशाहिं रहै काया शुधी ॥
चीकन भोजन खाय नींद बहु आवई ।
ध्यान भजनकी रीति सकल बिसरावई ॥
सब इन्द्रिन के माहिं जो जिह्वावशकरै ।
जो आवै सोइ खाय कभूं भूखो रहै ॥
जो जिह्वावश होय तौ इन्द्री वश सबै ।
जो रसना वश नाहिं तौ सब परबल तबै ॥
चीकन भोजन खाय तौ इन्द्री सब जहां ।

अतिही ह्वै बलवन्त करैं औगुण तहां ॥
षटरसही के स्वाद सों नारी वशभये ।
जग माहीं दुखपाय मुये नरकैगये ॥
मनमें देखि विचारि गुरू कियो मीनहूं ।
जासों लीनी सीख इन्द्रिभइ क्षीनहूं ॥
सबही स्वाद भुलाय शरण हरिकी लई ।
चरणहिंदासा होय सुरति निर्मल भई ॥
दो० सत्रहवों गुरु पिंगला, लीन्हों जासों ज्ञान ।
आशातजि निर्मलभयो, लगो रहूं हरिध्यान ॥

अष्टपदी ॥

गुरु सत्रहवों जान हमारो पिंगला ।
पर आशा दइ छांड़ि रहूं आनँद मिला ॥
इक दिन राजा जनक विदेही के नगर ।
गयो अचानक लखो पिंगला को बगर ॥
पिंगला उठि परभात भली विधि न्हाइया ।
भूषण बस्तर पहिरि सुगन्ध लगाइया ॥
घरके द्वारे बैठि जु बाट निहारई ।
कोऊ दे बहु द्रव्य सु ह्यां पग धारई ॥
मारग में नर देखि यही आशा करै ।
आवतजानै ताहि खुशी हियमें धरै ॥
जब वह आयो नाहिं दुखी मनमें भई ।
कबहूं आश निराश ऐसही निशि अई ॥
ऐसे सब दिन बीतिगयो यहि भांतिही ।
मनमें भई मलीन आइ पुनि रातिही ॥

काया आलस धारि जु घर भीतर गई।
पलका बैठी जाय जहां भलि सेजही॥
बिछे बिछौना श्वेत फूल तापर धरे।
लेटी तहां मग जोय नैन निद्राभरे॥
कबहूं उठिजा द्वार कभूं जा भीतरै।
कहै चरणहींदास नींद नाहीं परै॥

दो॰ आशाकी डोरी बँधी, क्षण घरमें क्षण द्वार।
थिरताना संतोषबिन, दुखी पिंगलानार॥

अष्टपदी॥

ऐसे आधीराति गई जब बीति कै।
कोऊ आयो नाहिं सुहां कछु प्रीतिकै॥
पिंगला उपजो ज्ञान हिये परकाशही।
उदयभयो संतोष लोभ गयो नाशही॥
वर्ष सहसदश माहिं जु तप कोऊ करै।
हिरदै निर्मल होय सभी कलिमल हरै॥
ऐसो ज्ञान उजास पिंगला को भयो।
तब उन हिरदै माहिं वचन ऐसो कह्यो॥
हीन हमारे भाग जन्म योंहीं गयो।
मनुष रूपसों काम क्रोध लोभै छयो॥
ताते जिविका आप हिये में चाहिया।
परमातम भगवान सों प्रीति न लाइया॥
सदा विराजत निकट दूरि नहिं होतहै।
सबविधि पूरणकाम सकल जग ज्योतिहै॥
सबहीको नित देतु खान अरु पानई।
चरणहिंदासा होय सोई यह जानई॥

दो० लख चौरासी योनि में, सबको भोजन देय ।
सदा वही पालन करै, अपनो नाम न लेय ॥

अष्टपदी ॥

मनुषरूप जो देय एकदिन खानको ।
दूजे दिन वह बहुत घटावै मानको ॥
नारायण सों भक्ति जो जगको सुख चहै ।
ऐसे वाको देय सदा इकरस रहै ॥
जाके लीन्हे नाम सकल पातक नसैं ।
कथा जु उनकी सुनै हिये आनँद लसैं ॥
ऐसो हरि विसराय मनुषको चाहिया ।
विरथा जन्म गवाँयकै सुख नहिं पाइया ॥
काया है इक गेह हाड़ अरु मांस को ।
नाड़ी गुणसों बांधि रखो है तासु को ॥
चामरु लोहू पीब तहां नव द्वारहैं ।
सदा बहतही रहत यही जु विचारहैं ॥
विष्ठा मूत जो होय या गेहके माहिंहीं ।
ऐसे घरसों भोग मुदित मन चाहहीं ॥
ऐसे बिरथा आयु सकल जु गवाँइया ।
हरि के चरणनदास नहीं जु कहाइया ॥

दो० अब उरमें ऐसी उठी, करूं भक्ति चितलाय ।
चरणकमल में मन धरूं, जगसों नेह उठाय ॥

अष्टपदी ॥

अब करूं भक्ति उपाय जु हरि मनभाइया ।
ताते लेहुं रिझाय परमगुण गाइया ॥
जैसे लक्ष्मी सेव करी मन लायकै ।

कीन्हे महाप्रसन्न श्रीपति धायके ॥
ऐसे मन भगवान सों अपनो लायहौं ।
पावों पुरुष निधान प्रीतिके भायहौं ॥
लक्ष्मी करी जु भक्ति पुराणन में कहैं ।
नारायण दई ठौर सदा हियमें रहैं ॥
मैंहूं ऐसी भक्ति करूं अतिप्रेम सों ।
करूं महापरसन्न अधिकही नेमसों ॥
आज के दिनसे आश पुरुष की त्यागिकै ।
राखूं प्रभुकी चाह चरणहीं लागिकै ॥
जो कछु हरि मोहिं देयँ सोई निर्दोषहै ।
करूं भजन भगवन्त तासु सों मोपहै ॥
मनुष रूप कह वस्तु जु आशा कीजिये ।
बहुत वहाँलौं देत जहाँलौं जीजिये ॥

दो० दुख में काम न आवई, मुये न संगी कोय ।
चरणदास यों कहत हैं, ये संसारी लोय ॥

अष्टपदी ॥

जब वह मृत्यक होय नहा कछु हेत है ।
हरि जु सदाही संग सभी सुधिलेत है ॥
मनुष आपनी नाहिं जु इच्छा करिसकै ।
औरन को कहा देय मूर्ख योंहीं तकै ॥
पिंगला कहो यह ज्ञान मुझे क्यों आइया ।
नीके काजन माहिं न चित्त लगाइया ॥
तीरथ बर्त्त न साधू दर्शन देखिया ।
हौं तिरिया बुरे कर्म कि चाल विशेषिया ॥
परमेश्वर की दया सों यह पहिचानिये ।

और बात कछु नाहिं हिये में आनिये ॥
जो कोई कहै आज कछू धन ना लयो ।
कोई आयो नाहिं ज्ञान ताते भयो ॥
आगेहू बहुदिवस कोई नहिं आइया ।
कीन्हे लंघन बहुत द्रव्य नहिं पाइया ॥
ज्ञान कबहु नहिं भयो आज जानत नहीं ।
कौन भाग बड़ मोर भयो परगट अभी ॥
कहैं गुरू शुकदेव जु उन नहिं जानियाँ ।
दत्तात्रेय के दर्शसों कुमति भुलानियाँ ॥

दो० पिंगला आई घर बिषे, छोड़ि मनुषकी आश ।
सुखी होय सोवन लगी, जब वह भई निराश ॥

अष्टपदी ॥

मनमें किय सन्तोष सकल दुख मिटिगये ।
छोड़ी जग की आश हिये आनँद छये ॥
यों कहैं दत्तात्रेय राजासों यही ।
वाकी मैं लइ सीख सोई दृढ़ करि गही ॥
गृही द्वार नहिं जावँ न मांगों कछु कहूं ।
ताते सुखी अरु शान्त सदा बैठोरहूं ॥
उद्यम करूं कछु नाहिं वासना त्यागिकै ।
आनँद तन मन मोहिं बहुत अनुरागकै ॥
मनुष दुखी वहि होय रहै आशा लिये ।
काम क्रोध अरु लोभ मोह उतपति किये ॥
जो आशा मन आय कबहु वह नाभई ।
क्रोध भयो उत्पत्ति यही मनसा ठई ॥
काहूते इकवस्तु कभू जु मँगाइया ।

वाने दीन्हीं नहिं क्रोध उपजाइया ॥
वाते कीन्हों वैर अधिक रिस ठानिया ।
नारायणके ध्यान सुरति नहिं आनिया ॥
यह शिक्षा लइ मानि पिंगलासे तभी ।
जगकी छोड़ी आश भये कारज सभी ॥

दो० चील्ह् अठरहों गुरु कियो, मिटो सकल सन्देह ।
रहों अकेलो संग तजि, करौं न कछु संग्रेह ॥

अष्टपदी ॥

जब गृहसेती निकसि वैरागी हम भये ।
तब हमरे मनमाहिं जु ये कारज छये ॥
दो भाजन सँग होहिं एक जल पीजिये ।
दूजे भाजन माहिं खानको लीजिये ॥
इक चादर कोपीन दोय यह चाहिये ।
ताते ओढ़ि नहान कि युक्ति बनाइये ॥
करिकै जब अस्नान ध्यान करने लगो ।
मनमें चिन्ता कोऊ कोपीनहिं लै भगो ॥
समझो यह मनमाहिं बहुत अधिकारते ।
अन्त महादुख होय मोह उरधार ते ॥
ऊंची पदवी पाय बहुरि नीचे परै ।
जब वह संपत जाय घनो मनमें झुरै ॥
जो कोइ रहै इकन्त अकेलोई सहै ।
ताहि उदर को शोच कछू नाहीं रहै ॥
दशबिस सौ जो साथ अधिक दुख लहत है ।
आप अकेलो रहै परमसुख सहत है ॥

सकल विकल बिसराय जु आनँद पावई ।
चरणहिंदासा होयके बोझ बगावई ।
दो० उड़ती देखी चीलह को, पंजे माहीं मांस ।
बहु पक्षी घेरे फिरैं, लेन न देवैं श्वास ॥

अष्टपदी ॥

पक्षी सभी लुभाहि मांसको देखिकै ।
वाको मारै चोंच जु लोभ विशेषिकै ॥
कोई नोचै पंख कोई मस्तक भनै ।
वह दुख पावै बहुत समझि मूड़ी धुनै ॥
मैं काहूसे वैर प्रीति नहिं मानिया ।
या भत्तण के काज कष्टही जानिया ॥
मांस दियो छिटकाय जुदे पक्षी भये ।
वा भक्षण के पास सभी दौरे गये ॥
वह बैठी मन मुदित जु पंख पसारिकै ।
दीन्हो दुख बिसराय जु व्याधा टारिकै ॥
वा दिनते लइ सीख जु संग्रह ना करौं ।
कछू न राखौं पास नग्न तन मैं फिरौं ॥
जहँ चाहूँ तहँ जावँ भजन आनन्द में ।
कछु मन चिन्ता नाहिं छुटो सब वन्धते ॥
काहू वस्तु न शोच कोई लैजायगो ।
चरणहिंदासा होय ध्यान हरिपाय को ॥
दो० बालक गुरु उन्नीसवों, ताके लिये स्वभाव ।
नहीं मान अपमान है, लोभ न कछू उपाव ॥

अष्टपदी ॥

बालक माहीं नहीं मान अपमानहूं ।

लोभ जु वामें नाहिं रहै अनजानहूं ॥
मारै कोई वाहि रोष वह ना करै ।
करै जु फिरि वह प्यार बाल हँसि हँसि परै ॥
निन्दा अस्तुति दोय कभी नहिं धारई ।
वैर प्रीतिको अङ्ग कछू न विचारई ॥
जो मणि बहुतै मोल कि वासे लीजिये ।
खेल खिलौना फूलको पलटे दीजिये ॥
मणिको लोभ न करत कछू नहिं भाषई ।
चितको अपने खेलके माहीं राखई ॥
जो कोउ नारी पकरि हिये सों लागई ।
बालक अरु वा नारिको काम न जागई ॥
नग्न जु बालक फिरत लाज नहिं आवई ।
ज्यों भावै त्यों रहै कोई न चलावई ॥
क्रिया कर्म अरु सकुच कछू वाके नहीं ।
ठाकुर अरु चरणदास कछू जानै नहीं ॥

दो० बोले दत्तात्रेय जी, राजासों यह बैन ।
इकदिन बालक की सबै, देखी अपने नैन ॥

अष्टपदी ॥

भाषैं दत्तात्रेय बालगति देखिकै ।
वाकेलिये स्वभाव सभी जु विशेषिकै ॥
जो कहुँ हमसों प्रीति बहुत आदर कियो ।
काहूं गारी काढ़ि बहुत झड़को दियो ॥
दोनों एक समान और नहिं व्यापई ।
बैठूं सहज स्वभाव उठूं फिर आपई ॥
जो किन्हूं भोजन दियो चाटिहाईं लियो ।

करही को करपत्र पानी तामें पियो ॥
अष्टधातु को लोभत्याग सवही कियो ।
कैसोहि वस्तरदेहु छांड़ि तितही दियो ॥
ज्यों वालक निज खेलमें आनँदसों रहै ।
त्यों परमातम संग कछू दुखहू न भै ॥
तुरिया पद निर्वाण मातु समहीं कहूँ ।
ताकी गोदी माहिं सदा सुखसों रहूँ ॥
चरणहिंदासा होयकै गर्व नशाइया ।
छोटापन के अंग सबै तब आइया ॥

दो० कन्या गुरु कियो बीसवों, समझि विचारिकै देखि ।
रहौ अकेलो तभीसों, पायों यही विवेक ॥

अष्टपदी ॥

पुण्य तू विसवों जान गुरू कन्या कियो ।
वाको मत अनुराग हिये माहीं लियो ॥
इक नगरी के माहिं एक दिन हम गये ।
इक गृहचारी के गेह जाय ठाढ़े भये ॥
स्यानी कन्या तासु जु घरमाहीं हुती ।
मात पिता केहु काज गवन कीन्हों तभी ॥
करन सगाई आय लोग बैठे तहीं ।
या कन्याकी करैं सगाई आजहीं ॥
कन्या कीन्हों शोच यही कैसे कहूँ ।
मात पिता कहिं गये अकेली मैं अहूँ ॥
ऐहैं मातरु पिता चिन्त मनमें करैं ।
भोजन को कछु नाहिं जु हम आगे धरैं ॥

कन्याकरिकै शोच ये वचन उचारिया ।
मात पिता गये कहीं अभी पगधारिया ॥
आवो बैठो खाट रसोई खाइये ।
भोजन होत सवार कहीं नहिं जाइये ॥
वाके गृह कछु नाहिं धान थोरे हुते ।
कूटनलागीं ताहि सोई अपने मते ॥
चूरी हाथके माहिं बहुत खरकन लगीं ।
फिरि समझि मनमाहिं शोचमाहीं पगीं ॥
यों समझैं ये लोग कछू गृहमें नहीं ।
भोजन कारन धानजु कूटति है तहीं ॥
चूरीडारी फोरि दोय तहँ राखिया ।
तऊ न खरको गयो शब्दही भाषिया ॥
दूजी दइ बिगसाय एकही रहगई ।
तब खरका नहिं होय कुटत निर्भय भई ॥
वादिन कन्या गुरू जु हमने चितधरा ।
साधु अकेलो रहै सदा आनँद भरा ॥
धर्मशाल ते निकसि शिष्य को साथलै ।
कबहूँ उपजै क्रोध शिष्य भाषै यहै ॥
आपनहीं लियो बहुत हमैं थोरो दियो ।
गुरूको चहिये टहल शिष्य रूठै गयो ॥
गुरू कहै कछु और शिष्य औरै कहै ।
झगड़ैं आपस माहिं प्रीति थिर ना रहै ॥
दोउमें कलकल होय शान्ति नहिं आवई ।
विना अकेलेरहै चैन नहिं पावई ॥
पशु पत्ती नर नारि संग नहिं लीजिये ।

दूजेही को साथ सभी तजि दीजिये ॥
छूटैं सकल क्लेश ध्यानलागै भलो ।
चरणहिं दासा होय रहै हरिसों मिलो ॥
दो० गुरु कीन्हो इकीसवों, ताहि तीरगर जान ।
चरणदास यों कहतहैं, वासों सीखो ध्यान ॥

अष्टपदी ॥

पुनि इकीसवों गुरू तीरगर हमकियो ।
ताते ध्यानको भेद सीखि हिय में लियो ॥
इकदिन नगरीमाहिं तीरगर हाट में ।
ठाढ़भयो तहँजाय चलतही वाट में ॥
वह तौ बनावत तीर आपनी जानमें ।
और कछू सुधि नाहिं पगो वा ध्यानमें ॥
वाके आगे होय भूप इक आइया ।
हस्ती अरु दल साज निशान बजाइया ॥
भयो मुहूरत एक मनुष तहँ आइकै ।
भूप गयो इस राह बुझो जु सुनायकै ॥
वह तौ साजत तीर यही उत्तर दियो ।
हम तौ जानत नाहिं नहीं दरशन कियो ॥
भाषत दत्तात्रेय जु हम वासों कह्यो ।
राजा सँग बहु भीर शब्द दुन्दुभि भयो ॥
बहुत कटक लिये साथ जु भूप सिधारिया ।
तैं काहे नहिं सुनो न दृष्टि निहारिया ॥
उन यों उत्तर दिय्रो तीरके ध्यानहीं ।
सुरतिरही तेहि माहिं याते नहिं जानहीं ॥

वाको कीन्हो गुरू हियेमें धारिकै।
मन हरिचरणन पास रखूं निर्धारिकै॥
दृष्टि मना अरु बुद्धि जहां जु लगाइया।
ऐसो कहिये ध्यान विरल कहुँ पाइया॥
दो० ध्यान करै दृग मूंदि करि, जो कोई नर नार।
खटका सुनि पलकैं खुलैं, मन चल वारंवार॥

अष्टपदी॥

वह नहिं कहियत ध्यान जु खुलि खुलि जात है।
निश्चल लागै ध्यानजु पूरी बात है॥
ध्याता ध्यान के बीच ध्यान ध्येय माहिं है।
तीनौ एकहि होहिं विघ्न कछु नाहिं है॥
मन हरिचरणन पास कायाकी सुधि नहीं।
भूखप्यास कछु नाहिं ध्यान लागत तहीं॥
मन गयो औरै ठावँ ध्यान जो लाइये।
सो वह डिगि डिगि जाय न थिरता पाइये॥
जब नारायण साथ मगन मन ह्वै गयो।
सबकारज गयो भूलि कछू सुधि ना रह्यो॥
जैसे भाषत लोय समाधी पुरुष को।
दिन बीतैं दश बीस नहीं सुधि बुधि कहूँ॥
कहिये यही समाधि वासना सब जरैं।
कोटिन मध्ये एक ध्यान ऐसो धरैं॥
सोई चरणको दास सोई योगीश है।
सोइ साधक सोइ सिद्ध जु विस्वेबीस है॥
दो० ध्यानी ध्यान लगायकै, रहै राम लवलाय।
आपा बिसरै हरिमिलैं, बहुरि न उपज आय॥

अष्टपदी ॥

तनकी सुधि बिसराय कछू सुधि ना रहै ।
या विधिसे जो करै ध्यान ताको कहै ॥
हलचल ध्यान जो करै सो हरिसों ना मिलै ।
अफल ध्यान सोइहोय जो मनक्षणक्षणचलै ॥
तीर बनावनहार गुरू हमने कियो ।
ताते यह उपदेश हिये माहीं लियो ॥
ऐसे मन को साधि प्रभू चरणन धरै ।
ह्वाईं रहै चितलाय जु इतउत ना फिरै ॥
बाइसवों गुरु सांप हमारो जानिये ।
ताते लीन्ही सीख यही पहिचानिये ॥
सदा अकेलो रहै कबौं घर ना करै ।
रैनि जहाँ कहुँ होय वहीं वह बसि रहै ॥
वाकी देखी रहनि जु मनमें लाइया ।
सदारहूँ निर्बंध न मन्दिर छाइया ॥
उपजो मोह न लोभ लगे नहिं दाग है ।
चरणहिंदासा भयो द्वेष नहिं राग है ॥

दो० बँधा जु पानी गांदला, चलता निर्मल होय ।
दोनों रीति विचारिकै, भलो होय सो लोय ॥
तेइसवों मकरी गुरू, उगलि तार भखि जाय ।
ऐसे जग परकाश करि, प्रभुले आप लुकाय ॥

अष्टपदी ॥

तेइसवों गुरु जान हमारो माकरी ।
आप सों काढ़ै तार रहै वामो खरी ॥
फिरि वह तार समेटि लेय उरमें धरै ।

यों हरिलीला जानिय कौतुक सो करै ॥
वसुधाको उपजाय करै पालन जभी।
फिरि सब लेय मिलाय आप माहीं तभी ॥
जैसे मकरी तारसों जाल बनाइया।
फिरि आपन वा बीचमें सहज समाइया ॥
जब चाहै वह जाल उदरमें लै धरै।
मच्छी जाल में फँसै सो नाहीं ऊबरै ॥
भाषैं दत्तात्रेय मुक्ति जो चाहिये।
हरि उतपति क्षय करन शरनमें आइये ॥
जन्म मरण भयमानि भक्ति में पागिये।
जगके जालसों छूटि वेगिही भागिये ॥
लीजै त्यागि वैराग चरणहीं दास हो।
हरियश हरिगुण गाय तजो जग वासहो ॥
दो० भृङ्गी मिलि भृङ्गी भवै, सुनो हतो यह बैन।
अब मन आई सांचही, देखा अपने नैन ॥

अष्टपदी ॥

चौबिसवों गुरु कियो जु भृङ्गी जानिकै।
वासों निश्चय भई हिये में आनिकै ॥
सुनीहती यह बात जु कोई हरिभजै।
निशिदिन मन ह्वां लायकै प्रभुसेवा सजै ॥
सो नारायणरूप आप ह्वै जात है।
यामें संशय नाहिं सांच यह बात है ॥
मन ठहरत ना हुती ये बात सुहावनी।
सेवक जो कोइ होय सो क्यों होवै धनी ॥
भृङ्गी को हमलखो कीट इक आनिकै।

राखो उन गृह माहिं आपनो जानिकै ॥
आपन बाहर बैठि ताहि सम्मुख कियो ।
केतक दिवसन माहिं व भृङ्गी करि लियो ॥
भृङ्गी रूपको देखिकै भृङ्गी ह्वै गयो ।
ताते भृङ्गी गुरू हमारे मल छयो ॥
जैसे करै कोइ ध्यान सो वा सम होतहै ।
नहींरहै चरणदास रहै ब्रह्मज्योतिहै ॥

दो० चौबीसौ पूरेकिये, समझिसमझिकरि देखि ।
विरक्त ह्वै जग में रहूं, लगै न माया रेखि ॥
फिरि अपनी कायालखी, रही न जासों प्रीति ।
थके जु इन्द्री स्वाद ही, सहज गई सबरीति ॥

अष्टपदी ॥

भाषैं दत्तात्रेय गुरू इक देह है ।
पहिले मोको होतो अधिक सनेहमैं ॥
देखो क्षण क्षण देह क्षीण ह्वै जातही ।
नित उठि सुखके काज भला कुछ खातही ॥
बहुत चाव करि आप भलो भोजन कियो ।
दूजे दिन वहि भांति घनोही दुख दियो ॥
इकदिन बस्तर विमल बनाये लायकै ।
फिरि बस्तरके काज फिरूं दुख पायकै ॥
जितनो कियो उपाय काया सुखकाजही ।
कबहूं सुख ना भयो फिरत बेलाजही ॥
इकदिन एक उपाय जु सुखको धारिया ।
दूजेदिन वहि दुःख बहुत विस्तारिया ॥
और लखी यह बात यह काया आपनी ।

अपनीही होव नाहिं विचारीही धनी ॥
मूरुख जानै नाहिं सुयाही भेद को ।
होव ना चरणदास सहै बहु खेद को ॥

दो० बालपने अरु तरुणमें, और बुढ़ापे माहिं ।
तीनो पनमें देह यह, कबहूँ अपनी नाहिं ॥

अष्टपदी ॥

बालकपनमें हाथ बाप अरु मायके ।
तरुणापन में फँसै त्रिया कर जायकै ॥
वृद्ध अवस्था माहिं पुत्रके हाथहीं ।
पुनि जब मृत्यकहोय अगिनि जारै तहीं ॥
जो योंहीं रहिजाय पशू आदिक भखैं ।
देह न अपनी होय ज्ञान मांही लखैं ॥
वादिन ते सुखकाज नहीं श्रमधारिया ।
पराल्ब्ध जो आय उदरमें डारिया ॥
कायाते इककाज भलो पुनि होत है ।
हरि की प्रापत होय जु ज्ञान उदोत है ॥
मृत्यु जबहिं होयजाय य काया ना रहै ।
भारे कैसो गेह जीव काया लहै ॥
जबहीं आवै काल नहीं ठहरायगो ।
खर्चै जो बहु द्रव्य न क्षण रहि जायगो ॥
जबहीं समुझो ज्ञान देहको जीय में ।
भयो विरक्त विचार आपने हीय में ॥
लई सीख चौबीस देहहित त्यागिकै ।
कीन्हो हरिको ध्यान बहुत अनुरागिकै ॥

दत्तात्रेय ये बचन कहे बहु चावसों।
पुनि तीर्थन को गये भक्तके भावसों॥
राजा सुनि यह ज्ञान हिये में धारिया।
हरिसों सुरति लगाय सकल दुख टारिया॥
चरणहिं दासा होय परमसुखही लियो।
तन को जगमें राखि जु मन हरिको दियो॥

दो० दत्तात्रेयी ने कहे, जो राजा से बैन।
सो मैं भाषा में कियो, समझो पावो चैन॥

अष्टपदी॥

चौवीसों के माहिं होय उपदेशदै।
सतगुरु वाहि उबारि किये सब दूरि भै॥
उनहीं के परताप चौवीसौ समझही।
आई घटके माहिं जु उज्ज्वल बुद्धिही॥
चौबीसौ तनधारि जु अंग बताइया।
जासों भयो कल्याण अधिक सुख पाइया॥
ऐसे हैं गुरुदेव ये निश्चय जानिये।
सकल विकल सब छोड़ि गुरूही मानिये॥
गुरुही के परसाद मिलैं नारायणा।
जन्म मरण बँध छूटि होय पारायणा॥
समरथ श्री गुरुदेव शीशपर राखिये।
भवसागर की व्याधि सकलही नाखिये॥
कहैं मुनी शुकदेव चरणहींदास को।
वही जु पावै चौथे परमनिवास को॥

दो० गुरु समान तिहुँलोक में, और न दीखै कोय।
नाम लिये पातक नशैं, ध्यान किये हरिहोय॥

गुरुही के परताप सों, मिटै जगत की व्याध।
राग दोष दुख ना रहै, उपजै प्रेम अगाध॥
गुरुके चरणन में धरो, चित बुधि मन अहंकार।
जब कछुआपा ना रहै, उतरै सबही भार॥
मन विरक्त के करन को, कीन्हो गुटका सार।
पढ़ै सुनै चितमें धरै, भवसागर हो पार॥

इति श्रीचरणदासकृतमनविरक्तकरणगुटकासारसम्पूर्णम्॥

अथ श्रीस्वामीचरणदासजीकृत ब्रह्मज्ञानसागरप्रारम्भः॥

दो० जैसे हैं शुकदेव जी, जानत सब संसार।
भगवत मत परगट कियो, जीव किये बहु पार॥
तिन मोपै किरपा करी, दियो ज्ञान विज्ञान।
सो सिप तुमसों कहतहौं, छूटै सब अज्ञान॥
शिष्य सुनौ अब कहतहौं, परम पुरातन[1] ज्ञान।
निगुरे[2] को नहिं दीजियो, ताके तपकी हान॥

कुण्डलिया॥

मोक्ष मुक्ति तुम चहतहो तजौ कामना काम।
मनकी इच्छा मेटकरि भजौ निरंजन नाम॥
भजौ निरंजन तत्त्व देह अध्यास मिटावो।
पंचनके तज स्वाद आपमें आप समावो॥
जब छूटे झूठी देह जैसके तैसे रहिया।
चरणदास यही मुक्ति गुरूने हमसे कहिया॥

१ पुराना २ जो किसी का मन्त्र न लियेहो॥

दो० देह मरै तू है अमर, पारब्रह्म है सोय ।
अज्ञानी भटकत फिरै, लखै सो ज्ञानी होय ॥
देह नहीं तू ब्रह्म है, अविनाशी निर्वान ।
नित न्यारो तू देहसों, देह कर्म सब जान ॥
डोलन बोलन सोवना, भक्षण करन अहार ।
दुख सुख मैथुन रोग सब, गर्मी शीत निहार ॥
जाति वरण कुल देहकी, सूरति मूरति नांव ।
उपज विनशै देह सों, पांच तत्त्वको गांव ॥
पावक पानी वायु है, धरती अरु आकास ।
पांचतत्त्व के कोट में, आय कियो तैं वास ॥
पांच पचीसौ देह सँग, गुण तीनौ हैं साथ ।
घट उपाधि सों जानिये, करत रहैं उतपात ॥
तामस अरु हिंसा[1] करै, वचन चलन विपरीति ।
आलस अरु निन्दाकरै, तामसगुण की रीति ॥
डिंभ कपट छल छिद्र बहु, खोटे सब व्यवहार ।
झूठ वचन ऐंठो रहै, तामस के गुण धार ॥
मान बड़ाई नामना, सिद्धि चहैं भजि राम ।
भोजन नाना स्वादके, राजसगुण के काम ॥
खेल तमाशे राजसी, अरु सुगन्धकी बास ।
आपनको ऊंचो गिनै, औरनकी कर हास ॥
दया क्षमा आधीनता, शीतल हिरदय धाम ।
सत्य वचन गुण सात्त्विकी, भजन धर्म निहकाम ॥
दुखी न काहू कों करै, दुख सुख निकट न जाय ।
समदृष्टी धीरज सदा, गुण सात्त्विकको पाय ॥

---

१ मारना ॥

राजस सों तामस बढ़ै, तामस सों बुधि नास।
रजगुण तमगुण छांड़िकै, करो सतोगुण वास॥
सतगुणमें मन थिरकरो, करि आतम सों नेह।
आतम निर्गुण जानिये, गुण इन्द्री सँगदेह॥
सात्विक राजस तामसी, त्रैगुण ते संसार।
तीन पांचको नाशहै, माया ब्रह्म विचार॥
अहंतत्त्व ॐ भयो, जिनते तीनौ देव।
जिनके परे जु आतमा[1], अगम अगोचर[2] भेव॥
उपजै सो माया सभी, विनशि नेकमें जाय।
छल मायासों कहतहैं, सपनो सकल बिहाय॥
निराकार[3] अछै अचल[4], निर्वासी[5] तू जीव।
निरालम्ब[6] निर्वैर सो, अज[7] अविनाशी सीव॥
जिह्वा इन्द्री नीरकी, नभकी[8] इन्द्री कान।
नासा इन्द्री धरणिकी, करि विचार पहिंचान॥
त्वचासो इन्द्री वायुकी, पावक इन्द्री नैन।
इनको साधै साधु जो, पद पावै सुख चैन॥
निद्रा संगम आलकस, भूख प्यास जो होय।
चरणदास पांचौ कही, अग्नितत्त्वसों जोय॥
रक्त बिन्दु कफ तीसरो, मेद मूत्रको जान।
चरणदास प्रकृति यह, पानीसों पहिंचान॥
चाम हाड़ नाड़ी कहौं, रोमजान अरु मांस।
पृथिवीकी प्रकृति यह, अन्त सबनको नास॥

---

१ सच्चिदानन्दस्वरूपी यस्तिष्ठति स आत्मा २ जो दृष्टि में न आवै ३ जिसका आकार नहीं है ४ जो चल न सकै ५ जिसका कहीं वास नहीं ६ जिसको किसी वस्तुकी चाह नहीं ७ जो जन्म नहीं लेता ८ आकाश॥

बलकरना अरु धावना, उठना अरु संकोच ।
देह बढ़ै सो जानिये, वायु तत्त्व है शोच ॥
काम क्रोध मोह लोभ भय, तत्त्व अकाश को भाग ।
नभकी पांचो जानिये, नित न्यारो तू जाग ॥
रोम गगन नाड़ी पवन, मांस अग्नि को अंश ।
त्वचा नीर सो जानिये, अस्थि[1] मही को वंश ॥
कफ अकाश बिंदु वायुसों, रक्त अग्निसों बूझ ।
मूत्र नीर रणजीत मन, मेद महीसों सूझ ॥
नीर व्योमसपरर्श[2] पवन, आलस अग्नि पिछान ।
प्यास नीर रणजीतमन, भूख महीसों जान ॥
उठना तौ आकाश सों, बल करना है वाय ।
बढ़नि अग्निधावन उदक[3], संकोचन महिआय ॥
लोभ जु नभकाअंशहै, काम वायुका भाग ।
क्रोध अग्नि जल मोहहै, भय पृथ्वीका लाग ॥
पांच पचीसौ एकही, इनके सकल स्वभाव ।
निर्विकार तू ब्रह्म है, आप आपको पाव ॥
निराकार निर्लिप्त तू, देही जान अकार ।
आपन देही मान मत, यही ज्ञान ततसार ॥
शस्तर छेदि सकै नहीं, पावक सकै न जारि ।
मरै मिटै सो तू नहीं, गुरुगम भेद निहारि ॥
जलै कटै काया यही, बनै मिटै फिरि होय ।
जीवऽविनाशी नित्य है, जानै बिरला कोय ॥
जरा मरण धर्म देह को, भूख प्यास धर्म प्रान ।
सकल विकलमन जानिये, स्वाद सुइंद्री जान ॥

---

१ हाड़ २ छूना ३ जल ॥

आंख नाक जिह्वा कहूं, त्वचा जान अरु कान ।
पांचौ इन्द्री ज्ञान हैं, जानै संत सुजान ॥
जो जो इनसों जानिये, निश्चय ना ठहराय ।
कहै सुनै चाखै लखै, सो सोई मिटिजाय ॥
इन्द्री जानि सकै नहीं, मन बुधि लहै न ताय ।
ज्ञानदृष्टि पहिंचानिये, वासों वाको पाय ॥
गुदा लिंग मुख तीसरो, हाथ पाँव लखि लेह ।
पांचौ इन्द्री कर्म हैं, यह भी कहिये देह ॥
देह मिटत है स्वप्न ज्यों, जीव रहत है नित्त ।
देहकर्म विसराय करि, आतमसों करि हित्त ॥
मन जीतै इन्द्री गहै, चित्त अस्थिर जब होय ।
आतम सों परचो रहै, राखै सुरति समोय ॥
पृथ्वी काल जे ठौर है, मुखै जानिये द्वार ।
पीरो रंग पहिंचानिये, पीवन खान अहार ॥
जलको वासा भाल है, लिङ्ग जानिये द्वार ।
मैथुन कर्म अहार है, रंग सफेद निहार ॥
पित्ते में पावक रहै, नैन जानिये द्वार ।
लालरंग है अग्नि को, मोह लोभ आहार ॥
पवन नाभि में रहत है, नासा जानिये द्वार ।
हरो रंगहै वायु को, गन्ध सुगन्ध अहार ॥
अकाश शीश में वास है, सरवन दुवारे जान ।
शब्द कुशब्द अहार है, ताको श्याम पिछान ॥
कारण सूक्षम लिंग है, अरु कहियत अस्थूल ।
शरीर तीनसों जानिये, मैं मेरी जड़मूल ॥

---

१ माथ २ तोंदी ॥

जाग्रत का अस्थूलहै, स्वपने लिंग शरीर ।
कारण जान सुषोपती, तुरिया साक्षी वीर ॥
जाग्रत स्वप्न सुषोपती, तुरी अवस्थ विचार ।
परा पश्यन्ती मध्यमा, वैखरी वाणी चार ॥
जाग्रत वासा नैन में, स्वप्न कण्ठ अस्थान ।
जान सुषोपति हिये में, नाभि तुरिय मनतान ॥
नाभि मध्य वाणी परा, हिये पश्यन्ती सुक्ख ।
कंठ मध्यमा जानिये, कहूं वैखरी मुख्य ॥
चित बुधि मन अहंकार जो, अन्तःकरण सुचार ।
ज्ञान अग्नि सों जारिये, आतमतत्त्व विचार ॥
जलसों मन निश्चय कियो, भयो वायुसों चित्त ।
अहंकार भो अग्निसों, बुधि पृथ्वी सों मित्त ॥
शब्द स्पर्शरु गंधहै, अरु कहियत रसरूप ।
देह कर्म तनमात्रा, तू कहियत निहरूप ॥
शब्दा गुण आकाश का, सपरस गुण है वाय ।
पृथ्वीका गुण गंध है, सो यह प्रकट दिखाय ॥
रूप अग्निका गुण कहूं, रसगुण जलका जान ।
रणजीतबतावै खोलिकरि, ये शिष ले पहिंचान ॥
सरवन मुख इन्द्री भई, तत्त्वाकाश सों दोय ।
त्वचा हाथ इन्द्री युगल, वायुतत्त्व सों होय ॥
पावक सों इन्द्री युगल, भये नैन अरु पावँ ।
जलसों जो इन्द्री भई, लिंग रसना[1] दो नावँ ॥
गुदा नासिका दो भई, पृथ्वी सों पहिंचान ।
चरणदास यों कहतहैं, एक कर्म इक ज्ञान ॥

१ जीभ ॥

राजस सों इन्द्री भई, तामस सों तत्त्व पांच।
सात्त्विक सों चारौ भये, चरणदास कहैं सांच॥
तीनों गुणसे है परे, सो आतम को रूप।
सो वह दृष्टि न आवई, अगम अगोचर गूप॥
दश इन्द्री तत पांच है, तन्मात्रा भी पांच।
चारो अन्तःकरण हैं, ये चौबीसौ बांच॥
पन्द्रह को अस्थूल है, नौको लिंग शरीर।
कारण झीनी वासना, तुरिया निर्मल धीर॥
जाग्रत में चौबीस हैं, स्वप्ने में नौ जान।
सुषुप्ति में सब लीन है, ये अँग जड़के मान॥
तुरिया इकरस आतमा, निर्मल अचल अनाद।
घटै बढ़ै उपजै नहीं, तहां न वाद विवाद॥
घटै बढ़ै उपजै मिटै, जड़को यही स्वभाव।
सो सब कौतुक कररही, नाना किये उपाव॥
चेतन ज्यों को त्यों सदा, सदा अकर्त्ता जोय।
सब कर्मन सों रहित है, आतम ऐसो होय॥
काहू ते उपजो नहीं, वाते भयो न कोय।
वह न मरै मारै नहीं, राम कहावै सोय॥
योगयुगतकरि खोजि ले, सुरतिनिरति करिचीन।
दशप्रकार अनहद बजै, होय जहां लवलीन॥
तीन बंध नौ नाड़िका, दश बाई को जान।
प्राणअपान समान है, और कहत उदान॥
व्यानवायु अरु किरकिस, कूरम बाई जीत।
नाग धनंजय देवदत, दश बाई रणजीत॥
नवो द्वारको बंधकरि, उत्तम नाड़ी तीन।

इड़ा पिंगला सुषमना, केलि करै परबीन ॥
करतै प्राणायाम के, पावै आतम भेख।
अनहद ध्वनि के बीचमें, देखै शब्द अलेख ॥
पूरक करि कुंभक करै, रेचक पवन उतार।
ऐसे प्राणायाम करि, सूक्ष्म करै अहार ॥
धरती बन्ध लगाय करि, दशौ वायु को रोक।
मस्तक प्राण चढ़ायकै, करै अमरपुर भोग ॥
पांचौ मुद्रा साधिकै, पावै घट को भेद।
नाड़ी शक्ति चढ़ाइये, षटौ चक्रको छेद ॥
नासाध्यान दृष्टि भृकुटी में, सुरति श्वासके माहिं।
आतम देखो जातहै, यामें संशय नाहिं ॥
योगयुक्ति कै कीजिये, कै आतम को ध्यान।
आपा आप विचारिये, परम तत्त्व को ज्ञान ॥
शूद्र वैश्य शरीर है, ब्राह्मण और रजपूत।
बूढ़ा बाला तू नहीं, चरणदास अवधूत ॥
काया माया जानिये, जीव ब्रह्म है मित्त।
काया छुटि सूरति मिटै, तू परमातम नित्त ॥
पाप पुण्य आशातजौ, तजौ मान अरु थाप।
काया मोह विकारतजि, जपै सु अजपा जाप ॥
आप भुलानो आपमें, बँधो आपही आप।
जाको ढूंढ़त फिरतहौ, सो तुम आपहि आप ॥
इच्छा दुई बिसारिकै, क्यों न होय निर्वास।
तूतो जीवन्मुक्त है, तजौ मुक्तिकी आस ॥
आपा खोजै आपलखि, आप अपनको देख।
चरणदास तुहि ब्रह्महै, तूही पुरुष अलेख ॥

जैसे कछुवा सिमिटिकै, आपहि माहिं समाय।
तैसे ज्ञानी श्वासमें, रहै सुरति लवलाय॥
सबघट रमो सो राम है, आदि पुरुष निर्गम्य।
लखचौरासी योनिमें, एक समानो सम्य॥
दृष्टि मुष्टि आवै नहीं, रूप न देखो जाय।
बिन सूरति बिननामको, घट घट रहो समाय॥

छप्पय॥

इच्छा दुइकर दूर आप तू ब्रह्म ह्वै जावै।
और सो द्वितिया कौन तासुको शीश नवावै॥
माला तिलक बनाय पूर्व अरु पश्चिम दौरा।
नाभि कमल कस्तूरि हिरण जंगल भो बौरा॥
चरणदास लखि दृष्टि भरि एक शब्द भरपूरहै।
निरखि परखिले निकटहीं कहन सुननकोदूरहै॥
झूठी सी यह दृष्टि जगत सब झूठो दरशै।
मूरुख जानै सत्य तासुसों फिर फिर परशै॥
चंद सूर थिर नहीं नहीं थिर पौन न पानी।
त्रैदेवा[1] थिर नहीं नहीं थिर मायारानी॥
नवनाथचौरासीसिद्धजोचरणदास थिर ना रहै।
ब्रह्म सत्य सर्वज्ञहै आत्म विचार क्यों ना गहै॥

दो० जो मुख सेती बोलिये, अरु सुनियत है कान।
जो आंखिन सों देखिये, सबही माया जान॥
एकै सबतन रमि रह्यो, चेतन जड़के माहिं।
मायादर्शत है सभी, ब्रह्म लखतहै नाहिं॥
जैसे तिलमें तेलहै, फूल मध्य ज्यों बास।

---

[1] ब्रह्मा, विष्णु, महेश॥

दूध मध्य ज्यों घीवहै, लकड़ी मध्य हुताश[1] ॥
थावर जंगम चर अचर, सबमें एकै होय ।
ज्यों मनको मैं डारि है, बाहर नाहा कोय ॥
एकडोरि मनका गुहै, अवरण वरण निहारि ।
आतम तौ निहरूप है, नित्य अनित्य विचारि ॥
माया यही स्वभावहै, उदय होय छिपि जाय ।
चंचल चपल सुहावनी, ओला[2] ज्यों गलिजाय ॥
परमातम तौ नित्यहै, ताको आदि न अन्त ।
सदाअचल चंचल नहीं, सब गुण रहत अनन्त ॥
सत चेतन आनन्दहै, आदि अन्त मधि हीन ।
आदि अन्त आकारको, सो तू झूठो चीन ॥
सुरति नाम आकारहै, ज्यों भूतनको नाच ।
मृगतृष्णाको नीर है, निकट गये नहिं सांच ॥
चितवत सांचीसी लगै, खोज किये मिटिजाय ।
दीखै है पर है नहीं, कौतुक सो दरशाय ॥

शिष्यवचन ॥

ब्रह्म बिना खाली नहीं, धरबेको इक पावँ ।
मायाको कहाँ ठौरहै, सत गुरु मोहिं बताव ॥
निर्विकार तौ ब्रह्म है, अद्वै अचल अपार ।
आई माया कहांते, सतगुरु कहौ विचार ॥

गुरुवचन ॥

आप ब्रह्म माया भयो, ज्यों जल पाला होय ।
पाला गलि पानी भयो, ऐसे नाहीं दोय ॥
झूठी माया सो कहैं, ज्ञानी पंडित लोय ।

१ अग्नि २ पत्थर ॥

भर्मभूल सांची लगै, समझै सांच न होय ॥
सोने को गहनो गढ़ै, कहन सुननको दोय ।
गहनो ना सोनो सबै, नेक जुदो नहिं होय ॥
झूठ सांच दो नावहै, झूठ मिटै इक सांच ।
नाम मिटै सूरत मिटै, भूषण को लग आंच ॥
जाको माया कहतहैं, सो तू नेक निकास ।
जैसे हींग कपूरकी, नेक जुदी कर बास ॥
जल समान तो ब्रह्महै, माया लहर समान ।
लहर सबै वह नीरहै, लहर कहै अज्ञान ॥
खेल खिलौना खांड़के, कीजै लाख पचास ।
सकल खिलौना खांड़है, ऐसे गहि विश्वास ॥
चरणदास खिलौना खांड़के, भाजन राखै खांड़ ।
बिन विनशेभी खांड़है, विनशिजाय तौ खांड़ ॥
माटी के भांड़े भवैं, सूरति अरु बहुनाम ।
बिगसिफूटि माटी भई, बासन कहुकेहि ठाम ॥
ऐसेहो माया नहीं, समझि देखु मनमाहिं ।
जो दीखै सो ब्रह्महै, रंचक माया नाहिं ॥
इच्छा मेटै दुइ तजै, एकै मन विश्राम ।
ब्रह्मज्ञान विज्ञान है, समझ परमपद धाम ॥

सवैया ॥

श्वास उसास चलै जप आपहि है जु अखण्ड टरै नहिं टारो ।
भीतर वाहर है भरिपूर सों ढूंढ़ौं कहां नहिं नाहिंन न्यारो ॥
चरणदास कहैं गुरुभेद दियो भ्रम दूरि भयो जुहुतो अतिभारो ।
दृष्टि अदृष्टि जु रामको देखत राम भयो पुनि देखनहारो ॥

दो० आप आपमें आपहै, खेलौ बहु विस्तार ।

द्वितिया तौ कछु है नहीं, एकहि एक निहार ॥
कहीं नरायण नाभि है, कहीं ब्रह्म कहि वेद ।
कहि शंकर गिरिजा कहीं, कहीं अभेदाभेद ॥
कहिंऋषिमुनि कहिं देवता, कहीं सिद्ध कहिंनाथ ।
आपन को आपै खड़ो, कहूं न नावै माथ ॥
कहिं आसन कहिं तपकरै, कहीं ज्ञान कहिं योग ।
कहीं दुखी कहिं सुखभयो, कहीं रोग कहिं भोग ॥
कहीं नारि कहिंनर भयो, कहीं बालक कहिंबाल ।
कहिं दाता मँगता कहीं, कहीं सुखी कंगाल ॥
कहीं वृक्ष कहिं फल भयो, कहीं फूल कहीं बीज ।
कहीं मूल शाखा भयो, कहिंमाली कहिं सींच ॥
कहिंमालिनि कहिंमालती, कहिंफुलवा कहिंहार ।
कहीं महल खिरकी भयो, कहिंदीपक उजियार ॥
कहीं बाग क्यारी भयो, कहीं भँवर गुंजार ।
कहीं घटा कहिं बिज्जुली, दादुर[1] मोर बहार ॥
कहिंपर्वत जंगल भयो, कहिंबारिद[2] कहिंवारि ।
कहिं वड़वानल अग्निह्वै, धारो तेज अपार ॥
मानसरोवर भयो कहिं, मोती कहीं मराल[3] ।
कहिंसरिता[4] धीवर[5] कहीं, कहीं मीन कहिंजाल ॥
कहीं कथा श्रोता कहीं, कहीं कीर्त्तन रूप ।
कहीं त्याग वैराग लै, कीन्हों संत स्वरूप ॥
कहिंपृथ्वी कहिंव्रज भयो, कहिंगोपी कहिंग्वाल ।
कहीं प्रेमके रूप ह्वै, कहिंप्रेमी कहिंख्याल ॥
कहिं कालिंद्री[6] निकट हो, कहिं वृन्दावन धाम ।

---

१ मेंढुका २ मेघ ३ हंस ४ नदी ५ मल्लाह ६ यमुना ॥

कहिं कुंजैं अति सोहनी, कहीं युगलभयो नाम॥
कहिंसुगन्ध शीतल पवन, कहिं बंशीबट ठावँ।
कहीं चरणहीं दास ह्वै, बारबार बलिजावँ॥
कहीं कन्हैया ह्वै खड़ो, एकपावँ अँगमोर।
कहिं मुरली अधरन[1] धरी, बाजत है घनघोर॥
कहीं मुकुट कुण्डल भयो, अलकैं कहीं कपोल।
कहिं ललचौहैं नैन हैं, नासा मुक्त सुडोल॥
कहीं धुकधुकी कंठ है, कहीं मोतियन माल।
कहिं बाजू नवरतन के, नटवर मदन गोपाल॥
कहीं कड़ा कहिं कर भयो, कहिं पहुँची जहँगीर।
रतन चौक गूंठी भयो, लागी संग जँजीर॥
कहीं बादलौ जर्द है, नीमो ह्वै गयो अंग।
कहीं बद्धी गल जिद है, कहीं साँवरो रंग॥
कहिंपैंजनिकहिंपग भयो, कहीं चरणको दास।
कहि आपहीं नख भयो, शशियर से परकास॥
आप आपमें आपहै, आप आपमें आप।
आप अपन में जपतहै, आप आपनो जाप॥
अविनाशी नाशै नहीं, नाश न कबहूँ होय।
तत्त्व स्वरूपी एकहै, कभी होय नहिं दोय॥
आप ब्रह्म मूरति भयो, ज्यों बुदगल[2] जल माहिं।
सूरति बिनशै नामसँग, जल बिनशत है नाहिं॥
बुदगल देखो जल सबै, बुदगल कहूँ न होय।
कहबे को दूजो कहो, जल बुदगल नहिं दोय॥
भयो नेकमें बुलबुलो, नाच कूद मिटिजाय।

---

१ ओंठ २ बुल्ला॥

निराकार रहि जायगो, मूरति ना ठहराय ॥
निराकार आकार धर, खेलौ कै इकवार ।
स्वप्नो ह्वै ह्वै मिटगयो, रहो सारको सार ॥

आप आपमें खेल मचावो । ज्यों पानी बुदबुद ह्वै आवो ।
ऐसे ब्रह्मधरी है काया । आपहि पुरुष आपही माया ॥
आप नरायण लक्ष्मी भई । नाभि कमल अरु आपहि दई ॥
आपहि धरती आपहि पानी । आपहि रुद्र चतुर विज्ञानी ॥
ह्वै नारायण विष्णु कहायो । शेषनाग ह्वै तलै पठायो ॥
तेंतिस कोटि देवता भयो । ऋषिमुनि कोटि अठासी छयो ॥
चारौयुग आपहि भयो लोका । पापपुण्य आपहि भयो शोका ॥
आपहि फूल शूल अरु बारी । आपहि पुरुष आपही नारी ॥

दो० जल थल पावक रामहै, राम रमो सब माहिं ।
हरि सबमें सब राममें, और दूसरो नाहिं ॥

दशअवतार[1] आप ह्वै आयो । सेवक साहब आप कहायो ॥
आपहि गिरिवर आपहितरुवर । आपहि हंस आपही सरवर[2] ॥
आपहिचारि वरण[3] षट दरसन । पूजै आप आपही परसन ॥
आपहि ध्यानी आपहि प्रेमी । आपहि योग भोग अरुनेमी ॥
चरणदास शुकदेव कहायो । अपनो भेद आपही गायो ॥
तारा मण्डल आप अकाशा । आपहि चंद सूर परकाशा ॥
जैसे जल तरंग ह्वै आई । उलटिफेरि जलमाहिं समाई ॥
आप आपमें स्वप्न उठायो । आपहि स्वप्न आप ह्वै आयो ॥
ना कछु गयो नहीं कछुआयो । अपनो भेद आपही पायो ॥
ना कछु कटे मिलै नहिं छीजे । ना कछु उठै चलै नहिं भीजै ॥

---

१ मच्छ कच्छ वाराह वामन नृसिंह परशुराम राम कृष्ण बौद्ध कल्कि ।
२ समुद्र ३ ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शूद्र ॥

स्वप्नो मिटि भयो एकअकारा । ज्ञानी अबही ल्योह निहारा ॥
नहीं सूक्ष्म अस्थूल न भारी । रूप रंग नहिं है परकारी ॥
वार पार कछु दीखत नाहीं । कबसों है अरु कबसों नाहीं ॥
कहा कहौं कछु कहत न आवै । गूंगो स्वप्नो कहा बतावै ॥
वार पार पार नहिं पायो । ढूंढ़त ढूंढ़त आप भुलायो ॥
कहत कहत मैं गयो हिराई । अब मोपै कछु कह्यो न जाई ॥

दो० हद कहूं तौ है नहीं, बेहद कहौं तौ नाहिं ।
हद बेहद दोनौ नहीं, चरणदास भी नाहिं ॥
जग स्वप्नो सो ह्वै गयो, भयो पेखनो गावँ ।
जब जागो जब मिटिगयो, चरणदास नहिं नावँ ॥

छप्पय ॥

तब न चंद नहिं सूर नहीं नभमें तारायण ।
नहिं धरती नहिं शेष नहीं अगनी पारायण ॥
तब न रूप नहिं नाम नहीं त्रैगुण त्रैदेवा ।
तब न ब्रह्म नहिं जीव नहीं साहब नहिं सेवा ॥
रणजीत मीत नहिं वैर तब निर्गुण सर्गुण नाहुता ।
तब न वेद वाणी नहीं नहिं ज्ञानी नहिं पंडिता ॥
जो श्रवणन सों सुनै और मुख सेती भाषै ।
जो कछु देखै नैन और सोवै अरु जागै ॥
और आवै दुर्गन्ध गन्ध नासा के माहीं ।
यह सब झूंठो जान कछू ठहरत है नाहीं ॥
अरु चरणदास उपजै नहीं बिनशै नहिं संसार कहुं ।
ब्रह्म सत्य सर्वज्ञ है सुझूंठो दरशै स्वप्न यहु ॥
दो० ब्रह्म विना खाली नहीं, सरसों सम कहुं ठौर ।

स्वप्नो सो जग देखिये, स्वप्न भयो तनमोर ॥
शुद्ध ब्रह्महै रैनि सम, जगत दिवाली दीव ।
ज्यों तरंग जलमें उठै, ब्रह्म बीच ये जीव ॥
वार न जाको पाइये, पार परे नहिं चीन ।
ऐसे सिन्धु अथाहमें, जगत जानिये मीन ॥
ब्रह्म बीच ये जीव सब, फिरत रहत आधीन ।
जैसे सागर सिन्धु में, नानारूपी मीन ॥
जैसे लहरि समुद्रकी, उठत रहत तेहि माहिं ।
बिन इच्छा बिन भावना, ह्वैह्वै मिटि मिटि जाहिं ॥
औंडो सीव गँभीर है, बिन इच्छा बिन दोय ।
निजस्वभाव जग होतहै, मिटि २ फिरि २ होय ॥
धरती में लीकट खिंचै, उठि नहिं आवै हाथ ।
ब्रह्म सत्य जग झूंठ है, ह्वैह्वै मिटि मिटि जात ॥
जगत ब्रह्ममें यों दिपै, ज्यों धरती पर रेख ।
रेख मिटै धरती रहै, ऐसेही जग देख ॥
झूंठ सांच दोउ नाम हैं, झूंठ मिटै थिर सांच ।
ज्यों लोहा पावक मिलो, लोहरहै मिटि आंच ॥
ज्यों सोवत स्वप्नो उठो, दृष्टि खोलि जब नाहिं ।
जग स्वप्नो सो ह्वै मिटै, समुझि देखु मन माहिं ॥
देखन को अति निकट है, कहबे को बहु दूरि ।
एकै ब्रह्म अखण्डहै, सकल रह्यो भरि पूर ॥
अद्वै अचल अखण्डहै, अगम अपार अथाह ।
नहीं दूर नहिं निकटहै, सतगुर दियो बताय ॥
भूलहुती जब दो हुते, अब नहिं एक न दोय ।
अटक उठी धोखोमिटो, आपनहूं गयो खोय ॥

छप्पय

जहां गुरू नहिं शिष्य जहां नहिं साहब दासा ।
जहां गुफा¹ नहिं योग जहां नहिं गगन निवासा ॥
जहां नहीं तप दान जहां नहिं देवल पूजा ।
जहां ब्रह्म नहिं जीव जहां नहिं एक न दूजा ॥
अरु चरणदास मिलि मिटि गयो सो अचरज ऐसो सूझिया ।
कौन सुने कासों कहै सो आप आप नहिं दूजिया ॥

दो॰ अपरम्पार अपारहै, आदि अनादि अडोल ।
पुरुष पुरातन ब्रह्महै, बिन काया बिन बोल ॥

अगम अगोचर अजर अनंता । अद्वैरूप अथाह भगवंता ॥
निराकार निर्भय निर्बाना । परमेश्वर परमातम प्राना ॥
अर्द्ध उर्द्ध नहीं गोसाई । नहिं बाहर नहिं मध्यन माहीं ॥
नहीं जीव नहिं सीव सहाई । श्वेत श्याम नहिं है अरुणाई ॥
है जैसो तैसोही राजै । आपन माहिं आपही गाजै ॥
नहीं नावँ नहिं भावन भारी । है अखंड नहिं खंडित कारी ॥
है सर्वज्ञ सत्य विज्ञाना । अभेद अछेद अकथ सुज्ञाना ॥
ज्योंका त्यों जैसे का तैसा । नहिं ऐसा नहिं कहिये वैसा ॥

दो॰ नीचे नीचे अन्त ना, ऊपर ऊपर ऊप ।
बायें बायें हद्द ना, दहिने दहिने गूप ॥
नहिं नीचे ऊपर नहीं, नहिं दहिने नहिं बाम ।
मध्य नहीं आकार ना, निराकार नहिं नाम ॥
निर्गुण ना सर्गुण नहीं, उपजै ना मिटिजाय ।
सबकछुहैअरु कछु नहीं, सदा ब्रह्म थिरथाय ॥
जहां सांच जहँ झूठ है, जहां झूठ जहँ सांच ।

---

१ पहाड़ की कन्दरा ॥

झूंठ सांच दोनों नहीं, तहँ कुछ सील न आंच ॥
वंध नहीं मुक्तौ नहीं, पाप पुण्य भी नाहिं ।
उतपति ना परलय नहीं, नहीं नहीं भी नाहिं ॥
इन्द्री ना निग्रह करौं, मन नहिं जीतूं ताहि ।
भूलौं ना चेतौं नहीं, मैं नहि खोजौं वाहि ॥
योग नहीं युगता नहीं, नहीं ज्ञान नहिं ध्यान ।
बुधिबिचार पहुँचै नहीं, तहँ कछु लाभ न हान ॥
जैनधर्म शिव शक्ति ना, स्वर्ग नरक नहिं बास ।
षट दरशन चौबरण ना, नहीं कर्म संन्यास ॥
सिद्ध नहीं साधक नहीं, नहीं तिमिर नहिं भान ।
शून्य नहीं वेशून्य ना, नहीं तत्त्व विज्ञान ॥
धर्म कर्म अरु मोह ना, अरु नाहीं बैराग ।
ज्योंका ज्यों सो भी नहीं, नहीं दुखी अनुराग ॥

ब्रह्मज्ञान बिन मिटै न दोई । ब्रह्मज्ञान बिन मुक्त न होई ॥
जोग जज्ञ तप नाना भोगा । ब्रह्मज्ञान बिन सबही रोगा ॥
कलह कल्पना मनमें दोष । ब्रह्मज्ञान बिन ना संतोष ॥
तिमिर अविद्या सबही भागै । ब्रह्मज्ञानमें जो तू जागै ॥
मतमारग मिलि भर्म बढ़ावैं । पक्षपातलै सब भर्मावैं ॥
गुरु बिन ब्रह्मज्ञान नहिं पावै । गुरुबिन तत्त्व कौन दर्शावै ॥
गीता अरु वेदान्त बतावै । सामवेद भी योंही गावै ॥
ब्रह्मज्ञान में निश्चय आवै । जीवन्मुक्ता सोई कहावै ॥

दो० तू नाहीं सब राम है, वेद भेद की सीख ।
एक रमैया रमिरह्यो, सकल अण्ड व्यापीक ॥
सिन्धु स्वरूपी ब्रह्ममें, ज्यों पाला सब लोक ।
पाला गलि पानी भवै, कछू न निकसै फोक ॥

उलझे को सुलझायकै, कई जन्म को सूत।
चरणदास निर्भय भये, आशातजि औधूत॥

कवित्त॥

स्वर्गहू न चाहिये जो होम यज्ञ दानकरौं इन्द्रआदि भोगन को चित्तसू उठायो है। ऋद्धिहू न चाहिये जो जक्तमें बड़ाई चलै सिद्धिहू न चाही सब साधन बिसरायो है॥ जातिहू न चाही जो कुलकी मर्य्याद चलू चारि बरण एकै यों वेदन में गायो है। कासों कहैं मुक्त और बंध तौ न सूझै कहूँ कहै चरणदास आप आपन लौ लायो है॥

सवैया॥

आदिहु अनँद अन्तहु आनँद मध्यहु आनँद ऐसेहि जानो।
बंधहु आनँद मुक्तहु आनँद आनँहु ज्ञान अज्ञान पिछानो॥
लेटेहु आनँद बैठेहु आनँद डोलत आनँद आनँद आनो।
चरणदास बिचारि सबै कछु आनँद आनँद छाड़िकै दुःख न ठानो॥
आदिहु चेतन अन्तहु चेतन मध्यहु चेतन माया न देखी।
ब्रह्म अद्वैत अखण्ड निरालभ और न दूसरो आतम ऐखी॥
सिन्धु अथाह अपार विराजत रूप न रंग नहीं कछु रेखी।
चरणदास नहीं शुकदेव नहीं तहँना कोइ मारग ना कोइ भेखी॥
भक्षत हैं नहिं भक्षत भोजन पीवत हैं नहिं पीवत पानी।
डोलत हैं नहिं डोलत पैंडसों बोलत हैं नहिं बोलत बानी॥
नानारूप ब्योहार में देखत निश्चयके मध्य कछू नहिं आनी।
चरणदास बताय दियो शुकदेव ने ऐसे रहै ताहि जानियेज्ञानी॥
सोवतहै नहिं सोवत नींद सो जागत है नहिं जाग दिखानी।
योगकरैं न करैं कछु साधन ध्यान करैं न करैं कछु ध्यानी॥
बचन बिलास करैं चरचा न करैं चरचा नहिं होय बिनानी।

चरणदास बतायदियो शुकदेवने ऐसे रहे ताहि जानिये ज्ञानी ॥

कवित्त ॥

मन्दिर क्यों त्यागै अरु भागै क्यों गिरिवरको हरिजी को दूर जानि कलपै क्यों बावरे । सब साधन बतायो अरु चारि वेद गायो आपन को आप देखि अन्तर लौ लावरे ॥ ब्रह्म-ज्ञान हिये धरो बोलते का खोजकरो माया अज्ञानहरो आपा बिसरावरे । जैहैं जब आप धाप कहा पुण्य कहा पाप कहै चरणदास तू निश्चल घर आवरे ॥

अथ ब्रह्मज्ञानी लक्षण वर्णन ॥

ज्ञान परीक्षा ॥

निरालंभ १ निर्भ्रम २ निर्वासीक ३ निर्विकार ४ (अथ विचार परीक्षा) निर्मोहत १ निर्बंध २ निहिसंक ३ निर्वान ४ (अथ विवेक परीक्षा) सावधान १ सर्वज्ञी २ सारग्राही ३ सन्तोषी ४ (अथ परमसन्तोष परीक्षा) अयाचक १ अमानी २ अपक्षीक ३ स्थिर ४ (अथ सहज परीक्षा) निष्प्रपंच १ निहतरंग २ निर्लिप्त ३ निहकर्म ४ (अथ निर्वैरपरीक्षा) सुहृद् १ सुखदायी २ शीतलताई ३ सुमती ४ (अथ शून्य परीक्षा) शीलवन्त १ सुबुद्धी २ सत्यवादी ३ ध्यान समाधी ४ जामें ये लक्षण होयँ ताको ब्रह्मज्ञानी कहिये और जामें ये लक्षण न होयँ ताको वाचकज्ञानी विटंडा जानिये लक्षज्ञानी न जानिये ॥

दो० जनक गुरू शुकदेवजी, चरणदास शिष्य होय ।
आप रामहीं राम हैं, गई दुई सब खोय ॥
ब्रह्मज्ञान पोथी कही, चरणदास निर्वार ।
समझै जीवन्मुक्त हो, लहै भेद ततसार ॥

इति श्रीशुकदेवशिष्यचरणदासकृतब्रह्मज्ञानसागरसंपूर्ण ॥ १० ॥ सू

अथ श्रीचरणदासकृत शब्द प्रारम्भः ॥

मंगलाचरण गुरुस्तुति ॥

दो० ब्रह्मरूप आनन्द घन, निर्विकार निर्लेव ।
मंगल करण दयाल जी, तारण गुरु शुकदेव ॥
सतियन[1] में तुम सत्त हौ, शूरन में हौ बीर ।
यतियन में तुम यत्त हौ, श्रीशुकदेव गँभीर ॥
पतित उधारण तुम लखे, धर्म्म चलावन भेव ।
संकट सकल निवारिये, जै जै श्री शुकदेव ॥
चिन्ता मेटन मोहरण, दूरिकरण जगव्याध ।
गुरु शुकदेव कृपा करौ, चरण लगे सब साध ॥
दाता चारौं भेदके, श्रीशुकदेव दयाल ।
चरणदास पर हूजिये, बारंबार कृपाल ॥

राग कल्याण ॥

नमो शुकदेव हों चरण पखारणं ॥ द्वंद संकटहरणं । करणसुखमंगलं । परम आनंद घन पतित के तारणं ॥ नामतक त्याग बैराग है मुक्तिलौं तीनिहूँ गुणनते निर्विकारं । महानिहकाम और धामचौथे रहौ सिद्धि चेरी भई फिरैं लारं ॥ ज्ञानके रूप अरु भूप सब मुनिन में दयाकी नावकिये जीवपारं । उदै भागवतमतभानु[2] परगटकियो तिमिर[3] कियोदूरअरुधर्मधारं ॥ मोहदलजीतिअनरीतिके खण्डनं भक्तिके दृढ़करनभवबिडारं । चरणदासके शीशपरहाथनितहीरहै यहीमांगौंगुरू बारबारं ॥

मंगलाचरण ॥

दो० दश चिह्न दहिने चरण, बायें हैं दश एक ।

---

१ संन्यासी २ सूर्य ३ अंधेरा ॥

जिनके निहचल ध्यानतें, कटैं जु त्रिघ्न अनेक ॥
श्रीशुकदेव अज्ञा दई, चरणदास उचार ।
सों अब वरणन करतहूँ, शब्दमाहिं विस्तार ॥

राग कल्याण ॥

चरण चिह्न चितलाव फेरि तेरा जन्म न होगा ।
पद्म[1] झलकछवि निरखिनैनभरि अंकुश मनअटकाव ॥
अम्बर[2] छत्र कुलिश यव राजत ध्वजा धेनु[3] पदभाव ।
शंखचक्र अरु कलश सुधाह्रद[4] तासूं चित उरझाव ॥
स्वस्तिक जम्बू फलकी शोभा जासों सुरति लगाव ।
अर्द्धचन्द षटकोन मीन बिंदु ऊर्ध्व रेख लखिचाव ॥
अष्टकोण तिरकोण बिराजै धनुष बरण उरधाव ।
कोटिकाम नख ऊपर वारूं नूपुर सुन्दर पाव ॥
श्री शुकदेव चिह्नपद बरणे सो तू हिये में लाव ।
चरणदास हित राखि भोर निशि बार बारबलिजाव ॥

मंगल आरती रागभैरव ॥

मंगल आरति या बिधि कीजै । हर्षपाय आनँदरस पीजै ॥
प्रथमैं मंगल गुरुही जान । जिनसूं पायो पद निर्वान ॥
ज्ञान भानु परगट कियो भोर । मिटगइ रैन तिमिर घनघोर ॥
द्वितिये मंगर श्री गोपार । भक्ति बछल बहुपतित उधार ॥
राम कृष्ण पूरण औतार । दुष्टदलन सन्तन रखवार ॥
तृतिये मंगल प्रभुजी के साध । मानसरोवर मता अगाध ॥
तिनकी संगति उठि गयो संसा । कागपलट गति ह्वै गयो हंसा ॥
चौथे मंगल श्रीभागौत । घट उजियार करन कूं ज्योत ॥
पाप ताप दुख मेटन हारी । जिहिनौका चढ़ि उतरौ पारी ॥

---
१ कमल २ अम्बारी ३ गौ ४ चन्द्रमा ॥

पँचवें मंगल श्रीशुकदेव । तनमन सूं करि उनकी सेव ॥
चरणहिं दास चरण चितलायो । मंगल चार भये जस गायो ॥
मंगल आरति कीजै प्रात । सकल अविद्या[1] घटगइ रात ॥
सूरज ज्ञान भयो उजियारा । मिटिगये ओगुण कुबुधि बिकारा ॥
मनके रोग शोग सब नाशे । सुमति नीर शुभजलजं[2] प्रकाशे ॥
भय अरु भर्म्म नहीं ठहराई । दुविधागई एकता आई ॥
जाति बरण कुलसूझै नीके । सब सन्देह गये अब जीके ॥
घटघट दरशै दीनदयाला । रोम रोम सब होगइ माला ॥
दृष्टि न आवैं दुख जग जाला । कागपलटि गति भये मराला[3] ॥
अनहद बाजे बाजन लागे । चोर नगरिया तजि तजि भागे ॥
गुरुशुकदेव कि फिरी दोहाई । चरणदास अन्तरलौ लाई ॥

भोरकी ध्वनि रागभैरव ॥

जैजै ब्रह्म अचल अविनाशी । आपनिहीं सब ज्योति प्रकाशी ॥
जैजै अखिल निरंजन देवा । ऋषिमुनि शारदलहैं न भेवा ॥
जैजै आदि पुरुष जगदीश । हर्षित तोहि नवाऊं शीश ॥
जैजै जगपति सिरजनहारा । व्यापि रह्यो जीव जन्तु मँझारा ॥
जैजै भूमिभार परहारी । प्रकट होत संतन हितकारी ॥
जैजै बपुधारी चौबीश । लीला कारण त्रिभुवन ईश ॥
जैजै कृष्ण मनोहर गाता । नैन बिशाल प्रेमके दाता ॥
जैजै भक्तवछल भगवान । व्याधि कटतहैं जिनके ध्यान ॥
जैजै निरगुण सरगुण रूप । नाना भांती अधिक अनूप ॥
जहां तहां छबिधारे रहैं । जाकी महिमा को कबिकहैं ॥
जैजै हो शुकदेव विराजैं । मम मस्तकपर निशिदिनराजैं ॥
जैजै प्रेम सुधारस पिये । जैजै तिलक शिर मिली किये ॥

---

१ माया २ कमल ३ हंस ॥

जैजै साधुन के सुखदाई। चरणदास तुम्हरी शरणाई ॥
आरति आदि पुरुषकी कीजै। साधौअगमअपारअचलमनदीजै ॥
अद्भुत आरती ॐ कारा। त्रिदेवा होय जगत पसारा ॥
पहिले मच्छरूप हरि धारो। वेदलाय शंखासुर मारो ॥
रई मन्द्राचल बासुकि नेती। चौदहरतन मथन दधि सेती ॥
रूप बराह धारि हरि धाये। हिरण्याक्षहि हनि धरतीलाये ॥
खम्भ फारि हिरणाकुश मारो। नरसिंहह्वै प्रहलाद उबारो ॥
बामनह्वैकरि बलि छलि लीन्हे। तीनि लोक तीनों डगकीन्हे ॥
परशुराम ह्वै शरतर धारे। क्षत्री सबै निकछ करि डारे ॥
रामरूप रावण दलमलिया। लंकाराज बिभीषण मिलिया ॥
कृष्णरूप ह्वै कंस पछारो। दर्शनदे ब्रज सकल उधारो ॥
बोधरूप अचरज गति तेरी। कौतुक देखि थकी बुधि मेरी ॥
निष्कलंकै निर्लिप्त निरासा। संभल सुरतलियो जहाँबासा ॥
हरि हैं एकरूप बहुधारे। निराकार आकार नियारे ॥
दश अवतार आरती गाऊँ। निरभै होय अभैपद पाऊं ॥
चरणदास शुकदेव बतायो। निरगुणहरिसरगुणह्वै आयो ॥
आरति रमता राम कि कीजै। अन्तर्द्धान निरखि सुखलीजै ॥
चेतन चौकी सतको आसन। मगनरूप तकिया धरि दीजै ॥
सोहंथाल खैंचि मन धरिया। सुरतिनिरतदोउबाती बरिया ॥
योगयुगति सूं आरतिसाजी। अनहद घंट आपसूं बाजी ॥
सुमति सांझकी बिरियाआई। पांचपचीसमिलि आरतिगाई ॥
चरणदास शुकदेव को चेरो। घटघट दर्शै साहब मेरो ॥
आरति करत हँसै मनमेरो। वार पार कछु दिखै न तेरो ॥

अमर अडोल निरीच्छन भेखा । त्रिगुण रहत रूप नहिं रेखा ॥
चेतन आनँद नित निराधारा । निराकार निर्लिप्त निरासा ॥
निराकार आकार बिवरजाति । निरगुण अरुसरगुणतेरीगति ॥
हाथ पाँव अरु शीश घनेरे । कैसे आरती करूं प्रभु मेरे ॥
सोहं बाती घीव अखण्डा । एकहि ज्योति बलै ब्रह्मण्डा ॥
तुही थाल तुहि आरति साजै । तुहि घंटा तुहि झांझरिबाजै ॥
चरणदास शुकदेव लखायो । सुरति थकी पै पार न पायो ॥
गगन मँडल में आरति कीजै । उत्तम सौंज सकल सजिलीजै ॥
सुखमन अमृत कुम्भ धरावै । मनसा मालिनि फूल चढ़ावै ॥
घीव अखण्डा सोहंबाती । त्रिकुटी ज्योति बलै दिनराती ॥
पवन साधना थाल करीजै । तामें चौमुख मन धारदीजै ॥
रबिशशि हाथगहौ तिहिमाहीं । खिन दहिनो खिन बायें लाईं ॥
सहसकमल सिंहासन राजैं । अनहदझालरि नितही बाजैं ॥
इहिबिधि आरति सांचीसेवा । परम पुरुष देवन को देवा ॥
चरणदास शुकदेव बतावैं । ऐसी आरति पार लगावैं ॥
ऐसें आरति करि हुलसावै । दै परिक्रमा शीश नवावै ॥
तनकोथालअरुमनको चौमुख । ज्ञान ध्यान की बाती लावै ॥
भक्तिभावको घी भरि तामें जगमग जगमग ज्योति जगावै ॥
अर्ध ऊर्ध हितसूं करि फेरै रचना रचै ल बर्षावै ॥
सुरति मृदंग अरु निरति तँबूरा झैगड़ झैगड़ झांझ बजावै ॥
ताल बीण मुरचंग शंखध्वनि प्रेम मगन ह्वै हरिगुण गावै ॥
सोरन कलशा जलको राखै धूपरु अगर सुगन्धि धरावै ॥
या बिधि सों शुकदेव श्यामकी गाय आरतीको फलपावै ॥
युगलकिशोर निरखि नैननसों चरणदासि सखिबलि बलिजावै ॥

राग सब में ॥

या बिधि गोबिन्द भोगलगावो । भक्त बछल हरिनाम कहावो ॥
बेर भीलनी के तुम पाये । देखि ऋषीश्वर सकल लजाये ॥
जैसे साग विदुर घर पायो । दुर्योधन को मान घटायो ॥
भक्त सुदामा के तंदुल लीन्हे । कंचनमहल अधिक सुख दीन्हे ॥
ज्यों करमा की खिचरी खाई । नेहलियो सब शुचि बिसराई ॥
तुम्हरी बिभौ प्रभु तुम्हरेहि आगे । हमसें दीनन को कहा लागे ॥
प्रेम प्रीतिसूं भोजन कीजे । बचै सीथ सन्तनकूं दीजे ॥
चरणदास भरि राखी झारी । अँचवो हरि शुकदेव मुरारी ॥

भोगके आगेकी ध्वनि काफी ॥

जै जै पारब्रह्म परधान । जाकूं पावै गुरु के ज्ञान ॥
ब्रह्म पुरुष को धरो स्वरूप । सो तो कहिये अधिक अनूप ॥
जै जै ॐ और त्रै देव । जै जै दश औतार अभेव ॥
जै जै वृन्दाबन निज धाम । जै जै गोकुल अरु नँदग्राम ॥
जै जै गोपी जै जै ग्वाल । जै जै सदा बिहारीलाल ॥
जै जै कुंजगली नँदलाल । मोर मुकुट मुरली बनमाल ॥
जै जै राधे कृष्ण मुरार । जै जै व्यास वेद उचार ॥
जै जै महा विदेह जनकजी । जै जै श्री शुकदेव दयाल ॥
इन को नाम जपै जो कोय । प्रेम भक्ति पावत है सोय ॥
चरणदास सुख बास लहैं । हरि चरणन के पास रहैं ॥

अथ गुरुदेव का अंग राग कल्याण ॥

सतगुरु पांचौ भूत उतारो ।
जन्म जन्म के लागेहि आये दै मन्तर अब तिन्हैं बिडारो ॥
काम क्रोध मोह लोभ गर्बने मन बौराय कियो अपभायो ।

जिनके हाथ परो जिय मेरो घेरा घेरी बहु दुख पायो ॥
एकघरी मोहिं छोड़त नाहीं लहरि चढ़ायकै बहुत नवायो।
कपि ज्यों घर घर द्वार नचावै उत्तम हरिको नाम छुटायो ॥
अबके शरणि गही है तुम्हरी चरणहिंदास अयाने।
किरपा करि यह व्याधि छुटावो गुरु शुकदेव सयाने ॥

राग धनाश्री ॥

अब मैं सतगुरु शरणै आयो।

बिन रसना बिन अक्षर बाणी ऐसोहि जाप सुनायो ॥
काम क्रोध मद पाप जराये त्रिबिधि ताप नशायो।
नागिनि पांच मुई सँग ममता दृष्टिसूं काल डरायो ॥
किरिया कर्म अचार भुलाना ना तीरथ मग धायो।
समझौ सहज बचन सुनि गुरु के भर्म को बोझ बगायो ॥
ज्यों ज्यों जपूँ गरकहों वामें वह मों माहिं समायो।
जग झूंठो झूंठो तन मेरो यों आपा नहिं पायो ॥
वाकूं जपै जन्म सोइ जीतै सोहम् शुद्ध बतायो।
चरणदास शुकदेव दया यों सागर लहर समायो ॥

राग सोरठ ॥

गुरुदेव हमारे आवो जी।

बहुत दिनों से लगी उमाहो आनंद मंगल लावोजी ॥
पलकन पंथ बहारूं तेरो नैनन परि पग धारोजी।
बाट तिहारी निशिदिन देखूं हमरी ओर निहारोजी ॥
करौं उछाह बहुत मन सेती आंगन चौक पुरावोंजी।
करूं आरती तन मन वारूं बारबार बलिजावोंजी ॥
दे परिक्रमा शीश नवाऊं सुनि सुनि वचन अघाऊंजी।
गुरु शुकदेव चरणहूंदासा दर्शन माहिं समाऊंजी ॥

राग सोरठ ॥

हो अँखियाँ गुरु दर्शन की प्यासी ।
इकटक लागी पंथ निहारूं तनसूं भई उदासी ॥
राति दिना मोहिं चैन नहीं है चिन्ता अधिक सतावै ।
तलफतरहूँ कल्पना भारी निश्चल बुधि नहिं आवै ॥
तन गयो सूक हूक अति लागी हिरदय पावक बाढ़ी ।
खिनमें लेटी खिनमें बैठी घर अँगना खिन ठाढ़ी ॥
भीतर बाहर संग सहेली बात नहीं समझावैं ।
चरणदास शुकदेव पियारे नैनन ना दर्शावैं ॥

राग भैरव ॥

गुरु बिन मेरे और न कोय । जग के नाते सब दिये खोय ॥
गुरुही मातु पिता अरु वीर । गुरुही सम्पति जीव शरीर ॥
गुरुही जाति वरण कुल गोत । जहां तहां गुरु संगी होत ॥
गुरुही तीरथ बरत हमार । दीन्हे और धरम सबडार ॥
गुरुही नाम जपौं दिन रैन । गुरुको ध्यान परम सुख दैन ॥
गुरु के चरण कमलकर वास । और न राखूं कोई आस ॥
जो कुछ चाहैं गुरुही करैं । भावै छाहँ धूप लै धरैं ॥
आदिपुरुष गुरुही कूं जानूं । गुरुही मुक्तीरूप पिछानूं ॥
चरणदास के गुरु शुकदेव । और न दूजा लागै लेव ॥

अथ भक्तिअंग वर्णन राग करखा ॥

राखिये लाज महाराज गोपालजी दीनजन शरण आयो तिहारी । लगो मोहि ध्यान दृढ़ चरण ही कमल में कीजिये किरपा सुनिहो बिहारी ॥ विषय जंजार रस स्वाद घेरो घनो पांचहूं चोर दुख देहिं भारी । नीच बहु दुष्ट बलवान ठग तकैं निसि द्यौस हिये घात डारी ॥ पकरि गज-

राज कूं ग्राह खैंच्यो तबै टेरदे हेर कीन्ही पुकारी। गरुड़ तजि धाय आये छुटायो तुरत हरि हिये ब्याधि तनु बिपति डारी॥ ध्रुव अचल कियो प्रह्लादकूं दर्श दियो दास हनुमानसूं प्रीति भारी। भीलनी अरु कामी अजामील से अधम अति पतित गणिका उबारी॥ पाण्डुसुतहूँ बचाये जरत अग्निसूं द्रौपदी चीर बाढ़ो अपारी। नामदेव सैन पीपा कबीरा सदन नरसिया दासिमीरा उधारी॥ कोटि अनगिन भक्त तारि दिये तनक में कहो मेरी सुरति क्यों बिसारी। तो बिना कहां जाऊँ कहीं ठौर ना तेरेहीं द्वार कोहूँ भिखारी॥ सकल संशय हरण तूही तारणतरण श्याम शुकदेव गिरिधर मुरारी। दास चरणदास को आसरो तुही है आपनो जानलीजै सँभारी॥१॥ साधौ सोई जनशूर जो खेत में मड़रहे भक्ति मैदान में रहै ठाढ़ो। सकल लज्जा तजै महा निरभै गजै पैज नीशान जि आय गाड़ा॥ भये बहुबीर गम्भीर जे धीर मत सबन को यश कहत ग्रन्थ होई। तिनबिषे कछू इकनाम वर्णन करूं सुनौ हो सन्तदै चित्त सोई॥ पितासूं रूठि ध्रुव पांचही वर्षको टेक गहि भक्ति के पन्थ धायो। छल भयो ना डिगो टेक पूरी भई जीति मैदान हरि दर्श पायो॥ हठो प्रह्लाद हरिनाम छाँड़ो नहीं बापने त्रासदै बहु डिगायो। टेक जब ना टरी राम रक्षाकरी दुष्ट को मारिक जन जितायो॥ कबीर दादू धने पहिरि बख्तर बने नामदेव सारिखे बहुत कूदे। सेन सदना बली भक्त पीपा बड़ो रामकी ओरकूं चले सूधे॥ मलूक जैदेव गज ग्राह कलँगी धरे शूर रैदास मुख नाहिं मोड़ा। ध्यान बन्दूक में प्रम रञ्जकजमा मीरमाधो चला कुदाय घोड़ा॥ दासमीरा पिली प्रेम सम्मुख चली छोड़ि दई लाजकुल नाहिं माना।

और शबरी मंडी तोड़ि ऊँचीगढ़ी दौर करमाचली प्रेम जाना ॥
श्रीशुकदेव रणजीत सांवत कियो लड़े कलियुग बिषे खम्भ गाड़े । बहुत सेना लिये ललक हूहू किये चरणहींदास सँग नाहिं छांड़े ॥

राग काफी ॥

हे जगके करतार तेरी कहा अस्तुति कीजै ।
तूही एक अनेक भयो है अपनी इच्छाधार ॥
तूही सिरजै तूही पालै तूही करै संहार ।
जितदेखूं तित तूही तूहै तेरा रूप अपार ॥
तूही रामनरायण तूही तूही कृष्ण मुरार ।
साधौं की रक्षाके कारण युग युग ले अवतार ॥
तुही आदि अरु मध्य तुही है अन्ततेरा उजियार ।
दानव देव तोहीसूं प्रगटे तीनलोक बिस्तार ॥
जल थल में ब्यापक है तूही घटघट बोलनहार ।
तोबिन और कौन है ऐसो जासों करों पुकार ॥
तूही चतुर शिरोमणि है प्रभु तूही पतित उधार ।
चरणदास शुकदेव तुही है जीवन प्राणअधार ॥१॥
तव गुण करूं बखान यह मेरी बुद्धि कहां है ।
चतुर्मुखी ब्रह्मा गुण गावैं तिनहुँ न पायो जान ॥
गण गावत शंकर जब हारे करनेलागे ध्यान ।
गुण अपार कछु पार न पायो सनकादिक कथज्ञान ॥
गण गावत नारदमुनि थाके सहसमुखनसूं शेश ।
लीला को कछु वार न पारा ना परिमाण न भेश ॥
शक्ति घनी अनगिनत तुम्हारी बहुतरूप बहुनावँ ।
जबहिं बिचारूं हियेमें हरुं अचरज हेरि हिरावँ ॥

अति अथाह कछु थाह न पाऊं शोच अचक रहिजावँ ।
गुरु शुकदेव थके रणजीता मैं कछु कौन कहावँ ॥

राग पर्ज ॥

रामगुण कोई न जानेहो ।
शेश महेश गणेश अरु ब्रह्मा रहे थकानेहो ॥
सुरति निरति बुधिगम नहीं सबदेव भुलानेहो ।
सनकादिक नारदहू हारे कौन बखानेहो ॥
योगी जंगम ऋषि मुनि तपसी सुर ज्ञानेहो ।
ध्यान लगावें अन्त न पावें गये हिराने हो ॥
पशू मनुष कहा कहिसकैं विषय रस लपटानेहो ।
चरणदास शुकदेव दया यह बात पिछाने हो ॥

राग काफी ॥

रामा रामा जी साइ ॥

अलख निरंजन रूपा । तूही एक अनेक स्वरूपा ॥
तेरी ज्योति सकल जगछाई । तू घटघट रहो समाई ॥
तूही आदि अनादि कहावै । ब्रह्मादिक पार न पावै ॥
अविगत अविनाशी जाना । निरगुण सरगुण पहिंचाना ॥
वहु बिधि के भेष वनावै । सिरजै पालै बिनशावै ॥
अचरज कौतुक बिस्तारा । जनकारण ले अवतारा ॥
तूहीं है देवनको देवा । सनकादिक लहैं न भेवा ॥
चाहै सो करै पलमाहीं । तूही व्यापक है सब ठाहीं ॥
तूही ज्ञानी गुणी अपारा । पूरण परमातम प्यारा ॥
गुण बहुत कहांलौं गाऊं । बिनती करि शीश नवाऊं ॥
शुकदेव गुरू बतलाया । चरणदास शरण तेरी आया ॥
रामारामाजी टे० सुनिलीजै बिनती मेरी । मैं शरण गही है तेरी ॥

तैं बहुतै पतित उधारे । भवजलसूं पार उतारे ॥
हौं सब को नाम न जानूं । अब कोइ कोइ भक्त बखानूं ॥
अँबरीष सुदामा नामा । सो पहुँचाये निजधामा ॥
ध्रुव पांच बरष को बाला । तेहि दर्शन दियो गोपाला ॥
प्रह्लाद टेक तुम राखी । यों जानत हैं सब साखी ॥
शबरी के फल तुम खाये । त्रयलोचन के घर आये ॥
पांडवन की करी सहाई । द्रौपदी की लाज बचाई ॥
गणिकाहू पार लगाई । करमा की खिचरी खाई ॥
मीरा तुम्हारे रँग भीनी । नरसी की हुंडी लीनी ॥
धन्नाको खेत जमायो । तैं साग विदुर घर पायो ॥
कबिराके बादल लाये । सब काज किये मनभाये ॥
सदना से सेना नाई । तैं बहुत किये मुकताई ॥
ग्राहसुं गज जाय छुटायो । तैं मोकूं क्यों बिसरायो ॥
सनकादिक ब्रह्मा ध्यावैं । तेरा शेश आदि यश गावैं ॥
तेरा वेद पार नहीं पाया । जिन नेति नेति बतलाया ॥
मैं काम क्रोध ने घेरा । ममता की उर उरझेरा ॥
मोह लोभ के फन्दे फरिया । तेरा नाम बिसरि दुखभरिया ॥
अब तुमहीं करो निबेरा । मोहिं जानि चरणको चेरा ॥
मैं पापी महा सन्तापी । अपराधी बहुत कलापी ॥
तुमै छाँड़ि कासुपै जाऊं । यह दुख कौने समझाऊं ॥
शुकदेव गुरू मैं पाया । जिन तेराही नाम बताया ॥
चरणदास आपनो कीजै । मोहिं भक्तिदान बर दीजै ॥

राग रामकली ॥

पतित उधारण बिरद तुम्हारो ।
जो यह बात सांच है हरिजी तौ तुम हमको पार उतारो ॥

बालपने अरु तरुण अवस्था और बुढ़ापे माहीं।
हम से भई सभी तुम जानौ तुम से नेकहु छानी नाहीं॥
अनगिन पाप किये मनमाने नखशिख अवगुण धारी।
हिरि फिरिकै मुनिशरणैआयो अब तुमको है लाज हमारी॥
शुभकरमन को मारग छूटो आलस निद्रा घेरो।
एकहि बात भली बनिआई जग में कहायों तेरो चेरो॥
दीनदयालु गुपाल बिश्वंभर श्रीशुकदेव गुसाईं।
जैसे और पतित घनतारे चरणदास की गहिये बाहीं॥

अर्ज सुनौ जगदीश गुसाईं।

ग्रह नक्षत्र देव बिसारे चरण कमल की आयो छाईं॥
सत बिश्वास यही हिय धारो तोहि न भूलों एक घरी।
इतउत से मन खैंचि लियो है काहू से कछु नाहिं सरी॥
अब चाहो सो करो प्रभु तुमहीं द्वार तुम्हारे सुरति अरी।
भावै नरक स्वर्ग पहुँचावो भावै राखौ निकट हरी॥
अपनी चाहरही नहिं कोई जबसूं तुम्हरी आश धरी।
आन भरोसो छोंड़ि दियो है सकल बिकल सब छारकरी॥
यह आपा तुमहीं को दीनो मेरी मो में कुछ न रही।
आदि पुरुष शुकदेव सुनोजी चरणदास यह टेरि कही॥

राग बिभास॥

अबकी करो सहाय हमारी।

दुष्टदलन अरु भक्तबचावन ऐसी साखि तुम्हारी॥
जन प्रह्लाद असुर गहि बांध्यों लीन्हो खड्ग निकारी।
हिरणाकुश हनि दास उबारो नरसिंह को तनु धारी॥
खैंचि ग्राह गज बोरन लागो राम कहो इकबारी।

सुनत पुकार पयादेहि धाये तजिकै गरुड़ सवारी ॥
द्रौपदि लाज उतारण कारण लाये सभा मँझारी ।
दीनानाथ लई सुधि वेगहि वाढ़ो चीर अपारी ॥
जिन जिन शरण गहीं संकट में कहा पुरुष कहा नारी ।
चारो युग हरि करी सहाई रक्षक भये मुरारी ॥
गुरु शुकदेव बतायो तोकों सन्तन कौ रखवारी ।
चरणदास थकि द्वारे तेरे गुण पौरुष दिये डारी ॥

राग धनाश्री ॥

अब तुम करो सहाय हमारी ।
मन के रोग होय गये दीरघ तन के बड़े विकारी ॥
तुम सो बैद और को दूसर जाहि दिखाऊं नारी ।
सजीवनमूल अमर हो जासों सोहै दया तुम्हारी ॥
क्रिया कर्म की औषधि जेती रोग वढ़ावनहारी ।
दीजै चूरण ज्ञान भक्ति को मेटो सकल व्यथारी ॥
जन के काज पयादे धावत चरणकमल पर वारी ।
मैं भयो दास अधीन तुम्हारो मेरी करो सँभारी ॥
जो मोहिं कुटिल कुचील जानिकै मेरी सुरति विसारी ।
चरणदास शुकदेव तुमारो दुष्ट हँसैंगे भारी ॥

हरिजी संकट वेगि निवारो ।
जनकूं भीर परी है भारी चक्र सुदर्शन धारो ॥
कंसनिकंदन रावणगंजन हिरणाकुश गहि मारो ।
दुष्टदलन अरु भक्तउबारन जन प्रह्लाद उबारो ॥
पांचो पाण्डव राख लिये हैं कौरव दल संहारो ।
जिन जिन द्वेष कियो सन्तन सों सो सोई हनि डारो ॥
निरभय भक्ति करैं जन तेरे ऐसो समय बिचारो ।

चरणदास के घट में बैरी तिनको क्यों न बिदारो ॥

राग विभास ॥

राखो जी लाज गरीबनिवाज ।
तुम बिन हमरे कौन सँवारे सबही बिगरैं काज ॥
भक्तबछल हरिनाम कहावो पतिउधारणहार ।
करो मनोरथ पूरण जन के शीतल दृष्टि निहार ॥
तुम जहाज मैं काग तिहारो तुम तजि अन्त न जाऊं ।
जो तुम हरिजी मारि निकासो और ठौर नहिं पाऊं ॥
चरणदास प्रभु शरण तिहारी जानत सब संसार ।
मेरी हँसी सो हँसी तिहारी तुमहूँ देखि बिचार ॥

राग बिलावल ॥

प्रभुजी शरण तिहारी मैं आयो ।
जो कोइ शरण तिहारी नाहीं भर्मि-भर्मि दुख पायो ॥
औरन के मन देवी देवा मेरे मन तुहि भायो ।
जबसों सुरति सँभारी जग में और न शीश नवायो ॥
नरपति[1] सुरपति[2] आश तिहारी यह सुनकरि मैं धायो ।
तीरथ बरत सकल फल त्यागे चरणकमल चितलायो ॥
नारदमुनि अरु शिव ब्रह्मादिक तेरोही ध्यान लगायो ।
आदि अनादि युगादि तेरो यश वेद पुराणन गायो ॥
अब क्यों न बांह गहो हरि मेरी तुम काहे बिसरायो ।
चरणदास कहैं करता तूहीं गुरु शुकदेव बतायो ॥

राग केदारा ॥

अबकी तारिहो बलबीर ।
चूक मोसों परी भारी कुबुधि के संगसीर ॥

१ मनुष्य का राजा २ इन्द्र ॥

भवसागर की धार तीक्षण महागँधीलो नीर ।
काम क्रोध मद लोभ भँवर में चित न धरत तहां धीर ॥
मच्छ जहां बलवन्त पांचौ थाह गहर गँभीर ।
मोह पवन झकोर दारुण दूर पैलौतीर ॥
नाव तौ मँझधार भरभी हिये बाढ़ी पीर ।
चरणदास कहै कोई नाहिं संगी तुम बिना हरिहीर ॥

राग सोरठ ॥

अब जगफंद छुटावोजी हूँ तौ चरणकमल को चेरो ।
परो रहूं दरबार तिहारे संतन माहिं बसेरो ॥
बिना कामना करूं चाकरी आठौं पहरेनेरो ।
मनसब भक्ति क्रिपा करि दीजै मोहिं यही बहुतेरो ॥
खानेजाद कदीमी कहियो तुही आसरो मेरो ।
झिड़क बिड़ारो तऊ न छांड़ो सेवा सुमिरण तेरो ॥
काहू और आन देवन सों रहो नहीं उरझेरो ।
जैसे राखो त्योंही रहहूं कर लीजो सुरझेरो ॥
तेरे घर बिन कहूं न मेरो ठौर ठिकानो डेरो ।
मोसे पतित दीन को हरिजी तुमहीं करो निबेरो ॥
गुरु शुकदेव दयाकरि मोकूं ओर तिहारी फेरो ।
चरणदास को शरणैं राखो यही इनाम घनेरो ॥

राग विलावल ॥

तुम साहब करतार हो हम बन्दे तेरे ।
रोम रोम गुनहगार हैं बकसो हरि मेरे ॥
दशों दुवारे मैल है सब गन्दम गन्धा ।
उत्तम तेरो नाम है बिसरे सो अन्धा ॥
गुणतजिके अवगुणकिये तुमसबपहिंचानो ।

तुम सों कहा छिपाइये हरि घट घट की जानौ ॥
रहमकरो रहमान तू यह दास तिहारो।
भक्तिपदारथ दीजिये आवागवन निवारो ॥
गुरुशुकदेव उबारलौ अब मेहर करीजे।
चरणहिंदास गरीब को अपना करलीजे ॥

राग रामकली ॥

चारिबरण सों हरिजन ऊंचे ।
भये पवित्तर हरि के सुमिरे तनके उज्ज्वल मनके सूचे ॥
जोन पतीजै साखि बताऊं शबरी के झूंठे फल खाये।
बहुत ऋषीश्वर ह्वांईरहते तिनके घर रघुपति नहिआये ॥
भीलनी पाँव दियो सरिता में शुद्धभयो जल सब कोई जाने ।
मन्दहतो सो निर्मल हूवो अभिमानी नरभये खिसाने ॥
ब्राह्मण क्षत्री भूपहुते बहु बाजो शङ्ख श्वपच जब आयो ।
बालमीकि यज्ञ पूरण कीन्हो जयजयकार भयो यश गायो ॥
जाति बरण कुल सोई नीको जाके होय भक्ति परकास ।
गुरु शुकदेव कहत हैं तोको हरिजन सेव चरणहीदास ॥

सब जातिनमें हरिजन प्यारे ।
रहनी तिनकी कोई न पावै तनसों जग में मनसों न्यारे ॥
साखि सुनो अँबरीष भूप की दुर्बासा जहँ आयो ।
लगो शराप देन राजाको चक्रसुदर्शन जारन धायो ॥
प्रभुजी आये दुर्योधन के वह मनमें गरबायो ।
नाना बिधिके व्यंजन त्यागे साग बिदुर घर रुचिसों पायो ॥
सतयुग त्रेता द्वापर कलियुग मान सन्त को राखो ।
भक्तों वश भगवान सदाहीं वेद पुराणन में यों भाखो ॥

ब्राह्मण क्षत्री वैश्य शूद्र घर कहीं होय क्यों न बासा ।
धनिकुल वह शुकदेव बखाने यह तुम सुनौ चरणहीदासा ॥

राग कान्हरा ॥

धनि वे नर हरिदास कहाये ।
रामभक्ति दृढ़हीकरि पकरी आन धर्म सबही बिसराये ॥
आठपहर गलतान भजन में प्रेममगन हिय में हुलसाये ।
आप तरै तारै औरनको बहुतक पापी पार लगाये ॥
प्रभु दर्शन बिन और न आशा धर्म्मकाम अरु मोक्ष न चाहे ।
आठो सिद्धि फिरैं सँग लागी नेक न देखैं नैन उठाये ॥
तिनको ऋषिमुनि जापकरत हैं हरिजन हरिदोउ सँगहीगाये ।
ऊंची पदवी इन्द्रहुते देवन देखि अधिक ललचाये ॥
कहैं शुकदेव चरणहींदासा धनि माता ऐसे जन जाये ।
जीवत शोभाजग में पाई तन छूटे हरि माहिं समाये ॥

राग सोरठा ॥

मोको कछु न चहिये राम ।
तुम बिन सबही फीके लागैं नाना सुख धन धाम
आठ सिद्धि नौनिद्धि आपनी और जननको दीजै ।
मैं तो चेरो जन्म जन्मको निजकरि अपनो कीजै ॥
स्वर्ग फलनकी मोह न आशा ना वेकुंठ न मोक्षहि चाहूँ ।
चरणकमल के राखौ पासा
यहउरमाहिंउमाहूंभक्तिनछांड़ौंमुक्तिन मांगोंसुनुशुकदेवमुरारी
चरणदास की यही टेक है तजौं न गैल तुम्हारी ॥

राग भैरव ॥

वह पुरुषोत्तम मेरा यार । नेह लगा टूटे नहिं तार ॥
तीरथ जाऊं न बर्त्त करूं । चरणकमल को ध्यान धरूं ॥

प्राण पियारे मेरेहि पासा । बन बन माहिं न फिरूं उदासा ॥
पढ़ूं न गीता वेद पुरान । एकहि सुमिरों श्रीभगवान ॥
औरनको नहिं नाऊं शीश । हरिही हरि हैं बिस्वेबीश ॥
काहूकी नहिं राखूं आस । तृष्णा काटि दही है फाँस ॥
उद्यम करूं न राखूं दाम । सहजहि ह्वै रहे पूरणकाम ॥
सिद्धि मुक्तिफल चाहौं नाहिं । नितहि रहूँ हरि संतन माहिं ॥
गुरु शुकदेव यही मोहिं दीन । चरणदास आनँद लवलीन ॥
यों कहैं हरिजी दयानिधान । सन्त हमारे जीवनप्रान ॥
सन्त चलैं जहाँ सँगही जावँ । सन्त दियो सो भोजन खावँ ॥
सन्त सुलावैं जितरहुँ सोय । सन्त बिना मेरे और न कोय ॥
सन्त हमारे माई बाप । सन्तहि को मनराखूं जाप ॥
सन्तको ध्यान धरौं दिनरैन । सन्त बिना मोहिं परै न चैन ॥
सन्त हमारी देही जान । सन्तहिं की राखूं पहिंचान ॥
सन्तकी सकल बलइया लेवँ । सन्तकूं अपनो सर्वस देवँ ॥
संतहिहेत धरूं अवतार । रक्षाकारण करूं न बार ॥
सुखदेऊं दुख सब निरवार । चरण दास मेरो परिवार ॥

राग सोरठ ॥

भक्तजन सो हरि के मनभावै ।
निष्कामी अरु प्रेम हिये में अनन्य भक्ति चितलावै ॥
आनदेव जो मोती बरषैं तो नाहीं पतियावै ।
प्रभु के चरणकमल के ऊपर भँवरभयो लिपटावै ॥
सिद्धि न चाहै ऋद्धि न मांगै दर्शनको ललचावै ।
मुक्ति आदि दे चाह न कोई आशा सकल गँवावै ॥
रोमहिं रोम पुलकि सबदेही गोविंदके गुण गावै ।
गद्गद वाणी कंठ उसासै नैनन नीर ढुरावै ॥

परमेश्वर मिलनेकी लहरैं इक आवै इक जावै।
कहैं शुकदेव चरणहीं दासा हरिहू कंठ लगावै॥

राग बिलावल॥

हमारे चरणकमल को ध्यान।
मूरख जगत भर्मता डोले चाहत जल असनान॥
सब तीरथ वाही सों प्रकटे गंगा आदिक जान।
जिन सेवन सब पातक नाशै नितहोवै कल्यान॥
साकत गिरही बानेधारी हैं सब ही अज्ञान।
हरिसो हीरा छांड़िदियो है पूजे कांच पखान॥
हरि चरणन की महिमा जानैं हैं वे सन्त सुजान।
भौंदू नर मायाके चेरे इनको कहा पहिंचान॥
चरणदास शुकदेव गुरूने दीन्हों अंजन ज्ञान।
साँचो प्रीतम सूझ परो है बिसरिगयो सब आन॥

राग नट व बिलावल सारंग॥

हमारे रामभक्ति धनभारी।
राज न डांड़ै चोर न चोरैं लूटि सकै नहिं धारी॥
प्रभु पैसे अरु रामरुपइये मुहर मुहब्बत हरिकी।
हीराज्ञान युक्तके मोती कहा कमी ह्यां जरकी॥
सोना शील भँडार भरे हैं रूपा रूप अपारा।
ऐसी दौलत सतगुरु दीन्हीं जाका सकल पसारा॥
बांटों बहुत घटै नहिं कबहूं दिन दिन ड्योढ़ी ड्योढ़ी।
चोखा माल द्रव्य अति नीका बट्टा लगै न कौड़ी॥
साह गुरू शुकदेव विराजें चरणदास बन जोटा।
मिलि मिलि रंक भूप हो बैठै कबहुँ न आवै टोटा॥

राग नट वा बिलावल ॥

जो नर हरि धनसों चितलावै।

जैसे तैसे टोटा नाहीं लाभ सवायापावै॥
मन करि कोठी नाव खजानो भक्तिदुकानलगावै।
पूरा सतगुरु सांझी करिकै संगति वणिज चलावै॥
हुंडी ध्यान सुरतिलै पहुंचै प्रेम नगरके माहीं।
सीधा साहूकारा सांचा हेर फेर कछु नाहीं॥
जित सौदागर सबहीं सुखिया गुरुशुकदेव बसाये।
चरणहिंदास बिलमि रहे ह्वाईं जूनी पन्थ न आये॥

राग देवगन्धार ॥

मनुवाँ राम के व्योपारी।

अबकै खेप भक्तिकी लादी वणिज कियो तैं भारी॥
पांचो चोर सदा मग रोकत इनसों कर छुटकारी।
सतगुरु नायक के सँग मिलि चल लूट सकै नहिं धारी॥
दो ठग मारग माहिं मिलैंगे एक कनक इक नारी।
सावधानहो पेच न खइयो रहियो आप सँभारी॥
हरिके नगर में जा पहुंचौगे पैहौ लाभ अपारी।
चरणदास तोको समझावै रामन वारंवारी॥

राग सोरठ ॥

हरि पावनकी गति न्यारी है।

कष्ट तपस्या पढ़न लिखन सूं ढूंढ़त मूढ़ अनारी है॥
अड़सठ तीरथ भरमत डोलैं देहगई सब हारी है।
निरजल बर्तकिये बहुभाँती आश फलन की धारी है॥
तप करने को बन जा बैठे कीन्ही त्वचा उघारी है।
पौन अहारी तनहूंगारो दर्शै नाहिं मुरारी है॥

विद्या पढ़ि पढ़ि पण्डित हो वह अर्थ करै बहु भारी है ।
अभिमानी ह्वै जन्म गँवायो भयो न प्रेम खिलारी है ॥
सांचि भक्ति विन हरि नहिं रीझै बहुत गये शिरमारी है ।
चरणदास शुकदेव श्याम पर तनमनसूं वलिहारी ॥

सुनु रामभक्ति गति न्यारी है ।
योग यज्ञ सयम अरु पूजा प्रेम सवनपर भारी है ॥
जाति वरण पर जो हरि जाते तौ गणिका क्यों तारी है ।
शवरी सरस करी सुरमुनिते हीन कुचील जो नारी है ॥
दुश्शासन पति खोवन लागो सवही ओर निहारी है ।
होय निराश कृष्ण कहूँ टेरी बाढ़ो चीर अपारी है ॥
टेढ़ी लौंड़ी कंसरजाकी दीन्हों रूप करारी है ।
एकसूँ एक अधिक ब्रजनारी कुवजा कीन्ही प्यारी है ॥
पांचौ पाण्डवन यज्ञ सजो है सगरीं सोंज सँवारी है ।
बालमीकि बिन काज न होतो वाजो शंख मुरारी है ॥
साधौं की सेवा में राचो भूपकि सुरति विसारी है ।
सन भक्तके कारण हरिजी वाकी सूरति धारो है ॥
दासकबीरा जाति जोलाहा ब्राह्मण मिल कि ख्वारी है ।
बनिजारा ह्वै बालिदधरिलाये ताकी करी सँभारी है ॥
साखि सुनौ रैदास चमार सो जग में उजियारी है ।
कनक जनेऊ काढ़ि दिखायो विप्रगये सब हारी है ॥
अजामील सदना तिरलोचन नामानाम अधारी है ।
धन्नाजाट कालु अरु कूवा बहुतकिये भवपारी है ॥
प्रीतिबराबर और न दीखै वेदपुराण विचारी है ।
चरणदास शुकदेव कहत हैं तावश आप मुरारी है ॥

राग गौरी ॥

आवो साधौ हिलमिल हरियशगावैं ।
प्रेमभक्तिकी रीतिसमझकरि हितसों रामरिझावैं ॥
गोविंदके कौतुक लीला गुण ताको ध्यानलगावैं ।
सेवा सुमिरण वंदन अर्चन नौधासों चितलावैं ॥
अबकी औसर भलो बनो है बहुरि दाँव कबपावैं ।
भजन प्रताप तरेभवसागर उरआनन्द बढ़ावैं ॥
सतसंगति को साबुन लेकर मलता मैल बहावैं ।
मनको धो निरमलकरि उज्ज्वल मगनरूप ह्वै जावैं ॥
ताल पखावज झांझ मँजीरा मुरली शङ्ख बजावैं ।
चरणदास शुकदेव दयासूं आवागमन मिटावैं ॥

राग बिलावल ॥

करिले प्रभुसों नेहरा मन मालीयार ।
कहा गर्व जियमें धरै जीवन दिनचार ॥
ज्ञानवेलि गहु टेककी दया क्यारी सवाँर ।
यत सत दृढ़को बीजहिबोवो ताखु मँझार ॥
शील क्षमा के कूपको जल प्रेम अपार ।
नेम डोलभरि खैंचिकै सींचो बाग विचार ॥
छलकीकरकूं काटकै बाँधो धीरज बार ।
सुमति सुबुद्धि किसानको राखो रखवार ॥
धर्म्म गुलेल जु प्रीतिकी हित धनुष सुधार ।
झूंठ कपट पक्षीनकूं तासों मार बिड़ार ॥
भक्तिभाव पौधालगै फूलै रङ्ग फुलवार ।
हरिरसमाता होयकै देखै लालबहार ॥

सतसंगति फलपाइये मिटै कुबुद्धि विकार।
जब सबगुरु पूरा मिलै चाखै अमृतसार॥
समझावै शुकदेवजी चरणदास सँभार।
तेरी काया में खिलै साँचो गुलजार॥

राग मंगल

सोई सुहागिनि नारि पिया मनभावई।
अपने घर को छोड़ि न परघर जावई॥
अपने पियको भेद न काहू दीजिये।
तन मन सुरति लगाय कि सेवा कीजिये॥
पतिकी अज्ञा चाल पाल पियको कहो।
लाज लिये कुलवंत यतनहींसूं रहो॥
धनि धनि है जगमाहिं पुरुष बहु हितधरै।
सब सेनायक होय जो सर्वरको करै॥
पियको चाहो रूप सिंगार बनाइये।
पतिंव्रता कुल दोय में शोभा पाइये॥
नौधा बस्तर पहिरि दया रँगलाल है।
भूषण लक्षणधार बिचित्तर बाल है॥
रङ्गमहल निर्दोष ह्वाँ झिलमिल नूर है।
निर्गुण सेज बिछाय सभीं करि दूरभै॥
मन्दिर दीपक बाल बिना बाती घीव की।
सुघर चतुर गुणराशि लाड़िली पीवकी॥
कहैं गुरू शुकदेव यों बालम मोहिये।
चरणदास ले सीख जो प्रेम समोइये॥

राग मंगल

परमसुखी सोइ साधु जो आपा ना थपै ।
मन के रोग मिटाय नाम निर्गुण जपै ॥
परनिन्दा परनारि द्रव्य नाहीं हरै ।
जिन चालन हरि दूरि बीच अन्तर परै ॥
क्षण नहिं बिसरै राम ताहि निकटै तकै ।
हरिचर्चा बिन और वाद नाहीं बकै ॥
झूठ कपट छल भगल ये सकल निवारिये ।
यत सत शील सँतोष क्षमा हियधारिये ॥
काम क्रोध मद लोभ बिड़ारन कीजिये ।
मोह ममता अभिमान अकस तजदीजिये ॥
सब जीवन निर्वैर त्यागि बैरागले ।
तब निरभै ह्वै सन्त भांति काहू न भै ॥
काग करम सब छोंड़ि होय हंसागती ।
तृष्णा आशा जलाय सोई साधू मती ॥
जगसूं रहैं उदास भोग चित ना धरै ।
जब रीझै करतार दास अपनो करै ॥
कहै गुरू शुकदेव जो ऐसा हूजिये ।
चरणहिंदास विचार प्रेममें भीजिये ॥

राग विलावल ॥

राधेकृष्ण राधेकृष्ण राधेकृष्ण गावरे ।
या देही को कहा भरोसो पल पल छिन छिन छीजत आवरे ॥
कहा अभिमान करै मायाको यह धोखासा जान बावरे ।
मानुषजन्म भागि सों पायो बहुरि न ऐसो कबहुँ दावरे ॥
भवसागर जो उतरो चाहै सतसंगति की चढ़ले नावरे ।
ज्ञानबली गहिपार मुक्ति हों निश्चय तत्त्व पदारथ पावरे ॥

सतयुग में सतही सत कहते त्रेता तप करते तनतावरे ।
द्वापर पूजा राजमानसी कलियुगकीर्त्तन हरिहि रिझावरे ॥
तातेसब तजिहरिही हरिभजिनिशिदिन चरणकमल चितलावरे ।
चरणदास शुकदेव चितावें श्याम मिलनको यही उपावरे ॥

जगमें दो तारणको नीका ।
एक तौ ध्यान गुरूका कीजै दूजे नाम धनीका ॥
कोटि भांतिकरि निश्चय कीयो संशयरहा न कोई ।
शास्त्र वेद पुराण टटोले जिनमें निकसा सोई ॥
इनहीं के पीछे सव जानौ योग यज्ञ तप दाना ।
नौविधि नौधा नेम प्रेम सब भक्ति भाव अरु ज्ञाना ॥
और सबै मत ऐसे मानो अन्न विना भुस जैसे ।
कूटत कूटत वहुतै कूटा भूखगई नहिं तैसे ॥
थोथा धर्म वही पहिंचानौ जामें ये दो नाहीं ।
चरणदास शुकदेव कहत हैं समुझि देखि मनमाहीं ॥

राग आसावरी ॥

साधो भक्ति नफा करिलीजै । दिन दिन काया छीजै ॥
मकरतजै तो मथुरा मनमें कपट तजै तो कासी ।
और तीर्थ सबही जगन्हाया नाहिं छुटी यम फांसी ॥
भाल तले तिरवेणी राजैं बिरलो जन कोइ न्हावै ।
सुगुरा होयसो नित उठि परशै निगुरा जान न पावै ॥
काया मन्दिर में हरि कहिये वेद पुराण बतावैं ।
इत उत भूले लोग फिरत हैं धोखेको शिरनावैं ॥
यंतरटोना मूड़ हलावन ताकूं सांच न मानौ ।
तजिकै सार असार गह्यो है तापर भयो सयानौ ॥

चरणदास शुकदेव कहत हैं निजकरि मूल गहीजे।
पारब्रह्म जिन सृष्टि उपाई ताओरी चितदीजै ॥

राग विलावल ॥

नमो नमो श्रीरामजी देवनके देवा ।
शिव नारद सनकादि लौं कोइ लहै न भेवा ॥
एजी निरगुणसों सरगुण भये कौतुक विस्तारे ।
साधुन की रक्षा करी दानव दल मारे ॥
दसरथसुत भूले कहैं कोई जानत नाहीं ।
इकशत अंड दिखाइया अपने मुख माहीं ॥
गौराने परचो लियो सियभेष बनायो ।
देखे रूप अनन्तही जब मन बौरायो ॥
आदि निरंजन एक तू दूजा नहिं कोई ।
शुकदेव कहीं चरणदासको नित सुमिरो सोई ॥
नमो नमो गोविन्दजी हूं दास तिहारो।
चौरासी दुख सब हरो आवागमन निवारो ॥
कर्मनको प्रेरो फिरूं नहिं पायो नेरो ।
अबके ऐसी कोजिये दीजै चरणबसेरो ॥
पतितउधारण तुम सुने वेदन में गाये ।
अजामील गणिका तरे ले पार लगाये ॥
एजी गुरु शुकदेव बताइया गही तुम्हारी आसा ।
आन धर्मको छोड़िकै भयो चरणहिंदासा ॥

राग जैजैवन्ती ॥

आदितो सनातन सोई अज अविनाशी है साईं ॥ जाको नहिंवारपार निर्गुणको तत्त्वसार तासों भयो जग सब आप

निर्वासी है। अद्वै निराकार जानौ सतचिदानन्द मानौ पुरुष को रूपधरि माया परकासी है॥ नेति नेति वेद कहैं अस्तुति माहीं रहैं भेद कछु नाहीं लहैं थकथक जासी है। योग ध्यान आवै नाहीं ज्ञानसों न गहोजाई भक्तों के हिये माहि सदा जो विलासी है॥ सन्तौं हेतु देह धरै आयके सहायकरै पृथ्वी को दुःख हरै घटघटवासी है। एहो चरणदास जन वासों क्यों न लावो मन शुकदेव कृपाघन खोलिदइ गांसी है॥

सावरो सलोनोप्यारो मेरे मनभायो है माई॥ कहा कहूं शोभा वाकी तीन लोक माया जाकी शेषहू की रसना थाकी पारहू न पायो है। निरगुण निराकार कोऊ कहा जानैं सार सन्तों की सहायकाजे देह धरि आयो है॥ ब्रजहू में कौतुक कीन्हे सन्तन को सुखदीन्हे मुरली बजाय गाय रीझिके रिझायो है। योगी जाको ध्यान लावैं ब्रह्मा अरु वेदगावैं ताको तौ यशोदा माता गोदमें खिलायो है॥ चरणदास सखीपर शुकदेव कृपाकीन्ही बांकोसो विहारी एक पलमें दिखायो है॥

बधाई राग मलार॥

बधाई सबही ब्रज सोहाई।
मुदितभये वसुदेव देवकी मनमें अति अधिकाई॥
पहुँचे जाय महरि घरमाहीं काहू भेद न जानो।
यशुमति रानी बालक जन्म्यो सबने योंकर मानो॥
घर घर मंगलचार भये हैं बन्दरवार बँधाईं।
नूतन बस्तर पहिरि पहिरि कै नारि सबै घिरिआईं॥
करि कौतूहल मिलि मिलि गावत करैं उछाह घनेरा।
याचक भीर बहुत भइ द्वारे बजत दमामे भेरा॥

जिसखायक देखा सो दीन्हा करी शुश्रुषा भारी ।
इक आवत इक जात बिदाहो देत अशीश महारी ॥
धनिगोकुल धनिपौरि भवनधनि आये हैं जगदीशा ।
शिव ब्रह्मादिक ध्यान धरत हैं लख ईशनको ईशा ॥
दुष्टदलन सन्तन सुखकाजें लीन्ह्यो है औतारा ।
चरणदास शुकदेव कहत हैं जगपति सिरजनहारा ॥

नन्दघर कौतुक करन नवीने ।

जो जो वचन किये थे आगे सो आ पूरण कीने ॥
भक्तबछल करतार गुसाईं धरिआये औतारा ।
रक्षाकारण साधु ऋषिनकी भूमि उतारण भारा ॥
जब जब भार बढ़त पृथ्वीपर तब तब होत सहाई ।
मर्यादा पुरुषोत्तम येही बिगरी सबै बनाई ॥
निरगुणसों सरगुण वपुधारे कष्ट निवारण काजे ।
योगेश्वर जेहि ध्यान लगावैं नामलिये अघ भाजैं ॥
भाग बड़े यशुमति रानी के दर्शन दीन्हें आई ।
चरणदास शुकदेव कहत हैं सुर मुनि करी बधाई ॥

जगतपति देखि महरघर आये ।

बाल चरित्र ही दिखलावन आनँद अधिक बधाये ॥
तप कीन्हों थो नन्द यशोदा पिछले जन्म अघाई ।
वरमांगो थो हम सुत होके खेलो भवन मँझाई ॥
वचन न मोड़ा आय विराजे भक्तोंवश सुखदाई ।
जो जो चाहो सो सुखदीयो हूये कुँवर कन्हाई ॥
संग लियो सामीप मुक्तिको ब्रज में अवन कियो है ।
सुख उपजायो नर नारिनको दर्शन आय दियो है ॥

जब जब प्रकटे चारौ युगमें सत कलि द्वापर त्रेता ।
चरणदास शुकदेव कहत हैं सन्तनही के हेता ॥

सखीरी आज गोकुल भाग बड़ाई ।
दर्शन दे वसुदेव देवकी नँदघर प्रकटे आई ॥
भादोंमास वदी बुध आठों ग्रह नक्षत्तर नीके ।
यशुमति रानी गोद सिरानी भये मनोरथ जीके ॥
भयो उछाह स्वरग के माहीं देव सभी हर्षाये ।
अपने अपने वैठि विमानन पुष्प अधिक वर्षाये ॥
यह धरती परफुल्ल भई है फूलउठा वन सारा ।
कालिन्दी को वड़ो उमाहो करिहैं लाल विहारा ॥
किरपासागर होय उजागर मर्यादा वँधवांधन ।
चरणदास शुकदेव कहत हैं कारण अपने साधन ॥

सखीरी सुन देख अभी में आई ।
यशुमति रानी बालक जायो यह तोहिं आनि सुनाई ॥
नायनि डोलै हँसि हँसि बोलै घर घर कहत बधाई ।
भयो उछाह सकल गोकुल में बातभई मनभाई ॥
सुन सुन आपस में मुसकाने देन बधाई लागे ।
भूषण वस्तर लगे सवाँरन नरनारी रसपागे ॥
बनसों रहे गये नँदद्वारे ग्वाल सभी हरषाये ।
बड़ो पौरि के आगे याचक गावनहीं को आये ॥
मैं घर जाऊ बनकर आऊं तुमहूं देह शिंगारो ।
साथ चलैंगी जाय मिलैंगी होइहै कौतुक भारो ॥
शुकदेवा का मुँह देखैंगी करिहैं अधिक हुलासा ।
ऐसे कहि वह भवन सिधारी भनै चरणहीदासा ॥

राग हिंडोलनो ॥

झूलत हरिजन सन्तभक्ति हिंडोलने ।
ररा ममा दृढ़खंभ रोपे प्रेम डोरी लाय ।
टेक पटरी बैठि सजनी अतिअनन्द वढ़ाय ॥
ध्यानके जहाँ मेघ बरसैं होय उमँग हुलास ।
गुरुमुखी जहाँ समझ भीजैं पूरण हरिके दास ॥
बुद्धि विवेक विचारि गावैं सखी सहेली साथ ।
अगमलीला रटैं सजनी जहां ब्रह्मविलास ॥
परमगुरु श्रीजनक झूलैं झूलैं गुरु शुकदेव ।
चरणदासी सखी सदा झूलैं कोइ न पावै भेव ॥

राग हेली ॥

और न मेरे कोय हेली ।

प्राणपियारे लालजी ॥ रोम रोमरोम वेई रमेरी अरी हेली तन मन व्यापक सोय ॥ जित देखों तित लालकोरी अरी हेली दूजा नाहीं और ॥ आदि अन्त है लालजी सर्वमयी सबठौर ॥ देश काल सबलालहैं री अरी हेली अर्धऊरध है लाल । दहिने बायें लालजी दशोंदिशा में लाल ॥ सोवतही में लालहैं री अरी हेली जाग्रतहीमें लाल । माहिं सुषोपति लालजी तुरियाही में लाल ॥ ज्ञान ध्यान सब लाल हैं री अरी हेलीलालही गुरु शुकदेव चरणदासी है लालकी बिरला जानै भेव ॥

जो होवै हो हरिदास हेली एते कुलतारै वही ॥ फल न मुक्तिचाहे नहींरी अरी हेली भक्ति करै निर्वास ॥ बोस चार कुल ददा केरी अरी हेली बीस नाना के जान । सोलह कुल ससुरारके द्वादश सुता बखान ॥ बहनी के ग्यारह तरेरी अरी हेली दश भूवा के पार । मौसी के कुल आठही वेद कहत हैं चार ॥ अष्टादश

यों कहें री अरी हेली कहैं साधु अरु सन्त । चरणदास शुकदेव भी कहैं कमलाको कन्त ॥

छूटे आल जंजाल हेली चरण कमल के आसरे ॥ भर्मभूत सबही छुटेरी अरी हेली सौन नक्षत्रनाल ॥ जन्तर मन्तर सबछुटेरी अरी हेली छूटे वीर मशान । मूठ डीठ अब ना लगै नहीं घात को बान ॥ शनैश्चरबल अब ना चलैरी अरी हेली नहीं राहु अरु केतु । मंगल बृहस्पति ना दहैं नहीं भोग उनदेतु ॥ ज्योति बालपर सो नहींरी अरी हेली मानूं न देवी देव । सतगुरु मोहि बताइया सांचो झूठो भेव ॥ अठसठ तीरथ ना फिरूंरी अरी हेली पूजूं न पाथर नीर । श्रीशुकदेव छुटा-इया जन्म मरणकी पीर ॥ निश्चलहो हरि की भईरी अरी हेली सुमिरूं निर्मलनावँ । अनन्य भक्ति दृढ़सूं गही मारग आन न जावँ ॥ गोविन्द तजि औरन भजैरी अरी हेली ताके मुहड़े छार । चरणदास यों कहत हैं राम उतारै पार ॥

अथ सुमिरण का अंग ॥

राग काफी ॥

कहा कहि तोहिं पुकारूं करतार हमारे ।
नाम अनन्त अन्त नहिं जाको बहुगुण रूप तिहारे ॥
अजर[१] अमर[२] अविगत[३] अविनाशी[४] अलख[५] निरंजन[६] स्वाँमी[७] ।
पुरुष-पुरातन[८] पुरुषोतम[९] प्रभु[१०] पूरण-अन्तरयामी[११] ॥
कृष्ण[१२] कन्हैया[१३] विष्णु[१४] नरायण[१५] ज्योतीरूप[१६] विधाता[१७] ।
अपरम्पार[१८] मुकुंद[१९] मुरारी[२०] दीनबंधु[२१] ब्रजनाथा[२२] ॥
यादवपति[२३] जगदीश[२४] चतुर्भुज[२५] निर्भय[२६] सर्वप्रकाशी[२७] ।
पारब्रह्म[२८] प्राणनको दाता[२९] सबठां घटघटबाशी[३०] ॥
निरविकार[३१] परमेश्वर[३२] गिरिधर[३३] माधव[३४] गोविंद प्यारा[३५] ।

कमलनैन[३६] केशव[३७] मधुसूदन[३८] सबमें[३९] सबसे न्यारा[४०] ॥
हृषीकेश[४१] मुरलीधर[४२] मोहन[४३] ॐ[४४] अखिल[४५] अयोनी[४६] ।
भगवंत[४७] वासुदेव[४८] भगवाना[४९] ज्ञानी[५०] ध्यानी[५१] मोनी[५२] ॥
दीनानाथ[५३] गोपाल[५४] हरी[५५] हर[५६] गरुड़ध्वज[५७] घनश्यामा[५८] ।
भक्तिवछल[५९] अरु देवकिनन्दन[६०] करता सब विधिकामा[६१] ॥
आदिप्रधान[६२] माधुरीमूरति[६३] धरणीधर[६४] बलवीरा[६५] ।
नन्दनँदन[६६] अरु यशुदानन्दन[६७] सुन्दर श्याम शरीरा[६८] ॥
परशुराम[६९] नरसिंह[७०] विश्वंभर[७१] अचल[७२] अखण्ड[७३] अरूपी[७४] ।
ईश[७५] अगोचर[७६] और जगतगुरु[७७] परमानँद[७८] बहुरूपी[७९] ॥
करुणामय[८०] कल्याण[८१] अनन्ता[८२] दयासिंधु[८३] बनवारी[८४] ।
धारण शंखचक्र[८५] रुक्मिणिपति[८६] आनँदकन्द[८७] विहारी[८८] ॥
परमदयालु[८९] मनोहर[९०] नरहरि[९१] कृपानिद्धि[९२] फलदाता[९३] ।
कंसनिकन्दन[९४] रावणगंजन[९५] जगपति[९६] लक्ष्मीनाथा[९७] ॥
जगन्नाथ[९८] अरु बद्रीनाथा[९९] निरगुण[१००] सरगुणधारी[१०१] ।
दामोदर[१०२] रघुवर[१०३] सीतापति रामा[१०४] कुंजविहारी[१०५] ॥
दुष्टदलन[१०६] सन्तनको रक्षक[१०७] सकल सृष्टिको सांई[१०८] ।
दुःखहरण के कौतुक अनगिन शेष पार नहिं पाई ॥
सौ अरु आठ नामकी माला जो नर मुखों उच्चारै ।
अपने कुलकी सारी पीढी एकअरुसौ को तारै ॥
गुरु शुकदेव मंत्र निज दीन्हो रामनाम ततसारा ।
चरणदास निश्चय सों जपकरि उतरो भवजलपारा ॥

राग केदारा ॥

हरिको सुमिरि संकट हरन ।
कोटि कष्टनिवारि डारें जगत पोषण भरन ॥
भक्ति पूरण देखि निश्चल अनन्य बाधों परन ।

अग्नि में प्रह्लाद राखो दियो नाहीं जरन ॥
गिरिशिखरसों डारि दीन्हो लगो करुणाकरण ।
दीन जानि संभार लीन्हो कियो ठाढ़ो धरन ॥
खम्भ बांधो खड्ग काढ़ो दुष्ट लागो अरन ।
अब बता तेरो राम कितहै गहो वाकी शरन ॥
ढीठ हो प्रह्लाद भाष्यो डारि शंका डरन ।
मोमें तोमें खड्ग खम्भे मध्य नारी नरन ॥
खम्भ फटकर भये परगट धरो नरसिंह वरन ।
असुर मारो जन उबारो पुहुप वरषे सुरन ॥
मोहिं गुरु शुकदेव कहिया सेव सोई चरन ।
चरणदास उपासना दृढ़ होय तारण तरन ॥

राग अलहिया ॥

सुमिरु मन राम नाम ततसार ।
जिन जिन सुमिरो सो सो उतरे भवसागर सों पार ॥
वेद पुराण और षटमाहीं तारण को यहि योग ।
जौपै पांचो प्रेत निवारै अरु इन्द्रिन के भोग ॥
साधन संयम पूजा अर्चन और करै तपदान ।
नाम समान न फल काहू में करि देखी पहिंचान ॥
जो जप करै धरै हिरदै में आशा सकल बिड़ार ।
तीन लोक में धनि धनि होवै शोभा अगम अपार ॥
सब धर्मन परधान नाम है सब इष्टन शिरमौर ।
निश्चय पकड़रहो याही को सकल विकल तजि दौर ॥
तामें ज्ञान भरोही दीखै पावै ब्रह्म विचार ।
गुरु शुकदेव दियो दृढ़ मोकूं चरणहिं दास सँभार ॥

राग बिलावल ॥

अब तू सुमिरण कर मन मेरे ।
अगले पिछले अब के कीये पाप कटैं सब तेरे ॥
यम के दंड दहन पावककी चौरासी दुख प्रेरे ।
भर्म कर्म सबही कटिजैहैं जगत् व्याध उरभेरे ॥
पैहै शक्ति मुक्ति गति आनँद अमरहिलोक बसेरो ।
जन्मै मरै न योनि आवै या जग करै न फेरो ॥
सुमिरण साधनमाहिं शिरोमणिजो सुमिरण करि जानै ।
काम क्रोध मद पाप जरावै हरि बिन और न मानै ॥
गुरु शुकदेव दियो है सुमिरण बिन जिह्वा करिलीजै ।
चरणदास कहैं घेरि घेरिकरअर्धउर्ध मन दीजै ।

राग केदारा ॥

अरे मन करो ऐसो जाप ।
कटैं संकट कोटि तेरे मिटैं सगरे पाप ॥
चेत चेतन खोज करले देख आपा आप ।
कागसों जब हंस होवै नामके परताप ॥
ध्यान आतम सुरति राखो छुटै त्रैगुण ताप ।
सुरतिमाला सुमिरि हिरदै छाँड़ सकल संताप ॥
परा भक्ति अगाध अद्भुत विमल अरु निष्काम ।
चरणदास शुकदेव कहिया बसैं निजपुर धाम ॥

राग भैरों ॥

राम राम राम राम राम राम गावो ।
मनके रोग सकल बिसरावो ॥
नाम प्रताप शिला जलतारी ।

सोई नाम जपौ नरनारी ॥
नाम लेत प्रह्लाद उबारो ।
परगट ह्वै हिरणाकुश मारो ॥
पतित अजामिल सबजगजानै ।
नामलेत चढ़ि गयो विमानैं ॥
सुवा पढ़ावत गणिका तारी ।
नामलेत निजधाम सिधारी ॥
सोई नाम नारदमुनि गायो ।
वेदव्यास सुख प्रकट जनायो ॥
हरिके नाम को करो विचारा ।
सतसंगतिमिलि उतरौ पारा ॥
शिवब्रह्मादिक नाम उपासी ।
आठसिद्धिनवनाम किदासी ॥
शुकदेव गुरुने नाम बतायो ।
चरणदासहरिसों चितलायो ॥

राग बिलावल ॥

रामनाम चारौं वेदको कहियत है टीको ।
पाप ताप दुख द्वंद्वकूं मेटनकूं नीको ॥
एजी जेहि सुमिरे रक्षाकरी प्रहलाद उबारो ।
निर्गुण सों सगुण भयो जानत जग सारो ॥
एजी जप तप संयम योगमें सबहुन परभारी ।
नामलिये सबही तरैं बालक नर नारी ॥
एजी जो हिरदै दृढ़करगहै हरिदर्शन पावै ।
चौरासी बन्धन कटैं आवागमन नशावै ॥
एजी गुरु शुकदेव दयाकरी हरिनाम बतायो ।

चरणदास आधीनके निश्चय मनआयो ॥
सांचा सुमिरण कीजिये जामें मीन न मेख।
ज्यों आगे साधुन कियो वाणी में देख ॥
एजी टेक गहो दृढ़भक्ति की नोधा हिय धारि।
सन्तन की सेवा करो कुलकानि निवारि ॥
एजी जासों प्रेमा ऊपजे जब हरि दरशाय।
आगे पीछेही फिरै प्रभु छोंड़ि न जाय ॥
एजी चारि मुक्ति बांदी अवैसिद्धि चरणनमाहिं।
तीरथ सब आशा करैं अघ देख नसाहिं ॥
एजी कहैं गुरू शुकदेवजी चरणदास गुलाम।
ऐसी धारन धारिये रहिये निष्काम ॥
ऐसा सुमिरण कीजिये सुनिहो मनमेरे।
रसना राम उचारिये कर माला फेरे ॥
एजी निन्दा अकस न राखिये काहू दुखनहिं दीजै।
सन्तन सूं सनमुख रहो गुरसेवा लीजै ॥
एजी भूखे भोजन दीजिये प्यासे नीर पियावो।
सबसे नीचा ह्वै चलो अभिमान नशावो ॥
एजी सतसङ्गति में मिलिरहोगुरुमतसूं रहिये।
आन धर्म नहिं चालिये यमदण्ड न सहिये ॥
एजी तामसकूं विषज्यों तजो शुकदेव बतावैं।
चरणदास हरि हरि जपै मुकता ह्वै जावैं ॥
थोथे सुमिरण कहा सरे।
मनकेरोग शोक नहिं खोये हिंसा[1] ढबे अकस[2] जरे ॥
एजी नारी सुतसूं मोह कियोहै नेक न हरिके प्रेमअरे।

---

1 टहलुई २ गुस्सा ॥

कुल नाते परिवार सँभारे साधनकी नहिं टहल करे॥
राजी माला तिलक सुधारि सवाँरे राखत छलबल मकर घने।
अन्तर और निरन्तर औरै सिंह गऊमुख रहत बने॥
राजी ऐसी भक्ति मुक्ति नहिं पावै करम लगैं अरु नरक परे।
यमके दण्ड दहन पावककी जनम मरण योनाहिं टरे॥
राजी लक्षण प्रेम सहित जप कीजै भीतर वाहर उघरनचे।
चरणदास शुकदेव कहत हैं हरीरीझैं जब व्याधि वचे॥

मालाफेरी कहाभयो

अन्तर के मनको नहिं फेरा पाप करत सब जन्मगयो॥
पर निन्दा परनारि न भूलो खोटकपटकी ओरनयो।
काम क्रोध मद लोभ न खोये हैं रह्यो मूरख मोहभयो॥
दुनियां सांचसमझघर कीन्हो धन जोरनको परनलयो।
दया धर्म दोउ मारग छोड़े मँगतन को नहिं दानदयो॥
गुरुसों झूंठ भगल साधन सों हरिको नाहिं नेहजयो।
चरणदास शुकदेव कहत हैं कैसे कहिये मुकतहयो॥

राग हेली॥

और उपासन कोय हेली टेक हमारे नामकी।
आन शरण जाऊं नहींरीअरी हेली होनी होयसो होय॥
योग यज्ञ तप नामहींरी अरी हेली नाम नक्षत्तर बार।
सकल शिरोमणि नाम है तन मन डारूं वार॥
अठ सठ तीरथ नामहींरी अरी हेली नाम हमारे नेम।
नामहीं सूं राची रहूँ नाम हमारे प्रेम॥
वरत हमारे नामहारी अरी हेली इष्ट हमारे नाम।
अर्थ धर्म्म फल नाम हीं नाम मुक्ति को धाम॥

पढ़न लिखन सब नामहैरी अरी हेली नाम ग्रह सब देव ।
जो कुछ है सो नामहीं नाम हमरो भेव ॥
राम नाम शुकदेव दियोरी अरीहेली सों राखो मनमाहिं ।
चरणदास के नामहीं इह सम तुल कछु नाहिं ॥

अथ सगुण उपासना अंग राग शब्दों के दोहा ॥

धन सतगुरु शुकदेवजी, मेरी करी सहाय ।
निज वृन्दावन धामको, लीला दई दिखाय ॥
अब कछु कौतुक रासको, वरणतहै चरणदास ।
लाल लाड़िली कृपा सों, पाव निज ब्रजवास ॥

राग रासविहागरा ॥

नृत्य करत छविसों वनवारी ।
टेरिलई सबही ब्रज वनिता मुरली मधुर बजाय विहारी ॥
सुनत श्रवण धुनिहोय प्रेमवशविकलभईं सुन्दर सुकुमारी ।
गृहके काज लाज तजि पियकी उठि धाई तनसुरति बिसारी ॥
आयेगावन छहों रागमिलि पांच पांच इक इककी नारी ।
आठ आठ इक इकके बेटा मूरतवन्त स्वरूप महारी ॥
ताल बीण मुरचंग मँजीरा तनन तनन तँबुरा गति न्यारी ।
ताधीनाधीना ताधीना बजत पखावज घुंघुरू झनन झनन झनकारी ॥ इक इक गोपियनके संग इक इक सुन्दर भेष धरो गिरधारी । ऐसोरच्यो रासको मण्डल मध्यराधिका कृष्ण मुरारी ॥ गावत गीत बढ़ाय परस्पर मान करत पियसों पिय प्यारी । लेत मनाय लाड़िलो प्यारो हँसि हँसि विहरत दै दै तारी ॥ ततथेई ततथेई थेइ थेइ ततथेई उरप तुरप सांगीत उचारी । नटवररूप करो मनमोहन शेपथको वरणत शोभारी ॥ भये चकित सुरमुनि ऋषि किन्नर बाढ़ी रैन शरद उजियारी ।

चरणदास शुकदेव श्यामकी अद्भुत लीलापै बलिहारी ॥

रास राग भैरों ॥

देख सखी रास रच्यो सांवरे बिहारी । ब्रह्मा शिव इन्द्र शेश नारद से थकित भये ऐसो कवि कौन करै वरणन उपमारी ॥ सोहै सिर मुकुट और कुण्डल छवि तिलक भाल किंकिण कटि पीताम्बर नूपुर झुनकारी । बहुत नारि सुघर सखी राधाजू चन्द्रमुखी ललितादिक सहचरी[1] शृङ्गार सों सवाँरी ॥ कोऊ तँबूरा कोउ मुरचंग कोऊ बजावै गति मृदंग कोऊ ताल देत कोऊ स्वर उठान भारी । बंसी में करत गान बाँकीसी मधुरतान श्यामा जब करत मान श्यामलें मनारी ॥ कबहूं करजोर दोऊ नाचतहैं नवकिशोर कबहूँ हरि नृत्यकरत कबहूं पियप्यारी । ता ता ता ता ता ता थेई थेई थेई है रही वाढ़ी निशि शरददेखि हरिकी नृतकारी ॥ गौवन तृण छाँड़ि दियो बछरन पय नाहिं पियो मुरली धुनि सुनतमोहे मुनि जन व्रत धारी शुकदेवजी गुरुकों चरणदास बहु प्रनाम करै रास को विलास दियो परगट दरशारी ॥

रास राग विहागरा ॥

रास में निरत करत बनवारी ।
मुदित मनोहर रंग बढ़ावत सँग वृषभान दुलारी ॥
मोरमुकुट छवि शीश विराजत नाक बुलाक सुढारी ।
कर मुरली कटि काछनि काछे अलकैं घूंघुरवारी ॥
राधाजू के शीश चन्द्रिका नीलाम्बर जरतारी ।
गावैं सखी श्यामश्यामा सँग नखशिख रूप उजारी ॥
ताधिनां ताधिनां धीनां बजत पखावज ताल बीण गति न्यारी ।

---

१ सङ्गकी सहेली ॥

ठनन ठनन ठन नूपुरकी धुनि झनन झनन झनकारी ॥
थेइ थेइ थेइ थेइ नचत दोऊ मिलि विहँसि विहँसि मुसकारी ।
चरणदास शुकदेव दयासूं पायो दरश मुरारी ॥

रास रामकली वा भैरों ॥

नृत्यत गोपाललाल तत्तता थेई ।

नखशिख शृंगार कियें राधा गल बाँह दियें सखियनसंग नाचत स्वर ताल तान देई ॥ तननन तंबूर गिड गिड धुध-कधू मृदंग ताल झम झम झैं झांझ बजतबीन बाँसुरी । झन-नन झनकार होत पायल ठनकार राग गावत कल्याण और नट धनासिरी ॥ कबहूँ लै कान्हरा अलाप कभूं सोरठ को परज अरु विहागरो केदारा आसावरी । कबहूं कै विभास मालसिरी ललित रामकली भरहूँ बिलावल धुनि ध्रुपद को चावरी ॥ सुन्दर बहु भेष धरें रासको विलासकरें मुनिजन मनहरें बढ़ो आनँद उंह ठाईं । अद्भुत छबि कहा कहूं किरपा शुकदेव चहूं चरणदास होय रहूं चरणकमल माहीं ॥

रास राग पंचम ॥

सखी दोऊ रसिक प्रीतम पिय प्यारी ।
मिलि खेलत हैं रास छवि कहिन जाई ।

एककी एक सों सरस शोभा बनीं निरख सभ सुरमुनी रहे लुभाई ॥ कोऊ कर बनिलै सुघरस्वर तालदै गावत संगीत रीझत रिझाई । थुंकना थुंगना धुधक धूधूकत बजत मिरदंग गति अति सुहाई ॥ तार मुरुचंग स्वरससों मुरलिका मधुर धुनि चतुर शारंग वजाई । नचत दोउ भावसों अधिक बहुचाव सों तृत्तथेई थेई थेईलगाई ॥ कबहूं पियप्यारी जू मान करैं लालसों कबहूं भुजगहि पियाले मनाई । धरत सुन्दर डगन

बजत नूपुर पगन हँसत दोउ लसत दिये गरेबाहीं ॥ बढ़ी निशि शर्दकी कौन वर्णनकरै शेशहू सहसमुख रहे थकाई। कहै चरणदास शुकदेव किरपा करी ध्यान के माहिं लीला दिखाई ॥

दो० बसरी बैरन बांसुरी, तूहीं ब्रजके माहिं।
लगीरहत पियमुख जु तू, पलछिन छांड़त नाहिं ॥
जब तू बाजत तानसूं, ए बंशी बड़भाग।
कसक उठत जियरा जरै, तनमन लागत आग ॥
हमरो पिय तैं वशकियो, करत अधर रसपान।
कहा टौना कियो जु तैं, बर पाये भगवान ॥
ब्रह्मा भूलो वेदधुनि, शंकर छोड़ो ध्यान।
चरणदास कहैंसुनिबांसुरी, इन्द्र तज्यो अभिमान ॥
छैल छबीलो लाड़िलो, रंग रँगीलो लाल।
चरणदास के मन बसो, बंशीधर गोपाल ॥

राग काफी ॥

मोहन प्यारे की बंशी बाजैरी।
हमकूं जरावत विरह अग्निसों जब अधरनपै राजैरी ॥
लालन मुख लागीरहै निशिदिन नेकन नाहिं न लाजैरी।
तनक बाँस की बनी बसुरिया गर्बभरी अति गाजैरी ॥
तैं वश कियो शुकदेव हमारो सुनत कलेजो दाझैरी।
चरणदास कहैं अब कहा कीजे तुही भई सिरताजैरी ॥
बंशीवारे सों नेहरा कीन्होरी।
काहूको कछु कहो न मानूं यह तनमन वहि दीन्होरी ॥
भर्मत भर्मत बहुतै हारी भटक भटक जग बीनोरी।
आन देवसों काज न मेरो सांचो प्रीतम चीन्होरी ॥
शोभाको सागर गुणको आगर कुँवरकिशोर नवीनोरी।

नवल लाड़िलो मोहन सोहन सोंई वर वरलीन्होरी ॥
प्रभुको छांड़ भजूं औरनको तौ कहियो बुधिहीनोरी ।
चरणदासको है सुखदायी श्यामसुंदर रँगभीनोरी ॥

वा मुरलियाने हेली मेरे प्राणहरे ।

जव वाजत पियके मुख लागी सुनि धुनि तनकी सुधि बिसरे ॥
ऐसो जप तप कहा कियो है मोहन सोहनलाल वरे ।
जाके रसवस भये श्यामजी ताविन पलछिन कल न परे ॥
तीनलोक विच धूम मचाई सुर मुनि ऋषि के ध्यानटरे ।
चरणदास शुकदेव दयासों मनवांछित सव काजसरे ॥

वा मुरलियाके वोल मेरे हिये कसकै ॥

वाजत मान गुमान गरवले करि राखो हरिकों वसकै ॥
वाँकी तान वान ज्यों लागत चुभत कलेजे में धसकै ।
नेक न होत पिया सों न्यारी अधरन के रसके चसकै ॥
कहाकरूं कुछ यतन न दीखै कोई उपाय न होयसकै ।
चरणदास शुकदेव पियारे कवहुँतो वोलेंगे हँसकै ॥

वंशीवारे तू साडी गली आ जावो ।

तेंडे कारण भई वावरी टुक मुख छवि दिखला जावो ॥
व्याकुल प्राण धरत नहिं धीरज तनकी तपत सिरा जावो ।
चरणदास तलफत दर्शन विन शुकदेव दुःख मिटा जावो ॥

राग परज ॥

तुम्हारे रूप लोभानी हो ।

जाति वरन कुल खोयके भइ प्रेम दिवानी हो ॥
खान पान सव सुधि गई और अकवक वानी हो ।
तुम्हरे चरण कमल मन मेरो रहो लिपटानी हो ॥
सुन्दर सूरति सोहनी मेरे नैन समानी हो ।

तुम बिन चैन नहीं दिन राती सुनि पिय जानी हो॥
दरश दिखावो साँवरे जब हिये सिरानी हो।
नातर वह गति ह्वै है हमरी मीन ज्यों पानी हो॥
सुख देवो दुख सब हरो काहे बिसरानी हो।
चरणदासि यह सखी तिहारी मिलजा छानी हो॥

राग विहागरा॥

सुधि बुधि सब गई खोयरी मैं इश्क दिवानी।
तरफतहूं दिन रैन सखीरी जैसे जल बिन मीननी॥
बिन देखे मोहिं कल न परत है देखत आंख सिरानी।
सुधि आये हिय में दव लागै नैनन वर्षत पानी॥
जैसे चकोर रटत चन्दा को जैसे पपीहा स्वाती।
ऐसे हम तरफत पिय दर्शन विरह व्यथा इहिभांती॥
जबते मीत बिछोहा हूवा तबते कछु न सुहानी।
अंग अंग अकुलात सखीरी रोम रोम मुरझानी॥
बिन मनमोहन भवन अंधेरो भरि भरि आवै छाती।
चरणदास शुकदेव मिलावो नैन भये मोहिं घाती॥
भईहूं प्रेममें चूरहो मोहिं दरशन दीजे।
हूं तो दासि तिहारी मोहन बेगि खबरिआ लीजे॥
ज्ञान ध्यान और सुमिरन तेरो तो चरणन चित राखूं।
तेरोहि नाम जपूं दिन राती तो बिन और न भाखूं॥
तन व्याकुल जिय रूंधोहि आवत परी प्रीति गलफांसी।
तुमतो निठुर कठोर महा पिय तुमको आवै हांसी॥
विरह अग्नि नख शिख सूं लागी मन में कल्पना भारी।
गिरोहि परत तन सँभरत नाहीं रहत भवन में डारी॥
कै बिष खाय तजों यह काया कै तुम्हरे सँग रहसूं।

चरणदास शुकदेव बिछोहा तेरी सूं नहिं सहसूं ॥

राग कान्हड़ा ॥

तुम बिन अति व्याकुल भइयाँ।
मोहूं कों दर्श दिखावरे मोहन प्यारे ।
चितवन नैन हँसन दसनन की अटक रही हिय मइयां ॥
वह लटकन मटकन चटकन पट मोरसुकुट की छवि छइयां ।
अधर मधुर मुरली सुर गावत टेरि बुलावत गइयां ॥
हाहा खाऊं शीश नवाऊं और परूं तोरे पइयां ।
वारीहूं वारी मुख ऊपर दोउ कर लेहुँ बलइयां ॥
अब तौ धीर रहो नहिं रंचक हो शुकदेव गुसइयां ।
चरणदासी भइ प्रेम बावरी आनि गहा क्यों न बहियां ।

राग पर्ज ॥

तुम बिन कैसे जीऊं प्यारे नँदलाल ।
भूख प्यास कछु लागत नाहीं तन की सुधि न सँभाल ॥
कल न परत कल कल अकुलावौं छिन छिन छिन बेहाल ।
विरह व्यथा को रोग बढ़ो है पीर महा बिकराल ॥
कहा री करूं कित जाऊंरी सजनी को मेटै जंजाल ।
लटक चलन बाँकी चितवन की चुभत कलेजे भाल ॥
भइ ऐसे यह देह दूबरी सूझ परो नस जाल ।
तरफत हूं हिय में दव लागी नैना बरत मशाल ॥
चरणदासी यह सखी तिहारी हो शुकदेव दयाल ।
आय कृपा करि दर्शन दीजै कीजै वेगि निहाल ॥

राग बिलावल ॥

लागीरी मोहनसों डोरी ।
आनि कानि कुलकी तजि दीन्ही कोऊ कैसी बात कहोरी ॥

श्याम सलोने के रँगराती मगन भई कोइ परी ठगोरी ।
निरखत छवि तनकी सुधि बिसरी प्रेम प्रीति रसमें भइ बोरी ॥
ऐसो रूप उजारो प्यारो शोभा वर्णत शेष थकोरी ।
तीनि लोक ब्रह्माण्ड सकल सब जाकी मायासों दरशोरी ॥
कान कुण्डल गलमाल बिराजे शीश मुकुट माथे तिलक फबोरी ।
नखशिख भूषण कर लिये लकुटी कांधे सोहै पीत पिछोरी ॥
कल न परत निशि दिन बिन देखे रोम रोम मेरे वही रमोरी ।
कान्ह सुजान सदा सुखदायी चरणदास के हिये बसोरी ॥

राग झँझोटी ॥

आया मैंडा मोहन मदनगोपाल ।
मानौ रङ्क अष्टसिधि पाई निरखत भई निहाल ॥
बलिबलि जांदियां अँगन समांदियां मोहिं दरशदियोलाल ।
कोटि भानु छवि मुखपर वारूं बदा सोहै भाल ॥
अद्भुत रूप अनूप सांवरो सुन्दर नैन विशाल ।
घूँघरवारी अलकैं झलकैं चिकने लंबे बाल ॥
चितवत तीखी भौंह मरोरत कर लिये वेणु रसाल ।
गावत तान आनि बांकी सों चलत अनोखी चाल ॥
श्रीशुकदेव दया के सागर नटनागर नँदलाल ।
चरणदास को किरपा करिकै रीझ दई उरमाल ॥

राग काफी ॥

लटकरी चालपै मैं वारी-वारी जांदियां ।
रैन दिना सानूं ध्यान तुसाडो मन वच के हूँदी बांदिया ॥
कुण्डल कान मुकुट शिर सोहै शोभा अधिक सुहाँदियां ।
अलबेली छवि बाँके नैना निरखत नैन लुभाँदियां ॥

जब बाजी प्यारे तेंडी बंशी खान पान बिसरा दियां ।
भूलगई घर काज साज सब लाज छोड़ उठआदियां ॥
चरणदासी हम भई तिहारी फूली अंगन समादियां ।
राखि शरण शुकदेव पियारे चरणकमल लिपटादियां ॥

कोई समझावोरी मोहनलालकूं ।

ग्वालबाल सबही सँग लेकर सूने घर धँसिआवै ।
याकी घाली मोरी आली माखन रहन न पावै ॥
लेकर मटुकी चटदे झटकै गटकै माखन सारो ।
चटपट चाटपोंछ धरि पटकै नट ज्यों सटकै प्यारो ॥
जबहीं जाँव गगरिया भरने ठाढ़ो रहै बिहारी ।
आगे आकर कांकर मारे भीजै मोरी सारी ॥
जो अपने घर बठिरहूं तो अँगना धूम मचावै ।
जो कबहूंकै सोऊं सजनी स्वपने में दर्श दिखावै ॥
मेरे पीछे लागो आली जित जाऊं तित डोलै ।
कहाँ लगि कहूं ढीठता वाकी बात अटपटी बोलै ॥
बांको छैल महाअलबेलो प्रकट्यो है ब्रज माहीं ।
चरणदास शुकदेव पियारो सदा रहौ या ठाहीं ॥

कोइ आनि मिलावोरी श्याम सुजान को ।

नन्ददुलारो मोहन सोहन अजब अनोखो छैला ।
मदनगुपाल मुकुन्द मुरारी मेरो जीवनप्रानरी ॥
नैनन नींद न आवै सजनी कल न परै दिन रैना ।
व्याकुल भई फिरतहूं बौरी भूली खान अरु पानरी ॥
जोकोउ हित ह्वैहै मेरो आली लालनकी सुधिलावै ।
दर्श दिखाय हरै सब बाधा मोको दे जीदानरी ॥
छिन छिन छिन गति और होत है लगो बिरहको बानरी ।

चरणदास की पीर मिटावैं सुन्दर सुखके निधानरी॥

राग सोरठ॥

हमारे घर आयेहो सुन्दर श्याम।
तनकी तपन मिटी देखतही नैनन भयो अराम॥
आँगन लिपाऊं चौक पुराऊं फूल बिछाऊं धाम।
आनँद मंगलचार गवाऊं हूये पूरणकाम॥
अब जागे सखि भाग हमारे मन पायी विश्राम।
चरणदास शुकदेव पियाकूं हितसों करूं प्रणाम॥
सो अब घर पाया हो मोहनप्यारा।
लखो अचानक अज अविनाशी उघरि गये दृगतारा।
झूमरहो मेरे आंगन में टरत नहीं कहुं टारा॥
रोम रोम हिय माहीं देखो होत नहीं छिन न्यारा।
भयो अचरज चरणदास न पइये खोज कियो बहुबारा॥
वह घरी कौनसी लागे मोरे नैना।
छोटी उमर भोलापन भारी जानूं एक न बैना॥
जब लागे तब कछू न जानी अबलागे दुख दैना॥
चरणदास शुकदेवकुँ देखैं तब पावैं सुख चैना॥

राग मलार॥

सो बिथा मोरी जानत होअ कि नाहीं।
नखशिख पावक विरह लगाई बिछुरन दुख मनमाहीं॥
दिननहिं चैन नींदनहिं निशिकूं निश्चलबुधिनहिंमेरी।
कासूं कहूं कोउ हितु न हमारो लग्नलहरिहरि तेरी॥
तन भयो क्षीन दीनभये नैना अजहूं सुधि नहिं पाई।
छतियां धरकत कर्क हिये में प्रीति महा दुखदाई॥
जल बिनमीन पियाबिन बिरहिनि इन धीरज कहुकैसी।

पक्षी जरै दवलगी वन में मेरी गति भई ऐसी ॥
तरफतहूं जिय निकसत नाहीं तनमेंअतिअकुलाई ।
चरणदास शुकदेव बिनायों दर्शन द्यो सुखदाई ॥

राग सोरठ ॥

हमारे नैना दर्श पियासाहो ।
तनगयो सूखि हाय हियबाढ़ी जीवतहूँ वहि आसाहो ॥
बिछुरन थारो मरण हमारो मुखमें चलै न गासा हो ।
नींद न आवै रैनि बिहावै तारे गिनत अकासाहो ॥
भये कठोर दर्श नहिं जानो तुमकूं नेकन सांसाहो ।
हमरीगति दिनदिन औरेहीबिरह बियोग उदासाहो ॥
शुकदेव पियारे मत रहु न्यारे आनि करो उर बासाहो ।
रणजीता अपनोकरिजानो निजकरि चरणनदासाहो ॥

ऊधोजी कहां रहे भगवान ।
हम जानी कान्हूने मोहे मोहन चतुर सुजान ॥
तबसूं नैनन नींद न आवै धीरज धरत न प्रान ।
उमगि उमगि हियरो हुलसत है वह सुन्दर मुसुकान ॥
योग कथा तुम काहि सुनावां हमकूं नाहीं ज्ञान ।
प्रेम प्रीति की रीति अनोखी कापै होत बखान ॥
ऐसो हितू न कोऊ देखो जाय सुनावै कान ।
बाढ़ी व्यथा बिरहकी तन में सुधिलो कृपानिधान ॥
आवो दर्श दिखावो प्यारे देहु हमें जी दान ।
चरणदास शुकदेव श्याम बिन तजौंखान अरु पान ॥

राग सारंग ॥

ऊधो क्या जानै हमरे जीवकी ।
चातक बूंद चकोर चन्दकूं ऐसे हमकूं पीवकी ॥

नेह कमान बिछुरकै खैंची मारि गये हरि तीरकी ।
भाल वियोग हिये बिच खटकैं सुधि न लई या पीर की ॥
चरणदाससखि निशिदिन तलफैं ज्यों मछली बिन नीरकी ।
कहैं कुछ और करैं कुछ औरे आखिर जात अहीर की ॥

रेखता ॥

फ़रज़न्द नन्दजी का दिल बीच भावदाँ ।
बरपायँ खूब नूपुर सुन्दर सुहावदाँ ॥
वह सांवला सलोना महबूब यार मन ।
आहिस्ता लटक चाल मटक मेरे आँवदाँ ॥
टीका संदलका खैंचिकै माथे पै अदासों ।
बरसर बिराजे अफ़सरे हीरे जरावदाँ ॥
कुण्डल झलकते हैं दर हर दो गोश में ।
आवाज़ बांसुरीकी शीरीं बजावदाँ ॥
नीमा ज़री का गलमें कटि काछनी बनी ।
पीरे दुपट्टे वाला बीड़े चबावदाँ ॥
करता है नृत्य नादर घुँघुरू कि झनकसों ।
तत्तत्ततातथेई थेई गति लगावदाँ ॥
नैनों की आन तानिकै अबरू कमानसूं ।
पलकों के प्रेम तीर कलेजे चुभावदाँ ॥
घायल किया है मेरे ताईं उसके इश्क़ने ।
शुकदेव चरणदास के जियमें समावदाँ ॥

राग हिंडोला ॥

हिंडोला झूलत नन्दकुमार ।
जोड़ी युगलकिशोर विराजे नान्ही परत फुहार ॥

कंचन खंभ जटित हीरनसों नग लागे तामाहिं ।
पटुली अधिक अनूपम सोहै डोरी सुरंग सुहाहिं ॥
चहूंओर बदरा घेरिआये उमड़ घुमड़ घहराहीं ।
गरजत मेघ पवन झकझोरत दामिनि दमक दुराहीं ॥
गावत गीत मलार सहेली मिल मिल दै दै तार ।
झोंटा देत विशाखा ललिता आनँद बढ़ो अपार ॥
बोलत मोर पपीहा कोयल दादुर हंस चकोर ।
हरी भूमि ऋतु भई सुहाई भौंर करत अतिशोर ॥
भीजत रंगरंगीले प्यारे शोभा कही न जाय ।
चरणदास शुकदेव श्यामकी दोउ कर लेत बलाय ॥

झूलत कोइ कोइ संत लगन हिंडोलने ।

पौन उमाह उछाह धरती शोच सावन मास ।
लाजके जहाँ उड़त वगले मोर हैं जगहास ॥
हरष शोक दोउ खंभ रोपे सुरत डोरी लाय ।
बिरह पटरी बैठि सजनी उमंग आवै जाय ॥
सकल विकल तहाँ देत झोंके बिपति गावनहार ।
सखी बहुतक रंगराती रँगी पांचौ नार ॥
नैन बादल उमगि वरसैं दामिनी दमकात ।
बुद्धिको ठहराव नाहीं नेह की नहि जात ॥
शुकदेव कहैं कोइ बली झूलै शीश देत अकोर ।
चरणदासा भये बौरे जति वरण कुल छोर ॥

हेली ॥

मो बिरहिन की बात हेली बिरहिनि होय सोइ जानि है।
मैंन बिछोहा जानतीरी अरीहेली बिरहैं कीन्हो घात ॥
या तनकूं बिरहा लगोरी अरीहेली ज्यों घुनलागो काठ ।

निशि दिन खाये जात है देखूं हरि की बाट ॥
हिरदे में पावक जलैरी अरीहेली ताप नैनाभये लाल ।
आंसू पर आंसू गिरैं यही हमारो हाल ॥
प्रियतमबिन कलनापरैरी अरीहेली कलकल सबअकुलाहिं ।
डिगीपरूं सत ना रहो कब पिय पकरैं बाहिं ॥
गुरु शुकदेव दया करैंरी अरीहेली मोहिं मिलावैं लाल ।
चरणदास दुख सब भजैं सदारहूं पति नाल ॥

तरसैं मेरे नैन हेली राममिलन कब होयगो ।
पिय दर्शनबिन क्यों जिऊंरी अरीहेली कैसे पाऊं चैन॥
तीर्थ बर्त बहुते कियेरी अरीहेली चितदै सुने पुरान ।
बाट निहारतही रहूं छांड़ दई कुलकान ॥
लगी उमाहेही रहूँरी अरीहेली सुधि नहिं लीनी आय ।
यह योबन योंही चलो चालो जन्म सिराय ॥
बिरहादल साजेरहैरी अरीहेली छिन छिन में दुखदेह ।
मन लालन के वश परो भई भाखसी देह ॥
गुरु शुकदेव कृपा करोजी अरीहेली दीजै बिरह छुटाय ।
चरणदास पियसूं मिलैं शरण तुम्हारी धाय ॥

तिनकूं कछुन सोहाय हेली प्रीतिलगी घनश्यामसूं ।
जो सुखहै संसारकेरी अरीहेली सो सब दिये बहाय ॥
भवनतजोअरुधनतजोरीअरीहेलीतजीकुलनकीरीत ।
मान बड़ाई सब तजी रहा एक हरि मीत ॥
भूखप्यासनिद्रातजीरीअरीहेलीतजिदियोवादविवाद ।
राग दोष दोऊ तजे तजो पाँच को स्वाद ॥
बहुत डरै सकुची रहैरी अरीहेली कहै न काहू बात ।
लगी रहै हरि ध्यान में ऐसे रैनि बिहात ॥

श्रीशुकदेव भले कहीरी अरीहेली बारम्बार सँभार ।
चरणदासहो श्याम की वही निबाहनहार ॥
मोमन कछु न सुहाय हेली प्रीतिलगी प्यारेलाल सूं ।
हँसिहँसिकै टोना कियोरी अरीहेली दैगयो मुरली गहाय ॥
जबहीं सूं चेटक लगोरी अरीहेली ढूंढूं कुंजनमाहिं ।
बौरीहो दौरी फिरूं वह छवि दीखै नाहिं ॥
मोहिं मिलावै सांवरोरी अरीहेली ताके बलि बलि जावँ ।
जन्म जन्म दासी रहूं कबहुं न छोड़ों पावँ ॥
है कोइ पूरी रामकीरी अरीहेली मोहिं बतावै ठौर ।
जहाँ बिराजै श्यामजी वह बड़भागी पौर ॥
चरणदास घायल भईरी अरीहेली मोहन मारो बान ।
श्रीशुकदेव दिखाइये मेरो जीवन प्रान ॥
वह छवि करूं बखान हेली जा छावसों नैनालगे ।
हितू देखि तोसूं कहूंरी अरीहेली और न पावैं जान ॥
मोर मुकुट माथे दियेरी अरीहेली कुण्डल सरवन माहिं ।
अलकैं बल खाई रहैं योगी देखि लुभाहिं ॥
भौंहन मधि बेंदा दिपेरी अरीहेली सुन्दर नैन विशाल ।
मोतीनासा सोहनो अरु बैजन्ती माल ॥
नीमोअङ्ग पीरो खुभोरी अरीहेली घूम घुमारो फेर ।
लाल खराऊं पावँ में मोमन राखत घेर ॥
पहुंचन में पहुंची कड़ेरी अरीहेली अँगुरिन मुँदरीछाप ।
अधरनपै मुरली धरे गावत रीझत आप ॥
चरणदास तिनकी भईरी अरीहेली तनमन डारोवार ।
गुरु शुकदेव सराहिया बुरो कहै परिवार ॥
बंशीबट की छाहिं हेली लाल लाड़िली मैं लखे ।

दोउ खड़े गावैं हँसैं री अरीहेली अरु डारे गलबाहिं ॥
मोर मुकुट माथे दिपैरी अरी हेली सुन्दर नैन विशाल ।
पीताम्बर पट सोहनो कर मुरली उरमाल ॥
वाके विराजैं चन्द्रिकारीअरीहेली लीलवसन जरतार ।
नखशिख भूषण सोहने अरु फूलनके हार ॥
गुरु शुकदेव बताइयारी अरीहेलीजबहम लिये पिछान ।
चरणदासी तिनकी भई लगोरहै वहि ध्यान ॥

अथ सन्त शूरका अंग ॥

दो० सन्त समान न शूरिमा, कहैं रणजीत विचार ।
टेक गहैं सम्मुख चलैं, बांधि प्रेम हथियार ॥

राग सोरठ ॥

सन्त समान नहीं कोई शूरा ।
मोह सहित सब सेना मारी ऐसो सॉंवत पूरा ॥
क्षमा कि ढाल गही कर अपने बांधे सत तरवारा ।
कर्म भर्म के दलको पेलै पल पल वारंवारा ॥
सुरत को तीर हृदय को तरकस ध्यान कमान बनावै ।
प्रेमहाथ सूं खैंचनलागे चोट निशाने लावै ॥
बुद्धि विवेक कटारी बांधै वचन विलास की बरछी ॥
सतपुरुषों के हियरे बेधै कहि कहि बतियां तिरछी ॥
चितमें चाव चौगुनो उनके सुन सुन अनहद तूरा ।
अगम पंथसों पग न डिगावै होयजाय चकचूरा ॥
मन हुलास आसधर पीकी सुन्न खेत में धावैं ।
चरणदास शुकदेव कहतहैं अमर लोक पद पावैं ॥

राग सोरठ वा आसावरी ॥

साधू पैज गहै सोइ शूरा ।

काके मुख पर नूर है जब बाजै मारू तूरा ॥
कलँगी अरु गजगाह बनावैं इसका परन दुहेला ।
सांवत भेष बनाय चलत है यह नहिं सहज सुहेला ॥
या बानेको नेम यही है पगधरि फिरि न उठावै ।
जो कछुहोय सो आगेहि आगे आगेहीं को धावै ॥
रणमें पैठि झड़ाझड़ खेलै सम्मुख शस्तर खावै ।
खेत न छोड़ै ह्वाई जूझै तबहीं शोभा पावै ॥
गुरु शुकदेव दियोहै हेला ऐसा होय सो आवै ।
चरणदास बाना संतन का तौले शीश चढ़ावै ॥

साधौ टेक हमारी ऐसी ।

कोटि जतन करि छूटै नाहीं कोउ करौ अब कैसी ॥
यह पग धरो संभाल अचल हो बोल चुके सोइ बोली ।
गुरु मारगमें लेन न दीन्हो अब इत उत नहिं डोली ॥
जैसे शूर सती अरु दाता पकरी टेक न टारैं ।
तन करि धनकरि मुख नहिं मोड़ैं धर्म्मन अपनो हारैं ॥
पावक जारो जल में बोरो टूक टूक करिडारो ।
साध संगति हरि भगतिन छाँडूं जीवन प्राण हमारो ॥
पैज न हारूं दाग न लागे नेक न उतरै लाजा ।
चरणदास शुकदेव दयासूं सबविधि सुधरे काजा ॥

राग सारंग ॥

हमारे राम नामकी टेक टारी ना टरै ।

लाखकरो कोइ कोटि करोजी काहूतैं कुछ ना सरै ॥
ज्यों कामीकूं तिरिया प्यारी ज्यों लोभी को दाम ।
अलमदार कूं अमल पियारो ऐसे हमकूं राम ॥
दुष्ट छुटावे गहि गहिके पकरों हारिलकी लकड़ी भई ।

अब कैसे करि छूटै मोसों रोम रोम तन मन मई ॥
ज्यों प्रहलाद पैज दृढ़ कीन्ही हरणाकुश से बहुअरे ।
उबरोसंत असुर गहिमारो परगटहो हरि आखरे ॥
गुरु शुकदेव सहाय करि है अब पग पाछे क्यों परे ।
चरणहिदास वचन नहिं मोड़ूँ शूरसती मूये टरैं ॥

साधो टेकगई जाको सबगयो ।
लाजगई अरु काजगये सब वचन धर्म कछु ना रह्यो ॥
जगमें हांस फांस हियमाहीं कायरपन यों दहिगयो ।
अब पछिताये होत कहा है वह पानपतेरो बहिगयो ॥
पैज तजी मुखकारो हूवो धिक धिक जीवन तासको ।
बोझगयो ओछेकी संगति यह प्रताप कुबासको ॥
चरणदास शुकदेव कहै यों टेक न देवो शिर देवो ।
बार बार नर देहन पइये अपयश जगमें क्यों लेवो ॥

राग सोरठ ॥

साधो भेष वही जामें टेक है ।
टेक नहीं तौ कहा भरोसो टेक विना नरतेकहै ॥
टेक विना कैसी सतवंती टेक विना नहिं सूरमा ।
टेक विना दाता भी नाहीं टेक विना योगी बूबना ॥
टेक विना नहिं भक्ता हरिको टेक विना नहिं सिद्धिहै ।
टेक विना सब भर्मंत डोलैं टेक विना नहिं ऋद्धिहै ॥
साधु संत अरु वेद कहत हैं टेक पकरि चढु धाम कूं ।
चरणदास शुकदेव बतावैं टेक मिलावै राम कूं ॥

साधौ जो पकरी सो पकरी ।
अब तौ टेक गही सुमिरण की ज्यों हारिल की लकरी ॥
ज्यों शूरा ने शस्तर लीन्हो ज्यों बनिये ने तखरी ।

ज्यों सतवंती लियो सिंधौरा तार गह्यो ज्यों मकरी ॥
ज्यों कामी कूं तिरिया प्यारी ज्यों किरपिणकूं दमरी ।
ऐसे हमकूं राम पियारे ज्यों बालककूं भमरी ॥
ज्यों दीपककूं तेल पियारो ज्यों पावककूं समरी ।
ज्यों मछलीकूं नीर पियारो बिछुरे देखै यमरी ॥
साधो के संग हरिगुण गाऊं ताते जीवन हमरी ।
चरणदास शुकदेव दृढ़ायो और छुटी सब गमरी ॥

अरे ले गुरुके बचन चितधररे ।
छिन छिन तेरी आय घटत है बेगि सँभारो घररे ॥
शील क्षमायत दृढ़करि राखो गरब गुमान निवारो ।
पांचोइन्द्री वशकरि अपने मन गनीम को मारो ॥
काया कोटि बुहारि युक्तिसूं सतसिंहासन धरिये ।
तापर बैठि अमर पदवी लै राज अभैपुर करिये ॥
सबपर अमल चलै जब तेरो तो सम और न कोई ।
सेवक साहिब लोहा कञ्चन बूंद समुन्दर होई ॥
विघ्न कलेश आपदा नाशै निर्मल आनँद पावै ।
चरणदास शुकदेव दयासूं रहनि गहनि समुझावै ॥

जब गुरुशब्द नगारे बाजें ।
पांच पचीसों बड़े मवासी सुनिकैं डंका भाजें ॥
दृढ़ दस्तकले ज्ञान सजावल जाय नगर के माहीं ।
हरि के धाम भजन करि मांगै चित्त चौधरी पाहीं ॥
कानोगोय लोभ के खोटे छलबल पाहीं झूठे ।
काम किसानरु मोह मुकद्दम सबै बांधिकरि लूटे ॥
तृष्णा आमिल मदको मातो पकरि गांवसूं काढ़ै ।
मन राजाको निश्चल झण्डा प्रेमप्रीतिहित गाड़ै ॥

सुबुधि दिवान शीलको बकसी यतको हाकिम भारी ।
धर्म्म कर्म्म सन्तोष सिपाही जाके अज्ञाकारी ॥
सांच करिन्दा पटवारी धीरज नेम बिचारै ।
दया क्षमा अरु बड़ी दीनता पूरी जमा सँभारै ॥
मगन होय चौकस कण करिकै सुमति मेवड़ी मांपै ।
दर्शन द्रव्य ध्यानको पूरण बांटापावै आपै ॥
श्रीशुकदेव अमल करिगाढ़ो सूवस देश बसावै ।
चरणदास हूं तिनको नायब तत परवाना पावै ॥

जोनर इकछत भूप कहावै ।

सतसिंहासन ऊपर बैठे यतही चँवर ढुरावै ॥
दया धर्म्म दोउ फौज महालै भक्ति निशान चलावै ।
पुण्य नगारा नौबति बाजै दुर्जन सकल हलावै ॥
पाप जलाय करै चौगाना हिंसा कुबुधि नशावै ।
मोह मुकद्दम काढ़ि मुल्कसों लावै राग बसावै ॥
साधन नायब जित तित भेजै दे दे संयम साथा ।
राम दुहाई सिगरै फेरै कोइ न उठावै माथा ॥
निर्भय राजकरै निश्चल ह्वै गुरु शुकदेव सुनावै ।
चरणदास निश्चयकरि जानौ विरलाजन कोइपावै ॥

राग कल्याण ॥

वह राजा सो यह विधि जानैं । काया नगर जीतिवो ठानै ॥
काम क्रोध दोउ बल के पूरे । मोह लोभ अति सांवत शूरे ॥
बल अपनो अभिमान दिखावै । इनको मारि राहगढ़ धावै ॥
पांचौ थाने देह उठाई । जब गढ़में कूदै मनलाई ॥
ज्ञान खड्ग लै द्वन्द्व मचावै । कपट कुटिलता रहन न पावै ॥
चुनि चुनि दुर्जनहनि सब डारै । रहते सहते सकल विडारै ॥

मन सों ब्रह्म होय गति सोई । लक्षण जीव रहै नहिं कोई ॥
अचल सिंहासन जब तू पावै । मुक्तिखवासी चँवर ढुरावै ॥
आठौसिद्धि जहां कर जोरैं । सौहीं ताके मुख नहिं मोरैं ॥
निश्चल राज अमल करै पूरा । बाजै नौबत अनहद तूरा ॥
तीन तीन अरु कोटि अठासी । वै सब तेरी करैं खवासी ॥
गुरु शुकदेव भेद दियो नीको । चरणदास मस्तक कियो टीको ॥
रणजीता यह रहनी पावै । थोथी करनी कथनि वहावै ॥

अथ योग का अंग ॥

राग करखा ॥

साधौ गुरु दया योग इह विधि कमायो ।

मूलको शोधि संकोच करि शङ्खिनी खैंचि आपान उलटो चलायो ॥ बन्ध पर बन्ध जब बन्ध तीनों लगैं पवन भइ थकित नभ गर्ज्जि आयो । द्वादशा पलटि करि सुरति दो दल धरी दशौ परकार अनहद बजायो ॥ रोंक जब नवन को द्वार दशवें चढ़ो शून्य के तख़्त आनँद बढ़ायो । सहस दल कमल को रूप अद्भुत महा अमीरस उमँग आ झरि लगायो ॥ तेज अतिपुञ्ज परलोक जहँ जगमगे कोटि छवि भानु परकाश लायो । उनमनी और चित हेत करि बसिरहो देखि निज रूप मनुवां मिलायो ॥ काल अरु ज्वाल जग व्याधि सब मिटि गई जीवसों ब्रह्मगति वेगि पायो । चरणदास रणजीत शुक-देव की दयासों अभयपद परशि अविगत समायो ॥ साधो पिण्ड ब्रह्माण्ड की शैल गुरु गमकरी परसिया युक्तिसों अल-खराई । सहजही सहज पग धरा जब अगम को दशौपरकार झागड़ बजाई ॥ खोलि कापाट अरु वज्रद्वारे चढ़ो कलाके

भेद कुंजी लगाई । पहल के महलपर जाय आसनकिया दूसरे महलकी खबरि पाई ॥ तीसरे महलपर सुरति जा बसिरही महल चौथे दुही अमीगाई । पांचवें महल को साधु कोइ पाइहै महल छठवां दिया गुरु बताई ॥ सातवें महलपर कोटि सूरज दिये आठवें महल अविगति गोसाईं । रूप अद्भुत तहां देखि अचरज जहां देखिया दरश सब बिपति जाई ॥ शुकदेवकी सहासों धारण गहासो आपने पीवके भवन आई । चरणदास आपा दिया प्रेम प्याला पिया शीश सदके किया पूजि पाई ॥

साधो परसिया देश जहँ भेश नाहीं ।

घाट तिसलखि जहां बाट सूझै नहीं सुरतिके चांदने सन्त जाई ॥ चन्द षोड़शदिपै गंग उलटीबहैं सुषमना सेज पर लम्ब दमकै । तासुके ऊपरै अमी का ताल है झिलमिली ज्योति परकाश झमकै ॥ चारि योजन परे शून्य अस्थान है तेज अति पुंज परलोक राजै । द्वार पश्चिम धँसे मेरही दण्डहो उलटिकर आय छाजै विराजै ॥ नूर जगमग करै खेल अगाध है वेदकत्तेब नहिं पार पावैं । गुरुमुखी जायहैं अमरपद पाय हैं शीश का लोभतजि पन्थधावैं ॥ तीनसुन्न छेदि रण-जीत चौथे बसै जन्म अरु मरण फिरि नाहिं होई । चरणदास करि बास शुकदेव बकसीस सों पूज बेगमपुरी अमरसोई ॥

राग सोरठ ॥

ऐसा देश दिवानारे लोगो जाय सो माताहोय ।
विन मदिरा मतवारे झूमैं जन्म मरण दुख खोय ॥
कोटि चन्द सूरज उजियारो रविशशि पहुंचत नाहीं ।
विना सीप मोती अनमोलक बहुदामिनि दमकाहीं ॥

बिन ऋतु फूले फूल रहत हैं अमृत फल रस पागो।
पवन गवन बिन पवन बहतहै बिन बादर झरिलागो ॥
अनहद शब्द भँवर गुंजारैं शंख पखावज बाजैं।
ताल घंट मुरली घनघोरा भेरि दमामें गाजैं ॥
सिद्धगर्जना अतिही भारी घुंघुरू गति झनकारैं।
रम्भा नृत्यकरैं बिन पगसों बिन पायल ठनकारैं ॥
गुरु शुकदेवकरैं जब किरपा ऐसो नगर दिखावैं।
चरणदास वा पग के परसे आवागमन नशावैं ॥

राग सारंग व विलावल व सोरठ ॥

साधो अजब नगर अधिकाई।
औघट घाट वाट जहाँ बांकी उस मारग हम जाई ॥
श्रवण बिना बहु वाणी सुनिये बिन जिह्वा स्वर गावैं।
बिना नैन जहां अचरज दीखै विना अंग लपटावैं ॥
विना नासिका बास पुष्पकी विना पावँ गिरि चढ़िया।
विना हाथ जहँ मिलो धायकै बिन पाधा जहँ पढ़िया ॥
ऐसा घर बड़भागी पाया पहिरि गुरूका बाना।
निश्चल ह्वैकै आशा मारी मिटिगा आवनजाना ॥
गुरू शुकदेव करी जब किरपा अनभय बुद्धि प्रकासी।
चौथे पद में आनंद भारी चरणदास जहाँ बासी ॥

राग सोरठ ॥

सो गुरु बिन वह घर कौन दिखावै।
जिहि घर अग्नि जलै जलमाहीं यह अचरज दरशावै ॥
कामधेनु जहाँ ठाढ़ी सोहैं नैन हाथ बिन दुहना।
घाये दूधा थोड़ा देवै भूखे दे पै दूना ॥

पीवैं जन जगदीश पियारे गुरुगम वहुत अघावैं ।
मूरख कायर और अयोगी सोवैं नेक न पावैं ॥
अमृत अँचवै वा पद पहुँचै महातेजको धारै ।
होय अमर निश्चल ह्वै वैठै आवागमन निवारै ॥
भेद छिपावै तौ फल पावै काहू से नहिं कहिये ।
वह अद्भुत है ठौर अनूठी बड़भागन सों लहिये ॥
या साधन के वहु रखवारे ऋषि मुनि देवत योगी ।
करन न देवैं बुधि हरि लेवैं होय न गोरस भोगी ॥
लोभी हलके को नहिं दीजै कहै शुकदेव गुसाईं ।
चरणदास त्यागी वैरागी ताहि देहु गहि बाहीं ॥

सो गुरु गम मगन भया मन मेरा ।
गगन मण्डल में निज घर कीन्हो पंच विषय नहिं घेरा ॥
प्यास क्षुधा निद्रा नहिं व्यापी अमृत अँचवन कीन्हा ।
छूटी आस बास नहिं कोई जग में चित नहिं दीन्हा ॥
दरशी ज्योति परम सुख पायो सवही कर्म जलावै ।
पाप पुण्य दोऊ भै नाहीं जन्म मरण बिसरावै ॥
अनहद आनँद अति उपजावै कहि न सकूं गतिसारी ।
अति ललचावै फिरि नहिं आवै लगी अलख सों यारी ॥
हंस कमलदल सतगुरु राजै रुचि रुचि दरशन पाऊं ।
कहि शुकदेव चरणहींदासा सब बिधि तोहिं बताऊं ॥

राग मलार ॥

चहूंदिशि झिलमिल झलक निहारी ।
आगे पीछे दहिने बायें तल ऊपर उजियारी ॥
दृष्टि पलक त्रिकुटी ह्वै देखै आसन पद्म लगावै ।
संयम साधै दृढ़ आराधै जब ऐसी सिधि पावै ॥

बिन दामन चमकार वहुतही सीप विना लर मोती।
दीपमालिका वहु दरसावैं जगमग जगमग ज्योती ॥
ध्यान फलै तव नभके माहीं पूरण हो गति सारी।
चन्द घने सूरज अणकी ज्यों सू भर भरिया भारी ॥
यहतो ध्यान प्रत्यक्ष बतायो श्रद्धा होय तौ कीजै।
कहि शुकदेव चरणहींदासा सो हमसों सुनि लीजै ॥

राग केदारा ॥

अवधू सहस दल अब देख।
श्वेत रँग जहां पंखरी छवि अग्र डोर विशेख ॥
अमृत वरषा होत अतिझरि तेज पुंज प्रकास।
नाद अनहद बजत अद्भुत महाब्रह्म विलास ॥
घंट किंकिणि मुरलि वाजै शंखध्वनि मनसान।
ताल भेरि मृदंग वाजत सिन्धुगर्जन जान ॥
कालको जहाँ पहुँच नाहीं अमर पदवी पाव।
जीति आठौ सिद्धि ठाढ़ी गगन मध्ये आव ॥
करै गुरु परताप करणी जाय पहुंचै सोय।
चरणदास शुकदेव कृपा जीव ब्रह्मै होय ॥

राग धनाश्री ॥

सो गुरुगम इहि विधि योग कमायो।
आसन अचल मेर कियो सीधो कसि बँध मूल लगायो ॥
संयम साधि कला वश कीन्ही मन पवना घर आयो।
नो दरवाजे पट दै राखे अर्द्धै ऊर्ध्व मिलायो ॥
नाभि तलै पेंड़ो करि पैठे शक्ति पताल गई है।
कांप्यो शेष कमंठ अकुलायो सायर थाह दई है ॥

---

१ आकाश २ कछुवा ॥

उलटि चले मठ फोरि इकीसौ गये अभय पद माहीं ।
अति उजियारो अद्भुत लीला कहन सुनन गम नाहीं ॥
जित भयेलीन सबै सुधि बिसरी छूटी जगत बियाधा ।
चरणदास शुकदेव दयासों लागी शून्य समाधा ॥

सो साधो ऐसी योग युक्ति गति भारी ।
मूलहि बंध लगाय युक्ति सों मूंदि लई नौनारी ॥
आसन पद्म महादृढ़ कीन्हो हिरदय चिबुक[1] लगाई ।
चंद सूर दोउ सम करि राखे निरति सुरति घर आई ॥
ऊपर खैंचि अपान सहज में सहजै प्राण मिलाई ।
पवन फिरी पश्चिम को दौरी मेरुहि[2] मेरु चलाई ॥
ऐसेहि लोक अमर पद पहुँचे सूरज कोटि उज्यारी ।
श्वेत सिंहासन सतगुरु परशे करि दरशन बलिहारी ॥
आपा बिसरि परम सुख पायो उनमनी लागी तारी ।
चरणदास शुकदेव दया सों जन्म मरण छुटि बारी ॥

राग मलार ॥

वा पद रामसों करि नेह ।
विषकी बूंद न पइये जित ह्वां बरषत अमृतमेह ॥
चमकत बिजुली गरजत गगना बाजत अनहद घोर ।
यहमन थकत गलतजित पाँचो मिटिहैं निशि अरुभोर ॥
जाग्रत मिटि है स्वप्नो मिटि है मिटिहु सुषोपत जाय ।
षट ऋतु पइये नाहिंन अवधू एकहि रस दर्शाय ॥
बिनहीं जोते बिनहीं बोये उपजत खेत है धीर ।
लागत अचरज फल महँ मुक्ता बिनहीं सींचे नीर ॥
राजा गुरु शुकदेव न बांटें सबहि करें बकसीस ॥

---

१ दाढ़ी २ मेरुदंडनाड़ी वह है जो पृष्ठभाग से सीधी शिरतक चलीगई है ।

चरणदास रास सब पावैं मिलि है बिस्वेबीस ॥

राग सोरठ ॥

अवघू ऐसी मदिरा पीजे।
बैठि गुफामें यह जग बिसरै चंद सूर सम कीजै ॥
जहाँ कलाल चढ़ाई भाठी ब्रह्म ज्वाल परजारी।
भरि भरि प्याला देत कलाली बाढ़ै भक्ति खुमारी ॥
माता हो करि ज्ञान खड्ग लै काम क्रोध को मारै।
घूमत रहै गहै मन चंचल दुबिधा सकल बिड़ारै ॥
जो चाखै यह प्रेम सुधारस निज पुर पहुँचै सोई।
अमर होय अमरापद पावै आवागमन न होई ॥
गुरु शुकदेव किया मतवारा तीनि लोक तृण बूझा।
चरणदास नहीं रही वासना आनँद आनँद सूझा ॥

राग सारंग ॥

पीवै कोई यह प्याला मतवारा।
सुर नर मुनि जा मदको तरसैं गुरुबिन लहै न बारा ॥
शूद्र के घर भाठी औटै ब्रह्मा अग्नि जलाई।
शिव शोधैं अरु विष्णु चुवावैं पीवैं साधु अघाई ॥
सीता प्याला भरि भरि देवैं हनूमान हंकारैं।
व्यास शेष नारद सनकादिक किरिया नाहिं विचारैं ॥
नवधा नेम औ संयम पूजा बिसरी सब कहा कहिये।
घूमत रहैं महारस चाखे स्वर्गमुक्ति ना चहिये ॥
श्रीशुकदेव सुधारस अमृत नितप्रति अँचवन कीन्हा।
चरणदास पर किरपा करिकै निज प्रसाद करि दीन्हा ॥

साधौ यह प्याला मतवार है ।
अचवैगा कोइ योगयुगन्ता चित आस्थिरमन मारिहै ॥
चन्द सूर दोउ समकरि राखै ब्रह्मज्वाल अन्तर बरै ।
मुद्रा लगै खेचरी जबहीं बङ्क नाल अमृत झरै ॥
भँवर गुफा में भाठी औटै भभक भभक सुषमन चुवै ।
सुगुरा पी पी रहित भये हैं बिन पीये उपजैं मुये ॥
शिव सनकादिक नारद शारद औरपिया नौ नाथहै ।
सिधि चौरासी हरिपदवासी मगन भया सब साथहै ॥
रामानन्द कबीर नामदे अमर हुये जिन जिन पिया ।
गुरुशुकदेव करी जब किरपा चरणदासको सो दिया ॥

राग धनाश्री ॥

जो जन अनहद ध्यान धरै ।
पांचौ निर्बल चञ्चल थाके जीवतही जु मरै ॥
शोधे मूलबन्ध दे राखै आसन सिद्ध करै ।
त्रिकुटी सुरति लाय ठहरावै कुम्भक पवन भरै ॥
घन गरजै अरु बिजुली चमकै कौतुक गगन धरै ।
बहुत भांति जहां बाजन बाजैं सुनि सुनि सन्ध अरै ॥
सहज सहज में हो परकाशा बाधा सकल हरै ।
जग की आस बास सब टूटैं ममता मोह जरै ॥
शून्य शिखर पर आपा बिसरै काल सों नाहिं डरै ।
चरणदास शुकदेव कहत हैं सब गुण ज्ञान गरै ॥

तबते अनहद घोर सुनी ।
इन्द्री थकित गलित मन हूवो आशा सकल भुनी ॥
घूमत नैन शिथिल भइ काया अमल जु सुरति सनी ।
रोम रोम आनन्द उपजि करि आलस सहज बनी ॥

मतवारे ज्यों शब्द समायो अन्तर भीज कनी।
भर्म्म कर्म्म के बन्धन छूटैं दुबिधा बिपति हनी॥
आपा बिसरि जक्त को बिसरो कितरहिं पांच जनी।
लोक भोग सुधि रही न कोई भूलो ज्ञान गुनी॥
हो तहाँ लीन चरणहिंदासा कहैं शुकदेव मुनी।
ऐसो ध्यान भाग्य सों पइये चढ़ि रहै शिखर अनी॥

राग बिलावल॥

घट में खेलि ले मन खेला।

सकल पदारथ घटही माहीं हरिसों होय जुमेला॥
घट में देवल घट में जाती घट में तीरथ सारे।
वेगहि आव उलटि घटमाहीं बीतैं परबीन्हारे॥
घट में मानसरोवर सू भर मोती और मराला।
घट में ऊंचा ध्यान शब्द का सोहं सोहं माला॥
घट में बिन सूरज उजियारा राति दिना नहिं सूझै।
अमृत भोजन भोग लगत है बिरलाजन कोइ बूझै॥
घठ में पापी घट में धर्म्मी घट में तपसी योगी।
गुण अवगुण सब घटही माहीं घटमें वैद्य अरु रोगी॥
रामभक्ति घटही में उपजै घट में प्रेम प्रकासा।
शुकदेव कहैं चौथापद घट में पहुँचे चरणहिंदासा॥

राग बिलास॥

घट में तीरथ क्यों न नहावो।

इतउत डोलो पथिक बनेही भरमि भरमि क्यों जन्म गवांवो॥
गोमती कर्म सुकारथ कीजै अधरम मैल छुटावो।
शील सरोवर हितकरि न्हइये काम अग्निकी तपनि बुझावो॥
रेवा सोई क्षमा को जानौ तामें गोता लीजै।

तन में क्रोध रहन नहिं पावै ऐसी पूजा चित्तदै कीजै ॥
सत यमुना संतोष सरस्वति गंगा धीरज धारो ।
झूठ पटकि निर्लोभ होय करि सबही बोझा शिरसों डारो ॥
दया तीर्थ कर्मनाशा कहिये परसे बदला जावै ।
चरणदास शुकदेव कहत हैं चौरासी में फिरि नहिं आवै ॥

राग बिभास ॥

घट में तीरथ यों तुम न्हावो ।
तिनकेन्हान अमरपद पहुँचौ आदि पुरुष निश्चय करिपावो ॥
काशी सो तत करणी कीजै कलिमल सकल नशावो ।
रहनि गहनि पुष्कर को जानौ यामें मज्जन क्यों न करावो ॥
ध्यान द्वारका दृढ़ करि परसो हितकी छाप लगावो ।
इन्द्रीजित सोइ बदरीनाथा यह गति सतकरि चिन्हमें लावो ॥
भँवर गुफा में है तिर्बेणी सुरति निरति लै धावो ।
योग युक्ति सों डुबकी लेकरि काग पलटि हंसा ह्वै जावो ॥
तन मथुरा अरु मन वृन्दावन तामें रास रचावो ।
हिरदयकमल खिले परकाशादरशन देखि अधिकहुलसावो ॥
गुरु चरणन में सबही तीरथ सिमिटि सिमिटि तहाँ आवो ।
चरणदास शुकदेव कहत हैं अपनो मस्तक भेंट चढ़ावो ॥

राग पर्ज ॥

सुधारस कैसे पइये हो ।
कूप[1] कहां केहि ठौर है कैसे करि लहिये हो ॥
नेजू कित कित गागरि कित भरने वारी हो ।
कैसे खुलै कपाट ही को ताला ताली हो ॥
कौन समै किस गृह बिषे अँचवै किन माहीं हो ।

---

१ कुवाँ

तुम से जानै भेद को अरु बहुतक नाहीं हो ॥
पीकरि किस कारज लगै अरु स्वाद बतावो हो ।
फल याका कहि दीजिये सब खोलि जतावो हो ॥
शुकदेव सो पूछन करैं यह चरणहिंदासा हो ।
किरपा करिकै कीजिये मेरि पूरी आशा हो ॥

गुरू हमारे प्रेम पिआयो हो ।
तादिन ते पलटो भयो कुल गोत नशायो हो ॥
अमल चढ़ो गगनै लगो अनहद मन छायो हो ।
तेज पुंजकी सेज पै प्रीतम गल लायो हो ॥
गये दिवाने देसड़े आनँद दरशायो हो ।
सब किरिया सहजै छुटीं तप नेम भुलायो हो ॥
त्रैगुणते ऊपर रहूं शुकदेव बसायो हो ।
चरणदास दिन रैन नहिं तुरियापद पायो हो ॥

राग जैजैवंती ॥

ऐसी जो युक्ति जानै सोई योगी न्यारा। आसन जो सिद्धि करै त्रिकुटी में ध्यान धरै बिना तेल दिया बरै ज्योति हूँ उज्यारा ॥ संयम सँभाल साधै मूल द्वार बन्ध बांधै शंखनी उलटि साधै कामदेव जारा । प्राण वायु हिये माहीं खैंचिकै अपान लाहीं दोऊ नीके मिलि जाहीं ऐसा खेल धारा ॥ कुँभक अथक राखै अनहद ओर ताकै सुषमन पैठि नाकै आगे जो विचारा । खोलि कै कपाट सिरा कोऊ चढ़ शूरवीरा कामधेनु जावै तीरा अमी को उतारा ॥ उनमनी जाय लागै निज गृह माहीं जागै जन्म मरण भागै छूटै जग भारा । गुरुशुकदेव कहै करणी यही विधि लहै चरणदास होय रहै आप को सँभारा ॥

राग सोरठ व सारंग ॥

पांचन मोहि लियो बलिमा ।

नासा त्वचा और श्रवणीया नैनन अरु रसना ॥
एक एक ने बारी बांधी गहि गहि लै लै जाहिं ।
निशिदिन उनहीं के रस पागो घरमें ठहरत नाहिं ॥
अलि पतंग गज मीन मृगा ज्यों होय रह्यो पराधीन ।
अपनो आप सँभारत नाहीं विषय वासना लीन ॥
हौं कुलवन्ती टोना सीखो अनहद सुरति धरूं ।
गगन मँडल में उलटा कूवां तासों नीर भरूं ॥
भँवर गुफा में दीपक बारौं मन्तर एक पढ़ूं ।
काम क्रोध मद लोभ मोहकर लालन चित्त हढूँ ॥
यतन यतन करि पीव छुटाऊं फिर नहिं जाननदूं ।
चरणदास शुकदेव बतावैं निज मनहीं करलूं ॥

राग सोरठ ॥

तू सदा सोहागिनि नारी है ।

पियके संग मिली मद पीवै ताते लागत प्यारी है ॥
भँवरगुफा में भँवनबनावो बिन घृत ज्योती-जारी है ।
सुषमन सेज महा सुखदायी भोगत भोग दुलारी है ॥
वशकियो कंथा चलै न पंथा टोनाडारो भारी है ।
आठ पहर तुम्हरे रँग राचो हमको मिल न वारी है ॥
पति मनमानी सो पटरानी सोई रूप उजारी है ।
हम चारौ जो सौति तुम्हारी तुम गुण आगे हारी है ॥
चरणहिंदास भई त्वहिं सेवैं लगीरहै नितलारी है ।
शुकदेवा शिर छत्र हमारो सो वशभयो तुम्हारी है ॥

राग बिलावल ॥

करणी की गति और है कथनी की औरै ।
बिन करणी कथनी कथैं बकवादी बौरै ॥
करणी बिन कथनाइसी ज्यों शशिबिन रजनी ।
बिन शस्तर ज्यों शूरिमा भूषण बिन सजनी ॥
ज्यों पण्डित कथि कथि भले वैराग सुनावैं ।
आप कुटुम्ब के फँद पड़े नाहीं सुरझावैं ॥
बांझ झुलावैं पालना बालक नहीं माहीं ।
वस्तु विहीना जानिये जहाँ करणी नाहीं ॥
बहुंडिंभी करणी विना कथि कथि करि मूये ।
सन्तो कथि करणी करी हरिकी सम हूये ॥
कहैं गुरू शुकदेवजी चरणदास विचारौ ।
करणी रहनीं दृढ़ गहौ थोथीं कथनी डारौ ॥

हेली ॥

पांचसखी ले लार हेली काया महल पगधारिये ।
योगयुक्ति डाला करौरी अरी हेली प्रान अपान कहार ॥
कुंज कुंज सब देखियेरी अरी हेली नानाबाग बहार ।
मानसरोवर न्हाइये सदा वसन्त निहार ॥
विनासीप मोतीबनेरी अरीहेली बिनागूंद फूलनहार ।
बिन दामिनि चमकारहे बिन सूरज उजियार ॥
अनहद उत बाजे बजैंरी अचरज बहुतक ख्याल ।
तेजपुंज की सेजपै कागा होहिं मराल ॥
श्रीशुकदेव कृपा करैं जब पावै यह भेद ।
चरणदास पियासों मिलै छुटैं जगत के खेद ॥

योग युक्ति करि लेहि हेली जो चाहे हरिसों मिलो ।
आसन संयम साधि कैरी गगनमंडल करि गेह ॥
उलटी दृष्टि चढ़ाइयेरी होय सूरज परकाश ।
करम भरम सबही जरैं सहजछुटै जग आश ॥ १ ॥
प्राण अपान मिलायकैरी मूलबन्धको बांधि ।
रसना उलटि लगाइये सुरति उर्ध्व को साधि ॥ २ ॥
बङ्क सुधारस पीजिये अनहदहो गलतान ।
भँवर गुफा दृढ़ बैठिके शून्य शिखर को ध्यान ॥ ३ ॥
सुषमन मारग ह्वै चलौरी जब पहुँचो निजधाम ।
अचल सिंहासन श्वेत है जहां विराजैं राम ॥ ४ ॥
यह साधन शुकदेव कीरी जो कोई जानैं साध ।
चरणदास अविगति लहै देखै खेल अगाध ॥ ५ ॥

अथ वैराग का अंग ॥

राग मंगल ॥

चला चली जगठाट अचल हरिनाम है ।
माल मुल्क चलि जाय जाय रज धाम है ॥
तेल फुलेल लगाय बहुत सुन्दर गए ।
नानाकरते भोग सोभी नर ना रहे ॥
तेज तमक और रूप जाय योवन घना ।
सकल बराती जायँ जायँ दुलहिनि बना ॥
रोगी रोग अरु वैद्यजाय औषधि भले ।
ज्योतिषपुस्तक तूट बिनस रज हो मिले ॥
ज्ञानी पण्डित पीर अधिक बेवश गले ।

गौस कुतुब अब्दाल पैगम्बर सब चले ॥
एकके पीछे एक बहीर लगी चली।
नरपति सुरपति जाहिं अन्त वाही गली ॥
ऋषिमुनि देवन सिद्ध योगेश्वर जाहिंगे ।
जिन वश कीन्हीं मौत सोभी न रहाँहिंगे ॥
पांच तत्त्व गुणतीनि नहीं ठहराहिंगे ।
स्वर्ग मृत्यु पाताल सभी रलि जाहिंगे ॥
धरती अम्बर जाय जाय शशि भान है ।
चरणदास शुकदेव दया लियो जान है ॥
रहै रामका नाम जपै सोभी रहै ।
वेद पुराणन माहिं सभी योंहीं कहै ॥
जन्म मरण नहिं होय न योनी आवई ।
सतसिंहासन बैठि अमरपुर पावई ॥
यम जालिमके दण्ड भर्म छुटिजाहिंगे ।
लखचौरासी बन्ध सबी कटिजाहिंगे ॥
नवग्रह लगे न देह गेह आनँद रहै ।
डाकिनि सर्पिनि सिंह भूत नाहीं दहै ॥
साधुसंग गुरुसेव आय घटमें वसै ।
कलह कल्पना जाय द्वन्द्व संकट नसै ॥
तिलक दिये लिलाट जु कण्ठी सोहनी ।
चौबिस लक्षण धारि सहज जीतै मनी ॥
ऊंची पदवी होय जगत सब पगलगै ।
दुष्ट जलैं मनमाहिं दूरिही सों तकैं ॥
पाप भगैं मुखदेखि दरश कोई करै ।

भक्ति परापत ताहिसु चरणनों आपरै ॥
कहैं गुरू शुकदेव चरणहीं दाससों ।
सब मन्तर शिरमौर सुमिर हरिनाम को ॥

राग काफी ॥

क्या दिखलावे शान यह कुछ थिर न रहैगा ।
दारा सुत अरु माल मुल्कका कहा करै अभिमान॥
रावण कुम्भकरण हिरणाकुश राजा कर्ण सँभार ।
अर्जुन नकुल भीमसे योधा माटी हुय निदान ॥
क्षणक्षण तेरो तन छीजत है सुनु मूरुख अज्ञान ।
फिरि पछिताये कहा होयगा जब यम घेरैं आन ॥
विनशैं जल थल रवि शशि तारे सकल सृष्टिकीहानि ।
अजहूँ चेत हेतकरु हरिसों ताहीकी पहिंचानि ॥
नवधाभक्ति साधुकी संगति प्रेम सहित कर ध्यान ।
चरणदास शुकदेव सुमिरले जो चाहौ कल्यान ॥
राम नाम चितलाव अरु सब शोक निवारो ।
सकल बिकल सब मनके टारो निश्चय करि ह्यांआव ॥
तीरथ वर्त सभी फल देवैं राम नाम तुलनाहिं ।
पार लगावन मुक्ति करावन समझि देखु मनमाहिं ॥
पढ़ौ पढ़ावौ भेद न पावौ कछू न लागै हाथ ।
अर्थ विचारौ तौ तुम जानौ कै सन्तनको साथ ॥
उमिरि गवाँवै तुच्छ स्वादन मेंकरिपाँचन सों भोग ।
अन्तकाल दुख होहिं घनेरे तन मन लिपटैं रोग ॥
लोक परलोक महासुख पावै जो सुमिरै हरिनाम ।
चरणदास शुकदेव कहतहैं होवैं पूरणकाम ॥

राग मालश्री ॥

थिर नहीं रहना है आखीर मौतनिदान ।

देखत देखत बहुतक बिनशे आवत तुम्हरी बार ।
यतन करौ कोइ नाना विधि के बचै नहीं नरनार ॥
वे योगेश्वर वशकरि मौतै जड़िदये वज्र किवाँड़ ।
ह्वै बैठे ज्यों मरना नाहीं माटी ह्वै गये हाड़ ॥
कित गये रावण कुंभकरणसे हरणाकुश शिशुपाल ।
शंकर दियो अमर वर जिनको सोभी खाये काल ॥
यह तन बर्तन कांचकोरे ठनक लगे खिलिजाय ।
आज मरै क कोटि वर्षलौं अन्त नहीं ठहराय ॥
बीतत अवधि चलावा आवै छोड़ि जगतकी आस ।
गुरु शुकदेव बतावै तोको समुझु चरणहींदास ॥

क्षणभंगी छलरूप यह तन ऐसारे ।

जाको मौत लगी बहु विधि सों नाना अंग ले बान ।
विष अरु शस्त्र रोग बहुतकहैं और बिघन बहुहान ॥
निश्चय बिनशै बचै न क्योंहीं यत्न किये बहुदान ।
ग्रह नक्षत्र अरु देव मनावैं साधैं प्राण अपान ॥
अचरज जीवन मरबो सांचो यह औसर फिरि नाहिं ।
पिछिले दिन ठगियन सँग खोये रहे सुयोंहीं जाहिं ॥
जो पलहै सो हरिको सुमिरो साध सँगत गुरुसेव ।
चरणदास शुकदेव बतावैं परम पुरातन भेव ॥

वादिन की सुधि राख सोई दिन आवै है ॥

जब यमदूत बुलावन आवैं चल चल चलकहैं भारी ।
एकघरी कोइ रखि न सकैगो प्यारेहूते प्यारी ॥
बिछुरैं मात पिता सुत बंधव बिछुरैं कामिनि कंत ।

जो विछुरैं सो वहुरि न मिलि हैं जो युगजाहिं अनंत ॥
राम सँघाती नेक न बिछुरैं ताहि सँभारत नाहीं ।
अपनी काया सोऊ न अपनी समझि देखु मनमाहीं ॥
चरणदास शुकदेव चितावैं छाँड़ो जग उरभेरा ।
अमर नगर पहिचान सिदौसी जितकर निश्चल डेरा ॥
जानै कोइ संत सुजान यह जग स्वपना है ॥
स्वप्न कुंटुबी आपा मानै स्वपना वैरागी लै ।
स्वपनै लेना स्वपनै देना स्वपनै निर्भयभै ॥
स्वप्नै राजा राज करतहै स्वप्नै योगी योग ।
स्वप्नै दुखिया दुख बहुपावै स्वप्नै भोगी भोग ॥
स्वप्नै शूरा रणमें जूझै स्वप्नै दाता दान ।
स्वप्नै पियसँग पायकजरिया स्वप्न मान अपमान ॥
स्वप्नै ज्ञानी गुरुगम जागै अपना रूप निहारि ।
अज्ञानी सोवत स्वप्ने में डसे अविद्या नारि ॥
चरणदास शुकदेव चितावै स्वप्ना सो सब झूंठ ।
अचरज समझ अगाध पुरानी मौन गहौ गहि मूठ ॥

राग ललित ॥

चेत सबेरे चलना बाट । यह सब जानौ झूंठा ठाट ॥
जग सरायमें कहा भुलानो । भठियारी के मोह लुभानो ॥
तुझको तौ बहु कोसन जानो । करि हिसाब बनियें की हाट ॥
कुँटुव मित्र कोइ हितू न तेरा । अपने स्वारथ ही को घेरा ॥
ह्यां नहि तेरा निश्चल डेरा । उठिये हूजे वेगि उचाट ॥
चलने की तदबीर न कीन्हीं । खोटी राह थाह नहिं चीन्हीं ॥
मंजिलौं की खरची नहिं लीन्हीं । गाफिल सोवै अजहूँ खाट ॥

मग माहीं ठग बाग लगाये । बहुत मुसाफिर जित परचाये ॥
अरु उनको बिष लड्डू खवाये । मारि लिये स्वादन के घाट ॥
सावधान कोइ हाथ न आये । बचकर चले सो निरभय धाये ॥
उनके छलके पेच न खाये । नेक न लागी तिनको आंट ॥
मन चंचलका घोड़ा कीजे । ध्यान लगाम ताहि मुखदीजे ॥
ह्वै असवार ताहि गहि लीजे । भवसागर का चौड़ा फांट ॥
चरणदास शुकदेव चितावै । अपना जानि तोहिं समझावै ॥
तेरे भले कि बात बतावै । बारबार कहुं तोको डांट ॥

राग आसावरी ॥

गुरु मुख यह जग झूठ लखाया ।
साधसंत अरु वेद कहतहैं और पुराणन गाया ॥
मृगतृष्णा के नीर लोभाना सीपी रूपा जाना ।
फटिक शिलापर पीक परी है मूरुख लाल लोभाना ॥
स्वप्ने में सब ठाट ठटो है कुल नाते परिवारा ।
दृष्टि खुली जब सबही नाशे रहो नहीं आकारा ॥
ताते चेत भजन कर हरिको ह्यां मत मनको पागो ।
वा घरगये बहुरि नहिं आवै आवागमन न लागो ॥
या स्वप्नेमें लाभ यही है चरणदास सुखभाखो ।
योगेश्वर जापद मिलिरहिया तुरियाहित चितराखो ॥

राग बरवा ॥

या तनको कहगर्व करतहै ओला ज्यों गलजावैरे ।
जैसे बर्तन बनो काँचको ठबकलगे बिगसावैरे ॥
झूठ कपट अरु छल बल करिकै खोटे कर्म कमावैरे ।
बाजीगरके बांदर कीज्यों नाचत नाहिं लजावैरे ॥

जबलौं तेरी देह पराक्रम तबलौं सबन सोहावैरे ।
माय कहै मेरा पूत सपूता नारी हुक्म चलावैरे ॥
पल पल पल पल पलटै काया छण क्षण माहिं घटावैरे ।
बालक तरुण होय फिरि बूढ़ा बृद्ध अवस्था आवैरे ॥
तेल फुलेल सुगन्ध उबटनो अम्बर अतर लगावैरे ।
नाना विधिसों पिण्ड सँवारै जरिबरि धूरि समावैरे ॥
वैद हकीम करे बहु औषध पंडित जाप सुनावैरे ।
कोटि यत्न सों बचै न क्योंहीं देवी देव मनावैरे ॥
जिनको तू अपनेकरि जानें दुख में पास न आवैरे ।
कोई झिड़के कोइ अनखावै कोई नाक चढ़ावैरे ॥
यह गति देखि कुटुँब अपने की इन में मत उरझावैरे ।
जबहीं यमसों पाला परिहै कोई नाहिं छुटावैरे ॥
औसर खोवै परके काजे अपनो मूल गवाँवैरे ।
बिन हरिनाम नहीं छुटकारो वेद पुराण बतावैरे ॥
चेतन रूप बसै घट अन्तर भर्मभूल बिसरावैरे ।
जो टुक ढूंढ़ खोज करि देखै आपेही में पावैरे ॥
जो चाहै चौरासी छूटै आवागमन नशावैरे ।
चरणदास शुकदेव कहतहैं सतसंगति मनलावैरे ॥

राग बरवा ॥

तनका तनक भरोसा नाहीं काहे करत गुमानारे ।
ठोकर लगे नेकहू चलते करिहैं प्राण पयानारे ॥
ऐंठ अकड़ सब छांड़ बावरे तेज तमक इतरानारे ।
रंचक जीवन जगत अचम्भा क्षणमाहीं मरजानारे ॥
मैं मैं मैं मैं क्यों करताहै माया माहिं लुभानारे ।

बहु परिवार देखिकै फूली मूरुख मूढ़ अयानारे ॥
टेढ़ो चलै मरोरत मुच्छैं विषयबास लपटानारे ।
आपनको ऊंचो करिजानै मातो मद अभिमानारे ॥
पीर फकीर औलिया योगी रहैं न राजा रानारे ।
धरणि अकाश सूरशशि नाशैं तेरा क्या उनमानारे ॥
ठाढ़े घातकरैं शिरपै यम ताने तीर कमानारे ।
पलक पैंड़पै तकि तकिमारैं काल अचानक बानारे ॥
श्वासनिकसि फटि आंखिजाहिं जब कायाजरै निदानारे ।
तोको बांधि नरक लै जैहैं करिहैं अगिनि तपानारे ॥
अजहूं चेत सीखिले गुरुकी करिले ठौर ठिकानारे ।
अमर नगर पहिंचान सिदौसी तब नहिं आवन जानारे ॥
हरिकी भक्ति साधुकी संगति यह मत वेद पुरानारे ।
चरणदास शुकदेव कहतहैं परम पुरातन ज्ञानारे ॥

राग सोरठ ॥

यह तन बालू का सा डेरा ।
जैसे दामिनि दमक चमकको क्षणनहिं रहत उजेरा ॥
मैड़ी मण्डप मुल्क खजानो अरु परिवार घनेरा ।
सो सब कौतुक सों दीखतहै राम सँभार सबेरा ॥
गज घोड़ा अरु चाकर चेरा आखिर कोई न तेरा ।
जिनके कारण भर्मत डोलै करता मेरा मेरा ॥
थोड़े से जीवनके काजे बहुतक करत बखेरा ।
कालबलीकी खबरि नहीं है करहि अचानक घेरा ॥
कहैं शुकदेव समझ नर भोंदू छांड़ि विषय उरझेरा ।
चरणदास हरिनाम भजन बिन कैसे होय निबेरा ॥

दम का नहीं भरोसारे करिले चलनेका सामान ।
तन पिंजरेसों निकसि जायगो पलमें पक्षी प्रान ॥
चलतै फिरतै सोवत जागत करत खान अरु पान ।
क्षण च्त्रण क्षण क्षण आयु घटतिहै होत देहकी हान ॥
माल मुलुक अरु सुख सम्पतिमें क्यों हूवां गलतान ।
देखत देखत बिनशि जायगो मति करु मान गुमान ॥
कोई रहन न पावै जगमें यह तू निश्चय जान ।
अजहूं समुझि छांड़ कुटिलाई मूरुख नर अज्ञान ॥
टेरि चितावैं ज्ञान बतावैं गीता वेद पुरान ।
चरणदास शुकदेव कहतहैं रामनाम उरआन ॥

राग काफी ॥

वह बोलता कितगया काया नगरि तजिकै ।
दशदरवाजे ज्योके त्योंही कौनराह गयो भजिकै ॥
सूनादेश गाँव भया सूना सूने घरके बासी ।
रूपरंग कछु औरै हूवा देहीभई उदासी ॥
साजन थे सो दुर्जन हूये तनको बांधि निकारा ।
चितासँवारि लिटाकरि तामें ऊपर धरा अँगारा ॥
ढहगया महल चहलथी जामें मिलिगया माटी माहीं ।
पुत्र कलत्र भाइ अरु बांधव सबही ठोंक जलाई ॥
देखतहीका नाता जगमें मुये संग नहिं कोई ।
चरणदास शुकदेव कहत हैं हरि बिन मुक्ति न होई ॥
समझौरे भाई लोगो समझौरे हम कहत पुकारे ।
अरे ह्यां नहि रहना करना अन्त पयाना ॥
मोह कुटुंबके औसर खोयो हरिकी सुधि बिसराई ।

दिन धंधे में रैनि नींद में ऐसे आयु गवाँई ॥
आठ पहरकी साठौ घरियां सो तौ बिरथा खोई ।
क्षणइक हरिको नाम न लीन्हो कुशल कहांते होई ॥
बालक था जब खेलत डोला तरुण भया मदमाता ।
वृद्धभये चिन्ता अति उपजी दुखमें कछु न सुहाता ॥
भूलो कहा चेत नर मूरुख काल खड़ो शर सांधे ।
बिषको तीर खैंचिके मारै आय अचानक बांधे ॥
झूठे जगसे नेह छोड़करि सांचो नाम उचारो ।
चरणदास शुकदेव कहत हैं अपना भलो बिचारो ॥

राग झँझौटी ॥

समझै नहिं मायाका मतवार ।
भूलिरहो धन धाम कुटुँबमें हरिगुरु दियो बिसार ॥
पाप दुकान लीपि औगुणसों पूंजी रची बिकार ।
कामके दाम क्रोध थैली धरि बैठा हाट पसार ॥
छल कांटे बिच कपट रुपइया निरख तौल निर्धार ।
कर्म ढेर कौड़िनको करिकै गिनि गिनि धरत सुधार ॥
कह लाया कह लै निकसैगा अपने जीव बिचार ।
कोइ दम अचरज देखि तमाशा क्षणइक राम सँभार ॥
नरदेही है लाल अमोलक ताकी लखी न सार ।
अन्त समय ज्यों हारो ज्वाँरी दोऊ कर चाले झार ॥
यह जग स्वप्ना जान बावरे आखिर यमसों रार ।
भुगतै कष्ट महादुख पावै सो जीवन धिरकार ॥
आवत काल अचानक तोपै कहैं शुकदेव पुकार ।
चरणदास अब राम सुमिरि ले नातर होहै ख्वार ॥

राग नट व विलावल ॥

अरे नर अपनो लाभ विचार ।

श्वास खजानो घटत सदाही ताको बेगि सँभार ॥
जोरि जाय सो बहुरि न आवै खरचैं लाख हजार ।
ऐसो रतन अमोलक हीरा तू कर सों मतिडार ॥
सतसंगति में हितचित राखो दुष्टन संग निवार ।
मायाजाल अरु प्रीति कुटुँबकी ताको मन सों बिसार ॥
काम क्रोध अरु मोह लोभसे परबल बड़े बिकार ।
ज्ञान अग्नि अन्तरपर जारो तासे इनको जार॥
विषय वासना इन्द्रिन के सुख बूड़िरह्यो संसार ।
चरणदास को नाव चढ़ाकै शुकदेव लियो उबार ॥

राग केदारा ॥

रे नर क्यों गवाँवै जनम ।

आयु तेरी वीती जाय नाहिं जानै मरम ॥
जनमपा हरिभजन करिले देहको यही धरम ।
लोक अरु परलोक सुधरै रहै तेरी शरम ॥
भक्तिसम कछु नाहिं दीखै योग यज्ञ तप करम ।
आन धर्म बिचार त्यागो मेट थोथे भरम ॥
चरणदास सतसंग मिलिकै आव हरिकी शरण ।
राम सुखदाई सुमिरि ले वही तारण तरण ॥

राग सोरठ ॥

अरे नर अफल जन्म मत खोरे ।
ज्यों तेलीको बैल फिरत है निशिदिन कोल्हू धोरे ॥
भक्ति बिहीने खर ह्वै आये ढोवत बोझा रोरे ।

सांझभये वाको वाको पति घूरे ऊपर छोरे ॥
भर्मत भर्मत मनुष भयोहै ऊंचे आय चढ़ोरे ।
लख चौरासी योनि भुगुति करि फिर तामें न परोरे ॥
अवके चूके वहु पछितैहौ मान बचन तू मोरे ।
चरणदास शुकदेव कहतहैं हरिपद सुरति धरोरे ॥

राग विलावल ॥

अरे नर जन्म पदारथ खोयारे ।
बीती अवधि काल जव आया शीश पकरिकै रोयारे ॥
अव क्या होय कहा बनिआवे माहिं अविद्या सोयारे ।
साधु संग गुरुसेव न चीन्ही तत्त्व ज्ञान नहिं जोयारे ॥
आगे से हरि भक्ति न कीन्ही रसना राम न पोयारे ।
चौरासी यम दंड न छूटै आवागमन का दोयारे ॥
जो कछु किया सोई अव पावो वही लुनौ जो बोयारे ।
साहव सांचा न्याव चुकावो ज्यों का त्योंहीं होयारे ॥
कहूं पुकारे सव सुनि लीजो चेतिजाव नर लोयारे ।
कहै शुकदेव चरणहींदासा यह मैदान यह गोयारे ॥

राग सारंग व राग नट व राग धनाश्री ॥

नट ज्यों नाचिगये कितने ।
दाता शूर सती सिधि साधक राव रंक जितने ॥
रावण कुम्भकरण से योधा वहुतक कौन गिनै ।
वहुतक इकछत राज करत थे पूजत लोग जिनै ॥
बहुतक भोगी नानाविधिसों करते भोग बिलास ।
वहुतक तपसी वनके वासी तन पर उपजी घास ॥
बहुतक ऋषि मुनि दुर्बासासे देते अडिग शराप ।

वहुतक ज्ञानी हरि ह्वै बैठे कहते आपहि आप ॥
हमहूं याचक नाचन आये यह नहिं अपना देश ।
चरणदास शुकदेव दया सों फिर नहिं काछूं भेश ॥

नट ज्यों नाचहि नाचिगये ।
तिन तिन भेश धरो जगमाहीं सो सो नाहिं रहे ॥
वहुतक स्वांग धरो राजा को वहुतक रङ्क भये ।
वहुतक भूप करणसे हूये कंचन दानदये ॥
वहुतक स्वांग सती के आये ह्वै गये अग्निमये ।
वहुतक चुण्डत मुण्डत योगी गुफा बनाय छये ॥
भीषम अरु द्रोणाचारज से शूरा वहुत ढये ।
रणसों पीठिदई नहिं कबहूं सन्मुख बाणलये ॥
वहुत यती सिधि ह्वै ह्वै बैठे लोगन चरण गहे ।
वहुतक कामी चतुर सयाने काम मुतास वहे ॥
उत्तम मध्यम काछ कछे हैं नाना स्वांग मचे ।
चरणदास शुकदेव दया सों प्रेमी होय नचे ॥

राग सारंग ॥

दुनिया मगन भये धन धाम ।
लालच मोह कुटुँबके पागे बिसरि गये हरिनाम ॥
एक घरी छुटकारो नाहीं बँधिरहे आठौयाम ।
पांच प्रहर धंधेमें माते तीन प्रहर सँग बाम ॥
फूले फिरत महा गर्बाये पवन भरे ये चाम ।
दीप कलश ज्यों बिनशि जायगो या तनको यहि काम ॥
साधु संग गुरुसेव न कीन्ही सुमिरे ना श्रीराम ।
चरणदास शुकदेव कहत हैं कैसे पावों ठाम ॥

राग काफी ॥

कोई दिन जीवै तौ कर गुजरान ।
कहर गरूरी छांड़ दिवाने तजो अकस की बान ॥
चुगुली चोरी अरु निंदालै झूठ कपट अरु कान ।
इनको डारि गहो जत सतको सोई अधिक सयान ॥
हरिहरि सुमिरो क्षण नहिं विसरो गुरु सेवा मन ठानि ।
साधुनकी संगतिकर निश दिन आवै ना कुछहानि ॥
मुड़ौ कुमारग चलौ सुमारग पावै निजपुर वास ।
गुरु शुकदेव चेतावैं तोको समझ चरणहींदास ॥

एते पर क्यों हुआ मगरूर ।
क्षणभंगी यह तन बहुरंगी जरिवरि होइहै धूर ॥
मूछ मरोरि चलै वांकी गति अकड़ि अकड़िरहे घूर ।
छैल चिकनियां माया मद में मातो चकनाचूर ।
काम क्रोध के शस्तर बांधे लोभ रह्यो भरि पूर ॥
गुरु को ज्ञान न मनमें आवै ऐसा है वेसहूर ।
करि अभिमान जगत सच मानै हरिको जानै दूर ॥
चरणदास शुकदेव बतावैं साईं सदा हुजूर ॥

राग बिलावल ॥

राम नाम तैं क्यों बिसराया ।
सीखो कपट झपट छल बल बहु कामरु क्रोध मोह लव लाया ॥
चारि दिनाका जगत अचम्भा झूठे सुख में कहा लोभाया ।
क्षण इक सतसंगति नहिं कीन्ही जन्म अकारथ खोयवहाया ॥
वाद विवाद स्वादको चौकस विषय बास रस में लपटाया ।
दया धर्म हिरदय सों भूला परनिन्दा हिंसाको धाया ॥
चौरासीलख योनि भुगुति करि मनुष स्वरूप भाग्यसों पाया ।

लाहा कछू न किया हासिल योंही उलटा मूल गवांया ॥
श्रीशुकदेव पुकार चितावें समझत ना केतो समझाया ।
चरणदास कलियुगके माहीं हरिगुण गावन सार बताया ॥

नाहीं रे कोइ हरि बिन तेरो ।

यह जग जाल महा दुखदाई तामें है इक रैनि बसेरो ॥
आनि फँसो मायाके फन्दन मोहममत कीन्हो उरझेरो ।
रंचकहू छुटकारो नाहीं बिषय स्वाद पांचौ ने घेरो ॥
साधु सन्त सों नेह न राखै दारा सुत सम्पति को चेरो ।
अन्तकाल बहुतै पछितैहौ जब मारै यम आय थपेरो ॥
धनके कारण घर घर डोलै पर काजे पचि मरत घनेरो ।
जोरत दाम बामवश ह्वैकै काम क्रोध सों हित बहुतेरो ॥
जो चाहै तू भलो आपनो तौ ह्यां से करु बेगि निबेरो ।
चरणदास शुकदेव कहत हैं छांड़ि देहि सब विषय बखेरो ॥

राग धनाश्री ॥

अपना हरि बिन और न कोई ।

मात पिता सुत बन्धु कुटुंब सब स्वारथ ही के होई ॥
या कायाको भोग बहुतदे मर्दन करि करि धोई ।
सोभी छूटत नेक नेकसी संगन चाली वोई ॥
घरकी नारि बहुतही प्यारी तिनमें नाहीं दोई ।
जीवत कहती साथ चलूंगी डरपन लागी सोई ॥
जो कहिये यह द्रव्य आपनो जिन उज्ज्वल मति खोई ।
आवत कष्ट रखत रखवारी चलत प्राण ले जोई ॥
इस जगमें कोइ हितू न दीखै मैं समझाऊं तोई ।
चरणदास शुकदेव कहैं यों सुनिलीजौ नर लोई ॥

राग कान्हरा ॥

हरि बिन कौन तुम्हारो मीता ।
कुटुँब सँघाती स्वारथ लागे तेरी काहूको नहिं चीता ॥
तैं प्रभु ओरी सों मुख मोड़ा झूंठे लोगन सों हितकीता ।
अरु तैं अपनी आंखों देखा कई बार दुख सुख हो बीता ॥
सम्पतिमें सबही घिरि आवें बिपतिपरे अधिकी दुखदीता ।
मूठी बांधि जनम नर लायो हाथ पसारि चलैगो रीता ॥
धरि धरि स्वांग फिरैतिनकारण कपि ज्यों नाचत ताताथीता ।
मुये न संगी होहिं तिहारे बाँधि जलावैं देह पलीता ॥
गुरुसेवा सतसंग न कीन्हीं कनक कामिनी सों करि प्रीता ।
चरणदास शुकदेव कहत हैं मरत मरत हरिनाम न लीता ॥

राग रामकली ॥

धनि धनि वे नर हरि शरणाये ।
और पशुन सों सबही नीचे परमारथ के काम न आये ॥
अचरज मनुषा देही दुर्लभ बड़भाग्यन सों पाई ।
तीनोंपन में नाहिं सँभारी झूंठे धंधे योंहिं गँवाई ॥
बालापन खेलन में खोया तरुण भया सँगनारी ।
बूढ़ाभये कुटुंब के संशय पावतहै अतिही दुखभारी ॥
जिन कारण तैं पाप कमाये सो नहिं चलि हैं लारी ।
तेरेही शिर आनिपरैगी जैहो अकेले नरक मँझारी ॥
गर्भ माहिं तैं वचन किये थे करिहौं भक्ति तुम्हारी ।
ह्यां आके कछु औरै कीन्हा प्रभु से झूंठा हुआ अनारी ॥
हो सांचा अजहूं सुमिरणकर होहिं दयाल मुरारी ।
चरणदास शुकदेव कहतहैं आगेहु पतित किये भवपारी ॥

फिर फिर मूरख जन्म गँवायो ।

हरिकी भक्ति साधुकी संगति गुरुकेचरणनमेंनहिंआयो॥
धनके जोरन को दृढ़ कीन्हो महल करन व्रतधारो ।
टेकपकड़ कर नारी सेई शिरपर बोझ लियो अतिभारो॥
है है दुख नानाविधि केरे तन मन रोग बढ़ायो ।
जीवतमरतनहींसुखपैहो आवागमनको बीजजगायो ॥
भर्मि भर्मि चौरासी आयो मनुषा देही पाई ।
यातनकी कछुसार न जानी फिरि आगे चौरासी आई ॥
आंखि उघारि समुझु मनमाहीं हिरदय करौ बिचारा ।
ऐसा जन्म बहुरि कब पैहो बिरथा खोवै जग व्यवहारा ॥
जानौगे जग छांड़ि चलौगे कोइ न संग तुम्हारे ।
चरणदास शुकदेव कहतहैं याद करौगे बचन हमारे ॥

राग बिहाग ॥

रे नर हरि प्रताप ना जाना ।

तुवकारण सबकछुतिन कीन्हा सो करता न पिछाना ॥
जिहिप्रताप तेरिसुन्दरि काया हाथ पाँव मुखनासा ।
नैन दिये जासों सब सूझै होय रहा परकासा ॥
जिहि प्रताप नानाविधि भोजन वस्त्र अभूषण धारे ।
वाकानाहिं निहोरा मानै ताको नाहिं सँभारै ॥
जिहि प्रताप तू भूप भयो है भोग करै मनमानै ।
सुखले वाको भूलि गयो है करि करि बहु अभिमानै ॥
अधिकी प्यार करै मातासों पल पल में सुधि लेवै ।
तूतौ पीठि दियेही नितही सुमिरण सुरति न देवै ॥
कृत्यघनी औ नूणहरामी न्याव इँसाफ न तेरे ।
चरणदास शुकदेव कहत हैं अजहूं चेत सबेरे ॥

राग बिहागरा ॥

अरे नर हरिका हेत न जाना ।
उपजाया सुमिरण के काजे तैं कछु औरे ठाना ॥
गर्भमाहिं जिन रक्षा कीन्ही ह्वां खाने को दीन्हा ।
जठर अग्निसों राखि लियो है अँग सम्पूरण कीन्हा ॥
बाहर आय बहुत सुधिलीन्ही दशन विना पयप्यायो ।
दांत भये भोजन बहु भांती हितसों तोहिं खिलायो ॥
और दिये सुख नानाविधि के समुझि देख मनमाहीं ।
भूलो फिरत महा गर्वायो तू कछु जानत नाहीं ॥
तव कारण सब कछु प्रभु कीन्हो तू कीन्हा निजकाजा ।
जग व्योहार पगोही बोलै तोहिं न आवै लाजा ॥
अजहूं चेत उलट हरिसौंहीं जन्म सुफल करु भाई ।
चरणदास शुकदेव कहैं यों सुमिरण है सुखदाई ॥

राग काफी ॥

गुमराही छांड दिवाने मूरुख बावरे ।
अतिदुर्लभ है नरदेह भया गुरुदेव शरण तू आवरे ॥
जगजीवन है निशिको स्वपनो अपनो ह्यांकौन बतावरे ।
तोहिं पांच पचीसने घेरि लियो लखचौरासी भरमावरे ॥
बीति गई सो बीति गई अजहूँ मनको समझावरे ।
मोहलोभसों भागिकैत्याग विषय कामक्रोधको धोयबहावरे ॥
शुकदेव कहैं सबही तजिकै मनमोहन सों लवलावरे ।
चरणदास पुकारि चिताय दियो मत चूकै ऐसे दाँवरे ॥
चलाआवै चलावै का द्योस कछू करिले भाई ।
ह्यांसे चलनाहोय अचानकही फिरि पाछे रहै अफसोस ॥

पीकै विषय की मदिरा मतवारा होय रहा बेहोस ।
बाटमाहिं तौ शूल बबूलघने अरु जाना है कइ कोस ॥
दमहीं दमहीं दम छीजतहै पलपल घटै तनजोस ।
माया मोह कुटुंबका सुख ऐसे जैसे दीखै मोती ओस ॥
शुकदेव दियो कृपा करिकै रामरसका प्याला नोस ।
चरणदास कहैं यहबात भली सुनिलीजै दोनों गोस ॥

राग सोरठ ॥

कछु मन तुम सुधिराखो वा दिनकी ।
जादिन तेरी देह छुटैगी ठौर बसोगे बनकी ॥
जिनके संग बहुत सुख कीन्हे मुख ढकि होयहैं न्यारे ।
यमको त्रास होय बहुभांती कौन छुटावनहारे ॥
देहरीलौं तेरी नारि चलैगी बड़ी पौंरिलौं माई ।
मरघटलौं सबबीर भतीजे हंस अकेलो जाई ॥
द्रव्य गड़े अरु महल खड़ेही पूरतहैं घरमाहीं ।
जिनके काज पचे दिनराती सो सँग चालत नाहीं ॥
देव पितर तेरे काम न आवैं जिनकी सेवालावैं ।
चरणदास शुकदेव कहत हैं हरि बिन मुक्ति न पावैं ॥

मोको भय अति वाही दिनको ।
जब वह पक्षी माया लोभी त्यागै पिंजरा तनको ॥
सुत दारा के मोह फँसो है लोभ लगो है धनको ।
काम क्रोधको कांपा खायो भयो अधीन सबनको ॥
पांच पहर धन्धे में खोया नाम न लेत भजनको ।
तीनि पहर नारी सँग मातो मानत सुख इन्द्रिनको ॥
आपन को ऊंचो करिजानै करि अभिमान बरनको ।

सतसंगतिके निकट न आवै जोहै ठाट तरनको ॥
यमकिंकर जब आनि गहैंगे तब ना धीर धरनको ।
गुरु शुकदेव सहाय करैंगे आसरो दास चरनको ॥

राग केदारा ॥

सो मेरो कहो मानरे भाई ।
ज्ञान गुरूको राख हिये में बंध कटि जाई ॥
बालपनते खेलि खोयो गई तरुणाई ।
चेत अजहूँ भली बरहै जराहूं आई ॥
जिनके कारण बिमुख हरिते फिरत भटकाई ।
कुटुम्ब सबही सुख के लोभी तेरे दुखदाई ॥
साधु पदवी धारणाधर छांड़ कुटिलाई ।
वासना तजि भोग जगके होय मुकताई ॥
बहुरि योनी नाहिं आवै परमपद पाई ।
चरणदास शुकदेवके घर आनँद अधिकाई ॥

भाईरे अवधि बीतीजात ।
अंजली जल घटत जैसे तारे ज्यों परभात ॥
श्वास पूंजी गांठि तेरे सो घटत दिन रात ।
साधु संगत पैंठ लागी ले लगै सोइ हाथ ॥
बड़ो सौदा हरि सँभारो सुमिरिलीजै प्रात ।
काम क्रोध दलाल ठगिया बणिजमत इनसाथ ॥
लोभ मोह बजाज छलिया लगैहैं तेरि घात ।
शब्द गुरुको राखि हिरदय तौ दगा नहिं खात ॥
आपनी चतुराई बुधि पर मति फिरै इतरात ।
चरणदास शुकदेव चरणन परश तजि कुलजात ॥

राग सोरठ॥

भाईरे स्वपन यह संसार।

देह स्वपना जन्म स्वप्न स्वपन कुल ब्योहार॥
माय स्वप्न बाप स्वप्न स्वपन सुत अरु नारि।
लाज स्वप्न जाति स्वप्न स्वपन अस्तुति गारि॥
योग स्वपना भोग स्वपना कियो वेद निषेद।
स्वप्न सो जो होय मिटि है स्वप्न सुख अरु खेद॥
बन्ध स्वपना मुक्ति स्वपना स्वप्न ज्ञान विचार।
स्वपन है सो बिनशि जैहै रहैगो ततसार॥
चरणदास स्वप्न ब्रह्म सांचो एक रस नित जान।
सत्य स्वप्न झूंठ स्वप्न कहाकरूं निर्बान॥

भाई रे तजौ जग जंजाल।

संग तेरे नाहिं चालै महल बाहन माल॥
मात पितु सुत और नारी बोल मीठे बैन।
डारि फांसी मोहकी तोहिं ठगत हैं दिनरैन॥
छलधतूरो दियो सब मिलि लाज लड्डू माहिं।
जान अपने कह भुलानो चेतता क्यों नाहिं॥
बाज जैसे चिड़ी ऊपर भँवत तोपर काल।
मारते गहि लै चलैंगे यम सरीखे साल॥
सदा सँघाती हरि बिसारो जन्म दीन्हो हार।
चरणदास शुकदेव कहिया समझ मूढ़ गवांर॥

भाई रे समझ जग ब्योहार।

जबताईं तेरे धन पराक्रम करै सबही प्यार॥
अपने सुखको सबहि चाहैं मित्र सुत अरु नारि।
इन्हों तो अपवश कियो है मोह बेड़ी डारि॥

सबन तोकों भय दिखायो लाज लकुटीमार ।
बाजीगर के बांदरा ज्यों फिरत घर घर द्वार ॥
जबै तोको बिपति आवे जरा कोर बिकार ।
तबे तोसूं लाज मानैं करैं ना तेरि सार ॥
इनकि संगति सदा दुख है समझ मूढ़ गवाँर ।
हरि प्रियतम को सुमिरिले कहैं चरणदास पुकार ॥

राग बिहाग ॥

ये सब अप स्वारथ के गरजी ।
जगमें हेत न कीजै काहूसों अपने मनको बरजी ॥
रोपैं फन्द घात बहु डारैं इनते तू डरयेजी ।
हृदय कपट बाहर मिठबोलैं यह छल हैगो कहजी ॥
सोगँद खाय झूंठ बहु बोलैं भवसागर कैसे तरजी ।
दुख सुख दर्द दया नहिं बूझैं इनसे छुटावो हरिजी ॥
वैरी मित्र सबै चुनिदेखे दिलके महरम कहजी ।
इनको दोष कहा कह दीजै यह कलियुगकी झरजी ॥
दुनियाभगल कुटिलबहु खोटी देखिछातीमेरी लरजी ।
चरणदास इनकों तजि दीजै चल बस अपने घरजी ॥

राग आसावरी ॥

साधो राम भजेते सुखिया ।
राजा परजा नेमी दाता सबही देखे दुखिया ॥
जो कोई धनवंत जगतमें राखत लाख हजारा ।
उनको तो संशयहै निशिदिन घटत बढ़त ब्योहारा ॥
जिनके बहुसुत नाती कहिये और कुटुँब परिवारा ।
वें तो जीवन मरणके काजे भरतरहैं दुखभारा ॥
नेमी नेम करत दुख पावै कर अस्नान सबेरा ।

दाताको देवेका दुखहै जब मँगतौं ने घेरा ॥
चारि वरण में कोउ न देखो जाको चिन्ता नाहीं ।
हरि की भक्ति विना सब दुख है समझ देख मनमाहीं ॥
सतसंगति अरु हरि सुमरणकरि शुकदेवा गुरु कहिया ।
चरणदास बिपता सब तजिके आनँद में नित रहिया ॥

राग सारंग ॥

नर रामभजे सुख पाय है ।

दुख भाजैं अरु पातक नाशै जौरा निकट न आयहै ॥
चेत सबेरे कहूं पुकारे नातरु तू पछितायहै ।
जगत ठाट सब झांकी शोभा संग न कोई जायहै ॥
बिन गोपाल तुम्हारो को है हमको देहु बतायहै ।
पकरि बांधि यम मारनलागैं जब को होय सहायहै ॥
देखुबिचारि समुझु मनमाहीं तो बुधि जो अधिकायहै ।
तौ तू आव उलटि हरि सौंहीं चालो जनम सिरायहै ॥
चरणदास शुकदेव कहतहैं अब यह अधिक सयानहै ।
गुरुकी शरण साधुकी संगति प्रभुको कीजै ध्यानहै ॥

राग भैरव ॥

चेतौरे नर करौ विचार । छलरूपी है यह संसार ॥
स्वप्ना मात पिता सुतबंधू । स्वप्ना है सबही सम्बन्धू ॥
देखैकहै सुनैसो स्वपना । या जगमें नाहीं कोइ अपना ॥
स्वप्ना धरती और अकाशा । स्वप्नाचन्द्रसूर्य परकाशा ॥
स्वप्ना जलथलपावक पौन । स्वप्नायोगभोगअरु मौन ॥
स्वप्ना मायाको व्यवहार । स्वप्ना कुलनाता परिवार ॥
स्वप्ना देश नाम अरु भेश । स्वप्ना उत्पति परलय शेश ॥

स्वप्ना राजा रानाराव । स्वप्ने बानिक बन्यो बनाव ॥
स्वप्ने लरै मरै अरु भागै । स्वप्ने सोवै स्वप्नै जागै ॥
स्वप्नाहै यह सबही ठाट । उठी पैंठ जब मुंदिगइ हाट ॥
जो कछुहै सो सबही स्वप्ना । सांचाहरि हरि हरिहरिजपना ॥
क्यों भूला मूरुख मस्तान । अजहूँ समुझि लेहिगुरुज्ञान ॥
गफलत छांड़ि भजौ हरिनाम ।जो चाहै तू निश्चल धाम ॥
ज्योंसोवत स्वप्नोदरशाय । आंखिखुलै जबहीं मिटिजाय ॥
ऐसेही सब स्वपना जान । अचल अखण्ड रहै भगवान ॥
सबठाँ ब्रह्म रह्यो भरिपूर । ना अति निकट नहीं बहुदूर ॥
जो कोइ खोजै सोई पावै । ततदरशी यह भेद बतावै ॥
गुरु शुकदेव पुकारि चितावै । झूंठसांचको न्याव चुकावै ॥
चरणदास सब स्वपना जान । सदा एकरस ब्रह्म पिछान ॥

राग मलार ॥

सतगुरु भवसागर डरभारी ।
काम क्रोध मद लोभ भवँर जित लरजत नाव हमारी ॥
तृष्णा लहर उठत दिन राती लागत अति झकझोरा ।
ममता पवन अधिक डरपावै कांपतहै मनमोरा ॥
और महाडर नानाविधिके क्षण क्षणमें दुख पाऊं ।
अन्तरयामी विनती सुनिये यह मैं अरज सुनाऊं ॥
गुरु शुकदेव सहाय करौ अब धीरज रहा न कोई ।
चरणदास को पार उतारो शरण तुम्हारी सोई ॥

राग विलावल ॥

भक्ति गरीबी लीजिये तजिये अभिमाना ।
दो दिन जगमें जीवना आखीर मरजाना ॥

पाप पुण्य लेखा लिखैं यम बैठे थाना ।
कह हिसाब तुम देहुगे जब जाहि दिवाना ॥
मात पिता कोइ ह्वां नहीं सबही बेगाना ।
द्रव्य जहां पहुँचै नहीं नहिं मीत पिछाना ॥
एकसों एकहि होयगी ह्वां सांच तुलाना ।
काहूकी चालै नहीं छनै दूधरु पाना ॥
साहिबकी करि बन्दगी दे भूखे दाना ।
समझावैं शुकदेवजी चरणदास अयाना ॥

राग काफी ॥

घरी दोमें मेला बिछुरै साधो देखि तमाशा चलना
जे ह्वां आकर हुये इकट्ठे तिनसों बहुरि न मिलना ।
जैसे नाव नदी के ऊपर बाट बटेऊ आवैं ।
मिलि मिलि जुदेहोयँ पलमाहीं आप आपको जावैं ॥
या बारी बिच फूल घनेरे रंग सुगन्ध सुहावैं ।
लागैं खिलैं फेरि कुम्हिलावैं झरैं टूटि विनशावैं ॥
दारा सुत सम्पति को सुख ज्यों मोतीओस बिलावैं ।
ह्यांईं मिलैं और ह्यां नाशैं ताको क्यों पछितावैं ॥
दै कुछ लै कुछ करिले करणी रहनी गहनी भारी ।
हरिसों नेह लगाय आपनो सो तेरो हितकारी ॥
सतसंगति को लाभ बड़ो है साध भक्त समुझावैं ।
चरणदास हो राम सुमिरिले गुरु शुकदेव बतावैं ॥
वह मेला सोइ भलाहै साधो जहँ सन्तों का भेला ।
जिनके रहै सदा हरिचरचा सुमिरैं राम सुहेला ॥
कथा कहैं अरु करैं कीर्त्तन ज्ञान ध्यान समुझावैं ।
सोवत जागत बैठे चलते गोविंदके गुण गावैं ॥

बोलैं अमृतवाणी सबसों कुमति कुबुद्धि छुटावैं ।
हरिकी भक्ति साधुकी संगति यह उपदेश बतावैं ॥
माला तिलक रामको बाना सुन्दर वेष बनावैं ।
घरघर होय आरती मंगल नवधासों चितलावैं ॥
निशिदिन आनँदरूप दिवाली सदा वसन्त सोहायो ।
प्रेम महोत्सव नितही उत्सव सबै ठाट मनभायो ॥
या बिधि सों मन मगनहोय करि भजन करें अतिभारी ।
चरणदास शुकदेव कहत हैं घटमें होय उज्यारी ॥

राग पर्ज ॥

राम धन जो कोइ पावैहो ।
राज बड़ाई इन्द्र पदवी सुरति न लावै हो ॥
आठ सिद्धि नौनिद्धि के लालच नहिं लागै हो ।
तीनिलोक तुच्छ जानिकै तामें नहिं पागैहो ॥
अर्थ धर्म काम मोक्षको करणी नहिं ठानै हो ।
चारि मुक्त बैकुंठ लौं कछु वस्तु न जानैहो ॥
सबसे नीचा ह्वै चलैं मुख झूठ न भाखैहो ।
हिंसा अकस वासना कोइ नेक न राखैहो ॥
साधुनकी करि चाकरी जब वह धन आवैहो ।
चरणदास से रंकको शुकदेव बसावैहो ॥

जिन्हैं हरिभक्ति पियारी हो ।
मात पिता सहजै छुटैं छुटे सुत अरु नारी हो ॥
लोक भोग फीके लगैं सम अस्तुति गारीहो ।
हानि लाभ नहिं चाहिये सब आशा हारीहो ॥
जगसों मुख मोरे रहैं करैं ध्यान मुरारीहो ।
जित मनुवाँ लागोरहै भइ घट उजियारीहो ॥

गुरु शुकदेव बताइया प्रेमी गति भारीहो ।
चरणदास चारो वेदसों औरै कछु न्यारी हो ॥

रेखता राग मलार ॥

तजिकै जगतकी रीतिको करु आपनी तदबीर । इस जग भरोसे ख्वारहो सुन यारमन ॥ यारमन गये शाह अमीर । इकदम करारी है नहीं क्षणक्षण में फेरैंरंग ॥ कबहूं तो हैरां सुखघना सुन यारमन । यारमन चल विचल बेढँग ॥ हशमत व शौकत थिर नहीं मत देखिहो मगरूर । ठहराव ताको है नहीं सुन यारमन ॥ यारमन भग्गल बड़ाईधूर । जाहिं श्वासा सबचले ज्यों आवदर गिरवाल ॥ याद साहबकी करो सुन यारमन । यारमन सुमिर हरि हरि हाल ॥ शुकदेव सतगुरु ने मुझे कायम बतायो राम । चरणहिंदासा चित धरो सुन यारमन ॥ यारमन जपौ आठौ याम ॥

रेखता ॥

दोदिनका जगमें जीवना करताहै क्यों गुमान ।
ऐबेशहूर गौंदी टुक रामको पिछान ॥
दावा खुदीका दूरकर अपने तू दिलसेती ।
चलताहै अकड़ अकड़ जवानीका जोश आन ॥
मुरसदका ज्ञान समझकै हुशियार हो शिताब ।
गफलतको छांड़ि सोहबत साधौंकी खूबजान ॥
दौलतकाजौम ऐसे ज्यों आब का हुबाब ।
जाता रहैगा क्षणमें पछितायगा निदान ॥
दिन रात खोवताहै दुनिया के कारबार ।
इकपलभि याद साईं कि करता नहीं अजान ॥

शुकदेव गुरू ज्ञान चरणदास को कहैं ।
भजु रामनाम सांचा पद मुक्तका निधान ॥

हेला ॥

जगको आवन जानि हेला याको शोक न कीजिये ।
यह संसार असारहैरे अरे हेला हरिसों कर पहिंचान ॥
कुटुंब संगआयो नहीं रे अरे हेला ना कोइ संग न जाय ।
छांईं मिलें छांईं बीछुरैं ताको झुरै बलाय ॥
महल द्रव्य किस कामकेरे अरे हेला चलैं न काहू साथ ।
राम तजे इनसों पगे हारी अपने हाथ ॥
जीवत काया धोवतेरे अरे तेल फुलेल लगाय ।
मजलिस करिकै बैठते मूये काग न खाय ॥
लाभभये हरषै नहीं रे अरे हेला हानि भये दुख नाहिं ।
ज्ञानीजन वहि जानिये सब पुरुषन के माहिं ॥
गुरु शुकदेव चितावईरे अरे हेला चरणदास हिय राखि ।
मनुष जन्म दुर्लभ मिलै वेद कहत हैं साखि ॥
झूंठी जगकी प्रीति है नहीं छांडूं हरिसों मीत हेला ।
रंग कुसुम संसारकोरे अरे हेला प्रभुको रंग मजीठ ॥
धन यौवन थिर ना रहैरे अरे हेला मतकर गर्व गुमान ।
क्षण क्षण औसर जातहै हरिसों कर पहिंचान ॥
अन्तसमय पछितायगोरे हेला जब यम घेरैं आय ।
जिनके सँग तू मिल रहो कोइ न छुटावै जाय ॥
बीति गई सो जानदे रे अरे हेला अजहूं समझ गवाँर ।
शरण गहो सत्संग की गुरुके वचन सँभार ॥
श्रीशुकदेव बताइयारे अरे हेला रामनाम ततसार ।
चरणदास यों कहतहैं लैलै उतरो पार ॥

बोलत टेढ़ी बात हेला माया मदमातो रहै ।
सबहीसों ऐंठो फिरैरे अरे हेला क्षणमें वेग रिसात ॥
व्याज बढ़ा दुगुने करैरे अरे हेला करै चौगुने दाम ।
नानारस के स्वाद ले खाय फुलावै चाम ॥
करसों कबहुं न दानदेरे अरे हेला शीश ननावै साध ।
जिह्वासों हरि ना जपै बहुत करै बकवाद ॥
पगसों तीरथ ना रमैरे अरे हेला सुनै न श्रीभागवत ।
अकड़ अकड़ मनमाहिं यों जानि बड़ो कुलगोत ॥
परछाहीं देखे चलेरे अरे हेला बांकी बांधे पाग ।
सो देही किस कामकी खैहैं श्वान न काग ॥
पुत्र कलत्र हैं घनेरे अरे हेला सुख में करत कलोल ।
हरिभक्तन सों नेह ना कहै क्रोधके बोल ॥
धर्म कर्म कछु ना करै अरे हेला नहिं सतगुरुसों प्रीति ।
हरिचरचा सों जरिमरै यह डूबनकी रीति ॥
जगको सांचो जानिकैरे अरे हेला हरिको दियो बिसार ।
अन्तसमय यम त्रास दै डारै नरक मँझार ॥
श्रीशुकदेव ऐसे कहीरे अरे हेला छांड़ विषय जंजाल ।
चरणदास भजु रामको सोई उतारै पार ॥

हेली ॥

यह अवसर फिरि नाहिं हेली राम भजन करिलीजिये ।
यह तन क्षण क्षण जात है ज्यों तरुवर की छांह ॥
पिछिले दिन सब खोदियेरी अरी हेली कियो न हरिसोंसीर ।
रहे सो ऐसो जानिले ज्यों अंजलि को नीर ॥
बचै सो लाहा लीजियेरी सतसंगति के माहिं ।

हिलमिल हरियश गाइये दृढ़ता जीकी बाहिं ॥
जन्म सफल जब होयगो कुल पारायण होय ।
एकरु सौ पीढ़ी तरैं रसना हरिगुण पोय ॥
यही स्मृति यहि वेद है यहि साधन को भेव ।
चरणदास हिय में धरौ कहिया गुरु शुकदेव ॥
और न मीता कोय हेली समुझि सँभारो रामजी ।
जीवत्त की रक्षा करै मुये मुक्त करैं तोहिं ॥
अरु सब स्वारथके सगेरी अन्त न कोई साथ ।
सुखमें सबही रल मिलै दुखमें सुनै न बात ॥
छल करि मनकी बूझले पाछे डारैं घात ।
तिनको तू अपनो कहै सो दोषी है जात ॥
भेद न अपनो दीजियेरी अरी हेली कोऊ कैसो होय ।
हिरदय की हिरदय रहैं हरिही जानै सोय ॥
कै गुरु अपनो जानिये कै सतसंगत वास ।
गुरु शुकदेव वतावई देख चरणहींदास ॥
यह नहिं अपना देश हेली ह्यां नहिं मनको दीजिये ।
अपने घरको चालियेरी करि योगिनिको वेष ॥
कानन मुद्रा योगकीरी अरीहेली ज्ञान जटा शिरधारि ।
चोला भक्ति सोहावनो धीरज आसन मारि ॥
सेली[1] सतवैराग की अरी हेली शील विभूति रमाय ।
यतकी सींगी कीजिये वारंवार बजाय ॥
कर्म जलाय धूनीं करो झूमौं दशवेंद्वार ।
अमल सुधारस पीजिये वाढ़ै रंग अपार ॥
इसबाने पियको मिलौरी अरी हेली सदासुहागिनिहोय।

---

१ गुदरी ।

गुरु शुकदेव बतावई चरणदास बन सोय ॥

अथ ज्ञान अंग ॥

राग करषा ॥

साधो गुरु दया आपको यों विचारा ।

झूंठ अरु सांचको समुझिकरि मूलसों माया अरु ब्रह्मको किया न्यारा ॥ पांच अरु तीन गुण देहको ठाटहै तासुको लगत है सब विकारा । ब्रह्म अडोल अबोल अतोल है और निर्लिप्त हरि निर्विकारा ॥ जाके रूप नहिं रेख अरु नाम सूरत नहीं सोई निज तत्त्वहै निराकारा । सुरति अरु निरति दोऊ जहां थकिरहैं तहां बिन भान अतिहै उज्यारा ॥ विना गुरुमुखी कोउ पहुँचि ह्वां ना सकै कनक अरु कामिनी घेरि मारा । चलै सोइ सन्त निर्वाण ह्वै शूरमा ज्ञान अरु ध्यानको कर अहारा ॥ आवा अरु गमनकी टूटि फांसी गई पायो गुरु भेद गयो तिमिर सारा । चरणदास शुकदेव मिले भर्म सब दलि मले होय रणजीत अविगति निहारा ॥

साधो ब्रह्म दरियाव नहिं वारपारा ।

आदि अरु मध्यकहुं अन्त सूझै नहीं नेतिही नेति वेदन पुकारा ॥ मूल परकिर्त्तिसी बहुत लहरैं उठैं सकै को पाय गुणहैं अपारा । विरंचि महादेवसे मीन बहुतै जहां होय परगट कभी गोत मारा ॥ तासुमें बुदबुदे अण्ड उपजैं मिटैं गुरु दई दृष्टि जासों निहारा । छका छवि देखिकै अतिथिका भेषकरि जगे जब भाग निरखी बहारा ॥ मरजिया पैठिया थाह पाई नहीं थका ह्वांईरहा फिर न आया । गयाथा लाभको मूल खोया सबै भया आश्चर्य आपन गवाँया ॥ पाल बिन सिन्धु अरु निरा आनन्द है आपही आप

हो निराधारा । चरणदास शुकदेव दोऊ तहां रलमिले तुरतहीं मिटिगया खोज सारा ॥

राग धनाश्री ॥

सहजगति ज्ञान समाधि लगाई ।
रूप नाम जहाँ किरिया छूटी हू मैं रहन न पाई ॥
बिन आसन बिन संयम साधन परमातम सुधि पाई ।
शिव शक्ती मिलि एक भये हैं मन माया न हिराई ॥
मगनरहौं दुख सुख दोउ मेटै चाह अचाह मिटाई ।
जीवन मरण एक सों लागै तबते आप गवाँई ॥
मैं नाहीं नख शिख हरि राजैं आदि अन्त मध्याई ।
शङ्का कर्म कौनको लागै काकी होय मुकताई ॥
सकल आपदा व्याधि टरी सब दुई कहां मो माहीं ।
सब हमहीं रामा नहिं पइये सब रामा हम नाहीं ॥
नित आनन्द काल भय नाहीं गुरु शुकदेव समाधी ।
चरणदास निज रूप समाने यह तौ समझ अगाधी ॥
निरन्तर अटल समाधि लगाई ।
ऐसी लगी टरै नहिं कबहूं करणी आश छुटाई ॥
काको जप तप ध्यान कौन को कौन करै अब पूजा ।
कियो विचार नेक नहिं निकसै हरिबिन और न दूजा ॥
मुद्रा पांच सहजगति साधी आलस आसन सोई ।
सब रस ब्रह्म मूल जब शोधा आप विसर्जन होई ॥
भूलो बन्ध मुक्तिगति साधन ज्ञान विवेक भुलाना ।
आतम अरु परमातम भूला मन भयो तत गलताना ॥
अंचल समाधि अन्त नहिं ताको गुरु शुकदेव बताई ।
चरणदास को खोज न पइये सागर लहर समाई ॥

राग सोरठ ॥

हो अवगति जो जानै सोइ जानै।
सब की दृष्टि परे अविनाशी कोइ कोइ जन पहिंचाने ॥
रेख जहां नहि खिंचि सकै रे ठहरै ना ह्वां राई।
चीत चितेरा ना सकैरे पुस्तक लिखा न जाई ॥
श्वेत श्याम नहिं राता पीरा हरी भांति नहिं होई।
अति असूंघ अदृष्ट अकथ है कहि सुनि सकै न कोई ॥
सर्वस में अरु सब देशन में सर्व अंग सब माहीं।
कटै जलै भीजै नहिं छीजै हलै चलै वह नाहीं ॥
नहिं गाढ़ा नहिं झीना कहिये नहिं सूक्षम नहिं भारी।
बाला तरुणा बूढ़ा नाहीं ना वह पुरुष न नारी ॥
नहीं दूर नहिं निकट हमारे नहीं प्रकट नहिं गूझै।
ज्ञान आँख की पलक उघारौ जब देखोरे सूझै ॥
वासों उतपति परलय होई वह दोऊते न्यारा।
चरणदास शुकदेव दया सों सोई तत्त्व निहारा ॥

राग मलार ॥

साधौ समुझौ अलख अरूपा।
गुप्त सों गुप्त प्रकटसों परगट ऐसो है निजरूपा ॥
भीजै नहीं नीरसों वह तत ताहि शस्त्र नहिं काटै।
छोटा मोटा होय न कबहूं नहीं घटै नहिं बाढ़ै ॥
पवन कभी नहिं सोखै ताको पावक तेज न जारै।
शीत उष्ण दुख सुख नहिं पहुँचै ना वह मरै न मारै ॥
इकरस चेतन अचरज दरशै जासम तुल नहिं कोई।
ता पटतर कोइ दृष्टि न आवै वही वही पुनि वोई ॥

भीतर बाहर पूरि रह्यो है अण्ड पिण्ड सों न्यारा ।
शुकदेवा गुरु भेद बतायो चरणहिंदासा वारा ॥

राग पर्ज ॥

गुरू हमारे अलख लखाया हो ।
देखतही ऐसे गये जल नोन घुलाया हो ॥
नखशिख ढूंढूं आपको कहिं आप न पाया हो ।
रामहिं रामा ह्वै रहा हम मूल गवाँया हो ॥
बरत करूँ हम होय तौ सब नेम भुलाया हो ।
फल चाहनवारो गयो हरि हेरि हिराया हो ॥
ज्ञाता मिटि ज्ञानू मिटै अरु ज्ञेय मिटाया हो ।
शोच समझ सबहीगई चरणदास नशाया हो ॥

राग धनाश्री व बिलावल व सोरठ ॥

साधो भाई यह जग यों सत नाहीं ।
मीन पहार समुद बिच मिरगा खेत अकाशे माहीं ॥
जलकी पोट कोट धूवांको अखिल ब्रह्मको तीरं ।
बांझको पूत सींग शश्शा को मृगतृष्णा को नीरं ॥
स्वप्नको भूप द्रव्य स्वप्नेको अरु जंगलको द्वारं ।
गणिका शील नाच भूतनको नारिसों व्याहत नारं ॥
मावश कोशशि रैनि को सूरज दूध नरन की छाती ।
यह सब कहनि कहावनि देखी चींटी ले भागी हाथी ॥
ऐसहि झूंठ जगत सच नाहीं भेद विचारो पायो ।
चरणदास शुकदेव दया सों सांचहि सांच मिलायो ॥

राग रामकली ॥

सतगुरु अक्षर मोहिं पढ़ायो ।
लेखन लिखा न स्याही सेती ना वह कागज़ मध्य चढ़ायो ॥
ना लगमात न माथे बिन्दी अरुण पीत नहिं काला ।
ऍंड़ा बेंड़ा टेढ़ा नाहीं ना वह आल जँजाला ॥
ताको देखि थकी सब करणी सबहीं साधन भागे ।
सिद्धैं भईं भोरके तारे मुक्ति न दीखै आगे ॥
जाके पढ़े पढ़न सब छूटै आशा पोथी फारी ।
मैंतो भया करम का हीना कहै सरस्वति ठाढ़ी ॥
गुरु शुकदेव पढ़ायो अक्षर अगम देश चटशाला ।
चरणदास जब पण्डित हूये धारि तिलक अरु माला ॥

वह अक्षर कोइ विरला पावै ।
जा अक्षर के लाग न बिन्दी सतगुरु सैनहिं सैन बतावै ॥
क्षरही नाद वेद अरु पण्डित क्षरज्ञानी अज्ञानी ।
बांचन अक्षर क्षरही जानौ क्षरही चारौं बानी ॥
ब्रह्मा शेष महेश्वर क्षरही क्षरही त्रैगुण माया ।
क्षरही सहित लिये अवतारा क्षर ह्वांतक जहाँ माया ॥
पांचौ मुद्रा योग युक्ति क्षर क्षरही लगै समाधा ।
आठौ सिद्धि मुक्तिफल क्षरही क्षरही तन मन साधा ॥
रवि शशि तारामण्डल क्षरही क्षरही धरणि अकासा ।
क्षरही नीर पवन अरु पावक नरक स्वर्ग क्षर वासा ॥
क्षरही उतपति परलय क्षरही क्षरही जाननहारा ।
चरणदास शुकदेव बतावैं निरअक्षर है सबसों न्यारा ॥

राग भैरव ॥

हरिको सकल निरन्तर पाया ।
माटी भाँड़े खाँड़ खिलौने ज्यों तरवरमें छाया ॥
ज्यों कंचन में भूषण राजै सूरत दर्पण मांहीं ।
पुतली खम्भ खम्भमें पुतली दुतिया तो कछु नाहीं ॥
ज्यों लोहे में जौहर परगट सूतहि तानैबानै ।
ऐसे राम सकल घटमाहीं बिन सतगुरु नहिं जानैं ॥
मेहँदी में रँग गन्ध फुलन में ऐसे ब्रह्मरु माया ।
जलमें पाला पाले में जल चरणदास दरशाया ॥

राग ईमन ॥

सखीरी हिलमिल रहिया पीव ।
पुष्प मध्य ज्यों गंध विराजे पिंड माहिं यों जीव ॥
जैसे अग्नि काठके अन्तर लाली है मेहँदीव ।
माटी में भाँड़े हैं तैसे दूध मध्य ज्यों घींव ॥
शुकदेवा गुरु तिमिर नशायो ज्ञान दियो कर दीव ।
चरणदास कहैं परगट दरशो अमर अखंडितसीव ॥

राग सारंग ॥

साधो अचरज निर्गुण रामका ।
नामर्य्याद ठिकाना नाहीं नाहीं द्वारा धामका ॥
मात पिता कुल गोत न वाके भेष न पुरुषा वामका ।
रूप न रेख नहीं कछु किरिया लेश नहीं ह्वां नामका ॥
सरवन लोचन रसनहिं नासा त्वचा न चोला चामका ।
आदि न अन्त न अरधै उरधै नहि ठिंगना नहिं लाँबका ॥
देखा सुना कहा नहिं जाई नहिं धौला नहिं श्यामका ।

चरणदास शुकदेव सुझावे नहिं विनशै नहिं यामका ॥

राग सारँग ॥

घट घट में रमता रमिरह्यो ।
चेतन तजै भजै जल पाहन मूरख भ्रममें भ्रमि रह्यो ॥
एक अखण्ड रह्यो सब व्यापक लख चौरासी समरह्यो ।
प्रकट भानु ऐसे हरि दरशैं संपुट में नहिं खमरह्यो ॥
आपाजानि भूल फिर आपन नखशिखसों नहिं हमरह्यो ।
चरणदास शुकदेवहि रलगयो वचन विलासन गमरह्यो ॥

राग मालश्री ॥

तेरी गति अपरम्पार पार कैसे पइयेहो ।
योग युक्ति युगताहारे उनहूँ सुधि नहिं पाई ।
चित बुधिमनकी गमि जहाँ नाहीं सुरतिथकै थकि जाई ॥
नेति नेति कहि निगम पुकारै कहु कोउ कैसे पावै ।
ध्यान न लागै ज्ञान न सूझै अनभयहू फिरि आवै ॥
निर्गुणरूप निरालम्ब आसन केहि विधि लखिहै कोऊ ।
ब्रह्मा शेष महेश्वर थाके सकल शिरोमणि सोऊ ॥
वाणी शब्द रहित तुरियापद गुरु शुकदेव सुनायो ।
चरणहिंदास समझ सब बिसरी खोजत खोज हिरायो ॥
वा बिन और न कोय वही गुलजारी रे ।
जग फुलवारी फूलि रहीं हैं नाना रंग अनंत ।
आदि वृक्ष ताकी सब लीला नितही रहत वसंत ॥
पांच डार पँचरंग हैं रे शाखा बहुत बिचार ।
अद्भुत गति कछु कहत न आवै फूले पुष्प अपार ॥
पात फूल फल सोहने रे ह्वै ह्वै छिपि छिपि जाहिं ।
निश्चल द्रुम इकरस रहैरे उतपति परलय नाहिं ॥

बिन सींचे बिन मूल कोरे अचरज अधिक सुबास ।
जित तित खिलो शुकदेव हैरे नहीं चरणही दास ॥

राग बिहागरा ॥

तेरे बहुत रूप बहु बानी ।
तूही एक अनेक भयो है जिन जानी जिन जानी ॥
रवि शशि विष्णु महेश्वर तूही तूही चतुर बिनानी ।
ऋषिमुनि देवत सिद्ध तुही है तूही है ब्रह्मज्ञानी ॥
तुवबिन दूजो और न पइये गावत वेद पुरानी ।
कोउ कहै मायाहै दूजी तौ वह कितसों आनी ॥
तू आकाश पवन अरु पावक तू धरती तू पानी ।
तीनोगुण तोही सों निकसे तोही माहिं समानी ॥
दश ओतार तूही धर आयो तू इष्टी तू ध्यानी ।
तूही रास तुहि रास खिलइया तू ठाकुर ठकुरानी ॥
तूही गुरु शुकदेव विराजै चरणदास सिख मानी ।
गुप्त प्रकट सब तूही तूहै अद्भुत लीला ठानी ॥

यह सब एक एकही होई ।
जाके ऐसो निश्चय आवै जीवन्मुक्ता सोई ॥
जैसे मनका डोर गुहे है काहू माला पोई ।
एकहि श्वास सकल घट व्यापक भूलो कहै जुदोई ॥
हमहूँ वही वही जग सारा शिव ब्रह्मादिक वोई ।
एकहि ब्रह्म अचल अविनाशी और न दुतिया कोई ॥
जिन समझा तिन आनँद पाया बिनसमझे दियारोई ।
चरणदास नहि हरिही हरि हैं सब मैं मैं मैं खोई ॥

जबते एक एक करि माना ।
कौन कथै को सुननेहारा कोहै किन पहिंचाना ॥

तब को ज्ञानी ज्ञान कहां है ज्ञेय कहां ठहराना ।
ध्यानी ध्येय जहां नहिं पइये तहां न पइये ध्याना ॥
जब कहां बंध मुक्त भुगतइया काको आवन जाना ।
को सेवक अरु कौन सहायक कहां लाभ कित हाना ॥
जब को उपजै कौन मरत है कौन करै पछिताना ।
को है जगत जगत को कर्त्ता त्रैगुण को अस्थाना ॥
तू तू तू अरु मैं मैं नाहीं सबही दे बिसराना ।
चरणदास शुकदेव कहां है जो है सो भगवाना ॥

राग केदार व सोरठ ॥

सो लखि हम निर्गुण झरि पाई ।
जहां न वेद कतेब पहुँचै नहीं ठकुराई ॥
चारवरण आश्रम नहीं कर्म ना काई ।
नरक अरु वैकुंठ नाहीं नहीं तन ताई ॥
प्रेम अरु जहाँ नेम नाहीं लगन ना लाई ।
आठ अँग जहँ योग नाहीं नहीं सिद्धाई ॥
आदि अरु जहाँ अंत नाहीं नहीं मध्याई ।
एक ब्रह्म अखण्ड अविचल माया नाराई ॥
ज्ञान अरु अज्ञान नाहीं नहीं मुकताई ।
चरणदास शुकदेव सम तहाँ दुई जरिजाई ॥

राग सोरठ व नट विलावल ॥

सो नैना मोरे तुरिया ततपद अटके ।
सुरति निरतिकी गम नहिं सजनी जहां मिलनको लटके ॥
भूलो जगत बकत कछु औरै वेद पुराणन ठटके ।

प्रीति रीतिकी सार न जानैं डोलत भटके भटके ॥
किरिया कर्म भर्म उरझेरे ये माया के झटके ।
ज्ञान ध्यान दोउ पहुँचत नाहीं राम रहीमा फटके ॥
जग कुल रीति लोक मर्य्यादा मानत नाहीं हटके ।
चरणदास शुकदेव दयासों त्रैगुण तजिकै सटके ॥

राग सोरठ ॥

है कोइ जानै भेद हमारा ।
सब सबमें हम सबके माहीं में मैं व्यापक मैं न्यारा ॥
हम अडोल हम डोलत निशिदिन हम सूक्षम हम भारा ।
हमहीं निर्गुण हमहीं सर्गुण हमहीं दश अवतारा ॥
हमहा एक बहुतहो खेले हमहीं सकल पसारा ।
हमहीं ज्ञान ध्यान पुनि हमहीं हमहीं धारणहारा ॥
हमहीं आदि अन्त पुनि हमहीं हमहीं रूप अपारा ।
महाराज हम वार पार हैं हमहीं जग उजियारा ॥
हमहीं गुरु शुकदेव विराजैं हमहिं तरैं हम तारा ।
चरणदास घट हमहीं बोलैं समझै समझनहारा ॥

राग काफी ॥

मैं कोइ अजबहूँ मेरा अजब तमाशा जोर ।
मेरेहि पिण्ड खण्ड ब्रह्मण्डा मैं पूरण सब ठौर ॥
मैं ब्रह्मा मैं विष्णु महादेव मैं कमला मैं गौर ।
मैं रवि चन्द्र इन्द्र इन्द्राणी मैं गरजत घनघोर ॥
मैं गुण तीनि पांच तत्त्व मैं हीं मैं दश दिशि चहुँओर ।
मैं निहरूप रूपधरि नाना निशिदिन करत किलोर ॥

मैं गुसा मैं मुक्ता परगट मैंहीं भर्म भकोर ।
चरणदास मोबिन नहिं रंचक दूजा कोई और ॥

राग विहागरा ॥

गुसमतेकी बातरी जानै सोइ जानै ।
पशु ज्ञान अजमत को देखो अनभुस एकै सानै ॥
चलनीकी गति सबकी मति है मनमें अधिक सयानै ।
गहि असार सारको डारै निश्चल बुधि नहिं आनै ॥
हूँ गूंगो जगको नहीं सूझै सैन नहीं कोइ मानै ।
कासों कहौं अरु को सुनै सजनी कहूँ तौ को पहिंचानै ॥
सत्य ब्रह्मको जानत नाहीं मुरुख मुग्ध अयानै ।
चरणदासकह समुझतनहिंभोंदू फिरिफिरि झगरोठानै ॥

सुनिहो मुक्त मुक्त करूं तेरी ।
वेद पुराण जँजीर जरी है सबहीगत मारग मिलि घेरी ॥
तैं तौ मुक्ति बहुतकी कीन्ही जिन पापन उरझेरी ।
बन्धन सकल छुटाय काटूं जो आधीन होय तू मेरी ॥
स्वर्ग्ग पताल ठौर नहिं तोको डोलत पेरी पेरी ।
अचल पुरुषसों जाय मिलाऊं तोहिं जानि साधनकी चेरी ॥
शुकदेव गुरु जब किरपा कीन्ही तू नाहीं कहुँ हेरी ।
चरणहिंदास वासना तजिकै आपहि आप करिहै निवेरी ॥

राग विहागरा व बिलावल ॥

अब हम ज्ञान गुरू से पाया ।
दुबिधा खोय एकता दरशी निश्चल ह्वै घर आया ॥
हिरदा शुद्ध हुआ बुधि निर्मल चाह रही नहिं कोई ।
ना कछु सुनौं न परसूं बूझूं उलटि पलटि सब खोई ॥
समझभई जब आनँद पाये आतम आतम सूझा ।

सूधा भया सकल मन मेरो नेक न कहूं अरूझा ॥
मैं सबहुन में सब मोहूं में सांच यही करि जाना ।
यही वही है वही यही है दूजा भाव मिटाना ॥
शुकदेवा ने सब सुख दीन्हे तिरपत होय अघायो ।
चरणदास निकसा नहिं रंचक परमातम दरशायो ॥

राग विलार विहागरा ॥

गुरु विन कौन डुबोवनहारा ।
ब्रह्म समुद्रमें जो कोइ बूड़ो छुटिगये सकल विकारा ॥
सिंधु अथाह अगाध अचल है जाको वार न पारा ।
वाकी लहरि मिटत वाही में कौन तरैको तारा ॥
त्रैगुणरहत सदाही चेतन ना काहू उनहारा ।
निराकार आकार न कोई निर्मल अति निर्धारा ॥
अकरी अलख अरूप अनादी तिमिर नहीं उजियारा ।
तामें अण्ड दिपत ऐसे करि ज्यों जल मध्ये तारा ॥
काल ज्वाल भै भूती नाहीं तहां नहीं भ्रमभारा ।
चरणदास शुकदेव दयासों बूड़िगयेहीं पारा ॥

राग सोरठ व आसावरी ॥

सतगुरु निजपुर धाम बसाये ।
जितकेगये अमर ह्वै बैठे भवजल बहुरि न आये ॥
योगी योग युक्ति करिहारे ध्यानी ध्यान लगावैं ।
हरिजन गुरुकी दया बिना यों दृष्टि नहीं दरशावैं ॥
पंडित मुंडित चुंडित ढूंढ़ैं पढ़ि सुनि वेद पुरानैं ।
जासों वै सब पायो चाहैं सो वै नेति बखानैं ॥
जंगम यती तपी संन्यासी सबही बहदिशि धावैं ।

सुरति निरतिकी गम जहँ नाहीं वे कहो कैसे पावें ॥
देश अटपटा वेगम नगरी निगुरे राह न पाया ।
चरणदास शुकदेव गुरूने किरपा करि पहुँचाया ॥

राग सोरठ ॥

हमारे गुरु हरि नगर दिखायाहो ।
उलटी वाट घाट जहाँ नाहीं निजपुर वास वसायाहो ॥
चन्द न सूर गगन नहिं तारे राति दिवस नहिं पायाहो ।
नहीं तिमिर जहाँ चांदनि नाहीं नहीं धूप नहिं छायाहो ॥
मनसों अगम सुगम नहिं वुधिसों अनभय अन्त न लायाहो ।
और कहो कैसे करि पावै निगम नेति जेहि गायाहो ॥
है प्रत्यक्ष उदय सूरज ज्यों संपुट नाहिं छिपायाहो ।
विन गुरु गमके अंजन आंजे दृष्टि नहीं दरशाया हो ॥
जनक जहाँ शुकदेव विराजैं चरणदास मिलि धाया हो ।
जगकी व्याधि लगन नहिं पाई किरपा करि पहुंचाया हो ॥

हमारे गुरु मारग वतलाया हो ।
आन देवकी सेवा त्यागी अज अविनाशी ध्याया हो ॥
हरि पूरण परसो निश्चयसों छांड़ो झूठी माया हो ।
इकरस आतम नितही जानौ क्षणभंगी है काया हो ॥
चाहे मुक्तकरै तन किरिया भर्म अधिक भर्माया हो ।
वो करि पेड़ वबूल शूलके आँव कहो किन पाया हो ॥
अपना खोज किया नहिं कवहूं जल पाहन भटकाया हो ।
जैसे फल सेवत सेमर को कीर अधिक पछिताया हो ॥
ज्ञानपदारथ कठिन महानिधि विन भेदी किन पाया हो ।
चरणदास घट सोहं सोहं तामें उलटि समाया हो ॥

राग काफी ॥

इन नैनन निराकार लहा ।
कहन सुननकी कौन पतीजै जान अजान ह्वै सहजरहा ॥
जित देखो तित अलख निरंजन अमर अडोल अबोलमहा ।
ज्योति जगत बिच झिलमिल झलकै अगम अगोचर पूरिरहा ॥
अलख लखा जब बेगमहूवा भर्मकोट जब तुरत ढहा ।
सर्वमयी सब ऊपर राजै शून्य स्वरूपी ठोसठहा ॥
जीवन्मुक्त भया मन मेरा निर्भय निर्गुण ज्ञान महा ।
गुरु शुकदेव करी जब किरपा चरणदास सुख सिन्धु बहा ॥

राग आसावरी ॥

जबसों मन चंचल घर आया ।
निर्मल भया मैलगये सगरे तीरथ ध्यान जु न्हाया ॥
निर्वासी ह्वै आनँद पाये या जगसों मुख मोड़ा ।
पांचो भई सहज वशमेरे जब इनका रस छोड़ा ॥
भय सब छूटे अब को लूटे दूजी आश न कोई ।
सिमिटिसिमिटि रहा अपनेमाहीं सकल विकलनहिं होई ॥
निजमन हूवा मिटिगा दूवा को वैरी को मीता ।
बन्धमुक्तका संशय नाहीं जन्म मरणकी चीता ॥
गुरु शुकदेव भेव मोहिं दीयो जबसों यह गति साधी ।
चरणदाससों ठाकुरहूये छुटिगये वाद विवादी ॥
हम तौ आतम पूजाधारी ।
समझिसमझिकरिनिश्चय कीन्ही और सबनपर भारी ॥
और देवल जहाँ धुँधली पूजा देवत दृष्टि न आवै ।
हमरा देवत परगट दीखै बोलै चालै खावै ॥
जित देखौं तित ठाकुरद्वारे करौं जहां नित सेवा ।

पूजा की विधि नीके जानौं जासों परसन देवा ॥
करि सनमान स्नान कराऊं चन्दन नेह लगाऊं ।
मीठे वचन पुष्प सोइ जानों ह्वै करि दीन चढ़ाऊं ॥
परसन करि करि दरसन पाऊं बार बार बलिजाऊं ।
चरणदास शुकदेव बतावैं आठपहर सुख पाऊं ॥

ये मन आतम पूजा कीजै ।
जितनी पूजा जगके माहीं सबहुन को फल लीज ॥
जो जो देही ठाकुरद्वारे तिनमें आप विराजैं ।
देवल में देवत हैं परगट आछी विधिसों राजैं ॥
त्रैगुण भवन सँभारि पूजिये अनरस होन न पावै ।
जैसेको तैसाही परसौ प्रेम अधिक उपजावै ॥
और देवता दृष्टि न आवै धोखे को शिर नावै ।
आदि सनातनरूप सदाही मूरुख ताहि न ध्यावै ॥
घटघट सूझै कोइ यक बूझै गुरु शुकदेव बतावैं ।
चरणदास यह सेवन कीन्हे जिवन्मुक्त फल पावैं ॥

राग विहागरा

सब जग पांचतत्त्वका उपासी ।
तुरियातीत सबन सों न्यारा अविनाशी निर्वासी ॥
कोई पूजै देवल मूरति सो पृथ्वी तत्त्व जानौं ।
कोई न्हावै पूजै तीरथ सो जलको तत्त्व मानौं ॥
अग्निहोत्र अरु सूरज पूजा सो पावक तत्त्व देखा ।
पवन खैंचि कुंभक को राखैं वायुतत्त्व को लेखा ॥
कोई तत्त्वाकाश को पूजै ताको ब्रह्म बतावै ।
जो सबके देखन में आवै सो क्यों अलख कहावै ॥
परमतत्त्व पांचौ से आगे गुरु शुकदेव बखानै ।

चरणदास निश्चय मन आनौ बिरला जन कोइ जान ॥

राग जयकरी ॥

ब्रह्म अरूप धरे बहुरूप कहो कोउ कैसो स्वरूप कहै ।
सबमें है सबसे है न्यारा कोई भेद अनूपलहै ॥
कहुं कहुं मूरुख गुंगभयो है कहुं कहुं वक्ता वेदपढ़ै ।
कहुं कहुं राव रंक दुख सुख है कहुं कहुं भोगी भोगकरै ॥
कहुं कहुं राधे रूप बनावै कहुं कहुं मोहन रास रचै ।
मुड़ि मुड़ि जावै फेरि मनावै प्यार प्रीतिके चावचहै ॥
कहुंकहुं सूरति मोहनि मूरति कहुं कहुंलालन फंदपरे ।
कहुं कहुं मधुवा कहुं कहुं प्याला कहुंकहुं पीवत प्रेमभरे ॥
कहुं कहुं ज्ञानी नाना बानी कहूं भरम में भूलिरहे ।
शुकदेवा गुरु हो समझावैं चरणहिंदासा चरणगहे ॥

राग मंगलचाखवा विलावल ॥

कर्मकरि निष्कर्म होवै फेरि कर्म न कीजिये ।
भूलि कै कोइ कर्म साधै उलटि कर्म न दीजिये ॥
कर्म त्यागै जगै आतम यह निश्चयकरि जानिये ।
जब निर्भय पद सुलभपावै सांच हियमें आनिये ॥
सांच हियमें राखि अवधू नाम निर्गुण नितजपौ ।
अग्नि इन्द्री कर्म लकड़ी पंच अग्नी अस तपौ ॥
जैसे टूट गहनो खोज मेटै होय सोना अतिसुखी ।
ऐसे योग भक्ति वैरागसेती कर्म काटै गुरुमुखी ॥
जासों मिटै आपा आप सहजै ब्रह्मविद्या ठानिये ।
गुरू शुकदेव युक्ति भाषै चरणदास पिछानिये ॥

राग सोरठ ॥

साधो भर्मो यह संसारा ।

गतमति लोक बड़ाई उरझै कैसे हो छुटकारा ॥
भर्म पड़े नानाविधि सेती तीरथ वर्त्त अचारा ।
देह कर्म अभिमानी भूले छूंछपकरि ततडारा ॥
योगी योगयुक्त करि हारे पण्डित वेदपुराना ।
षट दर्शन पग आप पुजावैं पहिरि पहिरि रँगबाना ॥
जानत नाहिं आप हम को हैं को है वह भगवाना ।
को यह जगत कौनगति लागै समझै ना अज्ञाना ॥
जाकारण तुम इत उत डोलौ ताको पावत नाहीं ।
चरणदास शुकदेव बतायो हरि नारायण माहीं ॥

हेली ॥

यह अचरजकी वात हेली कौन सुनै कासों कहूं ।
दूर हुतो जब चाव थोरी अरी हेली अब नहिं छोड़ै साथ ॥
जहँ देखौं तहाँ साँवरोरी अरी हेली तनमन रहो समाय ।
अंतर्यामी एक है द्वितिया ना ठहराय ॥
मत भटकै भय भर्म में री उलटि आपको देख ।
तोही में हरि बसत हैं गावत वेद विशेख ॥
जब तू मोसी होयगी री अरी हेली तब समझैगी बात ।
गूंगे को स्वप्नो भयों यह सुख कहो न जात ॥
जो चाहै हरिसों मिलोरी अरी गुरु शुकदेव मनाव ।
चरणदास सखी ने कह्यो आप आप में पाव ॥
हरि पाये फल देख हेली पावत ही खोई गई ।
जात अटक कुल खोय गयेरी अरी हेली खोये वरण अरुभेष ॥
जन्म मरण सब खोगयेरी अरी हेली बंधमुक्त गये खोय ।

ज्ञान अज्ञान न पाइये नेम धर्म नहिं होय ॥
लाजगई अरु भय गयेरी अरी हेलो अरु साथहि गई उपाधि ।
आशा अरु करणी गई खोये वाद विवाद ॥
मैं नाहीं हरिही रहेरी तू दौरत हरि ओट ।
पावैंगी जव जानिहै हरि पावनके खोट ॥
गुरु शुकदेव सुनाइयारी अरी हेली चरणदास मन शोच ।
सब वातनसों जायगी रहै न तेरा खोज ॥
वह घर कैसा होय हेली जितके गये न वाहुरे ।
अमरपुरी जासों कहैंरी अरी हेली मुक्तधाम है सोय ॥
विकट घाट वा ठौरकोरी शठ नहिं पावै पंथ ।
गुरुमुख ज्ञानी जाहिंहैं हरिसों सन्मुख संत ॥
त्रैगुण मत पहुँचै नहींरी अरी हेली छहोऋतु ह्वाँ नाहिं ।
रवि शशि दोऊ ह्वाँ नहीं नहीं धूप नहिं छाहिं ॥
अवधि नहीं काया नहींरी अरी हेली कलह कलेश न काल ।
संशय शोक न पाइये नहिं माया को जाल ॥
गुरु शुकदेव दया करैंरी अरी हेली चरणदास लहै देश ।
विन सतगुरु नहिं पावई जो नानाकर भेश ॥

हेला ॥

दृष्टि उठाकर देख हेला ब्रह्म अनादि अरूप है ।
आदि नहीं अन्तो नहींरे हेला आप सनातन एक ॥
नहिं धौला काला नहीं रे हेला हरा पीत नहिं लाल ।
तीनों गुणसे है परे नहीं पुरुष नहिं बाल ॥
शस्तर छेदि सकै न रे अरे हेला पावक सकै न जारि ।
नीर भिजोय सकै नहीं ताहि न ब्यापै बयारि ॥

रेख जहाँ नहिं खिंचि सकैरे अरे हेला राई ना ठहराय।
लेप जहाँ नहिं चढ़िसकै सकै नहिं कोइ पाय॥
नहीं दूर निकटौ नहींरे अरे हेला नहीं प्रगट नहिं गूप।
गुरु कृपा सो पाइये सुन्दर बहुत अनूप॥
है अडोल डोलै नहीं रे अरे हेला है अबोल नहि बोल।
देशकाल सों रहित है और कहा कहुँ खोल॥
जैसा था सोइ आज है रे अरे हेला नया पुराना नाहिं।
जासों यह जग है भरो जग वाही के माहिं॥
शक्ति घनी लीला घनी रे अरे हेला घने नाम बहुरूप।
त्रै देवा से बहुत हैं इन्दर से बहु भूप॥
चन्द्र घने सूरज घनेरे अरे हेला घने पिण्ड ब्रह्मण्ड।
सब कुछ आपहि ह्वै रह्यो निर्मल अचल अखण्ड॥
जनकदियो शुकदेवकोरे अरे हेला उनमोंको कहिदीन।
दरश भयो चरणदास को सदा रहौं लवलीन॥
अचरज अलख अपार हेला वाकी गति नहिं पाइये।
बहु निषेध जोपै करे रे अरे हेला तौ जावैगा हार॥
बानीथकि बुधिहूथकेरे अरे हेला अनभय थकि थकि जाय।
ब्रह्मादिक सनकादिकहू नारद थकि गुण गाय॥
वेद थके अरु व्यासहूरे अरे हेला ज्ञानी थके अरु ज्ञान।
शंकर से योगी थके करि करि निर्मल ध्यान॥
बहुतक कथि कथिही गयेरे अरेहेला नेक न निबटी बूझ।
वाचक ज्ञानी कहत हैं हमने पायो सूझ॥
पांचो इन्द्रियनसों लखैरे अरे हेला ताको सांच न मानि।
जो जो इन सों देखिये तिनकी निश्चय हानि॥
गुरु शुकदेव सुनावई रे अरे हेला समझ चरणहीं दास।

अपने ही परकाश में आप रहा परकास ॥

राग हिंडोलना ॥

झूलत गुरुमुख सन्त अलख हिंडोलने ।
नाभि भृकुटी खंभ रोपे सोहं डोरी लाय ।
सुरति पटरी बैठि सजनी क्षण आवै क्षण जाय ॥
मन मनसा दोउ लगे झूलन धारणालै संग ।
ध्यान झोटे देत सजनी भलो लागो रंग ॥
सखिसहेली सिमिटि आई पींग पींगन नेह ।
बूंद आनँद सब भिगोई सघन बरसै मेह ॥
चार वाणी खड़ी गावैं महारँगीली नार ।
मुक्तिचारौ मालिनी जहाँ गुहि गुहि लावैं हार ॥
त्रिगुण बकुला उड़न लागे देखि बादल लै ।
संग पियके सदा झूलैं ताते लागै न भै ॥
चरणदास को नित झुलावैं ईश झुलैं शुकदेव ।
शिवसनकादिक नारद झूलैं करि करि गुरुकीसेव ॥

अथ सर्वअंग ॥

राग मंगल ॥

मन रोगी भयो पिंग कि कुबुधि विकार सों ।
बाढ़ी व्यथा अपार लोभ के भारसों ॥
कर्म्म भरो मतिहीन छील छलसों छयो ।
पांच पचीसौ घेरि मोह मदने दह्यो ॥
कैसे यह दुखजाय कि पूँछन को चल्यो ।
तब पूरण गुणवन्त वेद सतगुरु मिल्यो ॥
करगहि कियो विचार कह्यो समझायकै ।

रेख जहाँ नहिं खिंचि सकैरे अरे हेला राई ना ठहराय।
लेप जहाँ नहिं चढ़िसकै सकै नहिं कोइ पाय॥
नहीं दूर निकटौ नहींरे अरे हेला नहीं प्रगट नहिं गूप।
गुरु कृपा सो पाइये सुन्दर बहुत अनूप॥
है अडोल डोलै नहीं रे अरे हेला है अबोल नहिं बोल।
देशकाल सों रहित है और कहा कहुँ खोल॥
जैसा था सोइ आज है रे अरे हेला नया पुराना नाहिं।
जासों यह जग है भरो जग वाही के माहिं॥
शक्ति घनी लीला घनी रे अरे हेला घने नाम बहुरूप।
त्रै देवा से बहुत हैं इन्दर से बहु भूप॥
चन्द्र घने सूरज घनेरे अरे हेला घने पिण्ड ब्रह्मण्ड।
सब कुछ आपहि ह्वै रह्यो निर्मल अचल अखण्ड॥
जनकदियो शुकदेवकोरे अरे हेला उनमोको कहिदीन।
दरश भयो चरणदास को सदा रहौं लवलीन॥
अचरज अलख अपार हेला वाकी गति नहिं पाइये।
बहु निषेध जोपै करे रे अरे हेला तौ जावैगा हार॥
बानीथकि बुधिहूथकैरे अरे हेला अनभय थकि थकि जाय।
ब्रह्मादिक सनकादिकहू नारद थकि गुण गाय॥
वेद थके अरु व्यासहूरे अरे हेला ज्ञानी थके अरु ज्ञान।
शंकर से योगी थके करि करि निर्मल ध्यान॥
बहुतक कथि कथिही गयेरे अरेहेला नेक न निबटी बूझ।
वाचक ज्ञानी कहत हैं हमने पायो सूझ॥
पांचौ इन्द्रियनसों लखैरे अरे हेला ताको सांच न मानि।
जो जो इन सों देखिये तिनकी निश्चय हानि॥
गुरु शुकदेव सुनावई रे अरे हेला समझ चरणहीं दास।

अपने ही परकाश में आप रहा परकास ॥

राग हिंडोलना ॥

झूलत गुरुमुख सन्त अलख हिंडोलने ।
नाभि भृकुटी खंभ रोपे सोहं डोरी लाय ।
सुरति पटरी बैठि सजनी क्षण आवै क्षण जाय ॥
मन मनसा दोउ लगे झूलन धारणालै संग ।
ध्यान झोटे देत सजनी भलो लागो रंग ॥
सखिसहेलीं सिमिटि आईं पींग पींगन नेह ।
बूंद आनँद सब भिगोई सघन बरसै मेह ॥
चार वाणी खड़ी गावें महारँगीली नार ।
मुक्तिचारो मालिनी जहाँ गुहि गुहि लावैं हार ॥
त्रिगुण बकुला उड़न लागे देखि बादल लै ।
संग पियके सदा झूलैं ताते लागै न भै ॥
चरणदास को नित झुलावैं ईश झूलैं शुकदेव ।
शिवसनकादिक नारद झूलैं करि करि गुरुकीसेव ॥

अथ सर्वअंग ॥

राग मंगल ॥

मन रोगी भयो पिंग कि कुबुधि विकार सों ।
बाढ़ी व्यथा अपार लोभ के भारसों ॥
कर्म्म भरो मतिहीन छील छलसों छयो ।
पांच पचीसो घेरि मोह मदने दह्यो ॥
कैसे यह दुखजाय कि पूँछन को चल्यो ।
तब पूरण गुणवन्त वेद सतगुरु मिल्यो ॥
करगहि कियो विचार कह्यो समझायकै ।

जो कछु तेरे रोग सो देहुं बतायकै ॥
महापाप की ताप चढ़ी तोहिं धायकै ।
संशयको सनिपात मिल्यो है जायकै ॥
विषय विषय ज्वर रह्यो जु हिये समायकै ।
तृष्णाकी बहु प्यास रही मन भायकै ॥
सतसंगति को पक्ष कबौं नाहीं कियो ।
इन्द्रिन के रस रोग बिगरि सबही गयो ॥
कुसतसंग संग्रहणी जियमाहीं भई ।
ममताको मल बढ़ो भूख ताते गई ॥
काम क्रोधको कुष्ठ सकल तन छायकै ।
शोक शूलको मूल करेजे आयकै ॥
माया पवन झकोरसों सूजन बहुत है ।
त्रैगुणके त्रयदोष बात बहकी कहै ॥
चिन्ताही की चीस उठै दिन रातही ।
अतिनिन्दा से नींद गई ता साथही ॥
शीश गुमान पिराय दरद हिंसा घनो ।
कलह कल्पना भर्मसों रहतो उनमनो ॥
औरौ बड़ी उपाधि बढ़ै तेरी देहमें ।
भीजि रह्यो है शरीर पसेव सनेह में ॥
इन रोगनकी औषध देहुँ सुनायकै ।
भिन्न भिन्न मैं कहौं तोहिं समुझायकै ॥
कर्म्म करेजवा तोड़िकै सत्य गिलोयले ।
जतही की अजवायन आनि मिलोयदे ॥
चित्त चिरायता न्याय पीत पीपर भली ।

नेम नोन सेंधकी नीकी सी डली ॥
हित के बर्तन माहीं तिन्हैं भिजोयके ।
परमप्रेम जल तामें डारि समोयदे ॥
शील शिलापर पीसो छानि उमंगसों ।
पीवतही सब रोग नशैंगे अंगसों ॥
शुद्ध सुदर्शन चूरण हैगो स्वादही ।
ताके पाये जाय जगत की व्याधही ॥
दया क्षमा सन्तोष यही माजून है ।
होय अधिक आनन्द तत्त्व पदको लहे ॥
गुरु शुकदेव बतावैं औषध सार है ।
चरणदास जो खाय कष्ट कोइ ना रहे ॥

राग धनाश्री ॥

मन में दीरघ भये विकारा ।
सतगुरु साहब वैद मिले बिनु कटै न रोग अपारा ॥
त्रैगुण के त्रैदोष पगो है काम क्रोध ज्वर जारा ।
तृष्णा वायु उठी उर अन्तर डोलत द्वारहि द्वारा ॥
विषय वासना पित कफ लागो इन्द्रिन के सुखसारा ।
सत्संगति रस करवा लागे करत न अङ्गीकारा ॥
सत पुरुषन को कहा न मानैं शील क्षमा नहि धारा ।
रसना स्वाद तजो नहिं मूरुख आपन पौ न सँभारा ॥
चरणदास शुकदेव मिले जब औषध ज्ञान विचारा ।
तनमनको सब रोग मिटायो आवागमन निवारा ॥

राग केदारा ॥

भाई रे विषमज्वर जग व्याधि ।
गुरू हमारे दई औषध खाय रहनी साधि ॥

शुद्ध चूरणहै सुदरशन निबल लखि मोहिं दीन ।
खात तन के कष्ट नाशैं रोग मन है क्षीन ॥
ज्ञान योगरु भक्ति त्रिफला धारणा नैपाल ।
रहे सतसंगति भवन में आश लगै न ब्याल ॥
कनककामिनि पथ बतायो भूलि कर न अहार ।
अति अजीरण होत इनते बढ़त बिकट विकार ॥
चरणदास शुकदेव कहिया औषधी निज सोय ।
विषम वेदन होय भारी जाहि चण में खोय ॥

गीत सावन के गावने का ॥

सखी सजनी हे तेरो पिया तेरे पास ।
अरी बौरी इत उत भटकी क्यों फिरैजी ॥
सखी सजनी हे सुरति निरति कर देख ।
अरी बौरी अपने महल रंग मानिये जी ॥
सखी सजनी हे मान अहं सब खोय ।
अरी बौरी यह यौवन थिर ना रहै जी ॥
सखी सजनी हे बालम सन्मुख होय ।
अरी बौरी पिछली अरु सब खोइये जी ॥
सखी सजनी हे पिया मिलन कोरी साज ।
अरीबौरी न्हाय शिंगार बनाइये जी ॥
सखी सजनी हे चितकी चौकी धराय ।
अरी बौरी नायन सुमति बोलाइये जी ॥
सखी सजनी हे मनको कलश बनाव ।
अरी बौरी ज्ञानको नीर भराइयेजी ॥
सखी सजनी हे सच रचा अग्नि जराव ।

अरी बौरी नीर गरम करि न्हाइयेजी ॥
सखी सजनी हे योग उबटनो लगाव ।
अरी बौरी कर्म को मैल उतारियेजी ॥
सखी सजनी हे करणी कंगही बहाव ।
अरी बौरी वेणी मुक्ति गुंधाइये जी ॥
सखी सजनी हे गुरूके चरण चितलाव ।
अरी बौरी सतसंगति पग लागियेजी ॥
सखी सजनी हे लाज सिंदूर निकासि ।
अरी बौरी खोलि शिंगार बनाइयेजी ॥
सखी सजनी हे नवधा भूषण धार ।
अरी बौरी जासों पिया रिझाइयेजी ॥
सखी सजनी हे प्रीति को काजल आंज ।
अरी बौरी प्रेम की मांग सँवारियेजी ॥
सखी सजनी हे बुधि बेसरि सजिलेहि ।
अरी बौरी पान विचारि चबाइयेजी ॥
सखी सजनी हे दया कर मेहँदी लगाव ।
अरी बौरी सांचो रंग न उतरैजी ॥
सखी सजनी हे धीरज चूनरि लाल ।
अरी बौरी नख शिख शील शिंगारियेजी ॥
सखी सजनी हे काम क्रोध तजि लोभ ।
अरी बौरी मोह पीहर सों जिन करौजी ॥
सखी सजनी हे पांच सहेली साथ ।
अरी बौरी इनको संग न लीजियेजी ॥
सखी सजनी हे चालौ पियाकेरे पास ।
अरी बौरी सुषमन बाट सोहावनीजी ॥

सखी सजनी हे गगन मण्डल पगधार ।
अरी बौरी पीय मिलैं दुख सब हरैं जी ॥
सखी सजनी हे निर्गुण सेज बिछाव ।
अरी बौरी हिलि मिलिकै रँगमानिये जी ॥
सखी सजनी हे पावैगी अटल सुहाग ।
अरी बौरी अजर अमर घर निर्मलेजी ॥
सखी सजनी हे गुरु शुकदेव अशीश ।
अरी बौरी चरणदास मनसा फलै जी ॥

भागीसाथन हे इह झूलैरी मतझूल ।

अरी हेली भर्म भूमि या देशकीजी ॥ भागीसाथनहे । बदला मायाकोरी रूप अरी हेली कुमति वूंदजित तित परैं जी ॥ भागीसाथनहे । कर्म वृक्षकीरी बेलि अरी हेली बारी फल लगि विष भरेजी ॥ भागीसाथनहे । दुर्मति हरी हरी दूब अरी हेली छलरूपी फूले फूल हैं जी ॥ भागीसाथनहे । त्रैगुण बोलत मोर अरी हेली दम्भ कपटबकुला फिरैं जी ॥ भागीसाथनहे । पाप पुण्य दोउ खम्भ अरी हेली नाग[1] स्वर्ग झोटा लगैजी ॥ भागी साथनहे । मैं मेरी बँधी डोर अरी हेली तृष्णापटरी जित धरी जी ॥ भागीसाथनहे । झूलत चावहि चाव अरी हेली नर नारी सब झुलइँजो ॥ भागीसाथनहे । तपसी योगी गये झूल अरी हेली फल चाहत अरु कामनाजी ॥ भागीसाथनहे । आशा झुलावत नारि अरी हेली पांच पचीस मिलि गावईं जी ॥ भागी साथनहे । या जगमें ऐसी झूल अरी हेली चरणदास झूलत बचेजी ॥ भागीसाथनहे । इत तजि उतकोरी चाल अरी हेली अमरनगर शुकदेव के जी ॥

---

१ पाताल ॥

राग बरवा ॥

साधौंरीं संगत भवँरा दुर्लभ पइये लीजैजी तन मन भौंराजी । जी मानै साधौंरी संगत भवँरा प्यारीही लागै ॥ आदि अनादी भवँरा कौने लखावै अपने सतगुरुजी संतोष भवँराजी । जी मानै नरक निवारण सतगुरु प्यारोही लागै ॥ आपसकी चर्चा भवँरा कौने सुनावै अपने गुरु भाईजी संतोष भवँराजी । जी मानै गुरुका तो छौना भई या प्यारोही लागै ॥ आछे आछे लक्षण भवँरा कौने जुलावै अपने रहनीजी संतोष भवँराजी । जी मानै कर्म छुटावन रहनो प्यारीही लागै ॥ आछे आछे परचा भवँरा कौने दिखावै अपनी मुक्ति संतोष भवँराजी । जी मानै काया जीतावन करणी प्यारीही जागै ॥ आछी आछी वाणी भवँरा कौने उठावै अपने अनभैजी संतोष भवँराजी । जी मानै बुधिकी तो मांजन अनभै प्यारीहो लागै ॥ चरणदास को तुरिया भवँरा कौने बसावै अपने शुकदेवजी संतोष भवँराजी । जी मानै सिरका तो छत्तर शुकदेव प्यारोहो ॥

राग बिलावल ॥

अजब फकीरी साहबी भागनसों पइये ।
प्रेमलगा जगदीश का कछु और न चहिये ॥
राव रंकको सम गिनै कछु आशा नाहीं ।
आठ पहर सिमटे रहैं अपनेही माहीं ॥
वैर प्रीति उनके नहीं नहिं वाद विवादा ।
रूठे से जगमें रहैं सुनैं सु अनहद नादा ॥
जो बोलै तो हरिकथा नहिं मौनै राखैं ।
मिथ्या करुवा दुर्वचन कबहूं नहिं भाखैं ॥

जीव दया अरु शीलता नखशिख सों धारैं ।
पांचौ चेले वश करैं मन सों नहिं हारैं ॥
दुख सुख दोनों के परे आनँद दरसावै ।
जहां जाय अस्थल करैं माया पवन न जावै ॥
हरिजन हरिके लाड़िले कोइ लहै न भेवा ।
शुकदेव कही चरणदाससों करि तिनकी सेवा ॥

(फुटकर पद)

राग परभाती ॥

और ख्याल सब छाड बावरे गोविंद के गुन गावरे ॥
श्रीहरिकथा सुनी नहिं कबहीं चाले जन्म गुमावरे ।
बिनाभक्ति चौरासी लखमें फिर फिर गोते खावरे ॥
सत्संगत की नाव बैठके उतर चलो दरियावरे ।
पैली पार मिलें हरि प्रीतम ज्ञानकी बल्ली लगावरे ॥
नौधाभक्ती करो कृष्णकी अनहद ताल बजावरे ।
चरणदास शुकदेव कहत हैं जोतिमें जोति मिलावरे ॥

गज़ल ॥

मुझे कृष्ण के मिलने की आरज़ू है ।
शबो रोज दिल में यही जुस्तजू है ॥
नहीं भाती है मुझको बातें किसी की ।
सुनी जब से उस यार की गुफ्तगू है ॥
नहीं मुजको मतलब जहाँ में किसी से ।
चुभा जबसे दिलमें सनम खूबरू है ॥
जो आशक़ है उसका नहीं उस्से ग़ाफ़िल ।
तड़पता अज़ल से खड़ा रूबरू है ॥
शराबे मुहब्बत पिई जिसने, यारो ।

हुआ दो जहाँ में वोही सुर्खरू है ॥
सभी आशकों पे किया कर्म तूने ।
मुआसी पे तेरा नहा दिल रजू है ॥
जहाँ देखे रनजीत वहीं है वो हाज़िर ।
हर एक गुल में उसकी मिली मुश्कबू है ॥

पद ॥

पीले प्यालाहो मतवाला प्याला प्रेम हरी रसकारे ॥
जो दमजीवे हरि गुन गाले धन जोबन सुपना निशिकारे ।
पाप पुन्यको को भोग न आया कोन तेरा और तू किसकारे ।
बालापन खेलनमें खोया तरुण भये त्रियके बसकारे ।
वृद्धभया कफ वायु ने घेरा खाट पड़ा मारे मसकारे ॥
नाभि कमल में है कस्तूरी कैसे भरम मिटे पशुकारे ।
बिन सतगुरु इतना दुखपाया जैसे मृग भटके बनकारे ॥
भवसागर जो उतरा चाहे छाड़ कामिनी का चसकारे ।
चरणदास शुकदेव कहत हैं नखशिख सर्प भरा विषकारे ॥

शब्द ॥

मुरशद मेरा दिल दरियाइ दिलगह अन्दर खोजा ।
जिसके अन्दर सत्तर काबा मक्का तीसों रोज़ा ॥
चौदह तबक़ औलिया तिसमें भेद न होय जुदाई ।
सहस्र कमाल नमाज़ में ठाड़े दरशन जहाँ खुदाई ॥
हवा न हिर्स खुदी नहिं खूबी अनलहक़ जहाँ बानी ।
बिन चराग़ खाने सब रौशन जिसमें तख़्त सुभानी ॥
बिना अबर जहां बहु गुल फूले बिन अम्बर जहां बरसें ।
बिन सरोद तम्बूर बजें जहां चशमे होम न दरसें ॥
तिस दरगाह मसल्ला डारे बैठे क़ादर क़ाज़ी ।

न्याव करैं सीने की पूछें रक्खें सबको राज़ी ॥
जिसके फल दीदार कियेसे नादिर होय फ़कीर ।
मारे काल कलन्दर जबलो मनवा धरे न धीर ॥
ऐसा हो जब कमला होई तब कमाल पद पावे ।
साहब मिल साहब को दरसे ज्यों जलबूँद समावे ॥
ऐसा हो सोइ पीर कहावे मनी मान सब खोवे ।
चरणदास ज़मींपर रोशन पाय पसारे सोवे ॥

शब्द ॥

जीवत मरजाय उलट आपमें समाय मन कहीं को न जाय जिन्ह ऐसी दिलगीरी है । करे बन बाग बास जानत जे भूख प्यास मेटे पर आस उन्हें अतिहि सबूरी है ॥ परम तत्त्व को विचार चिन्ता सब डार हरि रस मतवार पाई ऐसी अमीरी है । कहे चरणदास दोऊ दीन में पुकार यार सबही आसान एक मुशकिल फ़कीरी है ॥

राग बिलावल ॥

ऐसा हो दरवेशही जगको बिसरावै ।
ईमान सबूरी सांच सों सोई बकसा जावे ॥
ज़न ज़र और ज़मीन को दिलमें नहिं लावे ।
फ़िक्र फ़कीरी को बुरा वह ज़िक्र छुटावे ॥
फ़ेफाकेका गुण यही राज़क करै यादा ।
काफि कनाअत सुखघना आनन्द अगाधा ॥
रे रीयाज़त बलवान है हरि को अपनावे ।
आखिर को दीदार ही निश्चय करि पावे ॥
एज़द को धारेरहे रहै सब सों नीचा ।

शुकदेव कही चरणदास सों पावै पद ऊंचा ॥

वह वैरागी जानिये जाके राग न द्वेष ।
निर्बंध ह्वै जग में फिरै चाहै सिद्ध न मोक्ष ॥
पांचन को एकै कर आनँद में रोक ।
त्रैगुण ते ऊपर बसै जहां हर्ष न शोक ॥
मन मूड़ै तन साध कै बाधा सब डार ।
तत्त्व तिलक माथे दिये शोभा अपरम्पार ॥
माला श्वास उसासकी हिरदय अस्थान ।
अलख पुरुषसों नेहरा त्रिकुटी मध्ये ध्यान ॥
काम क्रोध मोह लोभ ना यही नेम अचार ।
शुकदेव कही चरणदास सों करै ब्रह्मविचार ॥

राग सोरठ व बिलावल ॥

जो नर इतके भये न उतके ।
उतको प्रेम भक्ति नहिं उपजी इत नहिं नारी सुतके ॥
घरसों निकसि कहा उन कीन्हो घर घर भिक्षा मांगी ।
बाना सिंह चाल भेंड़नकी साधु भये अकि स्वांगी ॥
तन मूड़ा पै मन नहिं मूड़ा अनहद चित नहिं दीन्हा ।
इन्द्री स्वाद मिले विषयनसों बकबक बकबक कीन्हा ॥
माला करमें सुरति न हरिमें यह सुमिरण कहु कैसा ।
वाहर वेष धारके बैठे अन्तर पैसा पैसा ॥
हिंसा अकस कुबुधि नहि छोड़ी हिरदय सांच न आया ।
चरणदास शुकदेव कहत हैं बाना पहिरि लजाया ॥

राग मंगल ॥

महामूढ़ अज्ञान भक्ति में क्या करा ।
गुरु सों बेमुख होय बड़ापन चितधरा ॥

मुक्त पंथकी ओरहि सूबीको चला ।
तैसे व्रत परिजाय जु नट भूला कला ॥
गिरा धरणि पर आय भया तन चूर है ।
जो कोइ ऐसा होय बड़ाही कूर है ॥
जैसे वृक्ष ते टूटि बिगड़ि फल जात है ।
ऐसे गुरुते छूटि कछू न रहात है ॥
द्रुमहीं सों लगि रहा जु फल नीको भया ।
पका भलीही भांति धनी के कर गया ॥
यही समझ गुरु संग कबौं नहिं त्यागिये ।
मनमें निश्चय लाय शरणहीं लागिये ॥
सब तन अंगन माहिं दीनता छाइये ।
गुरुके चरण निहारिके शीश नवाइये ॥
दोनों करको जोरिकै अस्तुति कीजिये ।
दर्शनकरि सुखपायकै शिक्षा लीजिये ॥
श्रीशुकदेव दयाल ने मोसों यों कही ।
चरणदास शिष जानिकै ऐसा हो सही ॥

राग सोरठ ॥

समझ रस कोइक पावै हो ।
गुरु बिन तपन बुझै नहीं प्यासा नर जावैहो ॥
बहुत मनुष ढूंढ़त फिरैं अँधरे गुरु सेवैहो ।
उनहूं को सूझै नहीं औरन कहँ देवैहो ॥
अँधरेको अधरा मिला नारी को नारीहो ।
ह्वां फल कैसे होयगा समझैं न अनारीहो ॥
गुरू शिष्य दोउ एक से एकै व्यवहाराहो ।
गये भरोसो डूबिकै वे नरक मँझाराहो ॥

शुकदेव कहै चरणदास सों इनका मत क्रूराहो।
ज्ञान मुक्ति जब पाइये मिलै सतगुरु पूराहो॥ ॥

राग जैजैवन्ती ॥

गुरुबिन ज्ञान नाहीं तिमिर नशावै भाई।

भरमत फिरै लोई जल और पाहन सोई बात नहीं बूझै कोई तिनको वहधावै॥ देवी और देव पूजै जहां कछु नाहीं सूझै फेरि फेरि जावै दूजे तहां नहीं पावै। वैदकको भेद ठानै जोतिष बिचारजाने काहूकी नाहि मानै करै मनभावै॥ भूत टोना जादू सेवै प्रभुका न नाम लेवै भक्ति में ना चित्त देवै गुण नहिं गावै। श्रीशुकदेव कहै चरणदास होय रहै सोई मुक्तिधाम लहै आपा जो उठावै॥

राग गौरी ॥

सब जग भर्म भुलाना ऐसे।

ऊंट कि पूंछसों ऊंट बँध्यो ज्यों भेंड़ चालहै जैसे॥
खरका शोक भूंस कूकुरकी देखा देखी चाली।
तैसे कलुआ जाहिर भैरो सेढ़ मशानी काली॥
गाँवभूमि या हितकरि धावैं जाय बटाही दौरे।
सद्दो सरवर इष्ट धरतहैं लोग लुगाई बौरे॥
राखै भाव श्वान गर्दभ को उनको ल्याय जिमावैं।
ढेढ चमारन को शिरनावैं ऊंची जाति कहावैं॥
दूध पूत पाथरसो मांगैं जाके मुख नहि नासा।
लपसी पपड़ी ढेर करतहैं वह नहिं खावै मासा॥
वाके आगे बकरा मारैं ताहि न हत्या जानैं।
लै लोहू माथेसों लावैं ऐसे मूढ़ अयानैं॥

कहैं कि हमरे बालक ज्यावो बड़ी आयुबल दीजै।
उनके आगे बिनती करतें अँसुवन हिरदय भीजै॥
भोपे भरड़े के पग लागैं साधुसन्त की निन्दा।
चेतन को तजि पाहन पूजैं ऐसा यह जग अन्धा॥
सतसंगतिकी ओर न झांकैं भक्ति करत सकुचावैं।
चरणदास शुकदेव कहत हैं क्यों न नरक को जावैं॥

अरे नर क्या भूतन की सेवा।
दृष्टि न आवै मुख नहिं बोलै ना लेवा ना देवा॥
ज्यहि कारण घीज्योति जलावैं बहु पकवान बनावैं।
सो खचैं तू अधिक चावसों वह स्वप्ने नहिं खावैं॥
राति जगावैं भोपा गावैं झूंठे मूड़ हलावैं।
कुटुंब सहित तोहिं पैर परावैं मिथ्या वचन सुनावैं॥
ताहि भरोसे जन्म गवाँवैं जीवत मरत न साथा।
बड़भागन नर देही पाई खोवैं अपने हाथा॥
चारि वरण में मैली बुधिका ऊंचनीच किन होई।
जो कोइ झूंठी आशाराखे अगत जायगा सोई॥
ताते सत विश्वास टेकगहु भक्ति करो हरिकेरी।
चरणदास शुकदेव कहतहैं होय मुक्तिगति तेरी॥

राग बिलावल॥

सब सुखदायकहैं हरी मूरुख नहिं जानै।
मनमें धरि धरि कामना औरनको मानै॥
जो चाहै सन्तान को जप लालविहारी।
सुन्दर बालक होहिंगे घरके उजियारी॥
जो चाहै तू धनघना सेव कृष्ण मुरारी।

साखि सुदामा की सुनौ दइ विभव अपारी ॥
जगत बड़ाई जो चहै सुमिरौ यदुनाथा ।
नीच वहुत ऊंचे भये जगनायो माथा ॥
जो सिधहू वोही चहै करि हरि हिय ध्याना ।
सिद्धि परापत होहिगी चढ़ि है परमाना ॥
चरणदास हूवो चहै भजिले भगवाना ।
कहैं गुरू शुकदेवजी होय मुक्त निदाना ॥

राग विहागरा ॥

साधो निन्दक मित्र हमारा ।
निन्दकको निकटे ही राखौं होन न देऊं न्यारा ॥
पाछे निन्दाकरि अघधोवैं सुनिमन मिटै विकारा ।
जैसे सोना तापि अग्निमें निर्मल करै सोनारा ॥
घन अहरन कसहीरा निबटै कीमत लक्ष हजारा ।
ऐसे यांचत दुष्टसन्तको करन जगत उजियारा ॥
योग यज्ञ जप पाप कटनहित करै सकल संसारा ।
बिन करणी मम कर्म्म कठिन सब मेटै निन्दक प्यारा ॥
सुखीरहो निन्दक जगमाहीं रोग न हो तनसारा ।
हमरी निन्दा करनेवाला उतरै भवनिधि पारा ॥
निन्दक के चरणौं की अस्तुति भाषौं वारंवारा ।
चरणदास कहैं सुनियो साधो निन्दक साधक भारा ॥

राग सारंग ॥

अरे नर कहाकियो तुम ज्ञान ।
गई न हिंसा कुबुधि बड़ाई राग द्वेष की आन ॥
प्रभुताई को क्षण क्षण दौरें प्रभुको ना क्षण एक ।
अन्तर भोग जगतके प्यारे बाहर साधूवेष ॥

जैसे सिंह गऊतन धारो कपटरूप प्रकटायो।
धोखाखाय पशू आ निकसो पंजा ताहि चलायो॥
सुन्दररूप महा बगलेको एक टांग जल ध्यान।
मनमें आशा मीन गहनकी कहां मिलैं भगवान॥
गुरु शुकदेव बतायो मोको भीतर बाहर शुद्धि।
चरणदास वा हरि जन जानौ ताकी है ब्रह्म बुद्धि॥

राग केदार॥

छले सब कनक कामिनि रूप।
सुर असुर अरु यक्ष गंध्रब इन्द्र आदिक भूप॥
सावित्री वश कियो ब्रह्मा पार्व्वती त्रिपुरारि।
लीला कारण लक्षिमी संग हरि लियो अवतार॥
रावणसे अति बली मारे मौत जिन वश कीन।
पशु नरनकी कौं चलावै एतौ अति आधीन॥
रूप रस में दे धतूरा मोह फांसी डार।
तप कि पूंजी छीनिकै कियो शृङ्गीऋषि को ख्वार॥
माया ठगिनीं ठगे सबही बचे गुरु शुकदेव।
रणजिता कोइ ऊबरो करि दास चरणन सेव॥

राग सोरठ॥

साधौ होनहार की बात।
होत सोई जो होनहार है कापै मेटी जात॥
कोटि सयानप बहुविधि कीन्हे बहुत तके कुशलात।
होनहार ने उलटी कीन्ही जल में आगि लगात॥
जो कछु होय होतव्यता भोंड़ी जैसी उपजै बुद्धि।

होनहार हिरदय मुख बोलै बिसरि जाय सब शुद्धि ॥
गुरुशुकदेव दयासों होनी धारि लई मन माहिं ।
चरणदास शोचे दुख उपजै समझेसों दुख जाहिं ॥

राग सीठना ॥

टुक रँग महल में आवकि निर्गुण सेज बिछी ।
जहाँ पवन गवन नहिं होय जहां जाय सुरति बसी ॥
जहाँ त्रय गुण बिन निर्वाण जहां नहिं सूर शसी ।
जहाँ हिलि मिलके सुखमान मुक्तिकी होय हँसी ॥
जहाँ पिय प्यारी मिलि एक कि आशा दुई नसी ।
जहाँ चरणदास गलतान कि शोभा अधिक लसी ॥
सुनु सुरत रँगीली हे कि हरिसा यार करौ ।
जब छूटै विघ्न विकार कि भव जल तुरत तरौ ॥
तुम त्रै गुण छैल बिसारि गगन में ध्यान धरौ ।
रस अमृत पीवो हे कि विषया सकल हरौ ॥
करि शील संतोष शिंगार क्षमाकी मांग भरौ ।
अब पांचो तजि लगवार अमर घर पुरुष बरौ ॥
कहे चरणदास पिय देखि गुरु के पावँ परौ ।
जिव आतम बिगड़ी हे पुरुष को भूलि रही ॥
जब पिय बिसराई हे जने जन बाहँ गही ॥
तैं लाज गवांई हे कि पांचन पकड़ि लई ।
तेरे तीन लगे लगवार पचीसौ संग भई ॥
तैं जनम जनम रहि चूकि कि यमकी मार सही ।
कहैं चरणदास बिन लाल कि भवजल जात बही ॥
टुक निर्गुण छैला सों कि नेह लगावरी ।
जाको अजर अमर है देश महल बेगमपुररी ॥

जहाँ सदा सोहागिनि होय पिया सों मिलि रहुरि।
जब आवागमन न होय मुक्ति चेरी तेरी॥
कहैं चरणदास गुरु मिले सोई ह्वां रहु बौरी।
तब सुखसागर के बीच कि लहरि है रहुरी॥

तू सुन हे लंगर बौरी।

तू पांचौ घेरि पचीसौ घेरी विषयवासना की है चेरी बारी बारी दौरी। तैं पियभूली चौरासी डोली अङ्ग अङ्ग के सुखमें फूली मायालाई डौरी॥ तैं काम क्रोध सों नेह लगायो मन माता सब जग भर्मायो मोह यार बांकोरी। चरणदास शुकदेव बतावैं निर्गुण छैला तोहिं मिलावैं जो टुक चेतन होरी॥

पर आशाहै दुखदाई।

जिन धीरजसों पति रसिया छांड़ो बांको मोह यार कियो गाढ़ो क्रोधसों प्रीति लगाई॥ जिन जतसत देवर सों मुख मोड़ा दया बहिन सों नाता तोड़ा सुमति सौकि बिसराई। जो धर्म पिता के घरसों छूटी क्षमा मायसों योंहीं रूठी कुमति परोसिन पाई॥ सन्तोष चचाको कहा न माना चची दीनता सों रिसठाना माया मधि बौराई। चरणदास कहै जब निज पतिपावै श्रीशुकदेव शरण सो आवै शील शिंगार बनाई॥

राग सीठना॥

टुकदरशन दे हरि प्यारे।

विनदेखेमोहिंकलन परति यह देह जरतिहै व्याकुल प्राण हमारे॥
तेरी भौंहैं मटक और प्रेम लटक हिय अटकी नंददुलारे।
तेरी सुन्दर सूरति मोहनि मूरति नैना अति मतवारे॥
तुमसो को छैला सदा नवेला अलबेला बांकारे।
मैंहूं चरणदासा तुम सुख रासा आसा पुरवो आरे॥

कहा बाजत करत गुमान मुरलिया रंग भरी ॥
तैं मोहे मोहन छैल कि बांके कृष्णहरी ।
सुन बाँस सुता बड़ भाग तनकसी वन लकरी ॥
कछु टोना कीन्हो है विचित्तर सुघर खरी ।
निशि बासर लागी रहै पिया के अधर धरी ॥
ब्रज सगरो दियो नचाय हाथ भर की बसरी ।
तेरी तान मधुर सुर हे बरषावत प्रेम भरी ॥
सुनिकै धुनि सुर ऋषि मुनि देव महेश समाधि टरी ।
चरणदास भई सखि हे तुही शुकदेव बरी ॥

तुम देखौ हरिकी लीला साधौ कहन सुनन गम नाहीं ।

वह आप सकल बिस्तारै अरु आप करै प्रतिपारै जब चाहै तबही मारै या जगमें धूम मचाई ॥ वह अद्भुत कौतुक लावै रंकहिको राज्य दिलावै राजाको रंक करावै यह गति किनहुं नहिं पाई । वह अचरज खेल मचावै पाप पुण्य के न्याव चुकावै आप देखै और दिखावै इक इकसों देइ भिराई ॥ जब पाप बढ़नको आवै हरि आपहि धोय बहावै दुष्टन को मारि भगावै संतनकी करै सहाई । चरणदास कहै जो चाहौ शुकदेव शरण अब आवो तुम साईं सों लवलावो वै देहैं दुःख मिटाई ॥

तेरी क्षण क्षण छीजत आयु समझ अजहूं भाई ॥
दिन दोका जीवन जानि छांड़ि दे गुमराहो ।
सुन मूरख नर अज्ञान चेतता क्यों नाहीं ॥
कहा फूला फिरत गवांर जगत झूंठे माँहीं ।
कियो काम क्रोध सों नेह गही है अकड़ाई ॥
मतवारा मायामाहिं करत है कुटिलाई ।
तेरो संगी कोई नाहिं गहैं जब यम बाँहीं ॥

शुकदेव चेतावै तोहिं त्यागदे मचलाई ।
चरणदास कहैं भजु राम यही है सुखदाई ॥

अथ वसंत होरी प्रारम्भः ॥

राग वसंत ॥

ऐसे कृष्ण कुँवर खेलत वसंत । जाको सुर नर मुनिपावे न अन्त ॥
संग लिये वहु ग्वाल वाल । अरु फेंटन में भरि भरि गुलाल ॥
सव वस्तर पहिरे लाल लाल । गल सोहत सुन्दर गुंजमाल ॥
कोउ डफ़रवाव मौहरि मुहचंग । कोउ ताल वजावत है मृदंग ॥
कोउ ढोल तँवूरा वीण चंग । कोउ गावत स्वर दै दै उमंग ॥
कोउ केशरि गागरि लिये हाथ । गहि छिरके तवहीं गोपिनाथ ॥
काहू वेंदी दई हरिजू के माथ । जव आईं राधिका सखिन साथ ॥
इक काजर नैनन आंजो आय । मुख चोवा चँदन अवीर लाय ॥
नीलाम्वर प्रभुको दियो ओढ़ाय । हँसिकरत परस्पर मनके भाय ॥
यह कौतुक ब्रज वाढ़ो अपार । मिलि नाचत कूदत गोपी ग्वार ॥
लखि मोहि रहीं वहु देवनारि । ऐसो अद्भुत अचरज रस विहारि ॥
यह सुख अव कापै कहोजाय । सनकादिक नारद रहे लोभाय ॥
शुकदेव गुरू ने दियो दिखाय । चरणदास ध्यानमें रहो समाय ॥
ऐसे पारब्रह्म खेलत वसंत । कवहूं एक कवहूं अनन्त ॥
जैसे हाटक[1] एक भूषण अनेक । वरण वरण के धरत वेष ॥
टूटै गहना गल जो जाय । फिरि चाहै तौ फिरि वनाय ॥
आपही विष्णु ब्रह्मा महेश । आपहि धरती आप शेश ॥
आपहि सुर नर मुनिहिं जान । आप धरत अवतार आन ॥
आपहि रावण आपहि राम । आपहि कंसा आपहि श्याम ॥
आपन को चढ़िमारै आप । आप आपनको जपतजाप ॥

---

१ स्वर्णनाम ॥

चरणदास इकंगी आपा देख । हरि कहियत हैं तेरे भेख ॥
शुकदेव दया ते पायो भेव । ताते आप अपन की लागो सेव ॥

वह वसन्तरे वह वसन्त ।

कोइ बिरला पावै वह वसन्त । जाकी अद्भुत लीला रँग अनन्त ॥
जहाँ झिलमिल झिलमिलहै अपार । जहाँ मोती बरषै निराधार ॥
जहाँ फूलन की लागी फोहार । जहाँ अनहद बाजे बहु प्रकार ॥
जहाँ ताल जु बाजे विना हाथ । जहाँ शंख पखावज एक साथ ॥
जहाँ बिन पग घुंघुरूकी टकोर । जहाँ बिन मुख मुरली घनाघोर ॥
जहाँ अचरज बाजे और और । जहाँ चन्द सूर नहिं सांझ भोर ॥
जहाँ अमृत दरवै कामधेनु । जहाँ मान क्रोध नहिं मोह मैन ॥
जहाँ पांचो इन्द्री एक रूप । जहाँ थकित भये हैं मन से भूप ॥
शुकदेव बतावैं ऐसो खेल । चरणदास करो क्यों न वासों मेल ॥

खेलो राम नाम लै लै वसन्त । भक्ति करो मिलि साधसन्त ॥

मात पिता सुत दारा जान । सब स्वारथ के संगी पिछान ॥
तोहिं जनमत सबहिन घेरो आय । तैं आप अपनपो दियो बँधाय ॥
श्वास निकसि रहिजाय देह । सब कुटुँब सँघाती भरो गेह ॥
जब सबही मिलिकै तजैं नेह । कहैं वेगि निकासो रही खेह ॥
कहैं खाट बिछौना द्यो निकास । अरुजारि देहु मुख लै हुतास ॥
ऐसे झूठे संग की कौन आस । ताते हरि भजिले तू हर उसास[1] ॥
इनसों पगो तजो हरिसों मीत । अपने भलेकी न करी चीत ॥
शुकदेव कहैं नर अजहुँ चेत । चरणदास तजौ क्यों न जगसों हेत ॥

मेरेसतगुरु खेलत निजवसंत । जाकी महिमा गावत साधुसंत ॥

ज्ञान विवेक के फूले फूल । जहाँ शाखा योग अरु भक्ति मूल ॥
प्रेमलता जहँ रही झूल । सतसंगति सागर के कूल ॥

---

१ अर्थात् हर श्वास में ॥

ज़हाँ भर्म उड़त है ज्यों गुलाल । अरु चोवा चरचै निश्चय वाल ॥
शील क्षमा को बरषै रंग । काम क्रोध को मान भंग ॥
हरि चरचा जित है अनन्त । सुनि मुक्त होत सब जीव जन्त ॥
आन धर्म सब जाहिं खोय । राम नाम की जै जै होय ॥
जहाँ अपने पिय को ढूंढ़ि लेव । अरु चरण कमल में सुरति देव ॥
कहैं चरणदास दुख द्वंद्व जाहिं । जब प्रियतम शुकदेव गहैं बाहिं ॥

खेलौ नित वसंत खेलौ नित वसंत । मिलि साधु संगमें नित वसंत

जहाँ फूल जु फूले चारि रंग । भक्ति ज्ञान अरु योग अंग ॥
रंग जु चौथा है विराग । विषय वासना देहु त्याग ॥
भँवर होय सूंघै जु कोय । जीवनमुक्ता कहिये सोय ॥
भय औ भ्रम सब छूटि जाय । आनँद पदमें रहै समाय ॥
चन्दन चरचा अति सुबास । महकरही ह्वाँ आस पास ॥
जिहि सुगन्ध शीतलता होय । ताप तपन सबजाहिं खोय ॥
चरणदास हरिचरण माहिं । शीश दिये बहु पाप जाहिं ॥
प्रीतम सुख देवैं अनन्द । अरु काट निवारैं सकल फन्द ॥

वह देश अटपटा बिकटपन्थ । कोइ गुरुमुख पहुँचै होय सन्त ॥

बहुत चले मग चाव चाव । औरन सों कहि आव आव ॥
हमहूं पहुंच तुम्हैं दे बसाय । ऐसो जान्यो सुलभ दाय ॥
बहुतक तपसी कष्ट साध । बहुतक पण्डित पोथी लाद ॥
बहुतक चुण्डित[1] जटा धारि । चहुं ओर पावक जारि जारि ॥
बहुतक मुण्डित पूजा राखि । बहुतक भक्ता पिछली शाखि ॥
बहुतक योगी पवन जीति । हरि मिलिबे की करैं रीति ॥
कायर थाके बाट माहिं । कछु इक आगे चले जाहिं ॥
वे कनक कामिनी लिये घेरि । सो भी उनके पड़े फेरि ॥

---

१ झूंठा वेष बनाने वाले ॥

कोइ उनसे छुटकरि आगेजाय । जहाँ ऋद्धि सिद्धिलेवैं लगाय ॥
शुकदेव कहैं सब डारि आस । ह्वां प्रेमी पहुंचै चरणदास ॥
साधौ आतम पूजा करै कोय । जोई करै सोइ मुक्ता होय ॥
नेह नगर में बसै जाय ।भवन सँवारै हित लगाय ॥
तामें सेवा धारै धार । आठ पहर करैं बारम्बार ॥
तन मन वचन सँभारि लेव । सम्मुख देखो अपना देव ॥
दया पुष्प माला बनाव । क्षमा शील चन्दन चढ़ाव ॥
लिये दीनता हाथ जोरि । सांचे रंग मन को बोरि ॥
घट घट प्रीतम राख मान । रस भंग न होवै सावधान ॥
प्रसन्नता सोइ धूप दीप । शुकदेव कहैं यों रहु समीप ॥
चरणदास हो सँग न छोर । कृष्णमयी लखु चहूँ ओर ॥

होरी राग धमारि ॥

मोहन चतुर सुजान मेरे घर होरी खेलन आयो हो ।
सखीरी पीत बसन पियरे आभूषण पीरो तिलक बनायो हो ॥
सखीरी लालहिलाल गुलाल उड़ावत ग्वाल बाल सँग लायो हो ।
सखीरी करन अनेक सबके पिचकारी गावत नाचत धायो हो ॥
सखीरी आनि अचानक हरिने मेरे मुख चोवा लपटायो हो ।
सखीरी केशरि माहीं घोरि अरगजा मो तनपै ढरकायो हो ॥
सखीरी अपने हाथ सवांरि पानदै हार हिये पहिरायो हो ।
सखीरी रीझ रिझा अरु भीज भिजाकर उर आनन्द बढ़ायोहो ॥
सखीरी मैं हूँ वाके जाय अचानक काजर नैन लगायो हो ।
सखीरी मुरली गहि पीताम्बर लेकै नीलाम्बर जो उढ़ायो हो ॥
सखीरी जासुखको ब्रह्मादिक तरसैं शेष पार नहिं पायो हो ।
सखीरी गोपी कहैं चरणदास श्यामकी सो सुख हमैं दिखायो हो ॥
साध चलो तुम संभारी । जग होरी मचि रही है भारी ॥

दम्भ पाखण्ड गहे करमें डफ डूबड़ डूबड़की तारी ।
त्रैगुण तार तंबूरा साजे आशा तृष्णा गति धारी ॥
पाप पुण्य दोउ लै पिचकारी छूटत हैं बारी बारी ।
सम्मुख ह्वै करि जो नर खेलौ ताके चोट लगी [1]कारी ॥
लोभ मोह अभिमान भरो है ले माया गागरि डारी ।
राजा परजा भोगी तपसी भीजि रहे हैं संसारी ॥
कुबुधि गुलाल डारि मुख मींजो काम कला पुटली मारी ।
युग युग खेलत यों चलि आई काहू ते नाहीं हारी ॥
जड़ चेतन दोउ रूप सवाँरे एक कनक दूजी नारी ।
पांच पचीसलिये सँग अबला हँसि हँसि मिलि गावत गारी ॥
चतुरा फगुवा दे दे छूटे मूरुख को लागी प्यारी ।
चरणदास शुकदेव बतावें निर्गुण ज्ञान गली न्यारी ॥

होरी राग काफी ॥

ज्ञानरंग हो हो हो होरी ॥

निहरूपी बहुरूप धरे हैं नाना भेष करोरी ।
देखन निकसी अपने पियाको समझ भवन की पौंरी ॥
बुद्धि विचार शिंगार सजो है निश्चय माथे रोरी ।
जीवन्मुक्त हुलास बढ़ो है परगट खेल मचोरी ॥
खेलत खेलत आपन्न बिसरो लागी कौन ठगोरी ।
आपा खोजि रामहीं पाये मैं नाहीं निकसोरी ॥
चरणदास नहिंहरिही हरि हैं आपहि आप रहोरी ।
उपजे कौन कौन अब बिनशै बंध मुक्त केहि ठौरी ॥

होरी राग धनाश्री ॥

साधौ घूंघुट भर्म उठाय होरी खेलिये ॥
वेद पुराण लाज तजिबारी इनमें ना उरझैये ।

[1] असर कर जानेवाली ॥

शिर सों सकुच उतारि चदरिया पियसों रंग बढ़इये ॥
रूप न रेख न सूरति मूरति ताके बलि बलि जइये ।
अचल अजर अविनाशी सोई सम्मुख दरशन पइये ॥
सत चेतन आनन्द सदाही निर्भय ताल बजइये ।
पाप पुण्य की शंका त्यागो जहां मर्याद न पइये ॥
ओला नीर विचारौ जैसे यों आपन विसरइये ।
चरणदास वासना तजिकै सागर बूंद समइये ॥

राग सोरठ ॥

हिलिमिलि होरी खेलि लईहो बालमां घर पाइया ।
पांच सखी पच्चीस सहेली आनंद मंगल गाइया ।
समझ बूझका चोवा चरचा भर्मगुलाल उड़ाइया ॥
दुई गई जब इच्छा कैसी खेलन सकल बहाइया ।
चरणदास वासना तजिकै सागर लहर समाइया ॥

होरी राग सोरठ ॥

कांसूं खेलै को होरियां हो बालमनाहीं मैं नहीं ॥
अबिर गुलाल अरगजा नाहीं रंग नहीं गागर नहीं ।
ताल मृदंग झाँझ डफ नाहीं राग नहीं रागिनि नहीं ॥
फाग महीना वा घर नाहीं कन्थ नहीं कामिनि नहीं ।
चरणदास नहीं तब हरिकहुकैसो सबकुछ है और कुछ नहीं ॥

होरी राग धमारि ॥

आदिपुरुष अविगत अविनाशी नाना कौतुक लावैरे ।
आपहि आप और नहिं कोई बहुतक रूप बनावैरे ॥
आपहि मोहनलाल ग्वालहो मुरली आनि बजावैरे ।
आपहि ब्रजकी बनिता होकर वनको दौरी आवैरे ॥

---

१ बर्फ़ २ खेल ॥

आपहि गोपी कान्ह विराजै आपहि रास रचावैंरे ।
अन्तर्द्धान होय फिर आपहि आपहि ढूंढ़न धावैंरे ॥
आपहि व्याकुल अप देखनकूं लीला प्रेम बनावैंरे ।
परगट होय सबन सुख देवै आपहि रंग बढ़ावैंरे ॥
भोर भये जब खेल मचावै आप आप रहजावैंरे ।
कबहूँ एक अनेक कभी हैं विधि निषेध गति भावै रे ॥
सत चित आनँद रूप सदाही शुकदेव हो समुझावैंरे ।
चरणदास होसमझि समझिकरि आपहिआनँदपावैंरे ॥

होरी राग धनाश्री ॥

साधौ बुद्धि विवेक सँभारि होरी खेलिये ॥
सांख्ययोग की युक्तिसों कीजै नित्यअनित्य विचार ।
माया सकल निवारिकैंरे आतम रूप निहार ॥
पांचतत्त्व तीनों गुण परगट इनको दो दिन फाग ।
इकरस सत पद जानि लेरे ताहीसों मन पाग ॥
निश्चय चोवा लाइयेरे भर्म गुलाल उड़ाय ।
देह करमके रंगकीरे गागर दे ढरकाय ॥
जीवन मुक्त जु फगुवा पइये गुरुके चरणन लाग ।
जो कोई ऐसी होरी खेलै जाके ऊंचे भाग ॥
चरणदास कहैं शुकदेव बताई हमहूँ खेलैं जाग ।
प्रियतम प्रियतम जित तित देखे द्वेष गयो अरु राग[1] ॥
सखीरी ततम[2] तले संग खेलिये रस होरी हो ।
निर्गुण निज निर्धार सरस रस होरी हो ॥
सखीरी शील शृङ्गार सवांरिये रस होरी हो ।
दुविधा मानि निवार सरस रस होरी हो ॥

१ प्रेम २ ओंकार ॥

सखिरी रहनी केसर घोरिये रस होरी हो ।
बहुरि न ऐसो बार सरस रस होरी हो ॥
सखीरी सतगुण करि पिचकारि ले रस होरी हो
तमरजके भर मार सरस रस होरी हो ॥
सखीरी गर्वगुलाल उड़ाइये रस होरी हो ।
मोह मटुकिया डारि सरस रस होरी हो ॥
सखीरी झिल मिल रंग लगाइये रस होरी हो ।
चंदन चरच विचार सरस रस होरी हो ॥
सखीरी निश्चल सिन्धु समाइये रस होरी हो ।
रिमझिम झमक फुहार सरस रस होरी हो ॥
सखीरी शून्य नगर में नृत्तिये रस होरी हो ।
अनहद झनक झिंगार सरस रस होरी हो ॥
सखीरी सैन सुरति सों समझिये रस होरी हो ।
सोहंब्रह्म खिलार सरस रस होरी हो ॥
सखीरी पांच पचीसो रल मिले रस होरी हो ।
मंगल शब्द उचार सरस रस होरी हो ॥
सखीरी अलख पुरुष फगुवा लहो रस होरी हो ।
आपा आप बिसारि सरस रस होरी हो ॥
चरणदास रमइया रमि रह्यो रस होरी हो ।
दरशो है फाग अपार सरस रस होरी हो ॥

गुरु दूती बिना सखी पीव न देखो जाय ।
भावै तुम जप तप करि देखो भावै तीरथ न्हाय ॥
पांच सखी पचीस सहेली अति चातुर अधिकाय ।
मोहिं अयानी जानिकै मेरो बालम लियो लुकाय ॥
वेद पुराण सबै जो ढूंढ़े सुरति स्मृति सब धाय ।

आनि[1] धर्म और क्रिया कर्म में दीन्हों मोहिं भर्माय ॥
भटकत भटकत जब मैं हारी चरण सखी गहे आय।
शुकदेव साहब किरपा करिकै दीन्हो अलख लखाय ॥
देखतही सब भ्रम भय भागे शिरसूं गई बलाय।
चरणदास जब प्रीतम पायो दर्शन किये अघाय ॥

हरि पीव पाइया सखी पूरण मेरे भाग।
सुखसागर आनन्द में मैं नित उठि खेलूं फाग ॥
चोवा चन्दन प्रीतिकै सखी केशरि ज्ञान घसाय।
पुहुप वाससूं जो वह झीनो ताके अंग लगाय ॥
बेरंगी के रंगसूं सखी गागर लई भराय।
शून्य महल में जायकै सखी पियपर दई ढरकाय ॥
भरम गुलालजब कर लियो सखी बालम गयो दुराय।
सतगुरुने अंजन दियो तब सम्मुख दरशे आय ॥
ताली लाई प्रेमकी सखी अनहद नाद बजाय।
सर्वमयी पिय पायकै हम आनँद मंगल गाय ॥
रलमिल प्रियतम ह्वै गये सखी दुईगई सब भाग।
चरणदास शुकदेव दयासूं पायो अचल सुहाग ॥
मैंतो ह्वां खेलूंगी जाय जित मेरो पिया बसै।
व्याधि उपाधि न संशयकोई आनंदहि आनंद लसै ॥
नितही फागुन इकरस होरी खंडित कबहुं न होय।
मुक्ति पदारथ फगुवा पइये आपा सरवस खोय ॥
जिनके रसिया शिव ब्रह्मादिक खेलत चावहिचाव।
ऋषिमुनिदेवत खेलत निशिदिन करिकरिबहुतकभाव॥
भाग बड़े उनहीं के जानो वा पदलागे धाय।

1 षपथ॥

ज्ञान ध्यान के रंगमें डूबे सोई पहुंचे जाय ॥
गुरु शुकदेव बताई हमको जबसों बाढ़ी प्रीति ।
चरणदासहु अति ललचाये सुनि सुनि ह्यांकी रीति ॥

साधौ प्रेम नगर के माहिं होरी होयरही ।
जबसूं खेली हमहूं चितदै आपनहूं को खोयरही ॥
बहुतन कुल अरु लाज गँवाई रहो न कोई काम ।
नाचि उठैं कभी गावन लागैं भूले तन धन धाम ॥
बहुतन की मति रंग रँगी है जिनकों लागो प्रेम ।
बहुतनको अपनी सुधि नाहीं कौन करै ऐसो नेम ॥
बहुतन को गद्गदही वाणी नैनन नीर ढराय ।
बहुतनको बौरापन लागो ह्यांकी कही न जाय ॥
प्रेमीकी गति प्रेमी जानै जाके लागी होय ।
चरणदास उस नेह नगरकी शुकदेवा कहि सोय ॥

कोई जानै संत सुजान उलटे भेदकूं ।
वृक्ष चढ़ो माली के ऊपर धरती चढ़ी अकास ।
नारि पुरुष विपरीतभये हैं देखत आवै हास ॥
बैल चढ़ो शंकर के ऊपर हंस ब्रह्म के शीश ।
सिंह चढ़ो देवी के ऊपर गुरुही की बखशीश ॥
नाव चढ़ी केवट के ऊपर सुतकी गोदी माय ।
जो तू भेदी अमर नगरको तौ तू अर्थ बताय ॥
चरणदास शुकदेव सहाई अब कह करिहै काल ।
बांबी उलटि सर्प में पैठी जबसूं भये निहाल ॥

इति श्रीचरणदासकृत शब्द सम्पूर्णम् ॥

अथ भक्तिसागर प्रारम्भः॥

अथ छपै छन्द कवित्त चौपाई दोहा प्रारम्भ ॥

छप्पै ॥

श्री व्यास को पुत्र तासु कों दास कहाऊं।
सदा रहूं हरि शरण और ना शीश नवाऊं॥
साधनसूं यह चहूं मोहिं यह बात दृढ़ावो।
माया जाल संसार तासुसों वेगि छुटावो॥
अहो श्रीब्रजनाथ विनय सुनि लीजिये।
चरणदास को भक्ति कृपा करि दीजिये॥

गुरु ईश्वर गुरु ईशरीझ गुरु राम बतावैं।
गुरु काटैं यमफांस बिपति सब अघै नशावैं॥
गुरुदेवन के देव भेव ब्रह्मादि लखावैं।
गुरु भवसागर तार पार वह लोक बसावैं॥
चरणदास यह जानिकै सतसंगति हरिको भजो।
शुकदेव चरण चितलायकै सो झूठकानि दुबिधा तजो॥

पग तब होवैं शुद्ध साधुके मग को धावै।
हस्त शुद्ध तब होयँ दोऊकर शीश नवावै॥
नैन शुद्ध जब होयँ साधु के दर्शन पावै।
रसन शुद्ध तब होय रामगुण मुख सों गावै॥
भनै चरणदास सब शुद्धहो जब चरण परस गुरुदेवके।
वै आतम तत्त्व बिचार देखकर दर्शन अलख अभेवके॥

दो० दुखमेटन सुखके करन, चरणदास वे साध।
दाता ज्ञान विज्ञान के, देवैं मता अगाध॥

साध मुक्ति नहिं चहत हैं, सिद्ध न चाहत साध।
स्वर्गलोक नहिं चहत हैं, जिनका मता अगाध॥

चौपाई॥

इड़ा पिंगला सुखमन धारो। आसन बज्र नागिनी टारो॥
द्वादश अंगुल होय वेध षट चक्कर लीजै।
जब बाजै अनहद तूर जहां मन निज कर दीजै॥
खेचरी मुद्रा त्रिकुटी आवै। अमृत पियै परम सुख पावै॥
मेरुदण्डको प्राण चलावै। शून्य शिखर जब नगरी पावै॥
जा नगरीमें चन्द न भान। पहुँचै साधू चतुर सुजान॥
जाति पांति जहँ नाम न नाता। श्वेत श्याम पीता नहिं राता॥
योग यज्ञ तप जहां न दाना। तीरथ बर्त्त जहां नहिं न्हाना॥
किरिया कर्म जहां नहिं पूजा। मैं तू है नहिं एक न दूजा॥
जहां न सांझ द्यौस नहिं राता। एकै ब्रह्म अखंड बिधाता॥
चरणदास रामकी घाटी पहुँचै गुरुमत शूरा।
ओछी बुद्धि बाद बहुठानै करणी करै सो पूरा॥

छप्पै॥

बैठ गुफाकेमध्य योगकी युक्ति बिचारै।
आप अकेलो रहै और ना मनुष निहारै॥
चारिबारि नितकरै जाप ॐकार अराधै।
सूक्ष्म करै आहार ओगरो पतलो साधै॥
आसन पद्म लगाय कै सीधी राखै मेर।
ठोढ़ी हिये लगाइये पलक झांपकरि हेर॥

दो० कुंभक आठ प्रकारके, तिनमें उत्तम एक।

केवल कुंभक जानिये, साधै ताहि विशेख ॥
त्रिकुटी में तीरथ अगम, तिरवेणी जेहि नाम ।
न्हाय योगकी युक्ति सूं, पूरण हो सब काम ॥
रणजीत कहैं जहाँ न्हाइये, त्रिकुटी तीरथ धाम ।
नित परबी जहाँ होत है, भजनकरो निष्काम ॥

चौपाई ॥

जा तीरथ को पवन न लागै । जा तीरथ में जन अनुरागै ॥
जा तीरथ में रतन अनेका । पूरे गुरुसों मिलमिल देखा ॥
वा तीरथमें जो कोइ न्हावै । भवसागर में बहुरि न आवै ॥
जहां न चन्द सूर नहिं तारे । गुरुगम पहुँचै अति मतवारे ॥
जा तीरथका बँधा जो नीर । उज्ज्वल निर्मल गहिर गँभीर ॥
ब्रह्मा विष्णु जहां त्रयदेवा । योग युक्ति में लावैं सेवा ॥
बारह मास दामिनी दमकै । सोन पटीला जुगुनू झमकै ॥
रणजित मीत बास जहाँ कीजै । नित अस्नान महासुख लीजै ॥

छप्पै ॥

अमरी वजरी साध बायु सरने नहिं पावै ।
द्वादश अंगुल प्राण सुरतदे ताहि घटावै ॥
मौन गहै नितरहै अल्प सूक्षम सो बोलै ।
एकबार आहार जँभाई कबहुँ न खोलै ॥
बांधैसो जाय दृढ़ छीकको अनहद धुनि अति गाजई ।
भन चरणदास शुकदेव बल सुयोग युक्ति इमि साजई ॥

दो० मन पवना वश कीजिये, ज्ञान युक्तिसों रोक ।
सुरति बांधि भीतर धसै, सूझै काया लोक ॥
मन हिरदे में रहत है, पवन नाभिके माहि ।
इन्द्री रोकै ये रुकैं, और कछू बिधि नाहिं ॥

छप्पै ॥

सूक्षम करै अहार जीति धरणी जब लेई ।
नीर जीति जब लेय बिंद जाने नहिं देई ॥
मोह लोभ जब तजै अग्निको जीति मिलावै ।
पवनजीति जब लेय गगनको बाध चलावै ॥
अरु हर्ष शोक समकरि गनै पांच जीत एकैकरै ।
भन चरणदास साधनगहै होय प्रकाश कारजसरै ॥
दो० गगन मध्य जो कमल है, बाजत अनहद तूर ।
दलहजारको कमल है, पहुँचै गुरु मत शूर ॥
गगन मँडल के कमलमें, सतगुरु ध्यान निहार ।
चरणदास शुकदेव परसै, मिटै सकल विकार ॥
सहस्रदल के कमलमें, रूप अगम अपार ।
सोहं सोहं जाप सहजै, होत एक हजार ॥

छप्पै ॥

नौ नाड़ीकी खैंच पवन लै उरमें दीजे ।
बज्जर ताला लाय द्वार नौ बन्ध करीजे ॥
तीनौ बन्ध लगाय अस्थिर अनहद आराधै ।
सुरति निरतिका काम राह चल गगन अगाधै ॥
शून्य शिखर चढ़िरहै दृढ़ जहां जाय आसन करै ।
भन चरणदास ताड़ीलगै सो रामदरश कलिमल हरै ॥
चौथा पद निर्बाण धाम बेगमपुर कहिये ।
गुण अतीत जहाँ रामनिरखि नैनन सुख लहिये ॥
अद्वै रूप अखण्ड मण्ड मण्डल बहु बंका ।
जहां काल नहिं ज्वाल शब्द अति उठत निशंका ॥
निज पारब्रह्म चौरी रची शिव सहित शक्ति फेरी करैं ।

भन चरणदास चारौं मुक्ति सो हाथ जोरि पायँनपरैं ॥
मूल कमल में खेलि पिया कूं देखन चलिये ।
उलटि वेद षटचक्र जाइ सतवैंसे मिलिये ॥
प्राण अपान मिलाय राह पश्चिमकी लीजै ।
बंक नाल करि शुद्ध प्राण लै तामें दीजै ॥
मेरु दण्ड चढ़िजाय जब लोक लोक की गम परै ।
भन चरणदास ब्रह्मण्ड में ब्रह्मदर्शी दर्शन करै ॥

दोहा ॥

चरणदास यहि बिधिकही, चढ़िवे को आकास ।
शोधि साधि साधन अगम, पूरण ब्रह्म बिलास ॥

छप्पै ॥

दल असंख्यको कमलरूप जहाँ सत्त बिराजै ।
अनंत भानु परकाश जहाँ अनहद धुनि गाजै ॥
सुन्दर छबि अति हंस सन्त जन आगे ठाढ़े ।
जहाँ पहुँचै कोइ शूरबीर नीशान जो गाड़े ॥
कमल मध्य जो तख्तहै सोभा अपार बरणूं कहा ।
कहैं चरणदास उसतख्तपर आदिपुरुष अद्भुतमहा ॥
छत्र फिरत नित रहत चँवर ढोरत जहँ हंसा ।
जहाँ दरशन कर शिष्य मिटै युग युगका संसा ॥
आवागमन है रहत मरण जीवन नहिं होई ।
आनि मिले जब चार मुक्ति कहियत है सोई ॥
जहाँ अमरलोक लीला अमरफल अनेक तहाँ पावई ।
भन चरणदास शुकदेव बल सु चौथापद इमि गावई ॥
जहां चन्द नहिं सूर जहां नहिं जगमग तारे ।
जहां नहीं त्रयदेव त्रिगुण माया नहिं लारे ॥

जहाँ वेद नहिं भेद जहाँ नहिं योग यज्ञ तप ।
जहाँ पवन नहिं धरणि अगिनि नहिं जहाँ गगन अप ॥
अरु जहाँ रात नहिं दिवस है पाप पुण्य नहिं व्यापई ।
आदि अन्त अरु मध्य है कहैं चरणदास ब्रह्म आपही ॥

जहाँ काल नहिं ज्वाल भर्म नहिं तिमि उजारा ।
जहाँ राग नहिं द्वेष जहाँ नहिं कर्म अचारा ॥
जहाँ काम नहिं क्रोध लोभ नहिं मोह नरेशा ।
जहाँ मित्र नहिं शत्रु जहाँ नहिं देश विदेशा ॥
अरु चरणदास इक ब्रह्म है और न दूजा कोइ तहाँ ।
भया जीव सों ब्रह्म जब योग युक्ति पहुँचे जहाँ ॥

जहाँ आतम देव अभेव सेव कबहूं न करावै ।
इच्छा दुई न द्रोह कर्म नहिं भर्म सतावै ॥
जहाँ जाप थाप नहिं आप तहाँ नहिं रूप न रेखा ।
जासु जाति नहिं पांति नारि नहिं पुरुष बिशेखा ॥
अरु पारब्रह्म पूरणसदा है अखण्ड नहिं खण्डिता ।
भनै चरणदासताड़ीलगै सो शून्य शिखरमें मण्डिता ॥

चौपाई ॥

ब्राह्मण सो जो ब्रह्म पिछानै । बाहर जाता भीतर आ
पांचौ बशकरि झूठ न भाखै । दया जनेऊ हिरदयरा
आतम विद्या पढ़ै पढ़ावै । परमातम का ध्यानलगावै ॥
काम क्रोध मद लोभ न होई । चरणदास कहैं ब्राह्मण सोई ॥

छप्पै ॥

हुतो आपमें आप सृष्टि नहिं देत दिखाई ।
ज्यों पाला जलमाहिं धरणिपर लीकलिखाई ॥

भांड़े माटी माहिं कनक में भूषण राजैं ।
तरवर बीरजमाहिं यथा फलफूल बिराजैं ॥
गुण रूप नाम सब ब्रह्म में ॐकार तासूं भई ।
चरणदास शुकदेव सो वही ब्रह्म माया वही ।
पांचतत्त्व तेहि माहिं तीनगुण जुदे न होई ॥
चित बुधि इन्द्री तहाँ पाप अरु पुण्य समोई ।
विष अमृत तेहि माहिं भूत अरु देव मुनीश्वर ।
फूल शूल तेहिमाहिं यमन अवतार ऋषीश्वर ॥
चरणदास शुकदेव भज ये सबदरशैं दृष्टिअब ।
निराकार निरगुणकहत भूले भटके लोग सब ॥

सवैया ॥

जैसे जल में जलकुंभ बसै जल भीतर बाहर पूरिरह्यो है ।
तैसे जलमें जल पाला बँध्यो जब फूटिगयो जल आप भयो है ॥
ऐसे जगमें वह व्यापिरह्यो किनहूं कर लोचन नाहिं गह्यो है ।
चरणदास कहैं दुइ दूरि करो सगरो जग एकहिडोरि गुह्यो है ॥
जैसे पट मैलकी संग कियो जु गयो सब श्वेत भयो तनकारो ।
श्यामस्वरूप अकाश भयो जब घूम धुवांजो भयो भौ भारो ॥
माया पिशाचिको संग कियो जब नीचभयो करता करतारो ।
शुकदेव कहैं दुइ दूरकरो चरणदास सभी इकसूत निहारो ॥

कवित्त ॥

दीसत न वारपार पूरि रह्यो जगतसार ऐसोही अटल नेक टारो न टरत है । ताको तौ नहिं नाश ठौर ठौर रह्यो भास जैसे रहत पुष्प वास पासही रहत है ॥ लोचन रह्यो समाय वेदहू सकै न गाय पुस्तक लिखो न जाय जारो ना जरतहै । शुकदेवजी की

दया चरणदास को प्रकाश भयो जैसे मैं खोजि पायो पायों ना परतहैं ॥ कई कोटि दुर्गा जहां हाथ जोरे रहैं कई कोटि शंभू जहां ध्यान लावैं। कई कोटि ब्रह्मा जहां खड़े अस्तुतिकरैं शेश नारद नहींपारपावैं ॥ वेद यशही कहैं भेद कछु ना लहैं पंथकी बात वे भी बतावैं। चरणहीदास की आस जितही रहो कोटि तेंतीसहू शीश नावैं ॥ रामही देव अरु राम देवल भयो रामही रामकी करै पूजा। रामही धर्म अरु भर्म भे रामही रामही ज्ञान अज्ञानसूझा ॥ रामही एक अन्नेक हैं रामही राम परगट भयो रामगूझा। चरणदास शुकदेव सब रामही राम हैं शोधि निश्चय किया नाहिं दूजा ॥ रामही बीज अरु रामही पेड़हैं रामही फूल अरु राम पाती। रामही भोगिया रामही योगिया राम जप तप करै दिवसराती॥ रामही नारि अरु रामही पुरुषहै राममा बाप अरु पूत नाती। शुकदेव चरणदास सब रामही राम है रामही दीवला रामबाती॥ रामही चोर अरु रामही ठग भयो राम बटमार अरु रामघाती। रामही साधु यत सतभयो रामही राम रक्षाकरैं रामसाती॥ रामही देह इन्द्री भयो रामही मन भयो रामही सुरत माती। गुरु शुकदेवचरणदास चेला भयो रामही सीप अरु राम स्वाती॥ आपही वेद अरु आप पण्डित भयो आप कत्तेब अरु आपकाजी। आप काशी भयो आपजाती भयो आप मक्का भयो आपहाजी ॥ आपही बांग अरु आप मुल्ला भयो आप पंडा भयो घंटबाजी। चरणदास शुकदेव हरि मुरीद मुरशिद भयो मुकति और बंद सब आपसाजी ॥ ब्रह्मही आदि अरु ब्रह्मही मध्य है ब्रह्मही अंतकूं वेदगावै। ब्रह्मही एक अन्नेकहैं ब्रह्मही आपनो दृष्टि में आप आवै ॥ होय दूजा कोई नाहि ऐसी भई आपही आप

आनँद बढ़ावै । ब्रह्म शुकदेव चरणदास भी ब्रह्म है ब्रह्मही ब्रह्मका ध्यान लावै ॥

राग अरिल्ल ॥

आतम ज्ञान बिना नहिं मुक्त वेद भेद सब देखा जोय ।
ब्रह्मा शेश महेश पूजकरि बस वह लोक रहत नहिं सोय ॥
जल पाहन अरु भूत भवानी पूज पूज भर्मा सब कोय ।
चरणदास ततबिरला जानै आवागमन दुख बहुरि नहोय ॥

सवैया ॥

न ऊरधबाहुन अंगबिभूतिन धूनी लगाय जटा शिरडारूं ।
न मूड़ मुड़ाय फिरूं बनही बन तीरथ बर्त नहीं तनगारूं ॥
उलट लखो घटमें प्रतिबिंब सों दीपक ज्ञान चहूंदिशि जारूं ।
चरणदास कहैं मनहींमनमें अब तूही तुहींकरि तोहिं पुकारूं ॥

कवित्त ॥

तारी जो लगाय देखो वेद अर्थ पाय देखो भक्ति बिना अखिल ईस कोहूं नाहिं पायो है । दशौंदिशा धाय देखो तीरथ अन्हाय देखो भटको सब प्रेम बिना स्मृति यो गायो है ॥ हिवारे तनगोर देखो करवटसिमार देखो ऐसी ऐसी बातन चौरासी भर्मायो है ॥ भाषै चरणदास शुकदेवके प्रताप सेती आदिपुरुष भक्तिहेतु नंदगेह आयो है ॥ मूड़हू मुड़ाय देखो जटाहू रखाय देखो सेवरा कहाय देखो भेदहू न पायो है । श्रवण चिराय देखो नादहू बजाय देखो धूरहू लगाय देखो भर्म सबै छायो है ॥ धूम्रपान झूल देखो कोई भंमभूल देखो मोकूं हरिनाम नीको गुरू जो बतायो है । भाषै चरणदास शुकदेव के प्रतापसेती आदिपुरुष भक्तिहेतु नंदगेह आयो है ॥

सवैया ॥

भूलत भर्मत कूर फिरै इन बातन में कह काज सरैगो ।
बैठिरहो हरिमारग में करता जो करै सोइ होय रहैगो ॥
अपनेहितसों जिन तोहिं सृज्योहै अलेख बिलोकिकै सोचकरैगो ।
चरणदास बिचारि कहा भटकै हरिनाम बिना दुख कौन हरैगो ॥
वही राम वही श्याम बिधाता वही विश्वंभर पतित तरै ।
वही बिष्णु वही कृष्णमुरारी वही निरञ्जन ज्योति धरै ॥
दीनानाथ हरि वह कहियतु है जो चाहै सो वही करै ।
चरणदास क्यों भटकै मूरुख राम बिना दुख कौन हरै ॥

कवित्त ॥

वही राम मेरो जिन रावण बिनाश्यो जाय वही राम मेरो जिन लंकपुर जारी है । वही राम मेरो जिन कंस को पछारयो जाय वही राम मेरो जिन नाथ्यो नागकारी है ॥ वही राम मेरो सो डार पात रमिरह्यो वही राम मेरो जाकी जगमें उज्यारी है । चरणदास कूर सब संतनको चेरो कहै वही राम मेरो प्रहलाद पैज पारी है ॥

कुण्डलिया ॥

वेद पुराणन में सुनो संकटमेटन नावँ ।
चरणदासके काज को अब क्यों थाके पावँ ॥
अब क्यों थाके पावँ धाममें हो अक नाहीं ।
और हमारी कौन गहै या दुखमें बाहीं ॥
सकल सृष्टि बिसराय खैंचि मन तुमसों लायो ।
इन पांचन को मार करो मेरो मनभायो ॥
भीर परी जब दास पर जित तित धारो वेष ।
अगिले पिछले करमकी अब क्यों न मेटो रेष ॥

अब क्यों न मेटो रेख करम कोई दुर कीन्हों ।
हम कुछ जानत नाहिं तुम्हीं काहे नहिं चीन्हों ॥
अब तुम करो सहाय इन्हों से मोहिं छुटावो ।
काम क्रोध मोह लोभ चक्रसों बेगि जलावो ॥

कवित्त ॥

सबही दुख पावैं बेर बेर पछितावैं अब तोहींको ध्यावैं दुख वही काटि दीजिये । अन्नके दुखारी सब भये हैं भिखारी सृष्टि काहे को बिसारी प्रभु बेगि जो पसीजिये ॥ जक्त गुणागार करि देखो है विचार अब ना करो अवार बंदि छोड़ि जो कहीजिये । दिल्लीकी अर्ज चरणदासकहैं लर्ज स्याह नादरको बर्ज अर्ज मेरी सुनि लीजिये ॥ यशोदाको लाल देखि मोहन व्रज बाल देखि गोपी अरु ग्वालदेखि प्राण वारि दीजिये । माथेपर मुकुट देखि कुण्डलकी झलक देखि घूंघरवारी अलक देखि ललकाही कीजिये ॥ बांकीसी मरोर देखि मुरली की घोर देखि पैंजनी टकोर देखि देखाही कीजिये । चरणदास कूदेखि नैनन को मूंद देखि नैननके बीच देखि यही ध्यान कीजिये ॥ पीरा सुधार फेंट तुर्रा छबि अधिक बनी करहू में मुरली गहि अधरनपैधारीजू । घेरदार नीमो पीरो प्यारो अंगशुभरहो एकपावँ ठाढ़े सो प्रेमके अहारीजू ॥ सबही शृंगार किये राधेजू बायेंअंग ठाढ़ी मुसक्यात प्राण पियासंग प्यारीजू । नवलकिशोर मोर सांवरोसुजान प्यारो यार चरणदास कीन्हो अटल विहारीजू ।

दो० मनदानिस्बतम् हिज्रने, दीगर वस्ल न कोय ।
चरणदास ग़फलत उठै, वाहिद वाहिद होय ॥
हिज्र वस्ल दोनों नहीं, नहिं दरिया नहिं मौज ।
चरणदास ज़र्रा नहीं, जो कर देखा खोज ॥

दरियावाहिद लामका, बाजत अनहद बीन ।
सकल चरण फ़रज़न्दना, नाहीं संग ताबीन ॥
दीद शुनीद जहां नहीं, तहां न काल न हाल ।
जौहर जिसम इसम नहीं, चरणदास नहिं काल ॥
बुरी सिफ़ारश यामिनी, और सगाई होय ।
चरणदास यों कहत है, भूलकरो मति कोय ॥

कवित्त ॥

काहेको भक्तपै समान हैं बगलेको ध्यान तो लगायो है मीनके पचावनको । भीतर और विषय वास चरणदास बाहर तिलक छापेकिये जक्तके दिखावनको ॥ हरिके गुण गावनको रसना रिसात अधिक मनतौ हुलास वाद निन्दा के बढ़ावन को । बहुत बात सीखराखी लोक और बड़ाई को काया नाहिं शोधी एक रामजी के पावनको ॥ यह है काल तामें विकराल जहां चरचा गोपाल जाकी निन्दाकरैं जानिकै । जोई करै भक्त जाकूं दुष्ट बहु नामधरैं वचन कुवचन कहैं क्रोध मन आनिकै ॥ देखैं अब जायगो तू परम वैकुण्ठही कूं बड़ो भयो साधु माला धारि तिलक ठानिकै । ऐसे दुष्ट नीचन कि बात नहिं मानिये जू कहैं चरणदास सबै पापी नरक खानिकैं ॥ आप बड़े नीच करतूति करैं नीचनकी नीचनको संग जिन्हैं भावै उत्पात है । रामनाम सुनतहिये लागतहै आगि जान कोऊ करै भजन ताहि देख जरजात है ॥ खोंटेभये आपकहैं औरनकूं खोंटे वै तो महामोटे पापी माया माहिं इतरात है । साधन के निंदक सुतौ परैंगे नरकमांझ कहैं चरणदास दुख पावैं बहुभांति है ॥

दो० चरणदास हितसों कियो, ग्रन्थ अनेक प्रकार ।
अष्टादश अरु चारको, काढ़लियो ततसार ॥

चौपाई ॥

संवत सत्रह से इक्यासी । चैत सुदी तिथि पूरणमासी ॥
शुक्लपक्ष दिन सोमहिवारा । रचों ग्रन्थ यों किये विचारा ॥
तबहीं सूं अस्थापन धरिया । कछु इकबानी वादिन करिया ॥
ऐसेहि पांच हजार बनाई । नाम गुरू के गंगबहाई ॥
फिर भइ बानी पांचहजारा । हरिके नाम अगिनिमें जारा ॥
तीजे गुरु आज्ञा सो कीन्हीं । सो अपने साधुन को दीन्हीं ॥
अद्भुतग्रन्थ महा सुखदाई । ताकी शोभा कही न जाई ॥
तामें ज्ञानयोग वैरागा । प्रेमभक्ति जामें अनुरागा ॥
निर्गुण सगुण सबही कहिया । फिर गुरुचरणकमल में रहिया ॥
जोकोइ पढ़ि पढ़ि अर्थ विचारै । आप तरै औरन को तारै ॥
ना मैं किया न करने हारा । गुरु हिरदे में आय उचारा ॥
चरणदास मुखसों शुकदेवा । आन कहे चारोही भेवा ॥

दो० जल घृतसूं रक्षा करौ, मूरुख हाथ न देव ।
ढीलौ कर नहिं बांधिये, ग्रन्थ कहत यह भेव ॥
सम्प्रदाय शुकदेव मुनि, चरणदास गुरु द्वार ।
परमधर्म भागवत मत, भक्ति अनन्य विचार ॥

पद ॥

जय जय राधे कृष्ण मुरारी, जय जय व्यास सकल गुनगुनी ।
जय जय महाबिदेह जनकजी, श्रीशुकदेव अवतार मुनी ॥
इनको नामरटे निशिवासर, जीभरहै हरिभक्ति सनी ।
चरणदास सुख बास लहै, नित पास रहै यही आसबनी ॥

इति श्रीचरणदासजीकृत भक्तिसागर सम्पूर्णम ॥

श्रीः ॥

श्रीशुकदेवाय नमः ॥

अथ श्रीचरणदासजीकृत जागरणमाहात्म्यं प्रारभ्यते ॥

छप्पै ॥

प्रथम सुमिरि गुरु चरण बहुरि सुमिरूं हरि चरणा ।
गुरु कूं करूं प्रणाम आय साधों की शरणा ॥
गुरु किरपा सों हिरदै ज्ञान और बुधि परकाशे ।
गुरु किरपासों तिमिर अज्ञान दुरमत सब नाशे ॥
गुरु शुकदेव के चरण चित्त सदा सर्वदा राखिये ।
कहै चरणदास आधीनहो जु दुबिधा मनकी नाखिये ॥

दो० अब मैं बिनती करतहूं, श्री सतगुरु महराज ।
दयाकरो आधीन पर, मो सिरके सिरताज ॥
तनमन निवछावर करूं, दोउ कर लेउँ बलाय ।
चरणदास शुकदेव के, चरणन पै बलिजाय ॥
तिमि अज्ञान मेरो हरो, ज्ञान देउ प्रगटाय ।
कृपाकरो मों पतित पै, रहूं चरण लिपटाय ॥
तुमसों दाता और को, जाहि नवाऊं शीश ।
मनसा वाचा कर्म करि, तुमहीं मेरे ईश ॥
शुकदेवगुरु सुनलीजिये, मोकूं करो सनाथ ।
ज्ञानभक्ति जासे बढ़ै, सो कहिये हो नाथ ॥

गुरुवचन ॥

दो० सुनो शिष्य अबकहतहूँ, अद्भुत कथा पुनीति ।
निहचै ताके सुनेतें, बढ़ै भक्ति और प्रीति ॥
एक समय श्रीकृष्णसों, कहत युधिष्ठिर राव ।

हो हरि अपनी कृपासों, कछु इक कथा सुनाव ॥
राजासों श्रीकृष्ण ने, जो कछु कह्यो बनाय ।
सो अब तोसूं कहतहूं, सुनो शिष्य चितलाय ॥

अथ युधिष्ठिर के वचन श्रीकृष्णसों ॥

चौपाई ॥

हो हरि मैं पूछतहूं तोहीं । संशय वेगि मिटावो मोहीं ॥
मोहिं जागरण महात्म सुनावो । मेरे पूरण पाप मिटावो ॥
मैं मतिहीन भक्ति नहि जानूं । संसारी के सुख मैं मानूं ॥
निशिदिन कुटुँब जालमें पाग्यो। हरिकीरतन चित्त नहिंलाग्यो ॥

मंगल छन्द ॥

लागै न चित छिन एक मेरो भक्ति प्रभु कैसे बने ।
निशि दिन वृथा संसार सुखकूं मानिकै जिय आपने ॥

दो० कुटुँब जाल के कारनैं, भ्रमत फिरूं चहुँ देश ।
एकघड़ी हरि भजनमें, नाहिं कियो परवेश ॥

श्रीभगवान् के वचन राजासों ॥

चौपाई ॥

सुन राजा अब तोहिं सुनाऊं । तेरे हित याकी विधि गाऊं ॥
ग्यारसिको व्रत जबहीं लीजे । करिये व्रत जागरण करीजे ॥
जादिन करे सोई फलदायक । हरिकीर्तन सबतैं सुखदायक ॥
कोटि इकादशिको फललागै । पाप मिटै जो वा दिन जागै ॥
मैं प्रसन्नहो दरशन देहों । आवागवनको दुःख मिटैहों ॥

दो० इक मन शुधचित होयके, सुन राजा सुज्ञान ।
ताके सरवन करतही, दूर होय अज्ञान ॥

चौपाई ॥

आप जगै अरु सबन जगावे । मेरे कौतुक अरु गुन गावे ॥

ताल मृदंग झांझ मुरलीधुन । शब्द करत गावे मेरे गुन ॥
प्रेम मगनसों नृत्य जु करै । मेरे चरण कमल चित धरै ॥
मैंहूं वा सँग गावन लागूं । नृत्य करूं वाहूतें आगूं ॥

दो० श्रीभागौत की कथाकूं, जो मनसूं सुनलेह ।
कोटि जनम के पाप सब, हरिहौं निस्सन्देह ॥

चौपाई ॥

अब सुन याकी महिमा जेती । तेरे हित भाषतहूं तेती ॥
एक भक्त के नेम यहौ थो । व्रत इकादशी नित्य करै थो ॥
पूजाकी विधि सबही करिके । नेम धरम चित माहीं धरिके ॥
साधुन की सेवा अति करतो । मेरे चरण ध्यान मन धरतो ॥
भली भांतिसों व्रत करिके तब । जात हुतो जागरण माहिं जब ॥

दो० व्रत इकादशी नित करै, सुनै कथा मन लाय ।
रैन बितावे प्रीति सों, मेरेई गुण गाय ॥

चौपाई ॥

एक समय मारग के माहीं । ठाढ़ौ हुतो दैत्य बलबाहीं ॥
महाभयानक घोर सरूपा । ओड़ो मुख ज्यों अन्धो कूप ॥
बड़ी भुजा दोउ सूंड़ समाना । सन्मुख भक्तकि कियो पयाना ॥

दो० जात उतें वा भक्तकूं, भई दैत्य सों भेंट ।
भली भई तू मोहिं मिल्यो, अब तोहिं लेउँ लपेट ॥

चौपाई ॥

दौरयो कूदि मारि किलकारी । हाथ चलाय थापकी मारी ॥
थाप दुष्ट की निष्फल गई । देह भक्त की निर्मल भई ॥
बहुरि क्रोध करि ठाढ़ो रह्यऊ । मुख पसारि फिरि ऐसे कह्यऊ ॥
मैं अब तोकूं जान न देहूं । भूखो बहुत बेगि तोहिं खैहूं ॥
भक्त कहै सुन दैत्य भाई । तू या बनसूं कहूं न जाई ॥
मेरो नेम आज तू राख । भोर आयहूं हरि हैं

इहीं ठौर तू ठाढ़ो रहियो । प्रात भये ही मोकूं खैयो ॥
दो० इक बाचा द्वे बाच हैं, और तीन बाचहैं मोहिं ।
निशकीरतनकर प्रातही, आन देउँ तन तोहिं ॥

राक्षसोवाच–चौपाई ॥

राक्षस कहै तू कैसे आवै । झूंठ बातसों जीव छुटावै ॥
तेरी बाचा कैसे मानूं । सांच बात तेरी क्यों जानूँ ॥
अरे बावरे भयो बावरो । आज बन्यो है मेरो दावरो ॥
मेरी बुध ऐसी क्या सठिया । हाथपरो तोहि छांडूं बटिया ॥
भक्त कहै मैं सांची भाखूं । यामें कपट न मन मैं राखूं ॥
चार घरी रैन जब रहै । इहीं ठौर तू मोकूं लहै ॥
दो० जैसे तैसे दैत्य ने, कह्यो बेगही जाव ।
मोकूं बाचा देयके, भोर भये फिर आव ॥
चल्यो भक्त अति प्रेमसों, नेम निबाहन काज ।
सुफल जनम तबजानिहों, करूं जागरण आज ॥

चौपाई ॥

मनकर तनकर राम रिझाऊं । असिप्रसन्नहो हरिगुन गाऊं ॥
बहु हुलाससों बेगही चल्यो । रोम रोम फुल्लत मन भलो ॥
उमगं उछाहसों पहुँचो जहां । साध सन्त मिल गावें जहां ॥
पहुँचो आय साधन के तीरा । भजन होत जहां गहरगंभीरा ॥
कथा कीरतन सब मिल गावें । तालमृदंग और बीन बजावें ॥
कोइ नाचत कोइरीझरीझावत । कोइ प्रेमसों मोद बढ़ावत ॥
इनहूं बैठ भजन अति कीना । हरिके चरण कमल चितदीना ॥
प्रभुके प्रेम जु विह्वल भयो । भजन करत निरमल ह्वैगयो ॥
ताली ताल बजाय रिझायो । हरिगुन गाय परम सुखपायो ॥
भोर आरती करी सुहाई । चलबे की चिन्ता मन आई ॥

दो० ऐसी विधिसों रैन सब, वीती भजन प्रताप ।
ताके दरशन करतही, दैत्य भयो निहपाप ॥

चौपाई ॥

दौरयो निकट दैत्य के आयो । जोर दोऊकर शीश नवायो ॥
कहै भक्त तू अब मोहिं खाय । भूखो है तू लेह अघाय ॥
धन धन मेरे भाग बड़ाई । यह काया तो कारज आई ॥

दो० देख्यो दिव्य सरूप तब, दैत्य भयो निहपाप ।
कुबुध बुध सब नसगई, छूट्यो सबै सराप ॥

चौपाई ॥

दैत्य कहै मैं अब नहिं खाऊं । इक इकादशी को फलपाऊं ॥

दो० भक्त कहै एकादशी, कैसे कै तोहिं देउं ।
मेरे तो पूंजी यहै, तोकूं दे कहा लेउं ॥

चौपाई ॥

तन मेरो तोहिं जा विधिभावे । लेह खाहि मोहिं यही सुहावे ॥

दो० दैत्य कहै जु इकादशी, याको फल तू लेह ।
कर आयो जो जागरन, ताही को फल देह ॥

चौपाई ॥

भक्त कहै यहहू नहीं देहूं । तोकूं दैके मैं कित जैहूँ ॥
यह शरीर तू क्यों नहिं खावे । जाकूं खाय परम सुख पावे ॥
फिर बोल्यो दैत्य कर जोरे । बहुत भांतसों किये निहोरे ॥
अरे साध अब दया करीजे । मोहिं इकतालीको फल दीजे ॥

दो० जगत परायन कारनै, प्रगट भये हैं साध ।
इकताली को फल दियो, हरी दुष्ट की व्याध ॥
ताली को फल देतही, दिव्यरूप भयो तास ।
चढ़ विवान स्वर्गहि गयो, तहां पयो सुख वास ॥

श्रीभगवान् के वचन राजासों ॥

दो० इक प्रसंग तोसों कहूं, सुन राजा मनलाय ।
ता प्रसंग के सुनतहीं, तम अज्ञान मिटजाय ॥

चौपाई ॥

कलि में प्राणी ऐसे ह्वैहैं । कथा भजनमें मन नहिं दैहैं ॥
गणिका नृत्य करेंगी जहां । अति हुलास सों जैहैं तहां ॥
कुबुधि दृष्टि सों देखें सोई । खरचें दाम मगन मन होई ॥
नेम धरमकी बात न भैहै । बृथा बादकूं मन ललचैहै ॥
जहां ज्ञानकी चरचा परिहै । अज्ञानी तिनसों लरमरिहै ॥
धर्म घटे पाप बहु होई । पाप आचरण करें सब कोई ॥

दो० बढ़ि है पूरन पाप जब, घटि है राज प्रताप ।
उमर छीन धन हीन होय, घटै पुण्य बढ़ै पाप ॥

चौपाई ॥

कुबुध संग ते नरकै जैहैं । भुगतै कष्ट महा दुख पैहैं ॥
असुर जोन को पावे सोई । नीच संग को यह फल होई ॥

दो० इहिविधि कलियुग प्रगट है, साध चहै नहीं कोय ।
कामी क्रोधी अति छली, तिनकी सेवा होय ॥ ॥

चौपाई ॥

सत संगत तें मोकूं पावे । निकट रहै मेरे मन भावे ॥
गरभ जोंन नहिं आवै सोई । सतसंगति बिन मुक्त न होई ॥
कथा पुनीत यह तोहि सुनाई । हो राजा तेरे मन भाई ॥
याविधिसो जे कलियुग माहीं । जागरण कर मेरे गुन गाई ॥
तिनको मैं सब दुःख निवारूं । भवसागरतें बेग उबारूं ॥
सतयुग त्रेता द्वापर माहीं । करत तपस्या बहु कठिनाई ॥
तबहूं मेरो दरश न पावै । इती घनी जो प्रीति लगावै ॥

जे कलियुग में कीरतन करें । पावें सुख भवसागर तरें ॥
सुगमरीति यह तोहिं बताई । सुन राजा तेरे हित गाई ॥

दो० इहि विधि श्रीभगवानने, राजहि कियो उपदेश ।
पद्मपुराण में यह कथा, कही व्यास योगेश ॥
पानी का सा बुलबुला, ऐसे सुख संसार ।
भवसागर के तरनकूं, कीरतन है ततसार ॥
पलपल छिनछिन अवध यह, घटत जात है सोय ।
शुकदेव कहें याकथा को, सुन लीजो सब कोय ॥
अहो शिष्य तोसों कही, अचरज कथा अनूप ।
शुकदेव कहैं कोई सुनें, देखे हरि को रूप ॥
श्री सतगुरु शुकदेवकूं, हितसों करूं परनाम ।
चरणदास को दीजिये, चरणन में बिसराम ॥

इति श्रीचरणदासजीकृत जागरणमाहात्म्यं संपूर्णम् ॥

अथ दानलीला श्रीमहाराज साहबश्री चरणदासजीकृत प्रारभ्यते ॥

दो० ब्रजबनिता और श्यामकी, लीला कही शुकदेव ।
चरणदास जाके सुनें, बढ़ै भक्त को भेव ॥
बालचरित्र गोपाल के, पढ़त हियो हुलसाय ।
चरणदास कहें सन्त जन, गावो मन चित लाय ॥
एक समय ब्रजभामिनि, मिल दधि बेचन जात ।
मारग रोक्यो सांवरे, लियें लकुटियां हाथ ॥
मांगन लागे दान जब, मोहन बांके छैल ।
हँसकर बोली ग्वालिनि, तू छांड़ हमारी गैल ॥
अरे तू कैसो मांगे दान, मोहन सांवरे ।
हम मांगे दधि को दान, गूजर बावरी ॥
चल्यो जारे कृष्ण मुरार, गऊ चरावरे ।
तुम ठाढ़ी रहो री गँवार, याही ठांवरी ॥
भली भांत सों देहु, तो रार सबै मिटजाय ।
जो तुम मानों नाहिनें, तो मैं ग्वालहिं देउँ सिखाय ॥
ऐसो को है लालजू, छुवे हमारी छांह ।
सुन पावेगो कंस जो, तुम भाजो ओरे ठांह ॥
को है कंस कहां को राजा, मोकूं कहा डराव ।
बाहू मार निकासहूं, तुम अब पुकारो जाव ॥
हमजानत तुम अतिबलदाई, प्रगटे मदन गुपाल ।
मुख छोटो बातें बड़ी, तुम काहे बजावत गाल ॥
तीन लोक चौदह भुवन, और सकल विस्तार ।
मेरे मुख की डाढ़ में, सदा रहे निरधार ॥

कहा बड़ाई करत हो, वन के पींचू खाय ।
गऊ चरावो ग्वाल संग, तुम बातें करत बनाय ॥
एक एकको मटकी छीनूं, देहूं दही लुटाय ।
कहा गरब की बात ये, तुम बोलत नैन नचाय ॥
सुनहु कुँवर नन्दराय के, हम बरसाने की ग्वार ।
ठाकुर है वृषभान ह्वां, तोहि जानतसब संसार॥
पहल बोहनी के समय, मेटो नाट हमार ।
भोरही कहा झगरो करो, तुम एहो बृज की नार ॥
बड़े जकाती भये हो, ढोटा मदन मुरार ।
कांन करत हैं महर की, नहीं देंह प्रीत की गार ॥
हम नन्दलाल कहावई, या जग के सिरताज ।
लेहूं हांसिल मही को, तुम दान देहु मेरो आज ॥
इति रार क्यों करतहो, ठाली कोऊ नाहिं ।
मारग हमतो छांड़दे, हम फिर अपनेघर जाहि ॥
कंस क्रूर मति हीन के, भैतें क्यों डरपाव ।
आने आभूषण कोई, मोपे गहने धर२ जाव ॥
रतन जटित गहनेन की, तुम कहा जानों मार ।
गुंजमाल पहरत सदा, मुरली के बजावनहार ॥
इन बंशी मोहे सबे, ब्रह्मा और महेश ।
सुर नर मुनि सनकादहूं, इन्द्रादिक नारद शेश ॥
कहा सराहो आपहो, कांधे कांवर राख ।
कर लकुटी तनियां पहर, चोरी को माखन चाख ॥
कोट कोट ब्रह्मण्ड हैं, रोम रोम के माहि ।
ऐसी है यह कामरी, जाकू जोगीदेख लुभाहिं ॥
जब हम घरतें नीकसी, दहनो फरको आंख ।

छींको किन्हूं तराक दे, देखो भई संकारेही कांक॥
हमहूं जब घरतें चले, सुगन भयो बन माहिं।
तुमसों भेंट भई अबे, हम लूट दही सब खाहिं॥
ऐंचातानी जिन करो, टूटें मोती हार।
छूटें लर बिखरें धरन, फिर बीनत होय जंजार॥
दाऊ की सों खातहूं, बिन लिये जान न देउँ।
टूटे तो लूटें सखा, मैंतो गोरस को रस लेउँ॥
रसको चसको जो परो, मसको घर क्यों न खाव।
छोटे अति खोटे महा, कहा सीखे करन चवाव॥
हमरे तो यही नेम है, तुमसों कह्यो सुनाय।
प्रेम प्रीति की रीति को, रस कैसें छांड़ो जाय॥
चरणदासि है चरण की, मान लेउ घनश्याम।
काहूविधि छाड़ो हमें, करजोर करें परनाम॥
क्योंहूं जान न पावहो, अहो सयानी नार।
चरणदासि कहे लालजू, ऐसे बोले बचन संभार॥
बातें कहा बनाय के, कविता करत बखान।
हा हा अब घर जानदे, मेरे प्यारे चतुर सुजान॥
हा हा खा कैसें छुटौ, छांडू नाच नचाय।
देखूं तो कैसो जम्यों, नेक दीजे दही चखाय॥
उठ बोली एक ग्वारिनी, भोंह मटक मुसकाय।
पीवो गोरस पेट भर, तुम दोऊ कर ओकबनाय॥
बैठ ऊकड़ू चावसों, कीनी ओक बनाय।
पीवन की इच्छा करी, मनमें अतिही ललचाय॥
मटकीसों डहकाय के, गुंठा दियो दिखाय।
कहो स्वाद बतलाइये, कछू मीठो है मनभाय॥

भलैं भलैं चुपकी रहो, अब द्यूं स्वाद बताय ।
रैता पैता मनसुखा, और सबल्‍ल लियो बुलाय ॥
दूरही सों बातें करो, जिन छूवो मटकी आय ।
पकड़ ले चलें नन्द पै, तेरे गुलचें दोय लगाय ॥
तबै लाड़ले सखनकूं, दीनी सैन बताय ।
चटपट मटकी झटक कै, गटक लई दधिजाय ॥
कर ठोढ़ी धर यों कहैं, दइया इन कहा कीन ।
अहो लाल ठाढ़े रहो, तुमकाहिलियो दधि छीन ॥
हम तो चाह्यो पहलही, दही नैकसो लैन ।
तुम चतुराई ठान कै, लगी मोहिं अँगूठा दैन ॥
कहा कहैं घर जायकै, सुन हो नन्दकिशोर ।
तें लूट्यो सगरो दही, और भाजन डारे फोर ॥
अरस परस झगरें सरस, नेह बढ़्यो दोउ ओर ।
केलि करें ब्रजनागरी, नटनागर कुंवर किशोर ॥
प्रेम मगन ग्वारिन भई, बाढ़ो अधिक अनन्द ।
सरबस दे पांयन परी, तब मेटे सब दुख द्वन्द ॥
अचरज लीला कृष्ण की, कहांलग करूं बखान ।
चरणदास सुकदेव दयासूं, पावे पद निज अस्थान ॥
जो कोऊ यह लीला सुनत, गावत करत बिलास ।
अमरलोक निहचय मिलै, तहां पावै नितही बास ॥

इति श्रीमहाराज साहब श्रीचरणदासजीकृत दान लीला सम्पूर्णम् ॥

अथ श्रीचरणदासजी कृत माखनचोरी लीला वर्ण्यते ॥

एक समय गोपाल ग्वालसंग लेकर धाये ।
ग्वारिन गइ जल भरन देख सूने घर आये ॥
छींके पै माखन धरो लीनो ताहि उतार ।
तबही ग्वारिन आय के पकरे कृष्ण मुरार ॥
अचरज गाइए तुम सुनियो सन्त सुजान ।
तब गहलीने श्याम चली ग्वारिन यशोदा पै॥
सखी और द्वै चार मिली संग भई जु ताके ।
बहुत दिनों चोरी करी आजही आये हाथ ॥
गुलचा देकर यों कह्यो अब क्यों न भाजो नाथ ।
अचरज गाइये तुम सुनियो सन्त सुजान ॥
ह्वांते चाली तुरत बेग माता पै आई ।
तेरो मोहन चपल जु ब्रज में धूम मचाई ॥
एक कहै मेरे घर धस्यो माखन दियो लुटाय ।
एक कहै मेरे शीशतें गागर दई ढरकाय ॥
अचरज गाइये तुम सुनियो सन्त सुजान ।
एक कहै गहि चीर हार हियेतें मेरो झटको ॥
एक कहै दधि माठ चाट धरती पर पटको ।
एक कहै मोहि घेरके दान लगावे आय ॥
तेरो मोहन ढीठ है बरज यशोदा माय ।
अचरज गाइये तुम सुनियो सन्तसुजान ॥
तब श्रीमोहनलाल मतो मनमाहिं विचारो ।
उनको मन लियो खैंच कछू टोना पढ़ डारो ॥

एक और बालक खरो ताकी पकरी बांह ।
ग्वारिन के कर दियो भेद लख्यो कोऊ नाहिं ॥
अचरज गाइए तुम सुनियो सन्त सुजान ॥
अपनो हाथ छुटाय दौर माता ढिग आये ।
लीला अद्भुत देख परमसुख मैया पाये ॥
तब हंस यशोदा ने कह्यो कहो ग्वारिनी बात ।
किह कारण आई सबै घरमें है कुशलात ॥
अचरज गाइये तुम सुनियो सन्त सुजान ॥
जो देखें कर और कहैं यह बालक काको ।
हम गहलाई कुंवर कान्ह भयो अचरज जाको ॥
सबमिल खिसियानी भई कहन लगी मुखमोर ।
नाजाने इन कहा कियो ढोटा चित के चोर ॥
अचरज गाइये तुम सुनियो सन्त सुजान ॥
पूरण पुरुष अनादि ईश तिहुं पुर को स्वामी ।
घट घट व्यापक होय रहो हरि अन्तरयामी ॥
ताके कौतुक बहुत हैं कहांलों करूं बखान ।
चरणदास सुखदेवने कह्यो भागौत पुरान ॥
अचरज गाइये तुम सुनियो सन्त सुजान ॥

इति श्रीचरणदासजी कृत माखनचोरीलीला संपूर्णम् ॥

अथ महाराज साहब श्रीचरणदासजी कृत कालीनथन लीला प्रारभ्यते ॥

राग माझ ॥

सतगुरजी के चरण मनाऊं जासें बुध परकाशे ।
ज्ञान बढ़े मन निर्मल होवे दुबिधा दुरमत नाशे ॥
बहुर ईश करतार गुसाईं तुमको शीश नवाऊं ।
चरणदास करजोर कहत है चरण कमल चितलाऊं ॥
प्रेमकथा की बात अनोखी सुनो सन्त चितलाई ।
श्रीशुकदेव कहें राजा सों अद्भुत चरित कन्हाई ॥
मनमोहन प्यारे की बतियां चरणदास मनभाई ।
काली नथन श्यामजू कीनों ताकी मांझ बनाई ॥
एक समय हरि चिन्ता कीनी विषधर अति दुखदाई ।
ग्वाल बच्छ जल पीवन जावें तिनकूं बहुत सताई ॥
वा काली को गर्व निवारूं जलसों काढ़ निकारूं ।
चरणदास हरिकियो मनोरथ जल निर्मल कर डारूं ॥
चले आपही ग्वाल गाय ले यमुना ओर कन्हाई ।
पहुँचे बेग जाय वाही ठां घर छांड़ो बल भाई ॥
हुतो किनारे वृक्ष कदंब को तापर चढ़े मुरारी ।
सोवतही सूं जाग्यो काली दई श्याम जब तारी ॥
उठ्यो रिसाय शब्द किन कीनो को आयो या ठाईं ।
पक्षीहू कोउ कैसे आवे पवन गवन ह्यां नाहीं ॥
अद्भुत चरित सुनत मोहन के मिटै पाप के भारा ।
चरणदास कहें गोविन्दप्यारे कूदपरे जलधारा ॥
दियो हलाय दोउ करसों जल काली महा रिसायो ।

चरणदास कहैं भली नींदसों जाग कोप कर धायो ॥
लिपट्यो आय क्रोधकर गाढ़ो सुन्दर श्याम शरीरा ।
देव सबै देखन कों आये लीला श्री बलबीरा ॥
फन हजार विषधर ने काढ़े देखें सबे गुवाल ।
गिरे विकल होय सब मुरझाये बिन सुन्दर गोपाल ॥
कछू उदास भये ब्रज के जन मनमें अति उकलावें ।
चरणदास कहै नन्द यशोदा अपने देव मनावें ॥
बिधना आज सुगन कछू हमको नीको लागत नाहीं ।
कृष्णकुँवर बन गये अकेले बिन बलरामा भाई ॥
चलिये अबै सबै बन धाई मोहन की सुध लावें ।
खान पान विषसम लागत है जबलों खबर न पावें ॥
व्याकुल होय तुरत उठधाये आये जमुना तीरा ।
देखें तो सब ग्वाल खरे हैं नाहीं है बलबीरा ॥
पूछन लगे सखनसूं सबही कित गयो प्राणपियारो ।
चरणदास कहैं बेग बताओ जीवनप्राण हमारो ॥
बोल न आवै भये पूतरे बिन हरि वे सब ग्वाला ।
कैसे उत्तर देउ उनहीं कूं सुध न रहीं तिह काला ॥
ढूंढ़त ढूंढ़त सबही हारे क्यों हूं कै सुधि पाई ।
चरणदास कहें जो देखें तो जल में खरे कन्हाई ॥
यह गत देखी जब सबहीने मुरझपरे भू माहीं ।
कैसें कहूं अवस्था उनकी बिकल भये तिह ठाईं ॥
माय यशोदा अतिही व्याकुल जल में कूद्यो चाह्यो ।
चरणदास बलदेव पुत्र ने माताकूं समझायो ॥
अहो मात सुन बात हमारी धीर धरो मन माहीं ।
किते कंस के दूत पछारे याकूं भय कछु नाहीं ॥

जब यह बात सुनी माता ने प्राण गयो तन आयो ।
चरणदास कहैं सब ब्रजबासी यह सुन के सुख पायो ॥
कहैं सुखदेव परीछतसों जब मोहन ऐसें जान्यों ।
मो कारन ये सबही व्याकुल शोच शोच दुख मान्यों ॥
तब तिरभंगी लालबिहारी ऐसें भेद विचारो ।
लटक मटक झटपट काली के फन ऊपर पग धारो ॥
मुरली अधर धरें करमाहीं मधुर मधुर सुर गावैं ।
बाजे बजें तीस छह छबिसों देव पुहप बरषावैं ॥
तत थेइ थेइ सांगीत कला सब घुंघरू की गत न्यारी ।
ऐसें कियो छीन बल वाको नाचत कुंजबिहारी ॥
काली भयो विकल बहु जबही मन में यही विचारो ।
मेरो गयो सकल बल तनको अब मैं यासों हारो ॥
यह तो महाबली बनमाली ऐसो और न कोऊ ।
इन सब मेरो गरब बहायो बल हरलीनो सोऊ ॥
तबै नागकी नागन आई सुता गोद में धारें ।
हरि को शीश निवा बिनती कर जोरें यों उच्चारें ॥
अहो नाथ त्रिभुवन के स्वामी तुमकों जो जन धावें ।
चरणदास कहें मुक्त होय कर सो निर्भय पद पावें ॥
हो हरि इन क्रोधी पति मेरे तुम्हरी गति नहीं जानी ।
कर्महीन ये महामूढ़मति शठ अतिही अभिमानी ॥
पै हम जानत हैं मनमाहीं यह तो है बड़भागी ।
जा रजकों सनकादिक धावें सो याके शिर लागी ॥
यह बिनती थोरीसी प्यारे बहुत मान कर लीजे ।
मोपति दीन हीन बुध मतकों दान जीव को दीजे ॥
जो पति कोढ़ी अन्ध होय तो नारी ईश्वर जानें ।

चरणदास पतिवर्त्ता सोई नारी पिय मन मानें ॥
पै धन धन है यह मेरो पति भागवान मन भायो ।
जाके संग प्रताप तिहारो मैंहूं दरशन पायो ॥
अब याहि छांड़ बड़ो जस लीजे प्राण जीवनबनवारी ।
चरणदास कहें बिनती सुनके हुए दयाल मुरारी ॥
करुणासिन्धु कृपाको सागर दुख को मेटन हारो ।
ह्वै दयाल काली के ऊपर जीवत ताहि उबारो ॥
चरणदास कहें हरि उठ बोले मनमें शंक न लावो ।
कुटुम्ब सहित तुम अबही ह्यांसों उदधपुरी कों जावो ॥
मेरे चिह्न चरण के तेरे माथे अधिक सुहावें ।
जाको दरशन गरुड़ देख के तोकूं शीश नवावें ॥
चरणदास कहें ऐसे हरिने काली को वर दीनों ।
तब विषधरने कर परिकरमा गवन सिन्ध को कीनों ॥
काली नथन स्यामजू करके कालीनाथ कहाए ।
चरणदास कहें हरिदरशनसों ब्रजजन आनँद पाए ॥
यह हरिकथा यथामति गाई जो सुनके मन लावे ।
विषधरको भय नाहीं व्यापै अन्त परमपद पावे ॥

इति श्रीमहाराज साहब श्रीचरणदासजीकृत कालीनथन-
लीला संपूर्णम् ॥

अथ मटकीलीला प्रारभ्यते ।

पीरो फैटा तुर्रो थिरकत नाक बुलाक अधर मटकी ।
मन्द मन्द मुसकात कन्हैया कुण्डल चपलासी झटकी ॥
सब तन कछें सजें आभूषण कट ऊपर जुलफैं लटकी ।
चरणदास देखत मन व्याकुल चट चौपट मटकी पटकी ॥१॥
सुन्दररूप सलौनीसी अँखियां तिलक भाल अलकें लटकी ।
मोरमुकुट कुण्डल की झलकें चरणदास हियेमें खटकी ॥
मुतियनकी माला मुरलीवाला सुध न गई पियरे पटकी ।
चित चुराय जबही मेरो लीन्हों चट चोपट मटकी पटकी ॥२॥
मुरलीकी धुनसुन बिरहवान लग आय कलेजेमें खटकी ।
दधिभाजन ले धरो शीशपर मोहन देखन कूं सटकी ॥
चरणदास काहू की न माने सास ननद केतो हटकी ।
चार दिरग जब भये श्यामसूं चट चोपट मटकी पटकी ॥३॥
हँसता देख मदन मोहनकूं ग्वारन आपन कूं ठठकी ।
दौर कन्हैया जाय गही जब पकर चीर करसूं झटकी ॥
चरणदासहूं हाहा करती सुन्दर पायनकूं लटकी ।
केतो कहोजु कछु नाहीं मानत ले मटकी चौपट पटकी ॥४॥
कहै यशोमत सुनो ग्वारनी तू आई भूली भटकी ।
मेरो कान्ह अति बारो भोरो कहा जानें फोरन मटकी ॥
अधरन दूध नहीं अब सूखो बालक बुद्ध वही घटकी ।
चरणदास तू झूंठी ग्वारन किन मटकी चौपट पटकी ॥५॥
कहै ग्वारिनि सुनो यशोमत यह गत सुन अपने नटकी ।
हूं मारगजात चली अपने मेरी पकर बांह फोरी मटकी ॥
मैंआप बचाय चली मग औरे चरणदास के तो फटकी ।

वह चातुर श्यामलखै सबनारिन ले मटकी चौपटपटकी ॥६॥
रात निहारे झिलमिलतारे चन्द चाँदनी रही छिटकी ।
निकस भवन से भजो कन्हैया हाथलिए दधि की मटकी ॥
चरणदास हूं पाछे परिया बन कुञ्जन कुञ्जन भटकी ।
दधि मोराखाय गार मोहीदे चट चौपट मटकी पटकी ॥७॥
कहेयशोमत सुनो ग्वारनी राह गहो बंशीबटकी ।
पकड़ कन्हैया भीतर लाऊं मारूं एक भली चटकी ॥
कहाकरूं विर मानत नाहीं वाहर जात घनों हटकी ।
चरणदास जो चाहे सो लै जो मटकी चौपट पटकी ॥

अथ गोपीबिरहनिवेदन

राग हेली ॥

धन्य कुबजा को प्रेम हेली जिन हमरो पियाबस कियो ।
हमकों तज मथुरा गयेरी अरी हेलो वाको राख्यो नेम ॥
कहाकहिये अक्रूरसोंरी अरीहेली लेगयो हरिकूंनाल ।
हूं बिरहन बौरी भई ब्याकुल और बेहाल ॥
वे सुखरास विलासकेरी अरीहेली छिन इक भूलतनाहिं ।
बांकी चितवन लाल की कसक उठे हिए माहिं ॥
बनबनबिहरत संगफिरेरी अरीहेलीघरघर माखन खाय ।
अब हरि हमसों बीछरे तासूं कहा बसाय ॥
दूत दले बहु कंस केरी अरी हेली हमरी करी सहाय ।
इन्द्र बरष्यो कोपसों जब हमें लिये बचाय ॥
कैसे निठुर कठोर हैंरी अरी हेली नेह लगाय गए भाज ।
छायरहे वाहू देश में कृष्णकुँवर महाराज ॥
ऐसो दिन कब होयगोरी अरीहेली दरश दिखावें श्याम ।
तनकी तपत बुझायहैं आनन्दघन घनश्याम ॥
जो शुकदेव दया करेंरी अरी हेली जब मनहोवे धीर ।

चरणदासि की पीर कों आय हरें बलबीर ॥१॥
नन्दलला की बात हेली कहा करूं नहिं कहसकूं।
सकुच लगे जो मैं कहूं री अरी हेली मोपे कह्यो नजाय॥
अपने अटा जो हूं चढूंरी अरी हेली सौंही देखे आय।
लालच लागोही फिरै मुरली की टेर सुनाय॥
मोहिंदेख हक धक रहैरी अरी हेली गहरे लेत उसास।
दोहा गाय वियोग का अतिहो होत उदास॥
तब जमुना जलकोंचलूंरो अरीहेली देखतटोकत जाय।
मैं न लखूं वा ओर कों मेरी गागर चोट चलाय॥
धूप माहि जोहूं चलूंरी अरी हेली करै मुकुट की छाँह।
हँसे हँसावै दूरसों मेरी गहे अकेले बाँह॥
वहमोपे मोहित भयोरी अरीहेली मेरोहू मन ललचाय।
प्रीतलगो दोउ ओर सों मत घर वर छुटजाय॥
कुल मेरो लाजो सबैरी अरी हेली बुरो कह्यो सब लोग।
मैं अपने वस ना रही लगो प्रेम को रोग॥
देखतही सुख ऊपजैरी अरी हेली ओट भये दुख होय।
चरणदास हरि की भई नैन लुभाने दोय॥२॥
मेरे मन की पीर हेली को समझै और को सुनै।
जबसों बिछुगे सांवरोरी अरी हेली तबसों बिकलशरीर॥
सुधबुध सबविसराइयारी अरी हेली देह सुहातन चीर।
निशि दिन मग जोवत रहूं कहां रहे हार हीर॥
क्योंकर जीवन होयगोरी अरी हेली रंचक रह्यो न धीर।
छिन छिन गति भई औरही कहा करूं हे बीर॥
फूलगंध आवै नहींरी अरीहेलीलागत कठिन करीर।
मित्र विना चित्रसी भई ज्यों मछली विन नीर॥

रोम रोम घायल भई अरी हेलो लगो प्रेम को तीर ।
कृष्ण बैद बिन को करै औषध की तदबीर ॥
जो कबहूं किरपा करेंरी अरी हेली वे शुकदेव गंभीर ।
विरह बिथा चरणदासि की मेटैं श्री बलबीर ॥३॥
रास रच्यो नन्दलाल हेली वृन्दावन के मांहि ।
संग बिराजे राधिकारी अरी हेली अपने पियके नाल ॥
मुरली मधुर बजाइरी अरी हेली सुनत भई बेहाल ।
जेती ब्रजबाला सबै तनकी रही न सँभाल ॥
खानपान बिसरायकेरी अरी हेली उमंग चली बन मांहि ।
जो नहिं मानै सांच तू वे देखो दौरी जांहि ॥
शरदरैन अति सोहनीरी अरी हेली फैलो पूरन चन्द ।
चतुरानन मुनिजन रिषिन मोहे सनक सनन्द ॥
पशु पक्षी मृगहू थकेरी अरी हेली शंकर छोड्यो ध्यान ।
बाढ़ी निश शशिहू थक्यो रंभा भूली तान ॥
तीस और छह बाजे बजेंरी अरी हेली राग रागनी साथ ।
तत थेई थेई झुनकार सो नाचें गोपीनाथ ॥
अब हम तुम दोऊ चलेंरी अरी हेली जहां शुकदेव दयाल ।
चरणदासि होय देखेहैं अद्भुत चरित गुपाल ॥४॥
होरी खेलैं सांवरो ग्वाल बाल ले संग ।
कोऊ ढफ ताल बजावईरी अरी हेलो कोऊ बीन मुहचंग ॥
लाल बसन सबके बनेरी अरी हेली लाल लालही पाग ।
नाचत कूदत चावसों गावत आए फाग ॥
गैल रोक ठाढ़ो भयोरी अरी हेली काहू जान न देत ।
सैन बताय सखान कों छीन मटकियां लेत ॥
बहुर आय रंगसों रंगैरी अरी हेली चोवा देत लगाय ।

अबीर गुलाल और अरगजा मुखपर दे लपटाय ॥
हो हो हो होरी कहैंरी अरी हेली छोड़ै नाच नचाय ।
हा हा हा करवाय कै फगुवा देत मँगाय ॥
प्रेम प्रीति रसबस करैरी अरी हेली बांकी चितवन डार ।
चरणदासि शुकदेव की लीला अपरम्पार ॥५॥

राग मंगल सुहा बिलावल ।

चरणदास पिय मोहन प्यारे मोपे कछु टोना कियो ।
देखतही सुध रही न सखीरी खैंच मन कों ले गयो ॥
ताही दिनतें भई बौरी नींद और गई भूख है ।
चितको चिन्ता अधिक बाढ़ी तन गयो सब सूख है ॥
कहा करूं कासूं कहूं सजनी लाज की मारी मरूं ।
एक दिन सखी बरस बीते बिरह पावक में जरूं ॥
चरणदासि शुकदेव प्यारे कृपा मोपै कीजिए ।
मोहन के ढिग जाय सजनी मोहिं सुध आ दीजिए ॥
बिथा मोरी सब सुनावो ओड सूं सब दुख कहो ।
वह तुम्हारे लिए तरसें तुम क्योंना उनकूं चहो ॥
ज्यों बने त्यों पिय मिलावो दरस मोहिं दिखाइए ।
कछू छल बल बनैं तो सजनी संग ही ले आइए ॥
चरणदासि भल भाग सजनी लाल हम घर आइयो ।
जिन सखी मेरे पिय मिलाये सो सदा सुख पाइयो ॥
मेरे मन कों सुख जो दीनों तनकी तपत बुझाइया ।
मोहन के संग रली मानी आनंद मंगल गाइया ॥
एक संग जब भोजन कीनों और ले बालम कहो ।
वा समय की कथा अद्भुत वह समो सखी नित रहो ॥
चरणदासि पिय सखी तेरी लाग चरनन सूं रही ।

दासि अपनी जान मोहन आप कर बैनी गुही ॥
प्रीतम बैनी गुहन लागे मैं सखी दरपन लियो।
पीठ पाछे मुख छिपाकर मंद मंद मुसका दियो ॥
गुह चुके जब पीठ कर धरो हूं सखी पाइन परी।
जा समय पर गुही बैनी सदा रहियो वह घरी ॥

राग सोरठ ॥

अँखियन कहा नीकी करी।

श्याम सुन्दर छबि निरख के जहाँ जाय अरी ॥
लोक की सब लाज छूटी कुल की दूर धरी।
अतिहि व्याकुल धीर नाहीं रहत असुवन भरी ॥
तजों खान अरु पान सोवन प्रेम की लागी लरी।
बिरह पीड़ा उठत निशिदिन हिये पावक जरी ॥
नेह वाके भई बौरी ढूंढ़ी गरी गरी।
चरणदासि शुकदेव के अब कौन फंदे परी ॥

राग भैरवी ॥

नैनन साँवरो रह्यो छाय।

दशहु दिशि सखि श्याम दीखत और ना दरसाय ॥
स्वप्न जाग्रत श्याम सूझे और नाहिं सुहाय।
श्याम मुखसों बोल निकसत उठत हियसों हाय ॥
श्याम बिन छिन चैन नाहीं जिया अति अकुलाय।
चरणदासि शुकदेव गुरु मोहिं श्याम देहु मिलाय ॥

राग सोरठ ॥

हरि पै जानदे पति मोकूं।

घेरी आय बाट के माहीं कहा कहूं अब तोकूं ॥

या मथुरा की बहुब्रजनारी बिंजन अधिक बनाये ।
लै लै भेंट चली मोहन कूँ निकट गांव हरि आए ॥
मो कारन यह सखी सहेली हैं इकठौरी ठाढ़ी ।
बाट निहारैं वेगि पधारैं प्रीत श्याम सूं बाढ़ी ॥
चौबे बोल्यो मूरख नारी तू सुध बुध क्यों खोवे ।
अपनो पुरुष तजै जो तिरिया कुलकी लाजडुबोवे ॥
तातें इनको संग छांड़के चल अपने घर माहीं ।
हम तो विप्र सबन तें ऊंचे यामें संसे नाहीं ॥
चौबन कहै सुनौ हो स्वामी मोहिं लाज नहिं भावै ।
बिगड़ै काज लाज सूं मेरे बिरथा बाद बढ़ावै ॥
तुमहुं नहीं या तनके साथी देखा समझ विचारा ।
वे दीनन के नाथ कहावें पतित उधारनहारा ॥
हठ नहिं कीजे आज्ञा दीजे अबहीं उलटी आऊं ।
हा हा तुम्हरी आज्ञा सेती प्रभुको दरशन पाऊं ॥
तबहिं रिसाय पकर कर ल्यायो पगमें बेड़ी डारी ।
खंच दई कोठे के भीतर पटदे सांकल मारी ॥
फिर बोली मंदिर के अन्दर सुन हो सांच हमारो ।
जीवत बहुरि मिलूं नहिं कबहूं देखूं मुख न तुम्हारो ॥
जानत हूं तू बड़ी हठीली भई विषय रस बौरी ।
मारूं खड्ग निकासूं तेरी अबै प्रेम की डोरी ॥
तब तो चलीं सबै वे नारी याकी आशा त्यागी ।
तज के देह गई आगेही वह बनिता बड़भागी ॥
हरि रीझे जब चरनों लाई भौसागर सूं त्यारी ।
चरणदासि शुकदेव कहत हैं करी प्रेम हित प्यारी ॥

———

(श्रीधरब्राह्मणलीला)

राग काफी ॥

सुनोरे साधो मोहन की बतियां ।
श्रवनन सुन हियरो हुलसत है शीतलहो छतियां ॥
कृष्ण पूतना जब हरि मारी सुनकर कंस डरायो ।
श्रीधर ब्राह्मण अपने घरको तासों दुख समझायो ॥
बोल्यो द्विज मोहिं आज्ञा दीजे अबहीं गोकुल जाऊं ।
काजकरूं तेरे मन भायो हति बालक घर आऊं ॥
बीड़ा लेकर चलो ब्राह्मण पहुँचो गोकुल जाई ।
दई आशिष नंद यशुदाको जीवो कुँवर कन्हाई ॥
ब्राह्मण रूप देख यशुदा ने आदर कर बैठायो ।
ले चरणोदक पूछन लागी किह कारन तू आयो ॥
बोल्यो बचन कपट के जैसे सहत छुरी लिपटायो ।
तेरे भयो पूत मैं सुनके तासु देखने आयो ॥
पलना पौढ्यो ललना अबहीं जागै तब दिखलाऊं ।
तुम बैठो मैं जमुना जाऊं न्हाय बहुर घर आऊं ॥
सूनो मन्दिर देख श्रीधर दाँव पाय उठ धायो ।
मारन कारन कियो मनोरथ मनमें अति हुलसायो ॥
अन्तर्यामी उठो अचानक श्रीधर पकड़ पछारो ।
दे छाती पर जीभ मरोड़ी नाहिं जीव सूं मारो ॥
बहुर दह्यो ले मुखसों मीडो अरु भूमें ढरकायो ।
आपन पौढ़ रहे पलना में यह कौतुक दरसायो ॥
आय जसोमत पूछन लागी अरे कहा यह कीनो ।
बोल न आवे सैन बतावे हरि सौंही कर दीनो ॥
रिसाय खिसाय कर चलो कंसपै जीभ खोय घरआयो ।

हांफत कांपत लिखी अवस्था राजा कूं दिखलायो ॥
पढ़कर कंस धुनैं मूड़ो कूं अब कहा कीजे भाई।
चरणदास सुखदेव श्याम की लीलापै बलिजाई ॥

राग काफ़ी ॥

मुकुट पर वारीरे नागरनन्दा।
सब सखियन में यों हरि राजै ज्यों तारन में चन्दा ॥
बृन्दाबन की कुंज गलिन में खेलत बालगोविन्दा।
चरणदास चरणन को चेरो चरण कमल रज बन्दा ॥

राग धनासरी ॥

मोहन बांसुरी में टेरोरी।
तामें हो कर टोना कीन्हो सरवन सुनि हीयो घेरोरी।
जबसूं विरह विथा तन दौरी परबस है मन मेरोरी ॥
व्याकुल हो देखन कूं धाई नैनन सूं मग हेरोरी।
श्यामसुन्दर बिन कछु न सुहावे कोई मिलावे नेरोरी ॥
शुकदेव सखी तुमपै बलिजाऊं करूं निहोरो तेरोरी।
चरणदासि होयरहुँ तिहारी कछू सुनावो व्योरोरी ॥

रागी काफ़ी ॥

वंशीवारे सों लगन मोरी लाग गई।
हूं आवतही अपने घरकूं सहज अचानक भेट भई ॥
ठाढ़ोरहत सखा संग लीये सघन कदम्बकी छाही छई।
कहाबरनू सांवरे कीशोभा शेषथको छविजाय न कही ॥
अलक झलक माथे तिलक बिराजै सीसजरकसी पागनई।
फेंटा ऊपर तुर्रा थिरकै गल माला कर मुरली लई ॥
हँस टौना कियो श्यामसलोने प्रेम ठगौरी मोपै डारदई।
चितवनमें मेरो मनहरलीनूं बौरीहुई कछु सुध न रही ॥

तनव्याकुल जियै उमड़ोही आवे रोम रोम हरीरूप मई ।
चरणदासिकूं शुकदेवा गुरु भक्तिदान बरद्योह यही ॥

राग काफी ॥

बाजत घुंघरू की झनकारी हो ।
नृत्यत अजब अनोखी गतसों । कृष्ण कुंवर गिरधारी हो ॥
मुकुटजटित सिर अधिक बिराजत अलक झलक घुंघरारी हो ।
तान मान सुरताल मधुरधुन तत्त तत्त ततकारी हो ॥
उघरत गत सांगीत कला सब पग नूपुर झुनकारी हो ।
जुगल स्वरूप रूप अद्भुत धर बिहरत दे दे तारी हो ॥
रसिकशिरोमन लालमनोहर सन्तन को रखवारी हो ।
चरणदासि शुकदेव श्यामके चरण कमलपर वारी हो ॥

राग माझ ॥

मोहनजी तुम साहिब मेरे । मैं हूं दासि तिहारी ।
तनमन धन सब तुमपर वारूं । बार बार बलिहारी ॥
तुम बिन हमरो कोऊ नाहीं । यह सरवन सुन लीजे ।
चरणदासकूं चरणन सेती । नेक जुदो नहिं कीजे ॥१॥
हूंतो चरणकमल लिपटानी । तुम क्यों न पकरो बाहीं ।
जैसी लगन है मेरे मनकूं । तेरे मनकूँ नाहीं ॥
ऐसी प्रीतिकरी मोहनजी । निपट कपट की सानी ।
चरणदासि पिय मो मन माने । मैं पिय मन नहिंमानी ॥२॥
पिय प्यारेजी जुलफ तिहारी । नागनसी अतिकारी ।
डस गई हिरदे माँझ हमारे । ता दिन दिष्ट निहारी ॥
ताको विष नखशिखलों बाढ़ो । बिथापीर अति भारी ।
चरणदासि लहरें मोहन बिन । उतरत नाहिं उतारी ॥३॥
छाती दरकी गवन सुन्यो जब । तन व्याकुल मन कंपो ।

भई अचेत गिरी धरनी पर । नैनन दोऊ पल झंपो ॥
फिर आई सुरत आहकर बोली । नैनन नीर बहायो ।
चरणदासि हियलग्यो उमाहो । घर अंगना न सुहायो ॥४॥

मोहनने मेरो मन मोह्यो । देखत कछु कर डारो ।
ताहि दिन तें भई बावरी । ए सखी रोग बिचारो ॥
फिर फिर उठत गिरत धरनी पर । लगन लहर लहराई ।
चरणदास कहु जीवन कैसो । विरह भुवंगम खाई ॥५॥

विरह बिथा नख सिखसूं दौरी । तन में रह्यो न लोहू ।
मित्तर दौर वैद कूँ लावैं । रोग न जानत कोऊ ॥
मनमोहन दे रूप लुभानी । गिरी शहद ज्यों मक्खी ।
चरणदास अब जतन कहाहै । तब नहिं अँखियां रक्खी ॥६॥

लटकचाल सुन्दरतन निरखत । मुखपर ससि बलहारी ।
नैन दरारे बांकी भौंहैं । जुलफ भुवंगम कारी ॥
हँस हँस बचन बान मोहिं मारे । लगे कलेजे मांहीं ।
चरणदासकसकत निसदिन अब । क्यों ही निकसत नाहीं ॥७॥

मोहन लटक चलन चष चंचल । रूप सरूपमें भारी ।
घरसूं आंगन आंगनसूंघर । नक झुनक झुनकारी ॥
हँसतें झरें फूल मानों पांती । बात कहत जानो मोती ।
चरणदास घायल मायल भए । देख परम गत जोती ॥८॥

मोहनजी दोउ जुलफ सँभारो । सांपन सुत मतवारे ।
झूमत रहत कपोलन ऊपर । श्याम भुवंगम कारे ॥
विषके भरे नाग के छौना । मन कूं डर जु हमारे ।
चरणदास को हियो डसि है । जब को लहर उतारे ॥
पिय प्यारेजी कोप न कीजे । तुम कूं नहीं बन आवे ।
तेरी भौंह मरोरन आगे । मेरो जी डर जावे ॥

बचन कठोर कहो जनि मुखसूं। बरछी अनी जु लागे।
चरणदास अब थरहर कांपै। एजी मोहन तेरे आगे॥

राग कल्याण॥

गंगा स्वर्गलोक सूं आई।
बावनजी के पग सूं प्रगटी शिवकी जटा समाई॥
कलजुग मध्य बहुत पतितन के निस्तारन कूं धाई।
अधम उधारन पाप निवारन तारन तरन कहाई॥
तब भागीरथ करी तपस्या शंकर भये सहाई।
किरपा करकर जबही दीन्ही भागीरथी कहाई॥
अतिही पावन सब मन भावन कहांलों करूं बड़ाई।
धूप दीप ले करौ आरती फूल अरु पान चढ़ाई॥
दरशन करके शीश नवावो अंत परम पद पाई।
चरणदास हरि चरनोदक की सुखदेव महिमा गाई॥

राग झँझौटी॥

एसे कीजे गंगा का अस्नान।
पाप प्रतिग्रह नाहीं लीजै दया धर्म उर आन॥
भजन ध्यान अरु कथा कीरतन सेवा पूजा दान।
या विधिसों जो दरशन करिहैं पावें मुक्ति निदान॥
अस जो कूद करें जल गदला विषै बासना ठान।
मेला जान तमाशे जावें फल नहिं रंचक मान॥
हरि चरनोदक प्रगट भयो है यह निहचै जियजान।
चरणदास शुकदेव कहत हैं करो प्रेम सूं पान॥

राग हेला॥

गंगाजी की धार हेला पाप कटन कूं आर है।
जो कोई न्हावे प्रीत सूं रे अरेहेला उतरे भौजलपार॥

जेते तीरथ और हैंरे अरे हेला तिन में है सिरदार ।
प्रगटी प्रभु के चरन सों महिमा अगम अपार ॥
अकाल मोत पावे नहींरे अरेहेला निहचै मनमें धार ।
शीश निवा दरशन करो मिटै कष्ट के भार ॥
बहुर जोन आवे नहींरे अरे हेला कहैं शुकदेव पुकार ।
चरणदास अचवन करो हरि चरनोदक सार ॥

आरती ।

आरती गंगा माई की कीजे । बस वैकुंठ महासुख लीजै ॥
स्वर्गलोक सूं गंगा आई । शिव की जटा में आन समाई ॥
सेवाकर भागीरथ लीनी । मृत्यु लोक में परगट कीनी ॥
फूल पान मिष्टान चढ़ावो । कर कर दरशन शीश नवावो ॥
शीश छुवाय न्हाय जो कोई । पाप कटें और निर्मल होई ॥
चरणदास शुकदेव बखानी । पतितउधारन सुरसरि जानी ॥

इति श्रीचरणदासजीकृत शब्द संपूर्णम् ।

अथ कवित्त प्रारभ्यते ॥

कवित्त ॥

जुगताधरि ध्यानधरैं जिसको तपसी तनंगारिके खाकलगावें ।
चारसु वेद न पावत भेद बड़े तिरदेव नहीं गति पावें ॥
अकास पताल मृत्युलोकहीमें जाको नामलिये सबहीसिरनावैं ।
चरणदास कहैं ताकूं गोप सुता करतारी दैकर नाच नचावैं ॥

पीतम्बर की मेखला मुद्रा किए कुंडल की चन्दन की विभूत लायें देखो इक जोगिया । मुरली कीनादपूरें शब्द तो कहै अलेख दधहूकी भीख मांगें सबही बिध भोगिया ॥ वाको

स्वरूप आली अटक्यो है मेरे चित कछु ना सुहात अब भयो तन रोगिया ॥ कहै चरणदासि दोऊ नैना तो डिगम्बर भए मिलत नाहीं प्यारो मन भयो है वियोगिया ॥

निसबासर ध्यानकरें प्रभुकों रसना रससूं हरि नाम पढ़ी ।
जमनातट जाय अस्नान करें नित सेवाकरें इक पाय ठढ़ी ॥
दीनानाथ तुम्ही हम दीन प्रभू मोहिनाथ अनाथजु कीजे वढ़ी ।
चरणदास कहें सुता भीषम की हरिनाम लियें सुख सेज चढ़ी ॥

वेदहूं कूं मानें अरु पूजें पुरानहूं कूं गीताहू समझें जो गुरु ने समझाई है । ब्राह्मणके पायलागूं मारूं मुख पण्डित को वेद को छिपाय भेद और गत गाई है ॥ पढ़ पढ़कै अर्थ करें हिये मांहिं नाहिं धरें करें ना विचार सब दुनियां भरमाई है । कहै सोतो करें नाहिं पण्डित एकहू माहिं शुकदेवजी के दास चरणदास गति पाई है ॥

लीलाहैं अनन्त नामरूप हैं अनन्त जाके शक्ति हैं अनन्त वारपारहू न पायो है । महिमा अपार रहे देव मौन धार सुख जै जै उचार निज शीशहू नवायो है ॥ ब्रह्मासे अनन्त सोऊ वेद को उचार करें नारद अनन्त जाको गुणाबाद गायो है । कहें चरणदास सोई नन्दको दुलारो प्यारो देदे नवनीत ब्रजबालन नचायो है ।

वेदविधि जग्य भोग अरप्योहू लेत नाहिं ग्वालन को दधि झूंठो खोस खोस खायो है । जाको भै मान लोकपालहू नवावें शीश सोतो भक्तिभाव बस हाऊतें डरायो है ॥ जाकी मायाबस जीवबँधे तिहुंलोकहूके सोतो प्रेम बस होय ऊखल बँधायो है । कहें चरणदास नँदनन्द ब्रजचन्द प्यारो नवनीत काज ब्रज ग्वालनी नचायो है ॥

नेति नेति कहि ताहि वेदहू बखान करें ब्रह्मा आदि सुर मुनी निसदिन ध्यायो है । शेशहू रटत जाको पावत न ओर छोर ताहि को यशोदा मैया गोद में खिलायो है ॥ शिव सनकादि ताहि खोज खोज हारिरहे ब्रजबाला प्रेमबस रासहू रचायो है । कहैं चरणदास शुकदेव के प्रताप सेती आदि पुरुष भक्तिहेत नन्दगेह आयो है ॥

जाको ब्रह्मा वेद माहिं गावत हैं नेति नेति ताहि ब्रज ग्वालवाल ख्यालहू खिलायो है । शिव सनकादि ताको पावत न आदि अन्त पूतकहि ताहि बाबा नन्दने लड़ायो है ॥ जाकी शक्ति आसरे खड़े हैं ब्रह्मण्ड पिण्ड ताको ब्रज-नारी पाँय चलन सिखायो है । कहैं चरणदास शुकदेव के प्रताप सेती आदि पुरुष भक्ति हेत नन्दगेह आयो है ॥

पद राग सोरठ ॥

नारायन नारायन रटो निज मूल ।
थोड़ासा जीवन घनीसी भूल ॥
आयाथा कुछ लाहा कारन लगा यहां तू पूंजीहारन ।
आगे साह लगेगा मारन अब तू करले जियका सूल ॥
जिनहरितेरी रक्षाकीनी ताती पवन लगन नहिं दीनी ।
तैं वाकी सेवा नहिं कीनी पानीसे तू किया अस्थूल ॥
अबतू बिसर गया उस पियकू गर्भमांहि सुखदीया जियकू ।
तलमूड़ी ऊपरको पाँवथे जठर अगनि में रहा तू झूल ॥
अब तुम सुमरो श्रीपति देवा छिनमें पारलगावें खेवा ।
जबजम आवें जियकेलेवा हाथमें फाँसी अरु तिरशूल ॥
चरनहिदासकहेंहितचितकी यह संसारखानि है बिषकी ।
जगत बड़ाई है दिन दसकी दया अमरफल पाप बबूल ॥

श्रीश्यामाश्याम।

श्रीराधाकृष्णाय जुगलचरनकमलमकरन्दाय नमो नमः ॥

अथ श्रीमहाराज साहिब श्रीचरणदासजी कृत कुरुक्षेत्रलीला प्रारभ्यते ॥

अष्टपदी छन्द ॥

अपने गुरु शुकदेव कूं शीश निवायकै।
साधो कहूं कथा भागौत सुनो चित लायकै ॥
चरणदास के इष्ट कृष्ण गोपाल हैं।
दुख हरन सुख करन सुदीन दयाल हैं ॥
दसम स्कन्ध बिषै यह कथा सब गाइ है।
राजा परिच्छत कूं शुकदेव सुनाइ है ॥
राज सिंहासन ऊपर बैठे थे हरी।
काहूने सूरज गहन की चरचा आ करी ॥
जब श्री मोहनलाल मतौ मनमें कियो।
न्हान चलैं कुरुक्षेत्र सबनसों यों कह्यो ॥
तब अधिकारन कूं बुला आज्ञा दई।
बेग करो सामा चलबे की यों कही ॥
नगर द्वारिका लोगन कूं उत्सव भयो।
सब काहू ने ठाठ चलन ही को ठयो ॥
हाथी और हथनाल घोड़े और पालकी।
ऊंट कजावे साज डोले और नालकी ॥
रथ चंडोल सवारे सबै बनाय कै।
सखी सहेली लई मांहि बैठाय कै ॥
तोप रहकले बान जु आगे चलाइया।

खच्चर और घुरनाल को अन्त न पाइया ॥
नौवत और सहनाय नफीरी वाजई।
तुरही और करनाय भेर धुन गाजई ॥
ध्वजा पताका निसान वनै मन भावनें।
रंग सुरंग फरकें सुनहरी सुहावनें ॥
रुक्मिन और पटरानी आठों साथही।
चाले सैन सिंगार द्वारिका नाथ ही ॥
राजा राना संग चले बहु साज सों।
हौदा सों हौदा मिलाय और गजराज सों ॥
तीस और छः वाजे वजैं आनन्द सों।
पण्डित गुनी महन्त चले जु घमण्ड सों ॥
सेना को दल जात न काहू पे गिनों।
मानों उमड़ो मेघ चहूं दिस चौगुनों ॥
वेगही पहुंचे जाय क्षेत्र के माहिं ही।
केई जोजन लों कटक परो वा ठांहिं ही ॥
राजन कूं अज्ञादई उतरो सवै।
कर परिनाम जु आये डेरों में तवै ॥
सकल कुटुंब संग न्हाये मोहन लाल हूं।
दान दिये बहु भांतिन के तिंह काल हूं ॥
रंक सवै राजा भये वा दान सों।
विप्र पढ़ैं धुन वेद जु वहु सनमान सों ॥

दोहा ॥

कर अस्नान भोजन कियो, पहरे बसन बनाय।
चरणदास कहैं सभा में, जदुपति बैठे आय ॥

अष्टपदी छन्द ॥

बातन हूँ में बातजु ब्रज की आइया ।
बोले श्री जदुनाथ परम सुख पाइया ॥
ब्रजवासिन की सुध जु कहूँ कोई पावई ।
हमसों कहियो आय यहीं मन भावई ॥
कृष्णकुंवर की सबै कही जो बनाय के ।
ब्रजवासिन की बात सुनों चित लायकै ॥
अब ब्रजवासिन बात कहूँ मन भावती ।
प्रेम प्रीत रसरीत जु सबै सुहावती ॥
नन्द महर वृषभान गोप हूँ आइया ।
कीरत जसुधा आदि सबै तहां धाइया ॥
श्री राधा संग आई बहु ब्रज बाल हूँ ।
गइयन बछरन साथ आये सब ग्वाल हूँ ॥
उतरे आछी ठौर मगन मन होय के ।
हरि के चरनों मांहि सुरत समोय के ॥
तबै अचानक बात कही कोऊ आय के ।
गहन न्हान घनश्याम हूँ आये धाय के ॥
देवकी और वसुदेव कुटंब संग आइया ।
नगर द्वारिका बासो सबहीं धाइया ॥ १ ॥
यह सुनके नन्दादिक कूं आनन्द भयो ।
खान पान गये भूल हिये में सुख छयो ॥
दौरो ढूंढो जाय कहां हरि ऊतरे ।
हम तो उन बिन भये काठ के पूतरे ॥
एक कूँ है देखे पहिचानें अकि नहीं ।
लाज मान हैं वे हमरे तन देखहीं ॥

राजा ह्वै जाय द्वारिका नाथ हैं ।
जदुबंसी कुल मांहिं तो जादव नाथ हैं ॥
सकल खण्ड के राजा शीश निवावई ।
हम तो मूढ़ गँवार कैसे जानें पावई ॥
राजाहू नहीं जानै पावे द्वार लों ।
खांहि छरिन की मार पौर रखवार सों ॥
होनी होय सो होय चलें अरराय कै ।
मारहु खाते जांय धसें दरराय कै ॥
आये सुन गोपाल सबै सुख पाइया ।
ग्वाल गोप ब्रजबाल जु अंग न समाइया ॥ २ ॥
धन धन है दिन आज भैया हरि आइया ।
कहैं परस्पर बात ऐसें बनाइया ॥
एक कहै वाहि गहि बृन्दावन लै चलें ।
एक कहै हमदाँव आज लैं हैं भलें ॥
कहै एक सुनोरे भैया हरि आवई ।
कहै एक चुप रहो आवन देहु तौ ।
अपने नैनन देख मिलो सुख लेहु तौ ॥
रौल बौल सुन गाय चक्रित सी हो रही ।
श्रवन देके बैन थकित सब हो गई ॥
हरि बिन जोवे धैंन भई दुख पायसी ।
दूधहीन तनछीन रही मुरझाय सी ॥
कूदत फांदत चौंकी सुन यह बातही ।
मन आनन्द बढ़ाय फूली न समात ही ॥
हरष मान बछरन कूं लातें मारही ।
मुख थन नहिं दें है जु झिझक बिडारहीं ॥ ३ ॥

बछरा कहैं कहा भयो इन गाइयां ।
भूखे रांभत फिरैं और डकराइयां ॥
धौरी धूमर सांवर और उजागरी ।
कजरौटी और पीरी सबतें आगरी ॥
श्री मोहन की प्यारी गायें रस भरी ।
हरि से रहती नाहीं न्यारी पलघरी ॥
लकुटी धर कांधे चल्यो इक ग्वारिया ।
तनियां पहरें खोहि सिर पै डारिया ॥
सेना के मांही फिरै ज्यों पेखनों ।
देखें पूछें लोग कहै कैसो बन्यो ॥
काहू पूछ्यो कहो आपनी बात हो ।
किततें आये और कहो कहां जात हो ॥
बोल उठ्यो वह ग्वार जु ब्रजतें आइया ।
आये हैं सब गोप यह भेद बताइया ॥
यह सुन जादो एक दौर हरि पै गयो ।
आये ब्रज के लोग श्याम सों यों कह्यो ॥४॥
सुनी हेत की बात जु यह मनमोहना ।
चकित थकित भये प्रेम मगन प्यारे सोहना ॥
सुरत बिसार संभार फेर सुध आइया ।
नैनन नीर प्रवाह को अन्त न पाइया ॥
लाल भई दोऊ आंख बहुत जल धारहीं ।
गद गद कंठ उसास को वार न पारही ॥
सुबकी लै लै बात कहत नहिं आवई ।
है सुपनों अकि सांच कि अकि सत भावई ॥
मोहिं खिलायो गोदजु लाड़ लड़ाय कै ।

जैहूं अपने नन्द जसुधा माय पै ॥
लरकाई फिर होय तौ वह सुख पाइये ।
खेलूं अंगना जाय दही फिर खाइये ॥
देवकी और वसुदेव बिसर दोऊ गये ।
आंसूपर आंसू गिर भीज बसन नये ॥
श्याम सुन्दरको प्रेम उमड़ सरिता वही ।
भक्तों की कर सुरत चरणदासा कही ॥५॥
रोवत कान्ह सुजान कही कोऊ जायके ।
दौर देवकी माय चकित भई आयके ॥
कुंवर लाडलो कान्ह काहे कूं रोवई ।
आय देवकी बात पूछती यों भई ॥
मुख ऊपर कर फेर पोंछ आंसू सबै ।
तोपै वारी जांव बलैयाँ ल्यूं अबै ॥
बहुरों जल की धार नैनन भर आवई ।
थंम नहीं सकत जु प्रेम प्रवाह वहावई ॥
कहत पुकार पुकार कहा भयो पूत कूं ।
जानें कही कछु बात ल्यावो वा दूत कूं ॥
दुःख हरन सब जगत को मेरो लाल है ।
कैसें रोवत जात भयो बेहाल है ॥
नन्द यशोदा माय जु आये होहिं तौं ।
उन के आये सुनैं काहे कूँ रोव तो ॥
लेहु बुलाय आपने यशोदानन्द कों ।
एतो दुःख क्यों भयो जु आनन्दकन्द कों ॥६॥
आगै हू जु कबै सुध उनकी आवती ।
रोवत देखत याहि महा दुख पावती ॥

धन्न द्योस है आज प्यारे परताप को ।
दरस करें हम तेरे माय और बाप को ॥
बोली देवकी माय और वसुदेव जी ।
माय वाप मिलबे की वधाई देहु जी ॥
मिलनें देहैं जबै बधाई देहुगे ।
वैठ गोद के मांहि परम सुख लेहुगे ॥
बोले कृष्ण मुरार माय सुन लीजिये ।
जगत विषे कहा वस्तु वधाई दीजिये ॥
तन मन सम कुछ वस्तु नहीं ब्रह्माण्ड में ।
सो तन तुमही दियो सदा जु अखण्ड में ॥
पूछत राजा परिक्षत श्री शुकदेव कूं ।
तीन लोक को नाथ कहो रोवे जु क्यों ॥
जव बोले शुकदेव न संशय मान तू ।
भक्तों बस भगवान यह निहचै जान तू ॥ ७ ॥
साध चहैं सोई करैं यह भेद अगाध है ।
हरि साधों के मांहि मांहि हरि साध है ॥
कोई सखी रनवास में बात सुनाइया ।
सिंहासन पर रोवत श्याम कन्हाइया ॥
सरवन सुन यह बात सबै हक धक रहीं ।
सबही दौरी आय कि परदो लग रही ॥
चिक के भीतर खरी सकुच और लाज सों ।
मधुर बचन कह पूछत ए रोवैं जु क्यों ॥
बोल उठी जब माय देवकी बात हूं ।
ब्रजबासी मिल आये ग्रहन की जातहू ॥
दूध पिवाय हँसाय जु लाड़ लड़ाइया ।

सो जसुमत और नंदहू ब्रज तैं आइया ॥
माय हेत की बात सुनी गोपाल ने।
यातें रुदन कियो है मेरे लाल ने ॥
महा मूढ़ अज्ञान कंस के त्रास तैं।
पठियो थो मैं उन के घर या आस तैं ॥ ८ ॥
याकी ढीठी और मचलाई सब सही।
माखन चोरयो सब ग्वारिन को और मही ॥
काहू तैं लरतो भिरतो काहू तें भाज तो।
अब सूधो हो गयो भयो महाराज तो ॥
प्रीत पुरातन जान आईं ब्रज नागरी।
सुन्दर रूप सरूप सबन तें आगरी ॥
सब रानी मुसकाय बात ऐसें कही।
धन धन धन हैं भाग आज हमरे सही ॥
रुक्मिन और सतभामा वचन सुनाइया।
राधाजू कूं लीजे श्याम बुलाइया ॥
वृन्दावन की लीला सब दिखलाइये।
ब्रजबनिता और ग्वालहिं बेग बुलाइये ॥
पीताम्बर और लकुट मुकुट माथे धरो।
गुंजमाल हूं पहर रूप नटवर करो ॥
मिल गावो और नाचो अतिही हुलास सों।
हमकों आनन्द दीजे रास बिलास सों ॥ ९ ॥
ये बातें सुन श्याम रोवते हँस परे।
अति आतुर उठ चाले भाजे गहबरे ॥
सिहासन तें उठे पीव नांगे भले।
कोऊ लियो नहीं संग अकेले ही चले ॥

निर्विकार निर्लेप जु माया सूं परे ।
प्रेम प्रीत बस होय चले दौरे खरे ॥
बात सुनी ब्रज लोगन आवें हैं हरी ।
लागे करन सिंगार घूम अति ही परी ॥
इक इक सूथन द्वै द्वै जन पहरन लगें ।
एक पाग द्वै गोप बांध रस में पगें ॥
इक सारो द्वै नारी पहरन कूं लगी ।
हरषत बरषत प्रेम प्रीत रंग में रंगी ॥१०॥

दोहा ॥

कोऊ मुतियन माला पहर, कोऊ चन्दन हार ।
चरणदास कहैं ब्रज नागरी, ऐसें किया सिंगार ॥

अष्टपदी छन्द ॥

दिष्ट परे जसुदा की आवत श्याम जू ।
फुलत भई मन माहिं देखि घनश्याम जू ॥
लटक चाल पर वारी जाऊं लालजू ।
आज धन्न हैं भाग आए गोपाल जू ॥
फूले अंग न समाहि गोप सब यों कहैं ।
इक कूदत इक कूकत उछरत डोलते ॥
एकन मूंगन माला लई उतार कै ।
गुंजमाल ता पलटे दी पहिनाय कै ॥
त्यों त्यों है मन मुदित श्याम मन भावते ।
ज्यों ज्यों निज सिंगार ग्वाल पहरावते ॥
हेम बरन पीताम्बर ग्वालन ले लिये ।
कारो कामर कान्ह कों तापलटे दिये ॥

जदुवंसी सब देख रीझ हंस हंस परे ।
दुखसुख अचरज पेख वचन मुख से कहैं ॥११॥
सबको करत समोध चले यदुराजही ।
दरशन तात और मात करन के काजही ॥
गये यशोदा मायपै जा पाँयन परे ।
ब्रजनारिन वहुभीर सबन दर्शन करे ॥
गई सकल सुध छुवत पगन सों हाथ कै ।
मन गहवर भर नैन आये जदुनाथके ॥
जसुमत लीन्हे खैंच हिये सों लाइया ।
संग सोवन के चोस तवै सुध आइया ॥
मुख चूंबै चितवै तकै मुरझायकै ।
फिर फिर वारनैं जाय माय उरलायकै ॥
एक कहै इहि भांति छाड़हो भीर को ।
देखन देहु सुजान श्याम बलबीर को ॥
सुन्दर मुखकोंदेख मुदित जसुधा भई ।
राजचिह्न औ रेख भई आनन्द मई ॥
बोली जसमत माय कुंवर जदुराज सों ।
तू क्यों रोवेलाल कहो किंह काज को ॥१२॥
कहत यसोधा माय सुनों मेरी बातकों ।
इकछिन न्यारे न होहु हमारे साथ सों ॥
इहिविधि बाबा नन्दहू मोहन सों मिले ।
बालापनकी बैसहुते उन संग हिले ॥
नन्द महर गोपाल लखे मन भावते ।
होय विकल तिह काल नैन भर आवते ॥
मूंद रहे दोऊ नयन सुनै नहीं बैन कों ।

जैसे वालक होय मचलगए चैनसों ॥
देखत मोहनलाल उठे घुरराय कै ।
तवहीं पकरे पांव नन्द के आय कै ॥
गद्गद बानी कंठ वात नहिं कहसकै ।
ए कहा जानैं रोय श्याम मुख सब लखै ॥
इक कूकत इक कूदत धरती में परें ।
एक मगन हरि दरसतें सुध वुध ना धरें ॥
कहैं एक हम धन्न लखे गोपाल जू ।
एक कहे छांड़ो भीर लखें नन्दलाल जू ॥ १३ ॥
ऊपर गिरत संभार वहुर पग कों धरे ।
योंही सुरन अकास विमानन सों भरै ॥
चेते जब सुध आय आपने मातकी ।
अद्भुत लीला मिलन वधाई तात की ॥
जिह नाते के लोग भांत वाही मिले ।
अन नाते हू मिलत कमोदन ज्यों खिले ॥
ना कोऊ नातो मानैं न मन में आनई ।
लोकलाज व्योहार नहीं पहिचानई ॥
ठेल पेल इक कूद निकस के धावई ।
परसत मोहन पाय परम सुख पावई ॥
एक दौर घनश्याम कों कहत सुनाय कै ।
हा हा मोहिं दिखाव लखैं चित लायकै ॥
कहै एक हम देखें सुन्दर मोहना ।
रूप सरूप अनूप चित्र ज्यों सोहना ॥
कहैं एक मिल झुण्ड जाय हूं धाय कै ।
दौर गहूंगी पाय माथ सिर नायकै ॥ १४ ॥

इक ठाढ़ी तिह ठांव लाल घूंघट किये ।
अतिही व्याकुल (चित्त) अंग बहुत चिन्ताहिये ॥
मन मेंअधिक उदास उसासें दुख भरी ।
भेद न काहू देत लखै सव तन खरी ॥

कहै एक इह भांति जो श्याम दिखावई ।
मेरे सवही अंगके भूषन पावई ॥
छोटी कहत सुनाय हमें उचकावहो ।
अपनो श्याम सुचान नेक दिखरावहो ॥

बड़ी बड़ी जे नार सोई सुख पावई ।
हम नान्हीं क्यों भई यही पछतावई ॥
ललता अति परवीन सखिन के संग में ।
आई छवि सोंरँगी प्रेम के रंगमें ॥

दरशन कर सुख पाय पाय कों गह रही ।
पुरातन प्रीति जनाय चुंहटिया भरलई ॥
ताकत नैन निहार धीर नाहीं धरे ।
कर ललचोंहें नैन लजोंहें रस भरे ॥ १५ ॥

चंद्रावलि तिंह भांति आई छवि धारकै ।
पाँयन लायो सीस सरूप निहार कै ॥
भाल चरन घस होठ लगाये पाय कै ।
चांपो हरि को पांय सुदांत लगाय कै ॥
मीठी काटन काट सनेह वढ़ाइया ।
पाछै तरवा चाट के प्रेम जनाइया ॥
तव श्रीराधा कुँवरि चली हरि दरसकों ।
मिल सखियन के झुण्ड श्याम घन परस कों ॥
राधा विरह वियोग तपत परवल भई ।

खुकत कँपत सब गात जु हरिके ढिग गई ॥
तस नीर दोऊ नैन ढुरैं धरती परै ।
घूंघट में अकुलाय तरफ फटकी मरै ॥
ते अँसुवा की बूंद परी द्वै आय के ।
मानों चिनगी आग परी हरि पाय पै ॥
कीनों श्याम विचार कौन यह विरहनी ।
तस इतीतन माहिं विपता हिये घनी ॥१६॥
चरन छुवें दृग नीर सीतल सलता बही ।
इन लछन जानी कुँवरि राधा यही ॥
दुरदुर हरि के पांय परै बल्लाइयां ।
मुरमुर बारम्बार वारनै जाइयां ॥
उतेरही गह पांय प्रीत अधिकार सों ।
सीस उठायो नांहिं न देह संभारसों ॥
मन में हरि तिय चरन कों सीस निवावई ।
मस्तक दे वाही ठोर न फेर उठावई ॥
जव इह भावना भाव श्याम मनमें धरो ।
तव हरि पगतें कुँवर शीस न्यारो करो ॥
अंतर जामिन कुँवर जान हरि जीय में ।
सोरह सहस रनिवास बिसारो हीय तें ॥
मन में निश्चय धार यही हरि जानियां ।
सव रानिन सिरमौर कुँवर उर आनियां ॥
अति व्याकुल सब अंग परी मुरझाय कै ।
यह गत देखी लाल लई उठि धाय कै ॥१७॥
अति अचेत सुध नाहिं बदन पियरी परी ।
अंग आवत परसेव होत सियरी खरी ॥

जब केहू सुध आय चेत तन जागिया ।
अति गहबर हिए होयके ढुलकी लागिया ॥
सखियन यह गत देख उरहनों बहु दियो ।
डरप सकुच मन माहिं कुँवरि घूंघट कियो ॥
योंही दाऊ बलदेव लैन हरि आइया ।
बाहन नाना भांति संगही ल्याइया ॥
जथा जोग सब लोग मिले अति चाइसों ।
आनँद उर न समाय प्रीति के भाइ सों ॥
नन्द जसुधा माय दोउ बिनती करैं ।
अब हम दरशन पाय इहां तें ना टरैं ॥
पुत्रन एसो बिचारन और बिचारिए ।
चरनन संग जो लागन मार बिडारिए ॥
हम ह्याही रहजांहि न तुम्हरो खांहिगे ।
तुम्हते न्यारे होत तभी मर जांहिगे ॥१८॥
गइयां हूं बिन दूध सूख भई दूबरी ।
आतुर है हरि दरस करन सेब ऊबरी ॥
कहे हमारी बात पशुन की को कहै ।
अन्तरगत की पीड़ हमारी को लहै ॥
क्यों हमकों गोपाल दयाल बिसारिया ।
काहे पशु की जौन में हमकों डारिया ॥
यह कह गइयां सिमट घरेराही दियो ।
जित तित तें मिल आय अरेराही कियो ॥
करकें ऊंचीं नार कान नोरावंही ।
आपन दौरत और बच्छन दौरावहीं ॥
देखत हरि को रूप मचल सी सब गई ।

मनमोहन कर प्रीत अंक में भर लई॥
हित के फेरत हाथ पीठ और देह पै।
हेरत हरि को रूप सबै अति नेह कै॥
लै लै उनको नाम जु श्याम बुलावई।
देख दूवरो गात आंसू भर आवई॥१६॥
गायन नांते कहत श्याम बहु प्रीति सों।
हरपत सगरे लोग देख इह रीत को॥
नांतिन धूमर गाय की यह खञ्जन भली।
जिन सुख दीन्हो मोहिं बहुत हमसों हिली॥
बेटी काजर गाय की धोरी जानिए।
धौरी की सिरमौरी सुता पिछानिए॥
ब्रजवासिन को प्रेम सबन सों आगरो।
चरणदास भागोत में देख उजागरो॥
कहो न केहूँ जाय श्याम की गुन कथा।
जैसे सो त्यों मिले सकल जीवन जथा॥
द्वारा वासी लोग सकल अचरज करें।
देखत रस संजोग हिये आनन्द भरें॥
बलदाऊ और श्याम चले आनन्द सों।
ब्रजबासी ले संग सुतारे चंद ज्यों॥
वाहन नाना भांत सब तहां आइया।
राज तेज की चालसों ठाठ चलाइया॥२०॥

हेम छरी कर मांहिं जुरत नजराइया।
ते राजन के गात पौरयन लाइया॥
ब्रजबासी सब लोग जु पहुंचे आय के।
उतरे सबही जाय निकट जदुराय के॥

अज्ञा दई घनश्याम न काहू रोकियो ।
भीतर गये ब्रज लोग अधिक हरषो हियो ॥
बिछैं बिछौना बहुत जु नाना भांति के ।
तहां दीन्हें छुटकाय हितू जदुनाथ के ॥
देवी और बसुदेव जु मिलबे कों चले ।
नंदहु अरु बसुदेव दोऊ प्रीतम मिले ॥
नैनन नीर प्रवाह नही थांभोथंभै ।
जसुमति देवी देख लोग रोवत सबै ॥
सुनो देवकी बात जु सांचीहों कहूँ ।
लाख करो नहीं जांव सदा ह्याई रहूँ ॥
जथा जोग सब लोग मिले उठ धाइकैं ।
मुदित भये मन मांह दरस हरि पाइकैं ॥२१॥
कहैं श्री बसुदेव सुनो नंदराय जू ।
तुम्हें मिले सुख होय सकल दुख जाय जू ॥
कीन्ही कृपा अपार वहुत उपकार में ।
तुमतें उरन न होंहिं कभूं संसार में ॥
राम कृष्ण अभिराम तुम्हीं हमकों दिये ।
तुम्हरेही परताप सों ए राजा भये ॥
सब गोपी ब्रजबाल देवकी पग परी ।
कुँवरि राधिका जान तभी अंकों भरी ॥
राधा अपनों सीस जु पायन पैं धरो ।
देवी पकरी बांह करो सनमुख खरो ॥
ठोडी गह जब रूप अनूपम देखिया ।
सब रानिन के रूप को राजा पेखिया ॥
अपने मन के मांहि तबै देवी कही ।

हरिपै कैसी भांति सु यह छोड़ी गई ॥
तिंह औसर सब बोल बहू देवी लई ।
जसमत मिलबे काज सबै धाई गई ॥ २२ ॥
श्रीरुक्मिन परवीन जु दुलहिन रस भरी ।
ब्रज दूलह सों आय यही बिनती करी ॥
हौं करहौं चितलाय हमारे मन यही ।
श्रीराधा सनमान श्याम सों यों कही ॥
आज्ञा दई घनश्याम संग ले जाइये ।
श्रीराधा संजोग सों आनंद पाइये ॥
श्रीरुक्मिन परबीन जु राधा ढिग गई ।
बांह पकर हंस भेट उठाकै संग लई ॥
अपनी ओट छिपाय राधकै ले चली ।
कापै बरनी जाय घूंघट की छबि भली ॥
रुक्मिन ऐसी भांत कियो रस प्रीत सों ।
ज्यों हरिजू के साथ प्रेम परतीत सों ॥
रुक्मिन की किंह भांते बड़ाई को कहै ।
सुखदाई घनश्याम को सुखदाई वहै ॥
हरिजू की रुचिजान बहुत ही सुख दियो ।
सखी सहेलिन सहित अधिक आदर कियो ॥ २३ ॥
एक एक ब्रजनारि रूपकी आगरी ।
निरख अचंभो थकित रही सब नागरी ॥
सुख देबे कों श्याम तहां पग धारिया ।
हरखत आये प्रेम प्रीति बिस्तारिया ॥
तब सतभामा आदि कहैं रानी सबै ।
हरिजू हमहिं दिखाव कुँवरि राधा अबै ॥

एक बेस इक भांत एकही गुन कथा।
रूप अध्र है कौन सबै एकै जथा॥
सतभामा बहु बार जु हा हा खाइया।
राधा घूंघट मांहि तबै मुसकाइया॥
सतभामा अति चतुर हिये में जानियां।
घूंघट उठत निहार कुँवर पहिचानिया॥
मानों देव कुमारी आय के ब्रजवसी।
नीलाम्बर के मांहिं मनो दामिन लसी॥
नैक निहारत रूप रही मुरझायकै।
सब रह्यो देखी जाय सुडीठ लगायकै॥
तब हंसकै घनश्याम घूंघट खुलवाइया।
सब रानिन के रूप को गर्ब घटाइया॥
सतभामा तब आइ राधिका ढिग खरी।
राधा सुकचन नार नहीं ऊंची करी॥
ढोडी गह जब नार जु ऊंचै उठाइया।
स्वास सुगंध न साथ सहन सब छाइया॥
भवन चतुर दस मांहिं जु छबि अभिरामही।
श्रीराधा कों दई तभी हरिजू सभी॥
राधा रूप निहार सबन तन देखिया।
धन्न परस्पर जान सरूप बसेखिया॥
धन्न धन्न मुख भाख थकितसी ह्वै गई।
सब नारी वा देख आप हारी गई॥
तब निज मनके मांहिं जुपतिब्रा आनियां।
अपनी पतिब्रत रीति अधिक कै जानियां॥
सोई दुलहिन होय जु पतिब्रत धारई।

अपने पतिसों प्रीति सदा बिस्तारई ॥२५॥
तब राधा यह बात सभी मन में लही ।
अपनी प्रीत अधिकार सकुच नाहीं कही ॥
यह सुनके जदुनाथ जु ऐसे बोलिया ।
सबके नीकी भांत जु हिय दृग खोलिया ॥
एकै टौना जान सकल जग माहि है ।
इह सम टौना और दूसरो नांहि है ॥
ब्रज भूमि सें एक यहै टौना आइया ।
सो मैं मूरतवंत तुम्हें दिखराइया ॥
मनबच करके मोहिं जु चाहै बस करै ।
श्रीवृषभानुकुमारि की सेवा चित धरै ॥
रुकमिन के मनमाहिं जु सुनके आइया ।
यह टौना बड़भाग सों हमने पाइया ॥
रुकमिन तन मन आप कुवर राधै दियो ।
राधाको मन मुदित प्रीत सों कर लियो ॥
तबही भूषण सरस जु रुकमिन के हुते ।
पहिरे राधा कुँवर जु मनमाने तबै ॥ २६ ॥
रुकमिन अपने हाथ भूषण पहिराया ।
इह विध टौना डार कै प्रीत बधाइया ॥
और सखी जे साथ सिंगार सिंगारिया ।
सतभामा मन माहिं जु कुढ़ कुढ़ हारिया ॥
अष्टि सुगन्धि मँगाय आपने हाथ सों ।
ले रुकमिन सब लाये राधिका गात सों ॥
अतिही शुद्ध संवार जबै भोजन भये ।
नंद यसोधा पास तबै मोहन गये ॥

रुकमिन नाना भांति करें बिञ्जन सबै ।
अनगिन स्वाद न जाहिं गिनाए तासमें ॥
भोजन को जब बैठे हैम के थारही ।
एक और जदुकुलिन एक ब्रज नारही ॥
कपट बचन बहुभांति जु सतभामा कहै ।
मुख मीठी मनचोख अधिक हिये में लहै ॥
कही करो जिन और परोसो लायकै ।
दूध दही बहु भाँति मही जु मँगायकै ॥ २७ ॥
खोटी जियमें जानि कुढ़ी रानी सबै ।
श्रीराधा सुन बैन जु मुसुकानी तबै ॥
भोजन सुखद कराय कुँवर सुख रास को ।
पौढ़ाई ले सेज सु अधिक विलास सों ॥
अपने अपने गेह सबै रानी गईं ।
रुकमिन राधा साथ करत बातें रहीं ॥
निस भई एसी भांत हिलत और मिलतही ।
सिज्या जोगा जोग बिछाई ललितही ॥
तब हरि अपने आई मन्दर पग धारिया ।
सबको सुख अधिकाइके दुख निरवारिया ॥
रुकमिन राधा कुँवर कूं सेज सुवाइ ही ।
आई हरी के पास पलोटन पाइ ही ॥
पाय पलोटत नींद श्याम को ना परी ।
सुन्दर राधा सेज पै तरफत है परी ॥
रुकमिन से कहो श्याम काज इक कीजिये ।
राधा आवत नाहिं नीन्द सुन लीजिये ॥ २८ ॥
हों तो वाको भेव जीय को जानहूं ।

बारेपन की टेव सभी पहिचान हूं ॥
जब सोवन की वेर वाह की आवई ।
बहु मेवन के ढेर सुमाय करावई ॥
पै राधा कों नींद नहीं कबहूं परै ।
जब लगही वह पान दूधको ना करै ॥
तातें वाको नींद न कबहूं आवई ।
मो विन यह सुध और सु को हिय लावई ॥
पाय पलोटत माहिं तबै उठ धाइया ।
रुकमिन राधा सेज पै तरफत पाइया ॥
डार कटोरे माहिं जु दूध पिवाइया ।
हलबल में भली भांत न दूध सिराइया ॥
तातो दूध पिवाय कै आई रुकमिनी ।
दाबन लागी पाय श्याम के दुलहनी ॥
दावन चरन सरोज जभी कर में गह्यो ।
सीतकार कर पाय खैंच हरि जू लियो ॥२६॥
रुकमिन कह्यो तिहकाल कहा हमने कियो ।
सीजुकरी किहकाज खैंच क्यों पग लियो ॥
ताता हो वह दूध पिये तें पग जरे ।
हमरे पायन माहिं अबे छाले परे ॥
राधे पीवे दूध तुम्हारो पग जरो ।
हमसों ऐसी बात अटपटी जिन करो ॥
राधा हमरे ध्यान सदा अभिलाखई ।
निशदिन चरन सरोज हिये में राखई ॥
तातो पीवत दूध पगन ऊपर परो ।
रुकमिन तातें चरन हमारो ह्यां जरो ॥

रुकमिन मानी बात जु मनमोहन कही ।
ब्रजबासिन के प्रेम मगन मन ह्वै गई ॥
बहुरि कही हम नाहिं तुम्हें हरि भावई ।
मम हिरदै में चरन कमल नहिं आवई ॥
बोले हरि मम चरन नहीं तुम हीय में ।
निशदिन तो पग बसत हमारे जीयमें ॥ २० ॥

बोली रुकमिन कुँवर सुनो घनश्याम जू ।
सब सुखदायक नाथ संपूरन काम जू ॥
मन्दर मन्दर भोग सदा भोगत रहो ।
व्याप न सकत बियोग सकल विध सुख लहो ॥
रुकमिन कों कियो राजी खुसी बहु प्रीति सों ।
राधा की अब सुनों प्रेम की रीति कों ॥
सेज पै राधा कुँवर विरह की बावरी ।
कहत सखिन सों बोल लावरी लावरी ॥

मनमोहन घनश्याम कहां अबतक रहो ।
जो इक छिनहू होत नहीं न्यारो भयो ॥
ऐसे कह उठ बैठ रही मुरझायकै ।
फिर गिररहीं इहि भांति तरफ दुख पाय कै ॥
वहुत भांति कही बात सखी समुझावई ।
मन में धारो धीर आवें तो आवई ॥

इतनेही में आय श्याम पग धारिया ।
पायन खुरको सुनत विरह निरवारिया ॥२१॥
हिलत मिलत भुज मेल ग्रीव में प्रीत सों ।
वृन्दाबन के केल करत वाही रीत सों ॥
लागे करन विलास कुँवर संग चावसों ।

भूले सब रनिवास प्रेम के भाव सों ॥
प्रेम कथा दोऊ ओर की अस्तुति गावईं ।
चरनदास बल जाय प्रेम कछु पावईं ॥
भोरभये वह ठांव जु कुन्ती आइया ।
अपने सगरे पुत्र संगही लाइया ॥
तिह सों पूछत श्याम बहुत कुसरात है ।
पायन धारो सीस जु मिलबे की भांत है ॥
कुन्ती भाषत बैन सुनों भगवान जू ।
तुम सम या जग माहिं को चतुर सुजान जू ॥
इतने द्योसन माहिं कभू नहीं सुध करी ।
दुरजोधन के बैर बिपत बहु हम भरी ॥
हों यह अपने जीव विचारत ही रहूं ।
तुम भ्रातन को नाथ नहीं भूलत कभूं ॥ ३२ ॥
बोले तब बलराम मात तुम सत कही ।
दुख में होय सहाय हितू बंधू वही ॥
तोपै हमहूं चैन कभू नाहीं रहो ।
जरासन्ध के त्रास समंदबासा लहो ॥
बहुरो भीषम और विदुर ज्ञानी महा ।
बहुते और नरेश सबन दरशन लहा ॥
मिले परस्पर आय सबे घनश्याम सों ।
अस्तुति लागे करन श्याम अभिराम कों ॥
कहत धन्य जगमाहिं यह जादोंवंश है ।
इन सम और न कोय जु हरि को अंश है ॥
जनमें जिनके माहिं कृष्ण गोपाल हैं ।
दरस परस सुख देत सबन प्रतिपाल हैं ॥

फिर बोली ब्रजबाल श्याम सेती कहैं ।
आई दरशन काज न्हान सों ना हमें ॥
तुमको लख जदुराज सकल विध दुखगये ।
चार पदारथ आज हमें प्रापत भये ॥२३॥
पहिले ऊधो आय जोग समुझाइया ।
तब हमरे मन मांहिं कछू नहीं आइया ॥
अब मोहन मुख देख हिये निश्चै भयो ॥
ऋषिमुनि जोगीश्वरन यह सुखनाहीं लहो ॥
यह सुन बोले श्याम सुनों ब्रजनागरी ।
तुम हो परम सुजान सकल गुन आगरी ॥
जे सुख तुम्हरे साथ जो हमने पाइया ।
गृह वन बहुती भांतसों खेल मचाइया ॥
अब इह संपत माहिं प्रगट जो देखिये ।
सुपने हूं के माहिं न वह सुख पेखिये ॥
सर्व आतमा रूप हमें चित में धरो ।
सब जीवन को जीव हिये निश्चै करो ॥
तुम तो सुमरो मोहिं सदा चितलाय कै ।
हम रहिहैं तुम पास प्रीत के भाय कै ॥
आतमही सें रूप आत्मा देखिये ।
यह अध्यातम ज्ञान हिये अवरेखिये ॥ ३४ ॥
समझायो इह भांत सकल ब्रजबालको ।
सुफल जनम जग माहि भजैं गोपाल को ॥
कूप रूप संसार सों बाहर ऊबरै ।
श्रीनन्दलाल कृपाल प्रीत डोरी गहै ॥
कहैं गुरु शुकदेव परिक्षित राजसों ।

श्याम हुते उंही ठांव जु सुख के, साज सों ॥
पांडो पुत्र पवित्र और कौरौं जहां।
आये दरशन पाय मुदित बैठे तहां ॥
जिनके सुमरन ध्यान सकल दुख भागई।
आध व्याध कछु पीडन कबहूं लागई ॥
तिन को दरस सुखपरस जु कोऊ जन लहे।
तिहकी महिमा अधिक रसन कैसे कहे ॥
जितने राजा भूप हुते वह ठाँव ही।
अस्तुति लागे करन बहुत मन भावई ॥
पर्म हंस है नाम सकल संसार में।
तुमतें चारों बेद प्रगट जु संचार में ॥३५॥
रक्षा करन धेन विप्र के तुम इहां।
लीनों है औतार जगत के सांइयां ॥
आदि अन्त और मध्य संपूरन काम हो।
तुमहीं को हम करत सदा परनाम हो ॥
इहविध अस्तुति करत हुते राजा सभी।
पातक तज पग परस महा पदवी लही ॥
द्रौपदी रानी बहुर तहां जो आइया।
जाकी महिमा अधिक सकल जग गाइया ॥
पटरानिन के बीच बैठी इक साथही।
तिनसों लागी कहन बात इह भांतही ॥
हरि जू जैसी भांत ले आये ब्याह कै।
सो सब हमरे पास कहो समझायकै ॥
रानी रुक्मिन चतुर प्रथम बोली तबे।
सुनहो द्रौपदी जान बात हमरो अबे ॥

धन्न हमारे भाग आजही लेखिये ॥
सहज ही तुम्हरो दरस नैन भर देखिये ॥३६॥
जो तुम हांसी करो नहीं इह बात सों।
तो हम ब्याहकी बात कहैं भली भाँत सों ॥
देस चंदेरो नगर सकल जग जानिये।
तहां शिशुपाल नरेश सु प्रगट बखानिये ॥
भई सगाई मोहिं प्रथम ही वाह सों।
साजी सगरी सोंज भली विध ब्याह कों ॥
आयो वह भूपाल साथ बहु भूपले।
बांधो कंगन हाथ बहुत हुलसों हिये ॥
कुलकी सारी रीति करी बहु भांति ही।
मम हिरदे में बसत श्याम दिन रातही ॥
अन्तरजामी लाल हिये की जानके।
कुन्दनपुर में आये दीनता मान के ॥
रथ के ऊपर बैठ गरज कर धाइया।
सब राजन के अग्रह में हरि लाइया ॥
हरि की सेवा मांहिं बहुत सुख मानियां।
हम तो अपनो भाग धन्न कर जानियां ॥ ३७।
पुन सतभामा चतुर बात अपनी कही।
मणि की सगरी कथा बखानी सब वही।
बहुरो अपनो ब्याह जामवन्ती कह्यो।
जामवन्ती की कथा सबै जिह बिध भयो ॥
पुन कालिंदी कहत सभी निज काथको।
रानी द्रौपदी सुनो हमारी बात को ॥
हरि चरनन की आशधरी निज हीय में।

जलमें कीनों बास प्रीतधर जीय में ॥
इकदिन अर्जुन सहित श्याम पग धारिया।
पान ग्रहन कर मोहि सकल दुख टारिया ॥
बहुरों बोली चतुर मित्र बिंदा तभी ।
रानी द्रौपदी बात सुनों हमरी सभी ॥
जबतें सुध भई मोहि तभी मन में करो ।
हरिचरणनको ध्यान और चित ना धरो ॥
मम भ्रातन गत मोहि लखी इह रीतसों ।
हरि को दीन्ही ब्याह भली विध प्रीतसों ॥ ३८ ॥
हों अपने जिय मांहि यही इच्छा लहूं ।
औरहूं जन मनमांहिं मैं हरि चरनन रहूं ॥
पुन सीता इह भांति बचन उचारिया ।
सात वृषभ की कथा सकल विस्तारिया ॥
भद्रा कहत सुनाय सुनों रानी द्रौपदी ।
मैं हूं कृष्ण की बात सुनी सरवन सभी ॥
मन में कीन्हों नेम और नाहीं भजूं ।
निशदिन हरि को सेव सदा जिय में सजूं ॥
जान पिता यह बात ब्याह हरिकों दई ।
इच्छा मनके मांहिं सकल पूरन भई ॥
सेवें हरिके चरन सुमन चित लायकै ।
सुभग भाग जिहनार सुफल है आइकै ॥
पुन बोली इहभांत लछमना गुन भरी ।
अपने ब्याह की बात सकल बरनन करी ॥
तात हमारे काज स्वयंबर ही कियो ।
मैं हरिचरनन ध्यान हिये में गह लियो ॥ ३९ ॥

आये तहां घनश्याम दीन पहिचान कै।
पानग्रहन कियो मोहि आपनी जानकै॥
हों दासी घनश्याम की वा दिन तें भई।
आध व्याध तज सकल बिथा जी की गई॥
अब तुम देहु असीस मोहिं भली भांतिसों।
जनम जनम जगदीश सेवों दिन राति हों॥
बोली राजकुमार बहुरि सुख पायकै।
सोरह सहस सौ नार सुबचन सुनाय कै॥
भौमासुर हो दइत हमैं बहु दुख दियो।
हम सबहुन को घेर आन इकठा कियो॥
चित में गह हरिशरन यही मनसा धरी।
चरनन को धर ध्यान बहुत बिनती करी॥
तबहीं पहुंचे आय जगत के साइयां।
भौमासुर को मार सभी जु छुटाइयां॥
तबतें सेवा मांहिं नाथ हमकों लियो।
सब दासिन की दासी हमैं सब को कियो॥ ४० ॥
जो पै कृपा अगाध श्याम हमपर करैं।
हम रंचक अभिमान नहीं जिय में धरैं॥
गर्ब करै जो नार कभू घनश्याम सों।
दुखपावे बहुबार गोपिका बाम ज्यों॥
प्रेम कथा अति गूढ़ की अस्तुति कहा करूं।
चरनहि दासा होय शीश चरनन धरूं॥
ब्रजवासिन के भाग बड़े जिय जानिये।
केहू बरने न जाहि योंहीं सत मानिये॥
गृह बन जिनके संगरहै दिन रात ही।

कीन्हे बालचरित्र उहां बहु भांति ही ॥
ब्रजबासी नर नारि सकल विध सुख दिये ।
सकल मनोरथ काम श्याम पूरन किये ॥
पुन सतभामा बोल तभी पूछन लगी ।
सुनहो द्रौपदी बात एक रस में पगी ॥
हम तो अपनी ब्याह कथा सबही कही ।
अब तुम भाखो बात हमारे चित यही ॥ ४१ ॥
पांच जनन किह भांति तुम्हें जु विवाहिया ।
अद्भुत लीला सुनन हिये में आइया ॥
तब बोली इह भांति द्रौपदी गुन भरी ।
हमरे तात बिचार प्रतिज्ञा यों करी ॥
फिरत मत्सको बेध जु कोई जन करै ।
द्रौपदी पावै सोई बचन यह ना टरै ॥
देश देश के नृप सबै तहां आइया ।
अपने पुत्र बिचित्र संगही लाइया ॥
धनुष बान निज हाथ तहां सबहुन लियो ।
फिरत मत्स को वेध किहूं नाहीं कियो ॥
अर्जुन अपने हाथ धनुष जबही लियो ।
ताही छिन के मांहि मत्स बेधन कियो ॥
याविध मोहि विवाहि मुदित मन लाइया ।
अपनी कुंती मायकूं शब्द सुनाइया ॥
मात एके बस्तु भली हमने लही ।
बांट लेहु तुम पांच मात ऐसे कही ॥
तातें पांचों भ्रात मोहिं ब्याहो तहां ।
प्रगट देह कर पांच जीव एकै जहां ॥ ४२ ॥

दोहा ॥

चरनदास बिसवास सों, कही कथा सुखरास ।
पढ़ै सुनै जो प्रीतसों, पावै परम हुलास ॥ ४३ ॥

अष्टपदी छन्द ॥

कहैं गुरू शुकदेव परिक्षत राज सों ।
श्री बसुदेव के यज्ञ करन के काज कों ॥
रानी द्रौपदी पास हुतो रानी सबै ।
सुनी सकल की बात जु उन भाखी तबै ॥
गंधारी तिह संग सुभद्रा जानिये ।
कुंती तिनके बीच उहां मन आनिये ॥
सब गोपिन लिये संग जसोधा मायही ।
तिनहुं श्याम की बात सुनी मन लायही ॥
सुन अचरज की बात चकृत मन में भई ।
हिय में बिसमै होय थकितसी है रही ॥
कहैं धन्न ये नार सकल बड़ भाग हैं ।
नितप्रत जिनके अंग श्याम संग लाग हैं ॥ ४४ ॥
और सकल ऋषराज सबै तहां आइया ।
मनमोहन घनश्याम को दरशन पाइया ॥
नारद वेदव्यास ऋषन के राजही ।
विश्वामित्र पुलस्त और भारद्वाजही ॥
गोतम और बशिष्ठ सतानन्द जानिये ।
पर्शराम अभिराम शिष्यन संग मानिये ॥
उत्रा अंगिरा और मारकंडे तहां ।
दत्तात्रेय बिचार सकल आये जहां ॥
वामदेव अरु जाग भाग भृगु आइया ।

गर्ग आदि बहु नावगिनें नहीं जाइयां ॥
हरि जू तिनकों आप बहुत आदर कियो ।
विध सो पूजा साज परम सुख ही दियो ॥
दोऊ करकों जोड़ जगत के साइयां ।
लागे अस्तुति करन बहुत मन भाइयां ॥
दुर्लभ दर्शन होहिं ऋषिन के जगत में ।
देवन प्रापत नाहि बड़ी सी शक्त में ॥४५॥

जनम सुफल अब आज हमारो ही भयो ।
जो हम सहजके मांहि दरस तुम्हरो लह्यो ॥
हरि भगतन के दरस की महिमा को कहैं ।
जनम जनम के पाप छिनक में ना रहैं ॥
जो जन सेवा देव बहुत हितकै करै ।
तिनमें श्रीभगवान नहीं मनमें धरै ॥
महा अधम है सोइ यही मन आनिये ।
मूरख ताहि समान नहीं पहिचानिये ॥
नारायन सब बीच हिये में धारिये ।
सूरज चंद की सेव जु कुछ विस्तारिये ॥
पृथ्वी जल और पवन अगन आकाश कों ।
देखै इनके बीच सु जगत निवास कों ॥
जो जन ऐसी भांत सों पूजा नित करै ।
सुफल कामना होय जु कुछ इच्छा धरै ॥
याही विध हरि भक्त सकल पहिचानियें ।
हरितें इनको भिन्न कभूं नहीं जानिये ॥४६॥

यह नर देही जान अपावन है महा ।
जाको परथम बास नरकही में भया ॥

गंगाजल सम नाहिं सलिल सलितान कों ।
यह बिचार नहि होय मूरख अज्ञान कों ॥
राजन ऐसी भांत जगत के सांइयां ।
वहु अस्तुति उँहठांव करी मन भाइयां ॥
सकुचे सब ऋषराय सुनों जब बात कों ।
सब मिल ऐसी भांत कहैं जदुनाथ कों ॥
तुम जग जीवन नाथ सु जमत निवासहो ।
हम दासन के दास तुम्हारी आस हो ॥
ऐसी विध जदुनाथ जु तुम अस्तुति करो ।
हमकों भर्म वहु होय समझ कछु ना परो ॥
जगत गुरू जगदीश जगत प्रतिपाल हो ।
सबके सरजनहार सकल रिछपाल हो ॥
सब देवन के देव तुम्हीं जदुराज जू ।
हम नहिं जानत भेव श्री महाराज जू ॥४७॥
तुम माया सब जगत सभी पर छाइया ।
तो गत अगम अपार अन्त नहिं पाइया ॥
तातै बहुती भांत भर्म मन आनई ।
तुम्हरो भेव अगाध कौन विध जानई ॥
तुम्हरो अद्भुत शक्त सकल घट पूर है ।
तुम्हरो रूप अरूप सबन तैं दूर है ॥
कोऊ तुमकों आप पिता कर जानई ।
कोऊ अपनो पुत्र हिये में आनई ॥
सबके पालनहार सकल के ईश हो ।
कैसे चरित तुम्हार कहैं जगदीश हो ॥
दरस परस सुखदान तुम्हारो जानिये ।

तुम किरपा सों बात यही पहिचानिये ॥
धरती भार अपार उतारन काज ही ।
प्रगटे भक्तन हेत श्री जदुराज ही ॥
बानी तुम्हरी बेद स्मृति संसार में ।
तुम्हरी गत नहा चीन्ह परत निर्धार में ॥ ४८ ॥

भक्तन ही के संग सदा जोइ रहै ।
भक्त पदारथ पाय मुक्ति सोइ लहै ॥
तुम्हरी भक्ति अनूप सकल सुखरास है ।
कोऊ जन नहिं होत कभी जु निरास है ॥
तुम प्रभु पूरन काम कृपाल दयाल हो ।
तुमकों करत प्रनाम सुनों गोपाल हो ॥
पारब्रह्म भगवान धरम के धाम हो ।
तातै अस्तुति करत विप्रन को श्याम हो ॥
नातो हम मन मांहि चहत दिन रैन का ।
तुम्हरे चरन सरोज सुखद की रैन का ॥
पारब्रह्म प्रभू ईश हमारे हो तुम्ही ।
सब दासन के दास तुम्हारे हैं हमी ॥
तुम कारन बहुभांति जु हम जप तप करैं ।
मनमें अपने ध्यान तुम्हारो ही धरैं ॥
सबहीविध जगमाहिं तुम्हीं सुखदान हो ।
तुमकों करत प्रनाम सुनों भगवान हो ॥ ४९ ॥

सबही घट के मांहि रहो इह भांत में ।
जैसे पावक रहत गुप्त सब काठ में ॥
तुमकों श्री बसुदेव नहीं पहिचानियां ।
पुत्र जान बहुभांत हिये हित मानियां ॥

निद्रा आलस होत जभी नर रूपकों ।
सुध बुध नाहीं रहत रंक और भूप कों ॥
सोवतही के माहिं सुपन जो देखिये ।
जीव दिष्ट के साथ जु कौतुक पेखिये ॥
जोपे श्रीभगवान भेव नहिं जानिये ।
देखन हारो सुपन को नां पहिचानिये ॥
ऐसें सगरे जीव भर्म मानैं सदा ।
प्रभू पूरन को रूप सु पहिचाने कहा ॥
तुम्हरी किरपा होय जभी जदुनाथ जू ।
दिव्य दिष्ट नर लोय कों आवैं हाथ जू ॥
सब जादों कुल बंस मोह लिपटानियां ।
तुमरी गति अति गूढ़ इन्हू नहीं जानिया ॥ ५० ॥
जानौ अतिही हीन हमारी शक्ति कों ।
करैं कौनविध नाथ तुम्हारी भक्ति कों ॥
तुम्हरे चरन सरोज जु सुखदाई महा ।
जिहसों आध और व्याध नहीं व्यापत सदा ॥
कृपा करो घनश्याम सकल हम दास पै ।
तिन चरनन के पास हमारो निवासकै ॥
बानप्रस्थ जे लोय तुम्हीं कों धावईं ।
जपतप कै मन आप तुम्हीं सों लावईं ॥
तुम्हरो रूप अपार ध्यान कर देखईं ।
अपनो जीवन जनम सुफल कर लेखईं ॥
ज्यों गज चींटी आदि जु लघु दीरघ सबै ।
सब बपु जीव समान जान लीजै अबै ॥
दीपक को दृष्टान्त यही जु बिचार है ।

लघु दीरघ सब ठांव वही उजियार है ॥
कोऊ जन यह बात न जिय में आनईं ।
तनमें जिय किह ठांव रहत को जानईं ॥ ५१ ॥
तैसें श्री घनश्याम सदा सुखरास ही ।
निसदिन श्री वसुदेव के गेह निवास ही ॥
राजनराम और श्याम जगत सुखदानजू ।
सुनकै ऐसी बात लगे मुसकान जू ॥
पुन बोले सुखपाय श्री नारद तभी ।
कहत सुनों वसुदेव वचन मेरे सभी ॥
कर्म नाश नहीं होय जु कर्मन कीजिये ।
यह निश्चे कर आप हिये धर लीजिये ॥
हरि की सेवा माहिं जोई जन चित धरै ।
मनमें अपने नाहिं कछू इच्छा करै ॥
तिह के कर्म कटजाहिं छिनक में जानिये ।
मुक्तहोय कुछ संस नहीं उर आनिये ॥
जो जन प्रभूकों पूजकै इच्छा फल चहै ।
पापकरैं तिह नाहिं मुक्त कैसे लहै ॥
श्रीभगवान के काज कर्म सब कीजिये ।
ताको फल जो होय उन्हीं कूं दीजिये ॥ ५२ ॥
होंही कहत न बात यह अपने जीय सों ।
कहत सबै सुज्ञान जु पण्डित हीय सों ॥
ऐसी बिध के कर्म जोइ जन साजई ।
कर्म बन्धतें छूट मुक्तपुर राजई ॥
जो तुम कहो यह बात के हम ग्रहचारी हैं ।
जोग जुगत के काज नहीं अधिकारी हैं ॥

तो तुमकों इक बात कहूं समुझायकै।
कर्म जोग को पंथ कहूं मन लायकै॥
जो कुछ पुन्न और दान सदाही तुम करो।
नेम धर्म व्रत और जु कुछ मन में धरो॥
तिनकों फल जो होय सु हरि कूं दीजिये।
इच्छा मन के माहिं कछू नहीं कीजिये॥
सो हरि तुमसों होय न न्यारो जानिये।
सदा बसत गृह माँहिं तुम्हारे मानिये॥
या विधि नारद वचन कहे वसुदेव सों।
तब उनही मन मुदित पहिचानों भेव कों॥ ५३॥
बहुरौ श्री वसुदेव बचन ऐसे कहो।
सुनहु विप्रसुर ज्ञान बात चित में लहो॥
हम को दीक्षा देहु जज्ञ के काज की।
इच्छा पुरवें मोहि जु सुख के साज की॥
विप्रन सुन यह बात बहुत सुख पाइया।
वसुदेव सों अभिषेक तभी जो कराइया॥
जज्ञ करन वसुदेव बैठे सब साज सों।
संग लीन्हीं दोऊ नार जज्ञ के काज कों॥
ल्याये जज्ञ की सोंज सबै जादों तहां।
सुर विमान चढ़ व्योम आये देखन उहां॥
किन्नर और गंधर्व गुनी आये सभी।
हरि के गुन बहुभांत सबन गाये तभी॥
ब्रह्मा सम वसुदेव तहां जु विराजई।
गुर ज्यों सब उंह ठांव रिषी सुर राजई॥
सोभत तहां जदुराज राम सुख साजही।

होत जज्ञ भली भांत जु उनके काजही ॥ ५४ ॥
बैठे बहुते विप्र और पंडित जहां ।
श्री वसुदेव ने दान बहुत दीन्हे तहां ॥
ऐसी विधिसों जज्ञ कियो चित लायकै ।
कर स्नान जो दान दिये मन लायकै ॥
सब राजन कों आय तभी पूजा दई ।
सबकी पूरी आस जु कुछ इच्छा भई ॥
सुर किन्नर गंधर्व तहां जो आइया ।
आयुस ले निज धाम सभी जु सिधाइया ॥
कौरों भीषम आदि और उन साथ के ।
बहुतै और नरेश हितू जदुनाथ के ॥
अस्तुति श्रीजदुराज की मिल सबहुन कही ।
नमस्कार करजोर सबन आयुस लही ॥
श्री वसुदेव सुजान वचन भाषन लगे ।
ब्रजबासिन के साथ प्रीत रस में पगे ॥
तुम तो प्रान समान हमारे हो सबै ।
तुमतें कैसी भांति होहिं न्यारे अबै ॥ ५५ ॥
या विध कहत सुनाय प्रेम की बातही ।
नैनन नीर प्रवाह भीजो सब गातही ॥
ब्रजबासो ब्रजभूम न जानैं कूं करैं ।
चलबे की सुन बात धीर नाहीं धरैं ॥
सुन राजा जदुराज जगत प्रति पालहीं ।
रहे परबके काज जु केतक कालही ॥
बहुत दिना जो भये कुरुक्षेत्र में अरैं ।
ना ब्रजबासी जांह न हरि उठनैं करैं ॥

तब देवी इंह भांत श्याम सों यों कही।
तोहि कछू इंह ठांव में सुध बुध है रही॥
बहु असुरन के माहि बसे द्वारींपुरी।
कहिबेतें यह बात तोहि लागै बुरी॥
चलो जाव घर ओर बेग सुध लीजिये।
नातो ऐसें राज काज सब छीजिये॥
यह सुनके घनश्याम नंद कों बोल कै।
बोले छबि अभिराम हिये कों खोल कै॥
कही धन्य ए घोस जु तुम दरशन लहैं।
तुमतें न्यारे होन नहीं कबहूँ चहैं॥
तुम तें बिनती करत कंपत सब गात है।
हम सें ऐसी कहत न आवत बात है॥ ५६॥
रक्षक नाहीं कोय द्वारिका में उहां।
जो तुम अज्ञा होय तो अब जावें तहां॥
इक परदेश में वास रिपुन के बीचही।
नातो तुम्हरो पास नहीं छोड़ें कभी॥
यह कारन मनलायके अज्ञा दीजिये।
आपन हूं ब्रज जाय गोधन सुध लीजिये॥
देख नंद और मात जसोधा ओरहीं।
रोवें नार नवाय कै नंद किशोरही॥
तक मुख रोवन लागे जसोधा नंदहू।
परो श्रीवके बीच प्रीत को फंदहू॥
कहें कन्हैयालाल हमें तू राख लै।
लोटन लगे तिंह काल बचन यह भाखकै॥
नंद कहें घनश्याम हमें संग लेहु जू।

जसुमत कों गृह काज जान किन देहु जू ॥
जसुमत कहैं नंदराय सों तुम गृह कों चलो ।
साजो घर और बार करो कारज भलो ॥ ५७ ॥
लोक बंध की लाज सभी तज डार हूं ।
निशिदिन या ब्रजराज कों नैन निहारहूं ॥
दूर करो मत मोहिं देवकी माइ जू ।
हों तुम्हरे ब्रजराज कुंवर की धाई जू ॥
धाइन को बहु भांत सूं आदर कीजिये ।
असन बसन धन धाम भली बिध दीजिये ॥
गोधन और धन सकल हमारो लेहु जू ।
नित प्रत मोहनलाल कों देखन देहु जू ॥
पाँच सात मिल बात जु ऐसी विध कहे ।
सबहुन जानें देहु सु हम ह्याहीं रहें ॥
सब मिल ऐसी भांति मतो मनमें करै ।
तब उत भेटैं कौन पाय काके परै ॥
भाषें श्री वसुदेव जु हम केतो कहे ।
ये तो केहूं भांति कहे नाहीं लगे ॥
हम सबही बहु भांति जु कहि कहि हारई ।
प्रेम प्रीत भरभार टेक नहीं टारई ॥ ५८ ॥
तब अपनी घनश्याम माया विस्तारिया ।
जासों सब ब्रह्मण्ड में कौतुक धारिया ॥
सो माया ब्रज लोगन ऊपर डारिया ।
तब चलबे की सोंज सबन जु सँभारिया ॥
चलो चलो अब बेग सभी मुखतें कहैं ।
राम राम परनाम नहीं रसना लहैं ॥

जिह माया करतार सकल जग वस कियो ।
सो माया नहीं फेर सकत राधा हियो ॥
माया अतिबलवंत न कोऊ सम करैं ।
प्रेम राधिका अग्र धीर नाहीं धरैं ॥
चींटी निरबल अधिक कहा बलधारई ।
जब हस्ती पग माहिं पकर कै डारई ॥
व्रजबासी सब लोग बाट व्रजकी लई ।
अह कारज के माहिं सबन की मत छई ॥
राधा रुकमिन गेह रही ठहराय कै ।
चलबे की चित नाहिं रही मन लायकै ॥ ५६ ॥
तब हरिजू रनवास सबै जु बुलाइया ।
विनती कर मृदुबैन सगुन समझाइया ॥
राधा अति परबीन चतुर चित जानई ।
हठ दृढ़ गहकै और बात नहीं मानई ॥
कहै सुनैं को बात सो कासों भाषई ।
केहूं कैसी भांति मरन अभिलाषई ॥
विष भष अपने पेट कटारी ही करूं ।
ना तो अबहीं बूड़ सरोवर में मरूं ॥
मृत अकाल बिचार नेक धीरज गहै ।
केहूं विध जदुनाथ-को नित दरशन लहै ॥
कूदपरी जल माहिं सरोवर के तहीं ।
महा तपत उर माहिं भई सीतल नहीं ॥
कंठ कुंवर परमान भयो जल सब तहां ।
अति गंभीर अधीर नीर जो हो उहां ॥
तब सतभामा बोल उठी इह भांत सों ।

मनकी घुंडी खोल जीव की बात सों ॥ ६० ॥
चाहत लीन्हों कंथ परायो चोरकँ।
चितवत बारही बार नैन की कोरकैं॥
जब लग हैं घनश्याम बाल गोपाल ही।
तबलग देखे चरित तिहारे ख्याल ही॥
क्यों नहीं ब्रज कों जाव रहो घर बैठ कै।
बाद परायो गेह चहत हो पैठ कै॥
अब तो यह जदुनाथ जगत नायक भये।
ग्वाल गंवार तुम्हार बात लाइक रहे॥
तजें नहा कुललाज बंध की हीय सों।
जे कुल नार बिचार करैं यह जीय सों॥
मात पिता जिह गेह जाह के संग दियो।
उन दुख सुख में साथ सदा ताको कियो॥
मरत जियत नहीं छाड़ पुरुष के सग रहैं।
ये लक्षन कुल बधू पुरानन में कहैं॥
तब श्रीराधा बोल उठी इह भांत सों।
सतभामा चितलाय सुनो इह बात कों॥ ६१ ॥
वेद पुरानन माहिं जु ऐसें गाइया।
जिन पायो जग माहिं प्रेम तें पाइया॥
जे प्रेमी जन होहिं सकल सिरमौर हैं।
तिन पाछैं हरि फिरत जैसें चकडोर हैं॥
अब तुम सुनहु बनाय प्रेम की रीत कों।
दिव्य दृष्टि कर देखो हिये में प्रीत सों॥
जिन हरिजू के साथ जु नातो मानिया।
मन्दभाग जग माहि कछू नहीं जानिया॥

नाते पै मतभूल न धोखे में परो ।
बर्न कुलीन बिचार गर्ब मत चितधरो ॥
मात पिता जो नेम वतायो चावसों ।
सब जग लीन्हों नेम प्रीत के भावसों ॥
अब तो हम संसार जो प्रेम बखानई ।
प्रेम नेम को भेद कछू नहीं जानई ॥
जिह बन में सिंहराज विराजत प्रेम है ।
तिंह बन तैं गजराज ज्यों भाजत नेम है ॥ ६२ ॥

तू अजान नहिं जानें न नेक हूं मानई ।
हरि जानें यह रीत कि रुकमिन जानई ।
यह रवै जग के माहिं प्रगट कीरत भई ॥
तेरे पिता हरि बाद दोष चोरी दई ॥
मणि की चोरी काज जु हरि कितहूं गये ।
मणि पाई उहं ठांव खिस्याने सब भये ॥
तैं तो हरि के काज कहा कारज कियो ।
जग उपहास पै हास सीस ऊपर लियो ॥
कर अग्यारी अग्नि दई भांवर जहां ।
ऐसी बिध सों ब्याह भयो तुम्हरो तहां ॥
ऐसी बिधको ब्याह नहीं कोऊ करै ।
ऐसे ब्याह को गर्ब कहा मन में धरै ॥
जग में ऐसो ब्याह जहां तहां पाइये ।
पे यह प्रेम को ब्याह कठिन मन लाइये ॥
मो सम नहीं तेरो प्रेम चढ़ावत भोंह क्यों ।
हरिसों बूझ यह बात देह हरि सोंह हों ॥ ६३ ॥

सुनकर बोले बात तभी ब्रजनाथ जू ।

राधा भाषत सांच सभी यह बात जू ॥
जबही सुने इंह भांत बचन जदुराय कै।
बिन रुकमिन सब ओर रहीं खिसयाइ कै ॥
बहुरों श्री घनश्याम बचन ऐसें कहो।
राधा प्यारी बैन हमारे चित लहो ॥
जल भीतर तें निकस बाहरें आव हों।
जो चाहत मन माहिं सु हमें बतलाव हों ॥ ६४ ॥
राधा कहत सुनाय बचन इक पावहूं।
तबहों जल तें निकस बाहरें आवहूं ॥
कहो तबै घनश्याम जु कछु मांगो अबै।
सो सब तुमकों देंहुं जु तुम इच्छा सबै ॥
बबा नन्द की सहस दुहाई जानियो।
तुम्हरे चरन की सोंह हिये में आनियो ॥
बोली राधा तबै वृन्दावन जांव जू।
कै नित रहो तहां संग कै नीर समाव जू ॥ ६५ ॥
यों ही करूंगो प्यारी कहो जग साइयां।
श्री राधा मन भयो अनंद बधाइयां ॥
पर्मानन्द सुख पाय धरी मन धीरही।
आई बाहर निकस सरोवर नीरहीं ॥
रुक्मिन नौतन चीर अनूप मंगाइया।
राधा जू के अंग सकल पहराइया ॥
राधा जी को प्रेम कि बिसवें बीस है।
चरणहिदासा वार कि तन मन सीस है ॥ ६६ ॥
खुस भई राधा कुंवर वृन्दावन आइया।
श्रीब्रजदूलह कुंवर संगही ल्याइया ॥

तहां आय बहु भांत सुभोगे भोगही ।
नित बिहार जहां होत जानत सब लोगहीं ॥
वेई वृक्ष वेई कदम जमुन के कूलही ।
वेई कमल सरोज कमोदनि फूलही ॥
वेई जमुनां नीर सुपर्म रसालहीं
जहां क्रीड़त आनँद सों मोहन लालहीं ॥ ६७ ॥

दूजो कृष्ण सरूप और परगट भयो ।
सो रानी पटरानी देवकी संग गयो ॥
यह लीला सुखरास सुनै जो गावई ।
पूजे मनकी आस परम सुख पावई ॥
लीला परम पुनीत भक्त की रीत सों ।
चरणदास कहि भाप भली विधप्रीत सों ॥
जो बांचै चित्तलाय कोइ सरवन करै ।
भक्ति परापत होय हिये आनंद भरै ॥
प्रेम भक्ति के भाय यह लीला गाइया ।
चरन कमल चितलाय परम सुख पाइया ॥
अरज करै चरनदास सुनों शुकदेव जू ।
जनम जनम द्यो भक्ति करूं गुरू सेवजू ॥ ६८ ॥

इति श्री कुरुक्षेत्र लीला अष्टपदी छन्द श्री महाराज साहिब
श्यामचरणदास जी कृत संपूर्णम् ॥
श्रीराधाकृष्णार्पणमस्तु ॥

(ग़ज़ल)

मुझे श्याम से मिलने की आरज़ू है ।
शबोरोज़ दिल में यही जुस्तजू है ॥
नहीं भाती हैं मुझको बातें किसी की ।
सुनी जब से उस यार की गुफ्तगू है ॥
नहीं मुझको मतलब जहाँ में किसी से ।
चुभा जबसे दिलमें सनम् खूबरू है ॥
जो आशिक़ है उसका नहीं उस्से ग़ाफ़िल ।
तड़पता अज़ल से खड़ा रूबरू है ॥
शराबे मुहब्बत पिई जिसने यारो ।
हुवा दोनो जग में वही सुर्ख़रू है ॥
सभी आशिक़ों पे किया कर्म तूने ।
मुझ आसी पे तेरा नहीं दिल रुजू है ॥
जहाँ देखे रनजीत हाज़िर वहीं है ।
हर इक गुल में उसकी मिली मुश्कबू है ॥

(शब्द-उरदू)

मुरशद मेरादिल दरियाई दिलके अन्दर खोजा ।
तिसके अंदर सत्तर काबा मक्का तीसों रोज़ा ॥ १ ॥
चौदह तबक़ औलिया जिसमें भेद न होय जुदाई ।
सहस्र कमाल नमाज़ में ठाढ़े दर्शन जहाँ खुदाई ॥ २ ॥
हवा न हिर्स खुदी नहिं खूबी अनलहक़ जहांबानी ।
बिन चिराग़ खाने सब रौशन जिसमें तख़्त सुभानी ॥ ३ ॥
बिना शजर जहाँ बहु गुलफूले बिना अबर जहां बरसें ।
बिन सरोद तंबूर बजत हैं चश्मे हो मन दरसें ॥
जिस दरगाह मसल्ला डारें बैठे क़ादर क़ाज़ी ।

न्याय करें सीनें की पूछें रक्खें सबको राज़ी ॥
तिसके फल दीदार किये से नादिर होइ फ़क़ीर ।
मारे काल कलंदर अंदर दिलमें धारे धीर ॥
ऐसा हो जब कमला होई तब कमाल पद पावे ।
साहब मिल साहब को दरसे ज्यों जल बूँद समावे ॥
ऐसा हो सोइ पीर कहावे मनी मान सब खोवे ।
चरनदास ज़मीपर रोशन पाव पसारे सोवे ॥

(कवित्त)

जीवत मरजाय उलट आप में समाय मन कहीं नहीं जाय यह ऐसी दिलगीरी है । करे बिपिन बास जिन जानत जी भूख प्यास मेटी पर आस और परम सबूरी है ॥ परमतत्त्व को बिचार चिंता सबडार हरि रसमें मतवार यह ऐसी अमीरी है । कहे चरणदास दोनों दीनमें पुकार यार सबही आसान एक मुशकिल फ़क़ीरी है ॥

श्रीशुकदेव अष्टक ॥

(छन्द)

षोडशवर्ष किशोरमूरति श्यामवरण दिगम्बरं ।
घूघरवारे केस झलकें शुकमुनि चरण प्रणाम्यहं ॥ १ ॥
पद्मआसन उदर त्रिबली चरण पंकज शोभितं ।
आजानुभुजमुसकात मुखसों शुकमुनि चरण प्रणाम्यहं ॥ २ ॥
गूढयंत्रु विशाल उर छबि नाभि गंभीर बिराजतं ।
जलज लोचन सुखद नासा शुकमुनिचरण प्रणाम्यहं ॥ ३ ॥
श्री व्यासनंदन जगढन्दन मोह ममत्व निकंदनं ।
कामक्रोध मदलोभ न जिनमें शुकमुनि चरण प्रणाम्यहं ॥ ४ ॥

ब्रह्मरूप अनूप मुनिवर पराशर कुलभूषणं ।
श्रीकृष्णचरित पुनीत वर्णत शुकमुनिचरण प्रणाम्यहं ॥ ५ ॥
त्रिभुवन उजागर कृपासागर द्वंद्व संकट मोचनं ।
प्रेममद मातेरहैं नित शुकमुनिचरण प्रणाम्यहं ॥ ६ ॥
निरालंब निहभ्रर्म निसिदिन स्थिर बुद्धि निकेतनं ।
धर्मधारी ब्रह्मचारी शुकमुनिचरण प्रणाम्यहं ॥ ७ ॥
पतित पावन भर्म नसावन शरणागत सुखदायकं ।
मायाजीतं गुणातीतं शुकमुनिचरण प्रणाम्यहं ॥ ८ ॥
श्रीशुकदेव अष्टक परमसुंदर पठत पाप नशायकं ।
चरणदास शुकदेव स्वामी भक्ति मुक्ति फलदायकं ॥ ९ ॥

ओम् ॥

श्रीशुकदेव जी सहाय ॥

अथ श्री महाराज साहिब श्री स्वामिचरणदास जी कृत नासकेत लीला प्रारम्भ्यते ॥

दोहा ॥

जै जै श्रीमुनि व्यासजी, जै जै गुरु शुकदेव ।
तुम किरपा सूं कहत हूं, नासकेत को भेव ॥ १ ॥
आय बैठ हिरदै विषै, मो मुख कहो बखान ।
तुमतो जानत हो सबै, मैं हूं मूढ़ अजान ॥ २ ॥
चरणदास हो कहत हूं, भाषा परम पुनीत ।
सुन सुन आवै नीत पर, छूटै सकल अनीत ॥ ३ ॥
नर नारी सुन लीजिए, अद्भुत कथा सुजान ।
पाप पुण्य की ओर सूं, जो कोइ होय अजान ॥ ४ ॥
त्रेतायुग की यह कथा, संस्कृत्त के माहिं ।
नासकेत ही नांव है, मैं भाषूं ले छाहिं ॥ ५ ॥
नीमषारहो के विषे, कथा कही जो सूत ।
सौनक आदि रिषी सबै, सुनत भए मिल जूथ ॥ ६ ॥

सूत उवाच ॥

बैशंपायन इक समैं, बैठे गंगा तीर ।
अति प्रसन्न उज्जल दिशा, निरखत सुरसरि नीर ॥ ७ ॥
राजा जनमेजय तबै, किया जु तहां अस्नान ।
मोती सोना आदि बहु, दिया विप्रन कूं दान ॥ ८ ॥
प्राछत मेटन काज ही, नेम लिया जो एक ।
ब्रह्मचर्य रूपी जु तप, बारह बरस की टेक ॥ ९ ॥

सोरठा ॥

ब्राह्मण ऋषों समेत, बैशंपायन पासही ।
गया जु करि बहु हेत, कछु पूछन की आसधरि ॥१०॥
पांडव वंश मझार, उपजा हुवा जु भूप यह ।
बोला वचन सँभार, बैशंपायन साथही ॥११॥

जनमेजय उवाच ॥

चौपाई ॥

करि डंडौत बचन यों भाषा । श्रुचरनन परि मस्तक राखा ॥
सीस उठा मुख तका सुभागे । फिर यों अस्तुति करने लागे ॥
हे बुधवान वड़े तुम चातुर । भक्ति तपस्या में अति आतुर ॥
सर्व शास्त्र तुम नीके जानों । धरम दया नीके पहिचानों ॥
व्यासदेव के शिष बहु प्यारे । जोगी महा जगत सूं न्यारे ॥
दिव्य कथा पूछत हूं तोही । पाप संपूरन काटन सोई ॥
किरपा करि संदेह मिटावो । भिन्न भिन्न करि सभी सुनावो ॥
जनमेजय यों पूछन कीना । रणजीत कहैं ऋषि उत्तरदीना १२

वैशंपायन उवाच ॥

दोहा ॥

सुन राजा अद्भुत कथा, कहूं तुम्हारे हेत ।
इस में संशय है नहीं, सर्व पाप हरि लेत ॥१३॥
राजा कथा पुरान की, शुभ है सुनने जोग ।
और ऋषीश्वर भी सुनों, तन मन नासैं रोग ॥१४॥

चौपाई ॥

एक ऋषि जो पहिले भया । धर्मनीक उज्जल मन छया ॥
उद्दालक जिंह नाम बखानों । तपसी ब्रह्मा का सुत जानों ॥
वेद अर्थ का जाननवारा । इंद्रीजित जोगेश्वर भारा ॥

हिरदा शुद्ध ब्रह्म बुध जाकी । तेजवंत सुंदर छवि ताकी ॥
जाका आश्रम सुन्दर नीका । ऋषि मुनि करकर शोभतटीका ॥
भांति अनेक वृक्ष जहा सोहैं । फूलन भरे अधिक मनमोहैं ॥
हरि हरी बेल रही लिपटाई । बोलत भँवर महा सुखदाई ॥
हंस आदि पची बहु सोहत । मोर चकोर कोकिला मोहत १५

दोहा ॥

अरु पक्षी ह्वां बसत हैं, शुभ शुभ भांति अनेक ।
शोभा सब बरनूं कहा, अधिक एक तें एक ॥१६॥

चौपाई ॥

उड़ि बैठे पची जहां तरवर । कँवल भरे सोहैं तहां सरवर ॥
आश्रम सुखदाई बरनां सो । उद्दालक उस ठौर रहैं सो ॥
तेजवंत सूरज ज्यों राजैं । जिनके दरशन पातक भाजैं ॥
तपकी शोभा दस दिस छाई । देवलोक में भई बड़ाई ॥
अथासी बरस सहस तप कीनों । लोक वेद में नां चितदीनों ॥
एक पांव सूं ठाड़े रहे । जाड़ा गरमीं पावस सहैं ॥
अधिक तपस्या गाढ़ी कीन्हीं । जाकूं सुरपति सुन अरुचीन्हीं ॥
ईन्द्र भूप डरा मन माहीं । तन में धीरज रहा जु नाहीं १७

दोहा ॥

सकल विकल बहुतै भई, धीरज रहा जु नाहिं ।
कांप कांप बेगी गया, ब्रह्मलोक के माहिं ॥१८॥

चौपाई ॥

जां ब्रह्मा का दरशन लीना । साष्टाङ्ग परनाम जु कीना ॥
फिर विरंचि आदर बहु कीया । अरघ और आसन जोदीया ॥
भय करि दुखी इंद्र हो रहा । ब्रह्मा आगे अस्थिर भया ॥
नैन उदास दीन मुख कीयें । बिरंच और को तनमनदीयें ॥

ब्रह्मोवाच ॥

हे इन्दर तू कैसे आया । दुखी दीन मुख क्यों जु बनाया ॥
भय उपजा कासों तोहि भारी । आसन क्यों कांपा बलकारी ॥

इन्द्रउवाच ॥

इन्दर कहै सुनों विधि करता । तुमही या जग के हो भरता ॥
वही कहूं जासूं भय खाया । तुम्हरे चरन निकट ज्यों आया ॥१६॥

दोहा ॥

मुनि उद्दालक पुतरतो, तिरलोकी विख्यात ।
तप जु करै भू लोक में, एक पांव दिन रात ॥२०॥
तप करतें बहुचिर भया, तातें हिया डरात ।
आसन कांपत है घनों, धीरज नाहिं धरात ॥ २१ ॥
यातें कहो उपावहीं, कित जाऊं मैं भाज ।
अमरावती नगरी सहित, सोंपा ह्यां का राज ॥ २२ ॥
अरु सोंपूं तिरलोक हू, कहां रहूं मैं जाय ।
कहा करूं रिषि तेज सूं, भय व्यापो अधिकाय ॥ २३ ॥

सूतउवाच ॥

दोहा ॥

इन्दर के सब बचन सुनि, बोले बिधि मुसकाय ।
धीरज धर भय मत करै, सुखी रहो हरषाय ॥ २४ ॥
उद्दालक जो तप करै, मुक्ति हेत सतमान ।
नहीं कामना राजकी, यह निहचै कर जान ॥ २५ ॥
मो सुत है धरमातमा, बड़ा तेज दिव्यरूप ।
तीन लोक परसिद्ध है, तप करके सुन भूप ॥ २६ ॥
तू निहचल हो राजकर, इन्द्र पुरी कों जाय ।
अरु तेरे संदेह जो, देहूं बेग मिटाय ॥ २७ ॥

ब्रह्मा ही के बचन सुनि, खुसी होय सुख पाय।
गया जु इन्दर लोक में, आनन्द अधिक बढ़ाय ॥ २८ ॥

चौपाई ॥

अब सुन ब्रह्मा जू की दाया। पिप्पलादिको निकट बुलाया ॥
सभी भांत कर वह समझाया। उद्दालक के पास पठाया ॥
तप निरबर्त करन के काजे। पिप्पलादि मुनि आय बिराजे ॥
उद्दालक उठि आदर कीना। बड़े भाव सूं आसन दीना ॥
चरन धोय कर पूजा कीन्ही। नमस्कार कियो कर आधीनी ॥
और कही तुम ह्यां पग धारे। कौन हेत कहिये मुनि प्यारे ॥

पिप्पलादकउवाच ॥

पिप्पलाद कही सुन रिषाराये। सहजें हम दरशन कूं आए ॥
बड़ी तपस्या का धन तेरे। पै संदेह उठा इक मेरे ॥ २९ ॥

दोहा ॥

नारी सुधारी रिषि सबै, तप करैं अधिक अत्यन्त।
तप धनही के जोर सूं, रहैं जु सदा अचिन्त ॥ ३० ॥

चौपाई ॥

सबके आश्रम में सुतनारी। सुन्दर भवन महा सुख भारी ॥
तुम्हरे तिरिया ना संताना। यह हम अचरज बहुतक माना ॥
पुत्र बिना कुल बंस न चालै। सोत बिना सूकै ज्यों तालै ॥
बंश नष्ट सूं आगै नाहीं। पितर देवता रीते जांहीं ॥
होहिं न परसन नीकै जानो। तातैं उपजावन सुत ठानौं ॥
जीवत मरतैं काज संवारै। भला पुत्र हो दो कुल तारै ॥
दीपक सूं दीपक ज्यों लागे। ऐसे वंश चलै यों आगे ॥
जो कोई पुत्र बिनाहे हीना। वाका जगत सुन्न अरु छीना ॥

दोहा ॥

वाकूं घरसूं काम क्या, खोवन वंश अऊत।

मूयें किरिया को करै, अगत जाय हो भूत ॥ ३२ ॥

चौपाई ॥

वेद माहिं ऐसे लिख राखा। ब्रह्माजूने परगट भाखा ॥
याकूं समझ जतन अब कीजे। उपजावन पुत्तर मन लीजे ॥
ब्राह्मण श्रेष्ठ तोहि मैं जानों। मेरे बचन सांच करि मानों ॥

उद्दालकउवाच ॥

मुनि उद्दालक ऐसे कहिया। ब्यासी सहसबरस तप रहिया ॥
रहूं अस्थिर मन में नहिं आवे। तिरिया पुत्तर को उपजावे ॥
हे पिप्पलादिक चितना धरूं। तिरिया का संग कैसे करूं ॥
नेम वर्तकों कैसे हारूं। भवसागर में मन क्यों डारूं ॥
नरकमाहि वेही नर जावें। टेक वर्त कूं जो विसरावें ॥ ३३ ॥

दोहा ॥

जिन छोड़ा है नेम कों, खोया तप का मूल।
छोड़ छोड़ फिर जग लिया, ताके मूंहडे धूल ॥ ३४ ॥

चौपाई ॥

लिखा वेद में नरकों जैहै। दुनिया तज दुनिया फिर लैहै ॥
कई भांत के दुख उठि लागैं। आवत हैं वाही के आगैं ॥
हो अतीत फिर घर में आवें। तीन लोक में भरमत धावें ॥
मुकति ठिकाना वाकूं नाहीं। जाय परै चौरासी माहीं ॥
नारी सुत कछु काम न आवैं। अंत समय छांई रह जावैं ॥
कोई किसी का संगी नाहीं। मारगमें मिल मिल उठजाईं ॥
तातें जग कूं मिथ्या देखा। सुत नारी का झूंठा लेखा ॥
यातें करूं न मन में आवे। धोखे में अबको भरमावे ॥ ३५ ॥

दोहा ॥

मैंने तप धारन किया, कैसे छांडूं ताहि।

हांसी होवे जगत में, अपकीरति हो जाहि ॥ ३६ ॥

पिप्पलादकउवाच ॥

चौपाई ॥

फिर पिप्पलाद जु बोला ऐसें । आप स्वारथी भाषै जैसें ॥
हे उद्दालक यह सुन लीजे । जुक्ति अजुक्ति विचारही कीजे ॥
जो कोइ संतति सूं है हीना । वाका धर्म सदा है छीना ॥
अरु जिनकी तपसूं रुचि नासी । सो वे भिष्टल नरक निवासी ॥
हम तेरा तप नाहिं छुटावें । बलकी उलटा धर्म बढ़ावें ॥
सुत उपजावन ही के हेता । नारी संग करै जो जेता ॥
इन्द्री स्वाद सदा नहिं धावें । रितु के समय दान दे आवें ॥
वाकूं पाप दोष नहिं लागै । ब्रह्मावचन जु भाष आगै ॥ ३७ ॥

वैशंपायनउवाच ॥

दोहा ॥

ऐसे कहि पिप्पलाद मुनि, गए ब्रह्मा के पास ।
सभी सुनाई जो हुती, वाकी सभै सुबास ॥ ३८ ॥
ब्रह्मा की अज्ञा लई, और किया परनाम ।
रिषी गए अस्थान कूं, पूरन करि के काम ॥ ३९ ॥
हे राजा ऐसे भई, उद्दालक तप माहिं ।
विप्र हुवो चिंता लगी, हिरदे तिरिया छाहिं ॥ ४० ॥
दुखी रहै सोचत रहै, नित यों करै विचार ।
को कन्या कितसो लहूं, अरु जाऊं किस द्वार ॥ ४१ ॥

चौपाई ॥

इस कारन ब्रह्मा पै जाऊं । यह सब अपनी बात सुनाऊं ॥
मो भागन सुत है अकि नाहीं । ऐसे पूछूं जाय गुसाईं ॥
चल्यो चल्यो ब्रह्मापै आयो । हाथ जोर के शीश नवायो ॥
ब्रह्मा बहुतक आदर कीनो । बैठन कारन आयसु दीनो ॥

कहो ऋषीश्वर कैसें आये । कौन अर्थ कारज क्यों लाये ॥
इन्द्रीजीत अरु तुम निरवासी । कैसे आये हमरे पासी ॥
कहै उद्दालक सुनहो नाथा । पूछूँ बात नवाऊं माथा ॥
यह परसँग पूछन कों आयो । मेरे संतति लिखी बतावो ॥४२॥

ब्रह्मोवाच ॥

दोहा ॥

तब ब्रह्मा भाषत भये, सुनहो यही बिचार ।
तेरे पुत्तर होयगा, वंश बढ़ावन हार ॥ ४३ ॥
बचन हमारा सांच हो, हिरदै राख निहार ।
पहिले पुत्तर आय है, ताके पीछे नार ॥ ४४ ॥
सोई सुता रघुवंश की, पतिबर्ता धर्म रूप ।
गोत बढ़ावन हारही, सुन्दर अधिक अनूप ॥ ४५ ॥
हे ब्राह्मण अब जाइए, अपने आश्रम माहिं ।
परजापति करतार मैं, तू चिंता कर नाहिं ॥ ४६ ॥

उद्दालकउवाच ॥

चौपाई ॥

रिषीने कही जोर कर दोई । नारी बिना पुत्तर कस होई ॥
ऐसी कहीं भई विपरीता । पाछे नारी पहिले पूता ॥
मिथ्या वचन करी तुम हांसी । मैं सकुचा मन भया उदासी ॥
उद्दालक के वचन सुने जब । विधि ह्वां अन्तर ध्यान भये तब ॥
गया देख ब्रह्मा को ह्वाईं । रिषी आया अस्थल के माहीं ॥
अपने मनमें ऐसे ताकी । ब्रह्मा हम सूं झूंठी भाषी ॥
कौन भांति बनिहै यह बाता । पहिले पुत्तर पाछे बनिता ॥
सोच सोच भया अधिक उदासा । उद्दालक कहैं चरणहीदासा ॥४७॥

इति श्रीनासकेतउपाख्याने श्रीरणजीतगुसाईंजीकृत
उद्दालकचिंतावर्णनोनाम प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥

वैशंपायनउवाच ॥

दोहा ॥

वैशंपायन यों कही, हे राजा बड़भाग ।
जानत हो सब शास्त्र, भक्ति बिषै अनुराग ॥ १ ॥
वह ब्राह्मण अभिलाष सुत, फिर लागा तपध्यान ।
परम पुरुष का धांवना, हिरदे माहीं थान ॥ २ ॥

चौपाई ॥

नारी की मन आशा रहै । काहू से मन की नहीं कहै ॥
रात दिना चिन्ता मन माहीं । छिन इक तिरिया भूलत नाहीं ॥
सब तन काम जगै दुखदाई । जैसे सूता सिह जगाई ॥
उसी वासना बीज खिसाहा । हांनहार की यही दिसाही ॥
वह बीरज कर माहीं लीन्हां । कंवल फूल माहिं धर दीन्हा ॥
मुंद गया कुशामांहि लिपटाया । फिर वह गंगा बीच बहाया ॥
ब्रह्मा जू की आज्ञा दया । तैरा कंवल जू बहता भया ॥
आगे सुनों कहें रणजीता । जैसे कारज भया पुनीता ॥ ३ ॥

दोहा ॥

नग्गर एक सुहावना, गंगा निकट सुथान ।
राजा रघु ह्वां का धनी, तेजवंत ज्यों भान ॥ ४ ॥

चौपाई ॥

सतजुग बीत जु त्रेता लागा । तब राजारघु भया सुभागा ॥
कुल में पूरा धर्म उजागर । दयावंत अरु किरपा सागर ॥
जाकी परजा सब सुख पावै । नितही समां काल नहिं आवै ॥
धनवन्ते सुन्दर नर लोई । बड़ी उमर के रोग नं कोई ॥
राजा जितका रघु सतवादी । निह कंटक निरभय जिहगादी ॥
सूर बीर दाता सुखदाई । जाकी जग में बहुत बड़ाई ॥

चंद्रवती थी पुत्री ताकी । धुर सूं कथा कहूं मैं वाकी ॥
जन रणजीत कहैं सुन लीजे । सबही श्रोता ह्यां चित दीजै ॥५॥

दोहा ॥

सुंदर मंदर सोहना, दिपत विराज हुलास ।
चूने लीपा सेतही, जित कन्या का बास ॥ ६ ॥

चौपाई ॥

रंग महल जहां चित्तर कारी । ऊंचा महल झरोखे बारी ॥
महा सुन्दरी कंचनबरनी । सुघड़ चतुर देखत मनहरनी ॥
नखशिख ज्यों विधि आप सँवारी । गुनवंती अरु रूप उज्यारी ॥
दिबियों बिषे न कन्या ऐसी । गंधर्वयों बिषे न कहिये जैसी ॥
आसुरी बिषे जु देखी नाहीं । ना कहिये तिरलोकी माहीं ॥
वैसा रूप न हुआ न होगा । वा कन्या के जोगन जोगा ॥
बड़ी अप्सरा चार पिछानों । रंभा और उरवसी मानों ॥
और तिलोत्तमा तीजी नारी । और मैनका चौथी प्यारी ॥७॥

दोहा ॥

ये जो चारों अप्सरा, स्वर्गही मांहि अनूप ।
उनसैं भी बहुतै सरस, वा कन्या का रूप ॥ ८ ॥

चौपाई ॥

दस हजार जो कन्या ओरी । वाके पास रहैं करजोरी ॥
सो वह कन्या सखियों साथी । परन बांधि गंगा नितन्हाती ॥
न्हाय सदाही भोजन करती । सखियों सहित सुखी जोरहती ॥
एक दिना ऐसी गति भई । चढ़ि सुखपाल गंग कूं गई ॥
भांत भांत के भूषन साजैं । मुतियन के गलहार बिराजैं ॥
आगे पीछे दहिने बावैं । चढ़ि तुरंगन कन्या जावैं ॥
कोइ कोइ धुजा चंवर कर धारैं । बस्तर भूषण रूप सँवारैं ॥९॥

वैशंपायनउवाच ॥

दोहा ॥

वैशंपायन यों कही, हे राजा बड़भाग ।
जानत हो सब शास्त्र, भक्ति बिषै अनुराग ॥ १ ॥
वह ब्राह्मण अभिलाष सुत, फिर लागा तपध्यान ।
परम पुरुष का धांवना, हिरदै माहीं थान ॥ २ ॥

चौपाई ॥

नारी की मन आशा रहै । काहू से मन की नहीं कहै ॥
रात दिना चिन्ता मन माहीं । छिन इक तिरिया भूलत नाहीं ॥
सब तन काम जगे दुखदाई । जैसे सूता सिह जगाई ॥
उसी वासना बीज खिसाहा । होनहार की यही दिसाही ॥
वह बीरज कर माहीं लीन्हां । कंवल फूल माहिं धर दीन्हा ॥
मुंद गया कुशामांहिं लिपटाया । फिर वह गंगा बीच बहाया ॥
ब्रह्मा जू की आज्ञा दया । तैरा कंवल जू बहता भया ॥
आगे सुनों कहैं रणजीता । जैसे कारज भया पुनीता ॥३॥

दोहा ॥

नग्गर एक सुहावना, गंगा निकट सुथान ।
राजा रघु ह्वां का धनी, तेजवंत ज्यों भान ॥ ४ ॥

चौपाई ॥

सतजुग बीत जु त्रेता लागा । तब राजारघु भया सुभागा ॥
कुल में पूरा धर्म उजागर । दयावंत अरु किरपा सागर ॥
जाकी परजा सब सुख पावै । नितही समां काल नहिं आवै ॥
धनवन्ते सुन्दर नर लोई । बड़ी उमर के रोग न कोई ॥
राजा जितका रघु सतवादी । निह कंटक निरभय जिहगादी ॥
सूर बीर दाता सुखदाई । जाकी जग में बहुत बड़ाई ॥

चंद्रवती थी पुत्री ताकी। धुर सूं कथा कहूं मैं वाकी॥
जन रणजीत कहैं सुन लीजै। सबही श्रोता ह्यां चित दीजै॥५॥

दोहा॥

सुंदर मंदर सोहना, दिपत विराज हुलास।
चूने लीपा सेतही, जित कन्या का बास॥ ६॥

चौपाई॥

रंग महल जहां चित्तर कारी। ऊंचा महल झरोखे बारी॥
महा सुन्दरी कंचनबरनी। सुघड़ चतुर देखत मनहरनी॥
नख शिख ज्यों विधि आप सँवारी। गुनवंती अरु रूप उज्यारी॥
दिबियों बिषे न कन्या ऐसी। गंधर्बयों विषे न कहिये जैसी॥
आसुरी बिषे जु देखी नाहीं। ना कहिये तिरलोकी माहीं॥
वैसा रूप न हुआ न होगा। वा कन्या के जोगन जोगा॥
बड़ी अप्सरा चार पिछानों। रंभा और उरवसी मानों॥
और तिलोत्तमा तीजी नारी। और मैनका चौथी प्यारी॥७॥

दोहा॥

ये जो चारों अप्सरा, स्वर्गही मांहि अनूप।
उनसैं भी बहुतै सरस, वा कन्या का रूप॥ ८॥

चौपाई॥

दस हजार जो कन्या ओरी। वाके पास रहैं करजोरी॥
सो वह कन्या सखियों साथी। परन बांधि गंगा नितन्हाती॥
न्हाय सदाही भोजन करती। सखियों सहित सुखी जोरहती॥
एक दिना ऐसी गति भई। चढ़ि सुखपाल गंग कूं गई॥
भांत भांत के भूषन साजैं। मुतियन के गलहार बिराजैं॥
आगे पीछे दहिने बावैं। चढ़ि तुरंगन कन्या जावैं॥
कोइ कोइ धुजा चंवर कर धारैं। बस्तर भूषण रूप सँवारैं॥९॥

दोहा ॥

बाजे बहुतक संग बजत, अरु गावत ही गीत ।
नंगार सैनिक सी चली, ज्यों थी नितकी रीत ॥ १० ॥

चौपाई ॥

जा पहुंची गंगा तट ठांहीं । क्रीड़ा करन लगी जलमाहीं ॥
ब्रह्मचारन शुभ लक्षण धारी । रूप प्रकाश रही है भारी ॥
गंगा जी में ठाढ़ी भई । उसी पद्म कूं देखत भई ॥
दिव्य सुगंध जु तैरत जावे । सूरज चंद किरन सरमावे ॥
नर क्या छूयसकै सो वाकों । कंवल जु तेजवंत है ताकों ॥
कन्या देख अचंभै रही । निज सखियन सों ऐसे कही ॥
इसी फूल के निकटै जावो । पकड़ हाथ सूं मोपैं लावो ॥
अज्ञा सूं कन्या गहि ल्याई । चन्द्रवती लीनों हरषाई ॥११॥

दोहा ॥

कुशा माहिं सूं खोलकर, सूंघा नाक लगाय ।
उसमें जो बीरज हुता, पैठा नाभ मंझाय ॥ १२ ॥

चौपाई ॥

सखियों सहित नहाय कर आई । जानी ना हरिकी चतुराई ॥
पहल महीने फूलन आये । दूजे मांस अंग पलटाये ॥
मांस तीसरे मोटी काया । चौथे उदर बड़ा होय आया ॥
पंचवें रोम पलट जो गए । अस्थन कछू श्याम जो भए ॥
छठे सातवें ऐसा भया । पेट जो बड़ा बहुत हो गया ॥
कन्या उदर देख भई बौरी । तेज भिष्टभया गति मति औरी ॥
सकल विकलमन व्याकुल नैना । शोक सिंधुमें परी अचैना ॥
धीरज तजकै रोवन लागी । चरनदास कहैं दुखमें पागी ॥

दोहा ॥

निज कन्या पूछन लगी, हे शुभ क्यों रोवंत।
सुख दीन्हे करतारने, दुख कहु क्यों होवंत ॥ १४ ॥
हमें बतावो बेगही, तन मनमें उकलन्त।
तुम कूं रोवत देखके, हमकूं कष्ट अत्यन्त ॥ १५ ॥
सखियों के सुन बचन ही, रोवत उत्तर दीन।
कहूं अचम्भे की सभी, अचरज ही कूं चीन ॥ १६ ॥

चौपाई ॥

मैं कुलमाहिं अकीरतवारी। भई सुनौरी सखी पियारी ॥
अरु दूषन रघुवंश मँझारी। अदिष्टगर्भमोहिभयो विकारी ॥
मैं नहीं जानूं क्या हो गया। भारी दुख हिये माहीं छया ॥
अरु देखो रघु महलों माहीं। देवत आय सकै कोइ नाहीं ॥
गंध्रव असुर न आवन पावै। मनुषों की तो कौन चलावै ॥
वड़ा अचंभा भारी भय है। तीन लोक में हुई न ह्वै है ॥
सुनिकै सखी सबै मुरझानी। पीरे बदन भई सब स्यानी ॥
मींढनलगी जू करसूं करही। इकदांतोंबिचअंगुलीधरही॥१७॥

दोहा ॥

व्याकुल होकै तुरत ही, गई रानी के पास।
हाथ जोड़ ठाढ़ी भई, होकर बहुत उदास ॥ १८ ॥
और कही जो दान द्यो, तो हम कहैं सुनाय।
अचरज कीसी बात ही, कहतें जींव डराय ॥ १९ ॥

रानीउवाच ॥

चौपाई ॥

रघुरानी कही कन्या जानौ। अभैदान दियो निहचै मानौ ॥
जथा जोग कहु कन्या अबही। कछु मत राखो भाखो सबही ॥
जब कन्या ऐसे करि बोली। कहि नांह सकै कहा कहैं खोलीं ॥

रोम खड़ेहों सब तन कांपै । अचरज बात कहा कहूं तापै ॥
चन्द्रवती के महलों माहीं । गंध्रबदेवत सकै न आई ॥
मानुष की तो सामृथ क्या है । उन महलों में आया चाहै ॥
ऐसी ठोर अचंभा भया । तुम्हरी कन्या कों गर्भ रह्या ॥
जब कन्याओं ऐसे कही । रानीसुनदुखिया बहु भई ॥२०॥

दोहा ॥

व्याकुल हो धरनी गिरी, रही न कछु संभार ।
शोकमाहिं पीड़ित भई, रघुराजा की नार ॥ २१ ॥

चौपाई ॥

उन कन्याओं ताहि उठाया । धीरज दे ताकूं बैठाया ॥
रानी कन्या रुकसत कीनौ । आप गवन राजा मन दीनौ ॥
जा राजा पै बचन उचारे । सकल शास्त्रके जानन वारे ॥
स्वामी अभैदान जो पाऊं । तौ अचरज की बात सुनाऊं ॥

राजोवाच ॥

राजाकही अभै तुम पावो । यथा योग्य सब बात सुनावो ॥
भूप वचन सुन रानी बोली । डरप सकुचती मुखसों खोली ॥

रानीउवाच ॥

कन्या तुम्हरी दूषित जानौ । चन्द्रावती ऐसे पहिचानौ ॥
जाके गर्भ अदिष्ट भया है । मोपै कछू न जात कह्या है ॥२२॥

दोहा ॥

क्रोधवन्त राजा भया, सुन रानी के बैन ।
और कही उन क्या कियो, रक्त बरन भये नैन ॥ २३ ॥

चौपाई ॥

राजा सेवक लिए बुलाई । क्रोधवन्त हो बात सुनाई ॥
वा कन्या कों ले तुम जावो । जंगल माहिं छोड़ि के आवो ॥

सुनकर सेवक आयसु लीनों । बनोबास कन्याकूं दीनों ॥
भ्यानक जंगल अधिक उदासा । व्याघ्र सिंघन का जहां बासा ॥
दसों दिशा तक व्याकुल भारी । कहैकि विधिक्या विपता डारी ॥
यों अधीर हो रही कुंवारी । ज्यों हिरनी संग सूं भईन्यारी ॥
कहै रनजीत हिये के माहीं । ऐसी दुखी कह सकूं नाहीं ॥२४॥

इति श्रीनासकेतोपाख्याने चन्द्रवतीकन्यात्यागोनाम

द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥

वैशंपायनउवाच ॥

दोहा ॥

ऐसे कन्या दुखित थी, इतने ही के माहिं ।
फिरता आया एक ऋषि, करी दया की छाहिं ॥ १ ॥

चौपाई ॥

सत्त धर्म में था वह पूरा । तप के मांहीं अधिकी सूरा ॥
हुता जु श्रेष्ठ मुनियों के माहीं । लैन फूल फल आया व्हांहीं ॥
उलटा जब आश्रम कूं चाला । लियै फूल फल कुशा कृपाला ॥
रोवत कन्या दिष्ट निहारी । चक्रित भया कौन यह बारी ॥
जाग्यवलक चिंता करि देखा । मनमें किए विचार अनेका ॥
यह दमयन्ती कै घिरताची । कै रंभा है सुन्दर आछी ॥
कै तिलोत्तमा चित्तरलेखा । कै इन्द्राणी है जु मैनिका ॥
देव सुता कै राज कुमारी । ऐसैं सोच कियो ऋषिभारी ॥२॥

दोहा ॥

छबि गुण रूप अधिक तहां, ससिवदनी अधिकाय ।
अंग अंग सुन्दर सबै, शोभा कही न जाय ॥३॥
सुन्दर कन्या देख कर, अचरज मन में लाय ।
जाग्यवलक पूछत भये, ऐसे वचन सुनाय ॥४॥

चौपाई ॥

हे कन्या तू कित सूं आई । है तू कौन पिता को माई ॥
कौन काज जंगल के माहीं । आप अकेली संग कोई नाहीं ॥
सिंघ जरक भेढ़ा इहि ठाईं । सो तोकूं भक्षन करि जाईं ॥
फिर कन्या वह ऐसे बोली । अपनी बिपता कही सबखोली ॥
हे ब्राह्मण क्या पूछे मेरी । मैं कुल बैरन दुखी घनेरी ॥
राजा रघु की मैं हूं बेटी । पिछले पापन मोहिं लपेटी ॥
बिन जानैं भयो गरभ दुखारी । पिता मोहिं निरजल बनडारी ॥
शोकवान सों आतुर भारी । दुखमें पीडत हिये मझारी ॥५॥

दोहा ॥

यों कन्या के बचन सुन, दुखी भयो ऋषिराय ।
सब अंगन संतप्त हो, बोला फिर दुहराय ॥ ६ ॥

ऋषिरुवाच ॥

हे देवी तू धर्मकी, बेटी मैं करी आज ।
मेरे आश्रम के बिषे, चल के सदा विराज ॥ ७ ॥
परमेश्वर हित सेवही, तहां करूं चितलाय ।
कंद साग फल लायकै, आगे धरूं बनाय ॥ ८ ॥
जब प्रसन्न होय संग भई, आई आश्रम माहिं ।
चरणदास कहैं रहने लगी, कोई अँदेसो नाहिं ॥ ९ ॥
बहुत दिना रहते हुए, गरभ भयो दसमास ।
जब उकताई देहसों, दुख मानौं बहु तास ॥१०॥
जब जान्यों परसूत का, समां जु पहुंचा आय ।
भवन बिसारो सकुच सों, पहुंची बन में जाय ॥११॥

चौपाई ॥

गंगा जी पुनी ह्वांई बिराजै । निर्मल जल शुध अधिकी राजै ॥

नमस्कार जाकर उन कीनों । सरन लई चित नीकैं दीनों ॥
पार ब्रह्म कूं लिया संभारी । अरु कही तुमपर जाऊं वारी ॥
फिर सूरज कूं नीकै धाया । जग पालन तुम दिनके राया ॥
अरु कही विष्णु जगत के स्वामी । घट घट के तुम अंतरजामी ॥
महादेव अरु गौरा माई । सभी देव मम करो सहाई ॥
जो मैं शुद्ध वंश में उपजी । हूं मैं शुद्ध शुद्धही शुभजी ॥
रघु मम पिता मात सतवंती । उनकी पुत्री मैं कुलवंती ॥१२॥

दोहा ॥

जो मेरी या देह में, पाप नहीं है मूर ।
तो जैसे गर्भ रहा है, उस मारग हो दूर ॥ १३ ॥
अहो विधाता जगतपति, यही अरज सुन लेह ।
मेरा वचन जु सांच है, तोसिताब सुख देह ॥ १४ ॥

वैशंपायनउवाच ॥

कन्या की करुना सुनी, जगजीवन करतार ।
तबै ग़र्भ वह उदर सों, आया कंठ मझार ॥ १५ ॥
कंठ सूं आया सीस में, छींक भई तिह बार ।
तबहीं निकसा बाहरे, नासाही के द्वार ॥ १६ ॥

चौपाई ॥

आई छींक सभी दुख टारे । बालक जनम्यों नासा द्वारे ॥
तातैं नासकेत भया नाऊं । द्योस घड़ी धन धन वह ठाऊं ॥
भूमि परतही बालक बोला । अपना भेद सभी तिन खोला ॥
हे माता सतवंती धरमी । मन में धीरज रख सुख करमी ॥
नासकेत मम नाम बखानौं । जोग सिद्ध में पूरन जानौं ॥
विधि के बचन जु पूरे भये । उद्दालक सूं आगे कहे ॥
ब्रह्मा का सुत है उद्दालक । ताही का जो मैं हूं बालक ॥

उपजा वाके बीरज सेती। कही सांच मानियो जेती॥
बालक बचन सुने जब माई। वह बहुती अचरज में आई॥१७॥

दोहा॥

जबै मोह बश होय कै, गोदी लिया उठाय।
फिर मुख में अस्तन दियो, खुशी भई अधिकाय॥१८॥

चौपाई॥

बालक शोभा कहा बखानूं। रूपवंत अरु सुर सूं ज्ञानूं॥
ऋषि के आश्रमही के माहीं। पालन लगी जिसी के ताईं॥
लज्या दुख लियें रहै सुभागा। इकदिन बालक रोवनलागा॥
थांभा थमै न क्योंही कैसे। कीया क्रोध सुभागी जैसे॥
हे पुत्तर रोवत क्यों भारी। तोही कारन बनमें डारी॥

वैशंपायनउवाच॥

हुवा था जब एक बरस का। रूपवंत गुणवंत सरस का॥
क्रोध सहित माता मन आई। वहीं पिटारी एक बनाई॥
तामें बालक कूं पौढ़ाया। कुशाघासतापे लिपटाया॥१९॥

दोहा॥

गही पिटारी आयकर, गंगा दिया बहाय।
तब कन्या उस पुत्रकूं, ऐसे कहा सुनाय॥२०॥

चौपाई॥

कौन गरभ का मैं नहीं जानूं। तेरे पिताकूं मैं न पिछानूं॥
जाके बीरज भया उपाधू। ताही के ढिग बहकर जातू॥
जब बालक वह बहता चला। आगे सुन होतबकी कला॥
बालक आया बहते बहते। जहां ऋषोश्वर बहुतक रहते॥
उद्दालक रहता था ह्वांही। तेजवन्त तपसी अधिकाई॥
लखी पिटारी आवत सबही। पर लीनी उद्दालक तबही॥

लाकर राखी अपने ठांहीं । आप लगा शुभ कर्मों माहीं ॥
वेद करम सबही करि लीन्हें । पित्तरकारज भी सबकीन्हें॥२१॥

दोहा ॥

शुभकर्मों से छूटकर, खोला फेर पिटार ।
जो देखे तो पुरुष इक, सुन्दर अधिक अपार ॥२२॥

चौपाई ॥

गुणवन्ता अरु लक्षण धारी । ध्यान जोगमें था बलकारी ॥
उस बालक कों ऐसे लहिया । ज्ञानवान ऋषि जब यों कहिया ॥
हे बालक अब बसतू यहाँही । मेरे सुन्दर आश्रम माहीं ॥
ऐसे कहि राखा धर्मशाला । लागा बहुर करन प्रतिपाला ॥२३॥

इति श्रीनासकेतोपाख्याने पितापुत्रसंयोगोनाम

तृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥

चौपाई ॥

एकदिना वाकी महतारी । गया क्रोध जब बात विचारी ॥
जिह कारन बहुते दुखपाया । सो बालक मैं गंग बहाया ॥
सोच सोच मन में पछताई । गंगाकूल ढूंढ़ने धाई ॥
व्याकुल भई रोवती चाली । अपनी बुध कूं देती गाली ॥
चलती चलती पहुंची तहाँ । उद्दालक रहता था जहाँ ॥
तहाँ अपना बालकही पाया । भरिकै अंकों गले लगाया ॥१॥

दोहा ॥

देख बहुत परसन्न हो, कही धोस धन आज ।
ढूँढ़न कूं निकसी हुती, सो भए पूरन काज ॥ २ ॥

चौपाई ॥

यों कहि फिर बैठी वह बाला । बालकलिपनलगो जज्ञसाला ॥
कन्या कही लीप कहा करिहो । को कारज या ऊपर सरिहो ॥

नासकेतउवाच ॥

जब बालक कही पिता हमारे । आज्ञा दे वन ओर सिधारे ॥
तातें लीपतहूं जज्ञसाला । आय करैं जज्ञ वै मधकाला ॥

मातोवाच ॥

कन्या कही पुत्र तुम मेरे । ला मैं लीपूं बदले तेरे ॥
जब बालक लीपन नहिं कीन्हा । सकल सौंज माता कर दीन्हा ॥
चित्त दे लीपा सुन्दर बाला । और दिना सूं नीकी शाला ॥
चरणदास कहै फुल्लित भई । गंगा न्हान करन कूं गई ॥३॥

दोहा ॥

तब उद्दालक आइया, बनते अपनी ठाहिं ।
बालक सों धन धन कहा, खुशी भये मन माहिं ॥ ४ ॥

उद्दालकउवाच ॥

पुत्तर झाड़ू भलीदे, लीपन किया बनाय ।
अगन होत्रका मंडही, नई भांति दरसाय ॥ ४ ॥
बहुत खुशी तौपै भया, सुन्दर मन्दिर देख ।
ऐसा लीपाना कभी, जैसा आज बसेख ॥ ६ ॥

नासकेतउवाच ॥

पिता सुनो लीपन करम, मैं नहिं कीया आज ।
मेरी माता आइया, जिन यह कीया काज ॥ ७ ॥

उद्दालकउवाच ॥

चौपाई ॥

हे पुत्तर तेरी जो माई । कारज करिके कितकूं धाई ॥
नासकेत सुनि ऐसे कही । गंगा ओर न्हान कूं गई ॥
सुन यह बचन खुशी ऋषि भयऊ । बहुरूं अगन होत्र चितदियऊ ॥
करि करि करमजु बोलत भया । पुत्तर का कर कर मैं लिया ॥
फिर वासूं कही गंगा जावो । अपनी माता कूं ले आवो ॥

आदर करके परसन करूं। पुष्पमूल ले आगे धरूं॥
बचन पिता के सुनि वहां गया। हाथ जोरि मातासों कह्या॥

नासकेतउवाच॥

हे माता चल आश्रम माहीं। जहां मम पिता बसोतुमह्वाहीं॥
कंद साग नीकै करि पावो। ऐसे सुख सूं द्योस वितावो॥

माताउवाच॥

सुनि चन्द्रावती कहा बिचारा। क्यों सुतवचन अजोग उचारा॥
सुनि करि रोम उठै तन सारे। बिना धर्म का वचन कहारे॥
आगे भी किन्हीं यह जसलीया। माता दान पुत्र ने कीया॥८॥

दोहा॥

जग में ऐसी रीत है, पिता करै जो दान।
कै कन्या का भ्रातही, कै मामूं परवान॥९॥
नासकेत चुपका भया, मन माहीं सकुचाय।
उठ आया ऋषिपासहीं, सबही दिया सुनाय॥१०॥

चौपाई॥

हे पुत्तर उन आछी भाखी। धर्मशास्त्र में योंही राखी॥
कहो उदालक फिर ह्वां जइए। मेरे मुखसों ऐसे कहिए॥
कौन वंश में जन्म तुम्हारा। कैसे उपजन भया हमारा॥
कौन काजकों तुम यहां आई। यह सब बातें पूछो जाई॥
बचन पिता के सुन वह धाया। माता कूं जा शीश नवाया॥

नासकेतउवाच॥

फेर कही सुन मेरी माता। पूछन कूं पठयो मम ताता॥
काकी धीको पिता तुम्हारो। कैसे तुम्हरे जन्म हमारो॥
ह्यां आवन को कारन को है। सतसत कहू ज्योंकरि जो है॥

माताउवाच ॥

दोहा ॥

चंद्रवती यों बोलिया, सुन पुत्तर परवीन ।
जो तू पूछत है मुझे, मैं कहूं चित दे चीन्ह ॥ १२ ॥
परालबध के जोग तें, करम भया जो जान ।
सो मैं तोसों कहत हूं, साखी इक भगवान ॥ १३ ॥
सूरज ही के वंश में, रघु राजा परसिद्ध ।
मैं हूं बेटी तासु की, शुभ करनी सब सिद्ध ॥ १४ ॥

चौपाई ॥

चूने लीपे मंदर माहीं । रहती हुती सीक कछु नाहीं ॥
दसहजार कन्या ढिग रहतीं । भांति भांनि मम सेवा करनीं ॥
एक समै मैं गंगा गई । जहां जाय कै न्हाती भई ॥
लिपटा कुशा कमल इक आया । पकड़ा खोला नाक लगाया ॥
वामें बीरज मैं नहिं जाना । नाक छेद हो उदर समाना ॥
वासों मोकूं गरभ रहा था । सखियों लखि मम मातकहा था ॥
फिर रानी राजासों कह्यो । पिता बनोबास मोहि दियो ॥
रोवन लगी बहुत दुख पाया । वहां ही एक तपस्वी आया ॥ १५ ॥

दोहा ॥

बेटी कर धीरज दिया, लैं गया आश्रम माहिं ।
ह्वां सुखसों रहने लगी, सोच रहा कछु नाहिं ॥ १६ ॥

चौपाई ॥

हे पुत्तर उपजा तू ह्वाहीं । नासा के मध जन्म्यों आई ॥
तातें नासकेत धरयो नाऊँ । पलने लगे बहुर वह ठाऊँ ॥
बरस दिनाके हो सुख पागे । घुटनों पैरों चलने लागे ॥
इक दिन रुदन किया तुम भारा । मैं किरोध करि गंगा डारा ॥ १७ ॥

दोहा ॥

तभी रोस मोहि आइया, लीन्हीं तुला बनाय ।
तामें तोहि सुलायकै, दीन्हों गंग बहाय ॥१८॥

चौपाई ॥

चार बरस पीछे सुध आई । बड़ी भई जब मैं पछताई ॥
जिह कारन बन लिया बसेरा । सुख छुटकै दुख हुवा घनेरा ॥
उपजा मोह क्रोध सब भागा । मन में तू बहु प्यारा लागा ॥
कलप कलप जिय रहा न जाई । तब उठ ढूंढनही कों धाई ॥
ढूंढत ढूंढत अब तोहिं पाया । आंखसुखी हुई हिया सिराया ॥
सुनरे पुत्तर यह मम बाता । जाय कहो तुम अपने ताता ॥
नासहीकेत उलट जब आया । पिताकूंसबही भेद सुनाया ॥१६॥

वैशंपायनउवाच ॥ दोहा ॥

सुनि उद्दालक हुलस मन, ब्रह्मा बचन संभार ।
चले संग ले बालका, जित चन्द्रावति नार ॥२०॥

चौपाई ॥

गये जहां बैठी बड़ भागी । मन सकुचा उठ चरनौं लागी ॥
चरनों से दोउ नैन छुवाये । कहीं धन्न हम दरशन पाये ॥
देख ऋषीश्वर ने सुख पाया । हँस करि ऐसे बचन सुनाया ॥
चलिये रहिये सुत के पाहूं । मैं राजा रघु के ढिग जाऊं ॥
तीनौं मिल आश्रम में आये । करि भोजन सबही हुलसाये ॥
नासकेत चन्द्रावति बाला । दोनों राख चला धर्मसाला ॥
भोर भये अरु बहुत संवारा । उद्दालक ने गवन विचारा ॥
चरनदासकहै मनधरि आसा । जा पहुँचा राजारघुपासा ॥२१॥

दोहा ॥

राजा बहु आदर कियो, सिंहासन बैठाय ।

चरनों सिर धरि यों कहा, कृपा करी तुम आय ॥२२॥

उद्दालकउवाच ॥ चौपाई ॥

उद्दालक कहो वचन अनूपा । देखे पिरथी पर बहुभूपा ॥
तो सम राजा और न दूजो । तेरी बड़ी आरवल हूजो ॥

राजोवाच ॥

हाथ जोरकर पूछी वाता । किह कारन आये तुम नाथा ॥
मनमें हो सो अज्ञा दीजै । वही कामना हमसूं लीजै ॥

उद्दालकउवाच ॥

ऐ राजा मोहिं कछू न चहिये । सभी त्याग जंगल में रहिये ॥
मैं आयो यह इच्छा मेरी । कन्या मांगन आयों तेरी ॥
वंस वढ़ावनही के काजा । मोसे सुनों सांच यह राजा ॥
जाकूं दीजे मोहि परनाई । अपने मनकी खोल सुनाई ॥

राजोवाच ॥

राजा कही न वेटी मेरे । पूरे वचन करूं जो तेरे ॥
एक हुती सो खाई काला । मरी गई छूटो जंजाला ॥

उद्दालक उवाच ॥

उद्दालक कहो सुनौ हमारी । अवलग जीवत सुता तुम्हारी ॥

रघुरुवाच ॥

राजा चौंक कही मुसकाई । वह कन्या कित है ऋषिराई ॥
मोहिं दीखत अचरजसी वाता । यहतुमबोलकह्योकुसलाता २३

उद्दालकउवाच ॥ दोहा ॥

ऋषिने कह्यो चन्द्रावती, मेरे आश्रम माहिं ।
सुत समेत वहां छोड़कर, मैं आयो इहिं ठाहिं ॥२४॥

चौपाई ॥

अहा वचन जु पूरे भये । जो हमकूं उन आगे कहे ॥

कहा कि पहिले बेटा पैहै । जिह पाछै नारी हू अइ है ॥
ऋषिने पिछली कही समझाई । आदि अन्तलों सबै सुनाई ॥
वंश हेत ब्रह्मा पै धायो । विधिने ऐसे बचन सुनायो ॥
पहिले पुत्तर पाछे तिरिया । तेरे भागन में यों धरिया ॥
यों कहि अन्तरध्यान विचारा । मैं निज अस्थल आन संभारा ॥
फिर रहकर तपही आराधा । मनमें रहै वासना व्याधा ॥
ताते बीज टरा कर लीना । ताकूं पदम माहिं धरदीना ॥
कुशालपेटी गंग वहाया । तो कन्या न्हाती ह्वां आया ॥
वाकूं सूंघा कर में लया । बीज चढ़ा गर्भ होही गया ॥
नासा द्वार जनम जिन लीया । नासहीकेत नांव धरदीया ॥
कर कर कन्या क्रोध बहाया । ऐसे पुत्तर पहिले आया ॥
फिर वह वाकूं ढूंढ़न धाई । ऐसे मो अस्थल में आई ॥
ब्रह्मा बचन न टारे टरै । कोटि उपाव जु प्रानी करै ॥
ऋषि मुनि देवत दैयत सारे । समरथ कौन जु वाकूं टारे ॥
उद्दालक सब खोल सुनाई । रनजीतकहैं राजामनआई २५

वैशंपायनउवाच ॥ दोहा ॥

तिस उपान्त जु भूप कूं, अचरज भयो हुलास ।
फिर उठकै महलों गया, रानी ही के पास ॥२६॥

चौपाई ॥

खुशी खुशी रानी सूं बोला । ऋषिका कहा सभी जो खोला ॥
रानी सांच मानियो सोऊ । ब्रह्मा बचन जु पूरे होऊ ॥
सुन रानी हियरे हुलसाई । अरु आपस में बात सुनाई ॥
राजा निकस द्वार फिर आया । उद्दालक कूं निकट बुलाया ॥
भक्ति सहित हँसकर यों बोला । बचन प्रीत के कहे अमोला ॥
सुन्दर रथ अरु सेवक मेरे । लेजा अपने संग सवेरे ॥

चन्द्रवती अरु बालक ल्यावो । ऐसे कही सिताबी आवो ॥
ऋषि सुन बचन खुशी जो भया । रथ सेवक ले अस्थल गया २७

दोहा ॥

रैन रहे अस्थान पर, गवन बिचारा भोर ।
दोनों रथ बैठाय कर, चाला वाही ओर ॥२८॥

चौपाई ॥

चला चला राजा पै आया । राजा देख बहुत सुख पाया ॥
राजा रघु अरु उसी की रानी । दोनोंने मिल सुता पिछानी २९

दोहा ॥

रोकर जब माता मिली, लीन्हीं कंठ लगाय ।
अरु नारी परवार को, सभी मिली जो आय ॥३०॥

चौपाई ॥

जब पण्डित कूं लिया बुलाई । साहा काढ लगन धरवाई ॥
किया विवाह दान बहु दीना । कपड़े गहने सेज नवीना ॥
दासी दासे दीने साथी । रथ घोड़े करहे अरु हाथी ॥
सोने मंढ़े सींग दई गइया । दूध भरी जो भैंसें दइया ॥
अरु बहु भांती दीने दाना । दीनी भौम बहुत सुखमाना ॥
बिदा करत जोरे दोउ हाथा । बिनती करी जु पिरथीनाथा ॥
नमस्कार कर ठाढ़ो भयो । जब ऋषि हंसकर ऐसे कह्यो ॥
कही उद्दालक सुनहो राजा । हस्ती घोड़े हम कहा काजा ॥
गहने कपड़े हम कहा करिहैं । इतना दान कहां ले धरि हैं ॥
सकल दहेज दिया ऋषि फेरी । एक न राखा चेरा चेरी ॥
चरनदास कहैं कछू न लीया । उलटा सभी फेर जो दीया ३१

दोहा ॥

नासकेत चन्द्रावती, बैठा कर रथ माहिं ।

दोनों ही कूं ले गया, अपने आश्रम ठाहिं ॥ ३२ ॥

चौपाई ॥

तब ह्वां सुख सों रहने लागे । सरसनेह में तीनों पागे ॥
रनजीत कहैं यह कथा पुरानी । जाकी महिमा ऋषिन बखानी ॥
मनुष देवता पंडित गावैं । धरमनीक सुनकर हुलसावैं ॥
जित जित और पुरानन गाई । पाप मिटावन अरु सुखदाई ॥
।नरी धरमकी नवका जानौं । सुन्दर अधिक पवित्तर मानौं ॥
भक्ति भावकर सुनैं जु कोई । भव जल पार उतर है सोई ३३

इति श्रीनासकेतोपाख्याने चन्द्रावतीविवाहो नाम
चतुर्थोऽध्याय ॥ ४ ॥

वैशंपायनउवाच ॥

दोहा ॥

वैशंपायन ने कहा, सुन जनमेजय भूप ।
तप करते ऋषि ने दिया, सुत कूं श्राप अनूप ॥ १ ॥
कहा कि जा जमलोक कूं, भारी कीया पाप ।
नासकेत लिया मानकै, उद्दालक का श्राप ॥ २ ॥

जनमेजयउवाच ॥

फिर जनमेजय पूछिया, हे बिप्पर सुन लेह ।
सुत कूं दीया श्राप क्यों, मोमन यह संदेह ॥ ३ ॥
सुतकूं दैना श्राप जो, दुर्ल्लभ सी यह बात ।
ऊपर अपनी आतमा, कैसे सोहै घात ॥ ४ ॥

चौपाई ॥

कौन प्रयोजन दिया सरापी । कैसे गया जमपुरी आपी ॥
कैसे देख देख सब आया । मोसैं सबही कहो सुनाया ॥
किसा नरक है जित दुख दावैं । किसा स्वर्ग है जहां सुख पावैं ॥

वैशंपायनउवाच ॥

बोले वैशम सुनहो राजा । दिया सराप जौनही कांजा ॥
जाकर ह्वां सूं आया जैसे । चित दे सुनौं कहूं अब तैसे ॥
एक दिना उद्दालक राया । नासकेत कूँ वचन सुनाया ॥
मैं रहूं घर तुम बनकूं जावो । कन्द फूल फल लकड़ी लावो ॥
अगनहोत्र जासूँ हम करि हैं । शुभ करमों के कारज सरिहैं ॥
पिता की अज्ञा लेकर धाये । चले चले बन माहीं आए ॥
जिन ह्वां एक सरोवर देखा । कंवल भरे ता माहिं बसेखा ॥
आसपास द्रुम हैं बहु भांती । फूले फले सुगन्ध सुहाती ॥
नाना पंछी बोलैं बानी । सुन्दर ठोर देख मन मानी ॥
जित ह्वां विधसूँ करि अस्नाना । देवत पित्तर पूजन ठाना ॥

दोहा ॥

नईवेद फल फूलसों, जिनक परसन कीन ।
रनजीता यों कहत है, अंजली सों जलदीन ॥ ६ ॥
फिर यों मन में आइया, बैठ धरूं हरि ध्यान ।
आराधन प्रभु को करूं, ऐसो उपजो ज्ञान ॥ ७ ॥

चौपाई ॥

तहां बैठ कर आसन कीनो । हरिके ध्यान माहिं मन दीनो ॥
जोग ध्यान की जुगत विचारी । सुरत लीन भई लागी तारी ॥
दो अरु तीसदिना यों रही । बहुरू आप सहज खुलगई ॥
जबही घरकी चिंता आई । पिता की आज्ञा चितमें छाई ॥
तातें बेग चला ह्वां आया । देख पिता कूं शीस नवाया ॥
देख पिता पुत्तर की ओरी । बचन क्रोध कहा वा ठोरी ॥
अग्नहोत्र में विघ्न भया था । यातें बचन कठोर कहा था ॥

रे पापी तू कित सूं आया । मेरा आयसु सभी भुलाया ॥
मैं भेजा फल फूल ही काजे । अग्निहोत्र के करने साजे ॥
अग्निहोत्रका तैं किया नासा । वा दिन मोमन रहा उदासा ॥८॥

दोहा ॥

अग्निहोत्र है देवता, परसन ब्रह्मा आदि ।
पितर मुनि तिरपत भवें, सुखदाई धर्मादि ॥९॥
वचन पिताके सुनलिए, बोले नासही केत ।
समझावत हो जो अबैं, पुत्तरही के हेत ॥१०॥

नासकेत उवाच ॥ चौपाई ॥

सुनो पिता यह जानो दाई । अग्निहोत्र बंधन जगमाहीं ॥
जनम मरन के भय का दाता । सुख का नास करन ए बाता ॥
जोग समान और कछु नाहीं । जग समुद्र जासूं तिरजाई ॥
ब्रह्मा इंदर आदिक देवा । जोगही करिकै यह सिध लेवा ॥
सिद्ध होन का ऐसा कोई । और उपाव न दूजा होई ॥

उद्दालक उवाच ॥

हे पुत्तर ऋषि बड़े निहारे । अधिक तपस्या करनेवारे ॥
तिनहूं अग्निहोत्र कूँ धारा । जान पवित्तर हिये मँझारा ॥
ऐसे वेदमाहिं लिख राखा । रनजीत कहैं उद्दालक भाखा ॥११॥

दोहा ॥

अग्निहोत्रही के विना, ब्रह्म जज्ञ नहिं होय ।
अति पुनीत यह करमहै, करो चाव सो सोय ।

नासकेत उवाच ॥ चौपाई ॥

नासकेत कहै वचन हमारे । सुनो पिताजी कहूं विचारे ॥
अग्निहोत्र कर सुरग सिधारै । फेर जन्म पिरथी पर धारै ॥

करमोंही से आवै जावै । विना जोग नहिं थिरता पावै ॥
पाप पुण्य दोऊ बेड़ी पग मैं । इन कूं तोड़ चलै हरि मग मैं ॥
भक्ति जोग अरु निर्मल ज्ञानो । इनसूं मुक्ति होय सतजानो ॥
तीनों में सरधा सोई करै । निहचै भवसागर सूं तरै ॥
वास लहै चौथे पद माहीं । जनम मरन फिर होवे नाहीं ॥
कर्म करै अरु फल कूं चाहै । मुक्ति न पावै दुख सुख दाहै॥१३॥

वैशंपायन उवाच ॥ दोहा ॥

वैशंपायन कहत है, सुन जनमेजय भूप ।
उद्दालक सुन बचन सूं, भया तमोगुन रूप ॥ १४ ॥

चौपाई ॥

अरु मुखसों कहि पापी दोखी । तैंने खोटी कही अनोखी ॥
है जु पिता का दूषक भारी । वेग जाउ जमलोक मँझारी ॥
ब्रह्म दण्ड तू मारा गया । तू जमलोक जोगहीं भया ॥
फिर सुनकर वह नासहि केता । बड़े श्राप भू गिरा अचेता ॥
फिर चेतन होय ऐसैं भाखा । पिता श्राप सीस पर राखा ॥
जाऊंगा जमलोक अबारूं । तुम्हरी अज्ञा कबहु न टारूं ॥
गिरापुत्तरकूं मुनि जबदेखा । ऋषिब्याकुल भया अधिकबिशेखा ॥
शोक घने सूं तपत भया है । बहुविलापदुखघना ठ्याहै॥१५॥

दोहा ॥

हाय पुत्र मम आतमा, मैं तोहिं दीनों श्राप ।
मैं क्रोधी अज्ञान हूं, लिया ढांप मोहिं पाप ॥१६॥

चौपाई ॥

हे पुत्तर धर्मराय जहां है । मारग दारुण दुःख तहां है ॥
और नरक ह्वां है भयमाना । वैसी ठौर न तोकूं जाना ॥
छोटा बालक डर ह्वां भारी । दुख भुगतत हैं नर अरु नारी ॥

मोकूं अरु अपनी माताकूं । हमैं छोड़ के ह्वां मत जातू ॥
ऐसे वचन पिता जब बोले । नासही केत दीन हो बोले ॥

नासकेत उवाच ॥

एहो पिता डिगा मत मोकूं । नमस्कार बहुते करूं तोकूं ॥
ध्यान तुम्हारो हिरदै धरि हूं । वचन तुम्हारे कूं सब करिहूं ॥
सत से सूरज तपता मानौं । सतसूं पिरथी कूं थिर जानौं ॥
सतसूं अगन जलत है सोई । सतसूं चन्दा अस्थित होई ॥
सतसूं लोक रहत ठहराई । सतसूं धर्म सदा बिरधाई ॥
सतसूं यह ब्रह्माण्ड खड़ा है । सत सूं सत्ती सूर अड़ा है ॥
हे महाराज साख कहूं एका । एक समय विधि कियो विवेका ॥
अश्वमेध जज्ञ सहसजु लीने । इक पलड़े में राख जु दीने ॥
दूजे पलड़े में सत राखा । भारी भया सांच यह साखा॥१७॥

दोहा ॥

जज्ञ पलड़ा ऊंचे गया, सत पलड़ा रहा भार ।
सत करिकै जो रहत नर, सो मसान सम धार ॥१८॥
ज्यों मसान तज दीजिए, बा नर कूं यों त्याग ।
सत्य जतन कर राखिये, सतही सेती लाग ॥१९॥
स्वर्ग सत्तसूं पाइये, सतही सों गति होय ।
सत्य धर्म सैं हीन नर, जाहि नरककूँ सोय ॥२०॥
तातैं शोक निवारिये, बुधकों थिर कर लेहु ।
मैं जाऊं जमलोक कूँ, येहि जु अज्ञा देहु ॥२१॥
ठौर ठौर कूं देखकर, आऊं चरनों पास ।
बेगहि आ दरशन करूं, मतहो नेक उदास ॥२२॥

वैशंपायन उवाच ॥

वैशंपायन कहत है, हे राजा सुज्ञान ।

नासकेत कहि पिता सूं, फिर भया अन्तर ध्यान ॥२३॥

चौपाई ॥

इतनी कहि फिर गवन विचारा । गया जोग बल लगी न वारा ॥
ऐसे जमके लोक पधारा । धरमराय का दरस निहारा ॥
सिंघासन के ऊपर राजे । अगन पुंज ज्यों तेज विराजे ॥
जब इन हाथ जोड़ दोउ लीया । अस्तोत्तरधर्मराय का कीया ॥
भक्ति भावकर जुक्ति संभारै । लिये दीनता लज्जा धारै ॥
धरम नीक परवीन महाई । रनजीतकहै तिरलोक वड़ाई ॥२४॥

इति श्रीनासकेतोपाख्याने यमदर्शनो नाम पञ्चमोऽध्यायः ॥ ५ ॥

वैशंपायन उवाच ॥ दोहा ॥

पैठि सभा के वीच में, दीठ बुद्धि उद्दार ।
पण्डित बहुत विराजईं, विद्या का उजियार ॥ १ ॥
सारदूल से भूप सुनि, वालक कियो बनाय ।
अस्तोत्तर धर्मरायका, सो अब कहूं सुनाय ॥ २ ॥

नासकेत उवाच ॥

नमस्कार धर्मराय कूं, सर्व पिता महिदेव ।
तीन लोक रक्षा करन, सकल हरन निरलेव ॥ ३ ॥
सूरज सुत मरजाद धरि, नीति शास्त्र के रूप ।
धर्म अधर्म विचार के, न्याई अधिक अनूप ॥ ४ ॥
सब पित्रों के नाथ हो, पूजैं सब स्वर आदि ।
बुद्धिमान धर्मात्मा, सतवादी विन वाद ॥ ५ ॥
कान्ति बड़ी अरु निर्मला, महा पवित्तर देह ।
परजाओं के पति बड़े, नमस्कार मम लेह ॥ ६ ॥
अधिकारी धर्म ध्यान के, लक्ष्मीवान सुजान ।
नमस्कार मम लीजिए, बहुरूपी बहु ज्ञान ॥ ७ ॥

नमस्कार मम लीजिए, पाप मिटावन हार ।
बेल बढ़ावन धर्म के, अस्तुति बारम्बार ॥ ८ ॥

वैशंपायन उवाच ॥

वैशंपायन ने कहा, सुन राजा यह सिक्ष ।
अस्तोत्तर ऋषिसुत कियो, पापदहन परतिक्ष ॥ ९ ॥
यह अस्तोत्तर सुन खुसी, बोला धर्महि राय ।
हे ब्राह्मण परसन भयो, पूछत हूं हरषाय ॥१०॥
क्यों कर आया कहां सूं, कै किन दिया पठाय ।
कै तू आया आपसूं, हम कूं कहो सुनाय ॥११॥

चौपाई ॥

जब यों पूछा धर्महि राया । रे बालक तू ह्यां कित आया ॥
बिना बुलाये ना कोइ आवे । अरु आपनी देह नहिं लावे १२

नासकेत उवाच ॥ दोहा ॥

नासकेत ऐसे कही, दीनों पिता सराप ।
अब तू जा जमलोककूं, यों मैं आयो आप ॥१३॥

चौपाई ॥

पिता सराप आपही आयो । तुम्हरे दरशन कर सुख पायो ॥

यम उवाच ॥

धरमराय सुन बचन उचारा । धनधन बालक परन तुम्हारा ॥
अज्ञा मान पिता की आए । हम तुमपै बहुतै हरषाए ॥
हे बुधिमान कहा तोहि चहिए । मनमें हो सो हमसों कहिए ॥
सुखसों विचर जमपुरी माहीं । बरमाँगै सो ले अब ह्याहीं ॥

नासकेत उवाच ॥

अहो देव तू परसन मोपै । तो इक बर मांगूं मैं तोपै ॥
सुन्दर नगर तुम्हारा कैसा । सभी दिखावो जित जित जैसा ॥

चित्रगुपत कूं मोहिं मिलावो । ह्यांका सबही भेद जनावो १४॥

दोहा ॥

पतितन कूं दुख होत है, धरमी सुख निवास ।
एहू ठौर दिखाइए, मैं चरणन को दास ॥१५॥

चौपाई ॥

तिह उपरान्त धरमही राया । किंकर अपना कूं जु सुनाया ॥
या बालक कूं संग ले जावो । चित्रगुपत ही कूं जु मिलावो ॥
यह ब्राह्मण है पण्डित भारा । सत्त धर्म का जानन वारा ॥
आप पिता के ह्यां चलि आया । याको नगरी देहु दिखाया ॥
चित्रगुप्त कूं याजा दीज्यो । मेरी अज्ञा सूं यों कीज्यो ॥

वैशंपायन उवाच ॥

ऐसे दूतन सों कहि दीया । नासकेत को जब संग लीया ॥
चित्रगुप्त के जाके द्वारे । द्वारपाल सों वचन उचारे ॥

दूत उवाच ॥

धर्मराय ने हमैं खंदाया । नासकेत कूं संग पठाया ॥१६॥

दोहा ॥

चित्रगुप्त के पास ही, जाय कहो यह बोल ।
सुनकर गए सिताबही, बात कही सब खोल ॥१७॥

चौपाई ॥

चित्रगुप्त सुनिये महाराजा । धर्मराय भेजे इस-काजा ॥
इक ब्राह्मण कों संग पठाया । दूतन साथ पोलि पै आया ॥

चित्रगुप्त उवाच ॥

पूछो जाय सिताबी वाकों । कै भीतर ले आवो ताकों ॥

वैशंपायन उवाच ॥

द्वारपाल सबकूं ले गया । चित्रगुप्त का दरशन भया ॥

चित्रगुप्त दूतन सों पूछा । तबही दूत बचन कहे गूछा ॥

दूत उवाच ॥

हे बड़भाग सुनो करि दाया । धरमराय ने हमें पठाया ॥
यह ब्राह्मण आया बुधिवाना । सत्य धर्म में दृढ अति स्याना ॥
पिता सराप जमपुरी आया । याका चाव करो मन भाया ॥१८॥

चित्रगुप्त उवाच ॥ दोहा ॥

चित्रगुप्त जो बोलिया, सुन ब्राह्मण महाराज ।
तो इच्छा पूरी करूं, खोल कहो अब काज ॥१९॥

नासकेत उवाच ॥

जानत हो सब नरन की, गुप्त प्रगट जो बात ।
कछू नहीं तुम सूं छिपा, द्योस करो कै रात ॥२०॥
तेजवंत प्राक्रर्म ही, बड़े तुम्हारे काज ।
देखा चाहूं जमपुरी, अरु सब ह्यां के साज ॥२१॥

चौपाई ॥

अरु इक मनकी खोल सुनाऊं । दुख सुख ह्यां के देखा चाहूं ॥

चित्रगुप्त उवाच ॥

धरमराय को बचन हमारो । हे दूतो तुम हिरदै धारो ॥
ठौर ठौर सब जाय दिखावो । संगहि रहो फेर ह्यां ल्यावो ॥
इसे नरक दुख पवन न लागे । रक्षा सो ले जाहु सुभागे ॥

वैशंपायन उवाच ॥

चित्रगुप्त की अज्ञा पाई । सगरी नगरी जाय दिखाई ॥
नासकेत देखतही जाई । ठौर ठौर देखी हित लाई ॥
सात स्वरग अरु नरक अठारा । भिन्न भिन्न कर देखा सारा ॥
सब दिखाय फिर लाये पासा । नमस्कार कर होय हुलासा ॥२२॥

चित्रगुप्त उवाच ॥ दोहा ॥

चित्रगुप्त कही दूतसों, पूरी भई जु आस।
अब याकूं ले जाइए, धरमराय के पास ॥ २३ ॥
सुनके तुरतही लेगए, नमस्कार करि जाय।
धर्मराय वा देखकै, बोले अधिकी भाय ॥ २४ ॥
आधा आसनही दिया, बैठाया कर चाव।
चरन धोय पूजाकरी, जान किया ऋषि भाव ॥२५॥

यम उवाच ॥ चौपाई ॥

धरमराय हँस बचन सुनाए। सभी देख कहो सुख सूं आये ॥
नासकेतजी ठौर निहारी। तुमने देखी नगरी सारी ॥

नासकेत उवाच ॥

तुम किरपा सों स्वर्ग निहारे। अरु हम देखे नरक अठारे ॥
पापी पुन्यो सब हां देखे। अरु उनके फल सभीं बिसेखे ॥
अबइक अरज़ औरसुन लीजे। घर जाने की अज्ञा दीजे ॥
माता दुखी पिता दुख भारूं। जाय मिलूं दुख सबही टारूं ॥
उनसूं बचन किया था आगूं। देखजमपुरी चरनों लागूं ॥२६॥

दोहा ॥

नमस्कार कर यों कही, देखों सबही भेव।
अब मात पिता पै जायहूं, मोकूं आयसु देव ॥ २७ ॥

यम उवाच ॥ चौपाई ॥

धार्मराय कही आछी वाता। बचन कहो यह मोहिं सुहाता ॥
अब हम तोकूं यह वर दीना। होगा अमर सदा परबीना ॥
अरु काया बूढ़ी नहि होगी। हमरे बरतैं रहै निरोगी ॥

वैशंपायनउवाच ॥

नासकेत बर ले सिर नाया । मातपिताढिंग बेगही आया ॥
चला जोगबल लगी न बारा । एक पलक में जैसे तारा ॥
रोवत माता कूं जहां पाया । पिता शोक में था अधिकाया ॥
पुत्तर कूं जब आया देखा । उद्दालक भया खुशी विशेखा ॥
पिता और चन्द्रावति माई । हरष मान बहुकरी बधाई ॥२८॥

उद्दालकउवाच ॥

दोहा ॥

जनम करम पूजा सभी, सुफल भए मम आज ।
पुत्तर का मुख देखतें, सभी गए दुख भाज ॥ २९ ॥

चौपाई ॥

उद्दालक कहो वाकी मासूं । देख जमपुरी आया हांसूं ॥
जोग तपस्या बल कूँ देखो । अपने मन में कर कर लेखो ॥
जमपुर गया देख अरु आया । ह्वांका भेद सभी जो लाया ॥
यों कहि नासकेत कों ताका । पूंछूं बरनन करि सब वाका ॥
किसी जमपुरी देखी कैसे । कैसा मारग आया जैसे ॥
कैसा देखा वह जमराया । कहापिया अरु क्यातुमखाया ॥
जो जो देखा सो अब कहिये । हमसे सभी कहा जो चहिये ॥
नरक माहिं दुख कैसे कैसे । सुरग माहिं सुख जैसे जैसे ॥३०॥

दोहा ॥

अपनी आंखों देखकर, तुम आये या ठौर ।
सुन सुनके जानत हुते, सभी ऋषिश्वर और ॥३१॥

नासकेतउवाच ॥

चौपाई ॥

नासकेत जोरे दोऊ हाथा । कहने लागे ह्वांकी बाता ॥

तुम किरपा जमलोक सिधारा । बहु देवन का दरस निहारा ॥
चित्रगुपतही अरु धर्मराया । उनहूं का मैं दरशन पाया ॥
सर्वलोक दण्ड देने वारा । सोइ काल मैं लिया विचारा ॥
जमके दूत बड़े बलवाना । जिनकी सूरत भांति जुनाना ॥
धर्मराय को जा मैं चीन्हा । अस्तुति करकर परसन कीन्हा ॥
उन मोकूं बर दिया असोगा । कहा कि अजर अमर तू होगा ॥
अरु कही जाहु पिताके पासा । जबमैं आया तुम्हरा दासा ॥३२॥

इति श्रीनासकेतोपाख्याने पितापुत्रसंवादो नाम षष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥

वैशंपायनउवाच ॥

दोहा ॥

हे राजा ताही समय, ऋषिआये वा ठौर ।
नासकेत के दरसको, काज न कोई और ॥ १ ॥
रघुराजा कों आदिदे, अरु आये बहुभूप ।
ऋषिराजा बहु आइया, अचरज सुना अनूप ॥ २ ॥
अचरज लखि कहने लगे, आपसही के माहिं ।
गए जमपुरी आइया, ढीललगाई नाहिं ॥ ३ ॥

चौपाई ॥

पूछन उद्दालक घर आये । नासकेत ह्वांकी सुध लाये ॥
इक इक ऋषिकूँ यों पहिचानों । बलती अगन तेज ज्योंजानों ॥
इक ऐसे पखवारे मांहीं । रणजीत कहै वे भोजन खाई ॥
एक जु ऐसे मास उपासी । जग भोगन सों रहैं उदासी ॥
इक जल माहिं तपस्या करई । इक पचअगनी तपकूँ धरई ॥
एक अधोमुख तपकों साधै । इक सूरजही कों आराधै ॥
एक स्वासकों जान न देई । कुंभक साधरहै है वेई ॥
रहै एक जो पवन अहारा । एकों निराहार व्रतधारा ॥४॥

दोहा ॥

एक पांव बाजे खड़े, बाजे ऊरध बाहु ।
बाजे मौन गहे रहैं, ऊंचे फल की चाहु ॥ ५ ॥
बाजे नगन शरीर हैं, बाजे करैं जु होम ।
बाजे साधैं जोगही, लखिकै उत्तम भौम ॥ ६ ॥
कोइ चन्द्रायण बर्त कर, रहै जु तपके माहिं ।
कोई इक सूखे पात जो, तरवर ही के खाहिं ॥ ७ ॥
ऐसे ऐसे ऋषि सबै, नासकेत ढिग आय ।
पूछन की इच्छा सहित, दरशन ही के चाय ॥ ८ ॥

चौपाई ॥

सबही सुन मिलबे कूं धाये । नासकेत उठ शीश निवाये ॥
मिलकर बैठे आश्रम माहीं । नासकेत सूं पूछत जाईं ॥
जो जो अपनीं आंखों देखा । सो सो हमसों कहो बसेखा ॥
जो तुम देख जमपुरी आये । समाचार ज्यों ह्वां के लाये ॥९॥

ऋषिउवाच ॥

दोहा ॥

ऐसे ऋषि पूछत भए, नासकेत सूं बात ।
ह्वांका सब विस्तारहीं, कहिये हमरे साथ ॥ १० ॥
ह्वांके मनुष्यन की कहौ, क्रोधवन्त कै शान्त ।
कडुवे कै मीठे वचन, ज्ञानवन्त कै भ्रान्त ॥ ११ ॥

चौपाई ॥

कैसा पाप पुण्य का भेदा । कैसा जीवन कूं ह्वां खेदा ॥
कैसा नरक स्वरग का बासा । कहा कहा ह्वां जमकी त्रासा ॥
ह्वांका सबहीं करो बखाना । एकदिना हमहूं कूं जाना ॥
सुखी होन की चाल बतावो । धरम करम हमकूं समझावो ॥

ह्वांका भेद कछू मत राखो । कहैं कहां लो सब तुमभाखो ॥
जमलेने कूं कैसे आवैं । या प्रानी क्योंकर ले जावैं ॥
दुख सुख कहा बाट के माहीं । केते घोसन में ले जाईं ॥
यों कहकर मुख ताकन लागे । नासकेत जब भाषन लागे१२॥

नासकेतउवाच ॥

दोहा ॥

नासकेत जब यों कही, सुनौं ऋषीश्वर साख ।
जो जो देखा जमपुरी, सभी कहतहूँ भाख ॥ १३ ॥

चौपाई ॥

सुनों ऋषीश्वर चित अब दीजे । अब मैं कहूं सबै सुन लीजे ॥
महाभयानक दुख बहु भारै । सुनकर रोम उठैं तन सारै ॥
पिता सराप गया मैं ह्वांई । धर्मराय थे ललित तहांई ॥
मैं अस्तुति करि परसन कीना । आधा आसन उन मोहिं दीन्हा॥
देवत बहुत सातुकी देखे । बलतकार जमदूत बसेखे ॥
चित्रगुपत मैं नैन निहारा । सबकूं शिक्षा देने वारा ॥
अरु मैं दीन होय बरपाया । कही अमर होगी तो काया ॥
पिता दया मैं फिर ह्वां आया । कहूं जु ह्वांकी सबैसुनाया ॥१४॥

दोहा ॥

सुन्दर नगर सुहावना । जमपुर ताका नाम ।
सहस जोजन विस्तार है, सत्य न्याव को ठांव ॥ १५ ॥

चौपाई ॥

महा भयानक कोट निहारा । जोजन पांच भीत उचिपारा ॥
दक्षिण दिशा ताहि कूं जानौं । तिसके द्वारे चार पिछानों ॥
जैसे कर्म करै जो कोई । तैसे द्वारे बड़ि है सोई ।
पिरथम जमगण जगमें धावें । या प्रानी कूँ लेने आवें ॥

जैसे पाप करै नर लोई । जम सूरत बनआवे वोई ॥
याकूं मार पकड़ ले जावैं । जैसे कर्म किये भुगतावैं ॥१६॥

दोहा ॥

या प्रानी जा भांति के, लीन्हे पाप लगाय ।
वा भांती जम आय हैं, भयको रूप बनाय ॥१७॥

चौपाई ॥

कोई सूकर पर चढ़ आवै । कांधे गदा बहुत डरपाव ॥
कोई चढ़ै सिंघ की पीठा । करमें गुरज बुरी ही डीठा ॥
कोई जम चढ़आवे भैंसे । बुरी आंख अरु ऊंचे कैसे ॥
कोई आवै जरक सवारी । दांत बड़े मुगदर लिये भारी ॥
कोई मुरदे के चढ़ि कांधे । खैंच कमान तीर ही सांधे ॥
कोई कुत्ते पर चढ़ि धावे । हाथों फासी सीस घुमावे ॥
कोइ आवै गधा पलानैं । काढ़ै जीभ बुरेही बानैं ॥
जगमें बुरे कर्म जिन कीन्हे । तिनकूं यों आवत जम चीन्हे ॥
बुरी बुरी सूरत ही बनिआवैं । कहांलगकहूंबहुतभयलावैं॥१८॥

दोहा ॥

बुरे कर्म पापी करैं, जिनकी यह गत जान ।
भले कर्म जो करत हैं, तिनका करूं बखान ॥१६॥
जो जग में पुण्यातमा, चरणदास सुखपाय ।
तन छूटे गण पारषद, सुख सूं ही ले जाय ॥२०॥

चौपाई ॥

गण. आवन को रूप बखानूं । भिन्न भिन्न जैसे मैं जानूं ॥
कोई आवत ऐसे देखा । धरि आवै तपसीका भेखा ॥
कोई रूप वैशनों आवै । गलमाला अरु तिलक बनावै ॥
कोई भ्रात पिता के रूपा । कोई आवै गुरू सरूपा ॥

कोई करत कीरतन धावैं। हरि के गुण गावतही आवैं॥
कोई आवैं माला फेरत। वा प्रानी कूं हितसूँ हेरत॥
कोई रथ विमान ले आवैं। हरि गुरुका कोइ नाम जपावैं॥
कोई पालकी घोड़े ल्यावैं। कोई हाथी लीये आवैं॥
शुभकर्मी कूँ तहां चढ़ावैं। सुखदेते जमपुर ले जावैं॥२१॥

दोहा॥

मृत्युलोकसूँ राह जो, जमपुरही की जान।
छ्यासी सहस जोजन सबै, इतनों है परमान॥२२॥
आठ ठौरहै कष्ट की, वाही मारग माहिं।
दुख सुखही भुगतावते, जमगण ले ले जाहिं॥२३॥

चौपाई॥

जब प्रानी की छूटे देही। सब मिल आवैं कुटुम्ब सनेही॥
बांध जोड़ कर अरथी करै। चार मनुष्य के कांधै धरै॥
ले जावैं मरघट के मांहीं। मुंह झुलसैं अरु देह जलाई॥
तब ह्वां नेक नहीं ठहरावैं। अपने अपने घरकूँ जावैं॥
जबहीं जुदे होय परवारी। मात पिता सुत धन अरु नारी॥
पाट पटम्बर हीरे मोती। सबही अलगहोय कुलगोती॥
बाग महल हाथी अरु घोड़े। सबने पीठदई मुख मोड़े॥
राजकटक अरु मुलक भौमही। दूरहोय सबतेज जौमही॥
बीर भतीजे अरु यह देही। रनजीतकहैंकोईनाहिंसनेही॥
जूवे हारा धाडी लूटा। ऐसे चाला सबसें छूटा॥२४॥

दोहा॥

जिन कारन बहु पापकरि, लाता दरब कमाय।
अपना कर कर जानता, देता तिन्हें खुलाय॥२५॥
वे वाके होवें नहीं, तोड़ि कहैं यह बात।

जैसा कीया सो लुणैं, हम तेरे नहिं साथ ॥ २६ ॥
सबही मिल कहने लगे, हम तेरे अब नाहिं ।
पाप पुण्य जो कुछ किया, सोही संगहि जाहिं ॥ २७ ॥

चौपाई ॥

जगत ठाठ जब ऐसे कहैं । तब प्रानी हकधक हो रहैं ॥
जबही मूंडी धुनने लागे । कहै माहिं क्यों इनके पागे ॥
हाय हाय मैं कछु नहिं कीया । राम भगति में मन नहिं दीया ॥
जिन कारन बहु पाप कमाये । सो मेरे अब काम न आये ॥
साध संग के माहिं न मिलिया । दया धर्मकी राह न चलिया ॥
भला कर्म सबही बिसराया । खोटे कर्मन सूँ चितलाय ॥
सोच सोच सब ओर निहारैं । कोई न संगी हुआ हमारैं ॥
यों प्रानी पछतावा करै । जममारै लै आगे धरै ॥
चरणदास कहैं कछु न बसावै । ऐसे बांधा जमपुर जावै ॥२८॥

दोहा ॥

पकड़ बांध जम ले चलैं, गल में डार जंजीर ।
पापी जीवन दुख सहित, देत घनी ही पीर ॥ २९ ॥
जो जीहै पुण्यात्मा, सोवै सुखसूँ जाहिं ।
तिनकूं गण ले जात हैं, जमनहिं छूवैं छाहि ॥ ३० ॥

चौपाई ॥

दो हजार जोजन मगमांहीं । सहजरूप दुख सुख ह्वां नाहीं ॥
जम ले जावैं सो डर लागे । अति भयमान रूप हैं ताके ॥
अरु इक पैंडा लीजै जाना । एक सहस जोजन परमाना ॥
बहुतक सिंह दिष्ट में आवैं । तिनकूं देख देख डरपावैं ॥
जो साधोंका दरशन लाभै । ताकूं भय ह्वां कभूं न व्यापै ॥
आगे पांच सहसही जोजन । तीक्षण कांटे हैं वह खोजन ॥

लोहे कीसी कीलें ैनी । चुभचुभ जाय महादुख दैनी ॥
वह पैंडा है अति दुखदाई । जाहिं कष्ट सूँ लोग लुगाई ॥
अरु धरमी जी सुख सूँ जावैं । दिये दान सब आगे आवैं ॥
रथ चंडोल पालकी म्याना । हाथी घोड़े और विमाना ॥
ऐसी विध के बाहन आवैं । उन ऊपर चढ़ि बाट लंघावैं ॥
चरणदास कहैं जो ह्यां देवैं । जाका बदला आगे लेवैं ॥२१॥

दोहा ॥

जोजन दोय हजारही, पैंडा वालू रेत ।
दान जिन्हों पनहीं करी, सो लंघि हैं सुख सेत ॥२२॥
आगे बारह सहसही, जोजन खांडे धार ।
महाविषम वह बाट है, पाप पुण्यही लार ॥२३॥
घोड़े के या बैलके, रथ देवे जो कोय ।
वह पैंडा सुख सूं लंघै, ताकूँ दुख नहिं होय ॥२४॥

चौपाई ॥

वाके आगे जलही आवै । रुकरहा भरा थाह नहीं पावै ॥
चहूं ओर डरही डर लागै । आठ सहस्र जोजन वह जागै ॥
भूमिदान जिन दीया होई । सुखसूँ जाय पार हो सोई ॥
ऊंचा दान किया फल लावै । पगसूँ धरती लगती जावै ॥
जलसूँ उतर चलै जो आगै । राह अँधेरी डर बहु लागै ॥
तीस सहस जोजन मगजानो । तामें कष्ट अधिक पहचानो ॥
बिजली चमक गरज बहुमानो । परलयकीसी निश्चित आनों ॥
दानकिये दीवे तहां आवैं । सो प्रानी चांदिन में जावैं ॥
पचभीषम तुलसी के ठांई । कै ठाकुरद्वारे के माहीं ॥
कै सतगुर के भवन मँझारै । बाटमाहिं कै दीपक जारै ॥
ब्राह्मण के घर कै धर्मशाला । तीरथ पर कै दीवा बाला ॥२५॥

दोहा ॥

प्रानी इसही दानसों, चांदिनही में जायँ ।
रनजीत कहे सुख कूं लंघे, उसही अंधेरु माहिं ॥३६॥

चौपाई ॥

आगे भयानक ऊबट बाटा । उतर चढ़नके बहुतक घाटा ॥
बहुतक डर जहां आगे आवें । प्रानी अतिव्याकुल हो जावें ॥
कहा कहूं बहुते दुखदाया । जाकूं देखे कांपै काया ॥
आठ सहस जोजन मगसोई । तामें धीरज रहे न कोई ॥
आगे तस भानकी जारे । सोतो जोजन सहस अठारे ॥
वा पैड़ेमें तो सुख पावें । कुवे बावड़ी ताल खुदावें ॥
कै पो देवे मारग माहीं । प्यासे जलकूं नाटै नाहीं ॥
धर्मशाला में रखै भराई । कै ब्राह्मण घर दे पोंहचाई ॥
ठाकुरद्वारे माहिं भगावे । कै गुरद्वारे भर पहुँचावे ॥
कै सुन्दर से भवन बनाये । दिये दान जिन ह्वां फलपाये ॥
बाटमाहिं जो बृक्ष लगावे । ऐसा दान काम ह्वां आवे ॥
आय प्रापत जल ह्वां होवे । तपत प्यास प्रानी की खोवे ॥
छ्यासीसहसजोजनमगगहिया । भिन्न भिन्न में तुमसों कहिया ३७

दोहा ॥

जमपुरी के निकट है, ताको करूं बखान ।
बैतरनी नदी जहां, सौ जोजन परवान ॥३८॥

चौपाई ॥

पीप रकत तामाहीं भरिया । प्रानी थरहर धीर न धरिया ॥
बीछू कीड़े सांप घनेही । दुखसों उतरे पाप सनेही ॥
जो अपने स्वामी कूं मारै । और ब्राह्मन कूं हनडारै ॥
प्यास लगै जब ऐसे करै । रकत पीप पी तृष्णा हरै ॥

बैतरनी कोई सकै न देखा । तामें लहरैं उठैं अनेका ॥
जाके हले जीव वे सारे । तल ऊपर कभी लगै किनारे ॥
अरु ह्यां रक्षा करै न कोई । नाते हितू न संगी होई ॥
कृतघ्नी बिस्वासी घाती । निजधर्मनके होय न साथी ॥३६॥

दोहा ॥

बिना विचारे करत है, बरत करै जो भंग ।
मिथ्या वाद करै घना, रँगे लोभ के रंग ॥४०॥

चौपाई ।

सोवै नदी ही के माहीं । गिरते देखे पतित तहां हीं ॥
पतितों दीखे राध रकत की । पुनवारे कूं घीव शहत की ॥
जिसने दीया अन्नही दाना । और बसे तीरथ अस्थाना ॥
और नहात है गंगासागर । दृढ़ ब्रत अपना रखै उजागर ॥
पोथी धरम शासतर केरी । लिखा लिखादे दान घनेरी ॥
साधों के चरितों की इच्छा । सतगुरू सेती लेवे दीच्छा ॥
जिन गोदान करै शुभबारा । ताकी पूंछ पकड़ हो पारा ॥
घने मनुष में उतरत देखे । बहुत सितांबी सुनौं बसेखे ॥४१॥

दोहा ॥

वाके आगे गिरि बड़ा, धरम सैल जिहनाव ।
सोनेका निर्मल इसा, जों बिलोर की दांव ॥४२॥
पतितनकूं दीखे नहीं, दीखे तो भय रूप ।
देखत है पुन्यात्मा, सुन्दर महा अनूप ॥४३॥

इति श्रीनासकेतोपाख्याने महामार्गस्थानंनाम सप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥

ऋषिउवाच ॥ दोहा ॥

फेर ऋषीश्वर बोलिया, नासकेत महाराज ।
मारग की जो तुम कही, नीके समझी आज ॥ १ ॥

अब कहिए धर्मराय की, और सभा की खोल ।
तुम दाता सुखदान हो, मीठे तुम्हरे बोल ॥ २ ॥
सभी करैं परनामही, हमतो चरनही दास ।
सुनबे को मन चाव करि, आ बैठे तुम पास ॥ ३ ॥

नासकेतउवाच ॥

नासकेत कर जोर कर, ऐसे बोले बैन ।
तुम चरनन की रेनुका, हमरी है सुखदैन ॥ ४ ॥

चौपाई ॥

नासकेत कहि दास तुम्हारे । तुम ह्यां आये भाग हमारे ॥
धरम राय को सबै सुनाऊं । और सभाकी खोल दिखाऊं॥५॥

दोहा ॥

जम नगरी वा पास ही, जिसके द्वारे चार ।
छोटे नग्गर और वहु, वाही ठोर मंझार ॥ ६ ॥

चौपाई ॥

रतन जड़े जहां बहुते भांती । वा नगरीकी अतिही क्रांती ॥
बहुत अपसरा नृत्य करत हैं । बाजे वजत गीत उचरत हैं ॥
ताते सुन्दर होय रहा है। फूल बिछे बहु भूमि महा है ॥
सभामाहिं धर्मराय निहारा । ज्यों तारों में चन्दा सारा ॥
ऋषि जोगी तिंहपास विराजैं । किन्नर गन्धर्व अति छविछाजैं ॥
विद्याधर तिन केही पासा । वड़े सरप रहे उमँग हुलासा ॥
अत्रे मैत्रे भारद्वाजा । भृगु मरीच दधीच सुराजा ॥
गोतम दुरवासा महा जोगी । चिवन पुलस्त सुमित्र असोगी ॥
गालवि जातूकरन महामति । धर्म अधर्म विचार करैं नित ॥
और ऋषीश्वर बहु सतवादी । धरमरायढिंग जिनकी गादी ॥
बारह सूरज की समरूपा । बस्तर पहरैं रतन अनूपा ॥

चतुर वेद के पढ़ने वारे । अरु मीमांसा जानन हारे ॥
बहुत शास्त्र आप बनाए । धर्म काज जगमांहि चलाए ॥
धरमराय उन केही मांहीं । शोभावंत अधिक छविपाई ॥
सिरपर सुन्दर मुकुट धरेही । बहुत भांति के रतन जड़ैंही ॥
तेज कहूं ज्यों बारह भाना । करै न्याव ज्यों दूध अरु पाना ॥
प्रानी कूं जमगण ले जांई । खड़ा करै जाकर वह ठांई ॥
धरमराय कहै ह्वां ले जावो । चित्रगुपतही कूँ दिखलावो ॥
पाप पुण्य का लेखा करै । प्रानी किया सु दुख सुख भरै ॥
छिपकर अरु परगट ज्यो कीया । चित्रगुप्त ने सब कह दीया ॥
पाप पुण्य सब कह समझावै । धर्मराय जब न्याव चुकावै ॥
कहैक पहले भुगतै पापा । नरक मांहि फिर देहु संतापा ॥

दोहा ॥

नरक अठारह है जहां, जिन किये जैसे पाप ।
वैसे मांही डाल हैं, तैसो तिन्हैं संताप ॥ ८ ॥

चौपाई ॥

ऐसा जमपुर चार दुवारे । भांत भांत के न्यारे न्यारे ॥
पूरब दिशा एक है द्वारा । दूजा पच्छिम और निहारा ॥
तीजा उत्तर दिशा सुनाऊं । चौथा दक्षिण और बताऊं ॥
कहूं द्वार पूरब की जानूं । जाकी महिमा सभी बखानूं ॥
जिन प्रानी ऐसे कर्म कीने । कपड़े लकड़ी जाड़े दीने ॥
पानी गर्मी मांहि पिलाये । रस्ते में जिन बृक्ष लगाये ॥
थके मनुष बाहन चढ़वाये । भूखे कूँ भोजन करवाये ॥
गुरु के सेवन की ब्रतलीनी । अरु साधन की संगत कीनी ॥
उत्तम तीरथ किये संभारी । दया धरम हिरदय में धारी ॥
कथा कीरतन बरत बसेखे । पूरब द्वारे बढ़ते देखे ॥

साथ अप्सरा हरि गुणगावैं। करत कीरतन ही ले जावैं ॥९॥

दोहा ॥

पूरबद्वारे की कही, सुनों ऋषीश्वर चैन।
पच्छिम द्वारा अब कहूं, सोभी है सुख दैन ॥१०॥

चौपाई ॥

जिन मात पिताकी अज्ञामानी। पर निन्दा कबहू नहीं ठानी ॥
नित्त प्रति कुछ कीया दाना। परधन कूं विंष्ठा सम जाना ॥
काम क्रोध जिनके नहीं मोहा। काहूँ सैं राखै नहिं द्रोहा ॥
परतिरिया मनमें नहीं लीनी। नारायन की पूजा कीनी ॥
वे पच्छिम द्वारे हो जावैं। अपने लक्षन सूं सुखपावैं ॥
द्वार तीसरे की सुन बाता। सभी सुनाऊं ताकी काथा ॥
जो प्रानी है पर उपकारी। पर कारजहित दुखसहैं भारी ॥
अपने कारज ढील लगावैं। पर कारज कूँ उठ उठ धावैं ॥
आपन दुखसह पर सुख दीना। जीवत परमारथही कीना ॥
आप धर्म कर और करावैं। हिरदय दया नाम चितलावैं ॥
सो जावैं उत्तरहो द्वारै। साधरूप गण तिनके लारै ॥११॥

दोहा ॥

विष्णु भक्ति की नेष्ठा, साध विप्र की सेव।
धर्म बरत में डिढ रहै, सिरपर रख गुरुदेव ॥१२॥

चौपाई ॥

अरुभलेकर्म जिन कीने नाहीं। खोटे कर्मन के पडमाहीं ॥
सो चौथे द्वारे हो जावैं। बाटमाहिं जम बहुत सतावैं ॥
पाप किये जिन ऐसे ऐसे। सबही खोल बताऊं तैसे ॥
दुष्टबड़े तनमन दुखदाई। सब जीवन सूं करैं बुराई ॥

चौपाये कूं बहुते मारै। छिपकर परघरही कूं जारै॥
पक्षी पकड़ फन्द में डारै। जीव हतन की मन में धारै॥
हरे बिरछ कूं जो वे काटैं। अरु चोरीकर लूटत बाटैं॥
गऊ ब्राह्मण की कर घातैं। मात पिता सूं टेढ़ी बातैं॥१३॥

दोहा॥

जार करम हित सूं करै, गरभ गिरावैं जान।
पर निन्दा बहुती करैं महा मूढ़ अज्ञान॥ १४॥

चौपाई॥

और वै हैं विस्वासी घाती। बोलैं झूठ महा अपराधी॥
झूंठी साख भरैं न लजावैं। परघरही सूँ धन ठगलावैं॥
जाका नोन खाय वा मारै। रस्ते मांहि आगहू डारै॥
खुशी होय परकी कर हांसी। मनमें राखै सब सूँ गांसी॥
डिभ कपट छल भगल अहारा। जो कुछकिया सोनांहि विचारा॥
साधसंग में मन नहिं दीन्हा। गुरुका कहा पंथ नहिं चीन्हा॥
बेमुख हो आवना त्यागैं। दुनियां के दुख धंधे पागैं॥
वेद पुरानन कों नहिं मानैं। शास्त्र की निन्दाही ठानैं॥
पाप अनेक करत नहिं डरैं। मनमें पाप पाप धुन धरैं॥
औगुन ग्राही गुन नहिं पकड़ैं। दीन होय जासों बहु अकड़ैं॥
धरमजु अपने स्वामी केरा। ताकी निन्दा करैं घनेरा॥
परकी चुगली हित कर करैं। गुरूके बचन न हिरदे धरैं॥
रिण देवैं अरु ब्याज बढ़ावैं। ताका धान खुशी हो खावैं॥
ब्याजलैन में भारी हान। निरफल जाय करै जो दान॥
हाय हाय कर जनम गंवावै। सब कुछ रख संतोष न आवै॥
संकल फांसी जिन गल माहीं। दक्षिण द्वारे होते जाईं॥१५॥

दोहा ॥

दक्षिण द्वारे और हैं, सबै नरक दुखदाय ।
अति कलेश जहां होत है, पतितन कूं हां जाय ॥ १६ ॥
सुनो ऋषी अब कान दे, जमदूतों का रूप ।
काले सुरमे की तरह, अति ही घोर सरूप ॥ १७ ॥
जित पापी हाहा करै, हो रहा अति ही शोर ।
अंधकार ऐसा जहां, सूझै निस नहिं भोर ॥ १८ ॥

चौपाई ॥

जहां किरम कुत्ते अरु कागा । बीछू रीछ अरु काले नागा ॥
अरु कांटे लोहे सम भाला । चीते गिद्ध सिंह बिकराला ॥
जमके दूत जहां बलकारी । लोहे के मुगदर कर भारी ॥
जासूं पतितन के सिर मारैं । त्राह त्राह कर बहुत पुकारैं ॥
उस द्वारे में नरक घनेरे । सो मैं अपनी आखों हेरे ॥
सुनत रोम ठाढ़े होजावैं । कंपै कलेजा अति थहरावैं ॥
सुनों ऋषी मै कहूं जु सारी । देख डरा उपजा भै कारी ॥
नरकोंमांहिं जीव बहु भरिया । मोदेखत बहुतक जहां गिरिया १९

दोहा ॥

नरक हज़ारों है जहां, हाय हाय ही होय ।
जीव पुकारत है पड़े, आगे सुनिये सोय ॥ २० ॥
तिनही में जो हैं बड़े, नरक अठारह मुख्य ।
नाव बखानूं जिनन के, अरु ह्यांके सब दुख्य ॥ २१ ॥

चौपाई ॥

पहिले कुंभीपाक सुनावें । जीवनकुं तामाँहि पकावें ॥
दूजा नरक अबीची खोला । लहर उठें जी खाँहि झकोला ॥
रौरव महा नरक जो भारा । जी रोवें बहु करैं पुकारा ॥

चौथा गुड़ जिम नरक महारे । गुड़ रस ज्यों औटत है ह्वाँरे ॥
कूप नरक कूये सम जानों । लोहू पीप भराहै मानों ॥
महा कीट नरक बतलाऊं । तामें कीड़े भरे बताऊं ॥
असिपत्तर वन नरक कहीजे । खाँड़ेकी सम पात लहीजे ॥
नरक सुदारुण है भय भीता । तेज बड़ा तीक्षन दुख दीता ॥२२॥

दोहा ॥

एक नरक निरस्वाँस है, तहाँ घुटे जो स्वाँस ।
ऐसा दुख ह्वां होत है, ज्यों ठगमारी फांस ॥ २३ ॥
कुल संकुल जो नरक है, ताही कूँ सुनलेह ।
पापी कूँ संकलों सहित, जकड़े वाकी देह ॥ २४ ॥

चौपाई ॥

सूचीमुख पापी जो पावै । सुई छेक मुख हो गिरजावै ॥
महाघोर नरक अति भारी । तामें भैहै अधिक अपारी ॥
सूलही रूप नरक कूँ जानौं । सूली की ज्योताहीं पिछानौं ॥
नर्क अगनकुण्ड महातपत है । ताकूँ देखे हिया कंपत है ॥
नरक तेल जंत्र जो देखा । कल्हू की समताहि बसेखा ॥
दुखद दुख की खान घना है । नरक वही दुखरूप बना है ॥
अंधकार जो नरक बताऊं । महा अंधेरा तहाँ सुनाऊं ॥
नरक विलोचन वही कहावे । जहाँ जाये अंधा होजावे ॥२५॥

दोहा ॥

अति गरमी जाड़ा घना, भ्यानक खग सुन लेह ।
परवत सूँ दें डारिकै, सस्तर छेदै देह ॥ २६ ॥
ऐसे ऐसे दुख घने, पततन बारमबार ।
खोटे कर्मन के किये, दुखी लखे नर नार ॥ २७ ॥

इति श्रीनासकेतोपाख्याने नरकवर्णनोनाम अष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥

ऋषि उवाच ॥ दोहा ॥

नरक इकट्ठे तुम कहे, नासकेत महाराज ।
जुदे जुदे बरनन करो, हमैं सुनावो आज ॥१॥

नासकेत उवाच ॥ चौपाई ॥

नासकेत कहै सबै सुनाऊं । एक एक कूँ जुदा दिखाऊं ॥
सभी ऋषीजो ह्यां चित दीजै । नरकोंकी गति सब सुनलीजै ॥
पहिले कुंभीपाक कहतहूं । ता डर सूं हरिध्यान धरतहूं ॥
जा जा पापी जहां परत है । जम जिनकूं बहु मार धरतहै ॥
उन पापी जो पाप कमाये । सो तुमसूं अब कहूं सुनाये ॥
गऊ ब्राह्मण पशु बहु मारै । पक्षी आदि जीव हनडारै ॥
दानकरत भांजी जो मारै । अरु ब्रह्मचारी का तप टारै ॥
और गरीबन कूं हनडारै । और मित्रका घात विचारै ॥
सोवे कुंभी नरक मँझारी । जाय परत है नरकै नारी ॥
कुंभीपाक कहूं परवाना । जाका मुख है घड़े समाना ॥
सोलह जोजन तल बिस्तारा । बहुदुख पावे गिरने हारा ॥
बड़े बड़े कीड़े लग जाहीं । महादुर्गंध बुरी तिह माहीं ॥
तामें बहुत बरस दुख पावै । पाप भुगत कर बाहर आवै ॥
दूजा नरक अवीची आगै । वामें गिरै पाप अस लागै ॥२॥

दोहा ॥

अधम संग जोयै करै, कन्या डारै मार ।
अभक्ष भक्ष गुरु कूं हनै, गर्भ गिरावै नार ॥ ३ ॥
जो कोइ अवै पाहुना, अपने घरके माहिं ।
अनजल की पूछी नहिं, आदर दीया नाहिं ॥ ४ ॥

चौपाई ॥

नरक अवीची में दुख भारी । पापी भुगतें नर कहा नारा ॥

बहुत बरस निकसन कूं लागै। जैसी करै सो आवै आगै॥
तीजा नरक महा भयकारी। रौरव नांव जहां डरभारी॥
ताकूं देख कंपत है देही। शुभकर्मों बिन कौन सनेही॥५॥

दोहा॥

जामें तसी रेत है, सूरज सदा तपाय।
इकरस जलताही रहै, नैंकन कभू सिराय॥ ६॥

चौपाई॥

रोवें जीव अनेक पड़ेही। कबहूं बैठैं कबहुं खड़ेही॥
अति व्याकुल तिनको दुखभारा। त्राह त्राह कर उठैं पुकारा॥
करम कहूँ उनके अब कीये। ता पापन सूं वामें दीये॥
पहल नारि सूँ भोग विचारै। रूप ढरै तब मन सूं डारै॥
राजविषै जिन न्याव न कीना। अपनी परजाकूं दुख दोना॥
बिन औगुन डांडै अरु मारै। करैं कुन्याय बंध में डारै॥
अरु जिन ब्राह्मण वेद पुराना। पढ़ि पढ़िके कछु भेद न जाना॥
वेदनमें के कर्म न कीने। पाखण्ड कर करही द्रव्यलीने॥
आनदेव अरु गिरह पुजाये। हरि ओरी कूं नाहि लगाये॥
पेटकाज भ्रम डारत डोलै। अपने स्वारथ मिथ्या बोलै॥७॥

दोहा॥

ब्राह्मण क्षत्री वैश्य जो, अरु शुद्दर जगमांहिं।
अपने अपने धरमकी, राह संभारत नांहि॥८॥

चौपाई॥

राह वेद की चलते नाहीं। बे मरजाद रहैं जगमाहीं॥
संक्रायत व्यतिपात न जानैं। द्वादसी मावस ना पहिचानैं॥
समय पायहु दान न दीया। रसना हरिका नाम न लीया॥
तिथि अरु परबी समै न साधी। चौकान्हान तजा अपराधी॥

संयम पूजा कछू न जानी । बेमुख चाल चला मनमानी ॥
तरपन अरु नित नेम न कीना । गायत्री में चित नहिं दीना ॥
अरु पूरा सतगुर नहिं करि हैं । रौरव नरक मांहि सो परिहैं ॥
चौथा नरक सो गुड़ जिम जानों । औटत रहत कड़ाहा मानों ९॥

दोहा ॥

जामें पापी जीवही, परत आयही आय ।
जिन पापों से गिरत है, सो मैं कहूं सुनाय ॥ १० ॥

चौपाई ॥

जो काहू के बसन चुरावे । विद्या पढ़ गुरकूँ बिसरावै ॥
काहू कारज भांजी मारै । अरु कहू का बुरा बिचारै ॥
सक्कर काहू की हर लावै । और लोह गुड़ नून चुरावै ॥
गुड़ जिम नरक सुभुगते सोई । तामें अधिक महादुखहोई ११॥

दोहा ॥

कूप नरक है पांचवां, जाका करूं बखान ।
तामें लोहू पीप है, कूवेकी सम जान ॥ १२ ॥

चौपाई ॥

तापै काग बहुत घिर रहिया । बड़ी चोंच लोहे सम घरिया ॥
तामें पापी कूं गहि डारै । तिरआवै वह चोंचहि मारै ॥
बड़े पतित मूरख अभिमानी । जनम पाय हरिभक्ति न जानी॥
पूरा सतगुरु ढूंढ़ न कीना । परमेश्वर का नाम न लीना ॥
साधन की संगति नहिं कीनी । कथा कीरतन सुरत न दीनी ॥
अरु दासी सँग गमन करत है । सोभी याही नरक परत है ॥
हिरदय दया क्षमा नहिं आई । मनुषा देही रतन गंवाई ॥
यासम पाप और कहा होई । कूप नरक में डूबै सोई ॥
महा कीट छठा जो देखा । कूप की जो ताहि बसेखा ॥

तामें विष्ठा बहुते भरिया । कुलबुलाट कीड़ोंने करिया ॥
बड़े बड़े कीड़े ता माहीं । पापी के तनमें चिपटाहीं ॥
भली वस्तु जिन छिपकर खाही । आप अकेले दिया न काही ॥
आपही आप सुगन्ध लगाई । काहूका लिया अन्न चुराई ॥
अरु ऐसे बहु पाप कमावै । सो महाकीट नरक में जावै १३॥

दोहा ॥

नरक सातवाँ जानिये, असिपत्तरबन नांव ।
दरख्त की सम है बड़ा, पातहु धारै श्याम ॥ १४ ॥

चौपाई ॥

ज्यों तरवार पात वे पैने । पतितनकूँ भारी दुखदैने ॥
पापी कूं वा नीचे लावै । खड़ा करै नाहीं बैठावै ॥
पात झड़ै खांड़े सम लागै । कटै माँस हाड़ ही ताकै ॥
त्राहि त्राहि जहां होरही भारी । सुनकर चेतै नाहिं अनारी ॥
सुनों ऋषीश्वर और तमासा । देखा धरमराय के पासा ॥
काहू जमका कोइल बाहन । कोऊ काग चढ़े ही जाहन ॥
कोऊ हिरन चढ़ा ही जावै । कोऊ गीदड़ चढ़ा डरावै ॥
उनके मुख विकराल बने हैं । नानाविध भये रूप ठने हैं ॥
कालारंग कठोर बड़ेही । अधिकी तामस भौंह चढ़ेही ॥
नेतर लाल डरावन तीखे । दुखदाई वे पापी जीके ॥
तनमाहीं दुरगन्ध जु आवै । लांबी काया अति डरवावै ॥
मोटी देही ऊंचे केशा । बहुतोंकामुख करहै भैसा ॥ १५॥

दोहा ॥

बहुतों के मुख श्वान से, बहुतों के मुख बाघ ।
बहुतक चीते मुखबने, बहुतों के जों नाग ॥ १६ ॥

आनन बहुत बिलाव से, बहुतन के मुख बैल ।
घोड़े से मुख बहुत हैं, चित खोटे तनमैल ॥ १७ ॥
थोरे से बरनन किए, अरु मुख नाना रूप ।
तनमाहीं जों रोंगटे, दीखत है बिट रूप ॥ १८ ॥

चौपाई ॥

काहूके करमें तिरशूला । काहूके कर जलता पूला ॥
काहू हाथ में तीक्षण बरछी । कै तोपैं तलवारैं तिरछी ॥
बहुतों के कर मुगदर भाले । गदा कुल्हाड़े हैं विकराले ॥
बहुतों के कर मूसल लाठी । बहुतों के कर लोहे साठी ॥
और गोफन है हाथों तिनके । और और कर सस्तर जिनके ॥
सस्तर लीयें जु गिनती नाहीं । ऐसे दूत लखे ऊंह ठांहीं ॥
धरमराय की आज्ञा साथा । छेदत हैं पतितन के गाता ॥
मारै बांधै दया न नेको । महाकलेश तहां मैं देखो ॥१९॥

दोहा ॥

नासकेत ऐसे कही, नैनों देखी बात ।
रनजीता यों कहत है, सब ऋषियों के साथ ॥ २० ॥

चौपाई ॥

और दूत घोरी मुख तिनका । पैनी डाढ़ कान बड़ जिनका ॥
मोटे होठ खड़े जो केशा । नैनालाल अगन के भेशा ॥
ऐसे जम पतितन के ताहीं । डारैं असिपत्तरबन माहीं ॥
कामी क्रोधी जो नर जावैं । उन कूं वै बहुत्रास दिखावैं ॥
जो कोई काटै हरिया पीपल । और चुरावैं बाड़ी में फल ॥
काटैं वृक्ष जीव दुख देवै । झूंठी साख भरैं दरब लेवैं ॥
राखा बरत भंग कर डारै । गुरका धरम-सीस नहिं धारै ॥

ऐसे पाप करैं वजमारे । नरक सातवें जा हत्यारे ॥२१॥

इति श्री नासकेतोपाख्याने नरकवर्णनोनाम नवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥

नासकेत उवाच ॥ दोहा ॥

नरक सुदारुण और है, महाकष्ट की खान ।
जहां कामी नर नारही, भुगतै वहु दुख मान ॥ १ ॥

चौपाई ॥

बहुते खंभ नारकी सूरत । बहुते पुरुष रूपकी मूरत ॥
जो कोइ परतिरिया गल लावैं । जिनकों जलते खम्भमिलावैं ॥
कहैं कि अपना कीया भोगो । अब क्यों मनमें मानत सोगो ॥
वा नारी कूं लेह पिछाना । जाके संग बहुत सुखमाना ॥
विरथा मनुषा देह गँवाई । तुमतें खर कूकर अधिकाई ॥
जो नारी पर पुरषा माती । खोटा करम किया वा साथी ॥
तिनके कारन खंभ तपाये । बहुती लाल किये उरलाये ॥
जमकहे यह तो जार तुमारे । इनकी सूरत लेहु निहारे ॥
जिनके संग काम बस रतियां । तुमतें भली गधी अरु कुतियां ॥
आगेसें सूझा नहिं तुमकूं । कै तुम सुना नहीं था हमकूं ॥
भुगतो याही नरक मँझारी । निकसन की आवै नहि बारी ॥
किया जो काम अजोग निरारा । परमेश्वरका आयसु टारा ॥२॥

दोहा ॥

जरते थंभों बांधकर, मार कहै जम ओह ।
जो कुछ कीया जगत में, जाका फल अवलोह ॥ ३ ॥
त्रास इसी जमलोक का, सुनता था अकनाहिं ।
तन मन सूँ लागारहा, मैथुनही के माहिं ॥ ४ ॥
परवी अरु दिन बरतके, किया जो मैथुन कर्म ।

विषय भोग बोरा भया, भूला शील अरु धर्म ॥ ५ ॥

चौपाई ॥

निरस्वास नरक विकरारा । जामें पतितन कूं दुखभारा ॥
ऐसे पापन सों ह्वां जावै । जो वे गुरुकी बस्तु चुरावै ॥
ब्राह्मण तथा देवता होई । इनका अंश चुरावै कोई ॥
बूढ़े अरु वालक का लीया । माल चुराय बहुत दुख दीया ॥
कै बूढ़ी कै बिधवा नारी । तिनका दरब चुराय अनारी ॥
जाय परत है नरक मंझारा । श्वासरुकै जहां दुःख अपारा ॥
दसवां कुल संकुल जो देखा । तामें दुखहै अधिक विशेखा ॥
ब्राह्मण क्षत्री शुदर वैशा । भारी पाप किया जिन ऐसा ॥
मांस खाय मदिरा जिन पीया । सोवा नरक माहिं गहदीया ॥
मारा जीव मांस ले खाया । जाका पातक बहुत बताया ॥
मोल मंगाय लाय जो खावैं । सोभी पापी बहु दुखपावैं ॥
उसी ठौर मैं यही निहारा । भ्यानक अधिकी दुखह्वां भारा ॥
अगनरूप जलते द्रुम देखे । दस जोजन लांबे जु बसेखे ॥
जोंजन पांच घेर विस्तारा । एक एक का न्यारा न्यारा ॥
संकल सूं ह्वां वांधै पापी । हाहा शब्द कहैं संतापी ॥
जम लोहे की लाठी मारैं । मुगदर सों सिर फोर ही डारैं ॥
उनका चिमटों चाम उपाड़ै । सीसा तावैं मुख में डारै ॥
वेतो जलते अधिक पुकारैं । ज्यों ज्यों जम तामसकर मारैं ॥६॥

दोहा ॥

नरक ग्यारवां कहतहैं, सूचीमुख है नाम ।
तहां अधिक्र दुख होत है, महाबुरी वह ठांव ॥ ७ ॥

चौपाई ॥

जहाँ जायकै पापी पड़ई । जो कोई ऐसे करम करैई ॥

जिन्हों पराई नारी मारी । अरु सतगुरकी निन्दा धारी ॥
धरमशास्त्र वेद पुरानी । इनहूं की निन्दाही ठानी ॥
तीरथ की निन्दा मुखलावै । सो सूचीमुख नरकही जावै ॥
नरकजु महाघोर इक नाऊं । सो विकराल भयानक ठाऊं ॥
तामें शूकर सिंह अरु कागा । रहैं भेड़िया काले नागा ॥
जिसने पाप किये बहुभारी । सो जावे वा नरक मँझारी
करम कमाये खोटे खोटे । ऐसे पाप किये जिन मोटे ॥८॥

चौपाई ॥

जो कोइ बैठ बाट क माहीं । एक एक कूं देखत जाईं ॥
पर तिरिया की ओरी झांकैं । जिनकी काग निकासत आंखैं॥
जो कोइ बनमें आग लगावैं । जिनका मांस सिंघही खावैं ॥
जो कोई पापी गांवही जारै । तिनकी देह भेड़िया फाड़ै ॥
परघर कूं जो पावक लावैं । शूकर जिनके हाथ चबावैं ॥
जाने विष देकर नर मारे । खावैं तोड नागही कारे ॥
ऐसे वाही नरक मँझारा । वे दुख पावैं अधिक अपारा ॥
चरनदास कहैं नासहीकेता । भाषत है जो कुछ ह्वां देखा ॥९॥

दोहा ॥

शूलरूप इक नरक है, शूली की ज्यों जान ।
पाप किये जिन राजमें, सोई गिरत है आन ॥१०॥

चौपाई ॥

मीरगन कूं जिन तीर चलाये । करी शिकार मारले आये ॥
नाहक नर शूलो पर दीये । हेत दरब के ताचन कीये ॥
जो वा नरक माहिं ले बासा । बहुती दीखै अधिकी त्रासा ॥
करमनका फल छूटै नांहीं । देखैअपनी आंखों ह्वांहीं॥११॥

दोहा ॥

और नरक है चौदवां, नांव अगन ही कुण्ड ।
ताहि लखै हियरा डरै, तस महा परचण्ड ॥१२॥

चौपाई ॥

पापी प्रानी कूं हां डारै । पड़ै नाहिं तो जम बहु मारै ॥
कहै पापी मैं बहुत पियासा । जल प्याकै फिर देवो त्रासा ॥
दूत कहैं सुन रे मतहीना । तैंतो दया धरम नहि चीन्हा ॥
जनमपाय यह भी नहिं कीना । काहू कूं जलदान न दीना ॥
जैंवत ग्रास न दीया पापी । नेवज की रोटी नहीं थापी ॥
ब्राह्मण कबहूँ नाहि जिमाया । गुरभाई को नाहिं खवाया ॥
अगन माहिं आहूत न जानी । भूखे कूं दिया अन्न न पानी ॥
धृग धृग रे मूरख नरलोई । अपना किया भुगत अबसोई ॥
बिन भुगतें छुटकारा नाहीं । क्यों नहिं गिरता याके माहीं ॥
अब तुम अगन कुण्ड कूं झेलो । कोई न संगी भुगत अकेलो ॥१३॥

दोहा ॥

गहन जु सूरज चन्दका, तामें किया न दान ।
पेटभरा ज्यों बैल सम, करी न पुण्य पहिचान ॥१४॥

इति श्रीनासकेतोपाख्याने नरकवर्णनोनाम दशमोऽध्यायः ॥ १० ॥

नासकेत उवाच ॥ चौपाई ॥

नरक तेल जंत्र इक नाऊं । कोल्हू सूरत ताहि सुनाऊं ॥
तामें पतित गिरत हैं जाई । करम किये ए लोग लुगाई ॥
जो कोई चोरी निन्दा करै । भूमि पराई लेत न डरै ॥
खेत बिराना मूसैं चलिकै । परतिरिया कूँ छीनैं बलकै ॥
सोतो तेल जंत्र के माहीं । पिलपिल पापी बहु दुख पाहीं ॥

दुखद सोलवां वा भुगतावैं । घीव तेल ज्यों मनुष चुरावैं ॥
भक्ति छुटावे निगुरा करै । झूंठे अवगुन काहू धरै ॥
वाकूँ तेल कड़ाहे तलैं । अपने नैनन देखे भलैं ॥
मदिरा अचवैं आमिष खावैं । तिनकूँ ताता तेल पिलावैं ॥
नरक सतरवां लेहु पिछाना अन्धकारज्योंकरूं बखाना ॥१॥

दोहा ॥

जो राकस वै जीव हैं, बड़ी आरबल देह ।
तन ऊंचा बल है घना, तहाँ परत हैं वेह ॥२॥

चौपाई ॥

सुनों कहूँ जो कुछ ह्यां देखा । सो तुमसूँ राखूँ नहिं नेका ॥
अस्थान कालका एक निहारा । जो मनुषों का करै संहारा ॥
महाभयानक वह अस्थाना । बड़े कष्ट सूँ हो ह्यां जाना ॥
देखा दूत एक ह्यां भारी । जाका तन मोटा बलकारी ॥
दहने करमें दण्ड जु वांके । बावैं में फांसी है जाके ॥
आंखें रकत रूप बिकरारा । अरु भैंसे पर है असवारा ॥
अरु जो किंकर है वा पासा । उनका भी तनकालहीकासा ॥३॥

दोहा ॥

और नाम किरतांत है, उसी काल का जान ।
अरु जो वाके दूत हैं, सो किरतांत पिछान ॥ ४ ॥

चौपाई ॥

एक समय वह धरमही राजा । अपने दूतन सूं कहो काजा ॥
अज्ञा ले जमदूत पधारे । दैतराज देखा तन भारे ॥
दूतन शस्तर तहाँ चलाये । दैतराज वै मार भगाये ॥
अरु दैतों ने बहुतक कूटे । भई लराई शस्तर टूटे ॥
धरमराय पै भागे आये । ह्यां के कौतुक सबै सुनाये ॥

कही कि दैतन हम कूं मारा । नैक न माना हुकमतु म्हारा ॥
धरमराय सुन बहुत रिसाया । कालरूप कूं निकट बुलाया ॥

दोहा ॥

कहा कि बाहों के बली, इनके संग हां जाव ।
दानों सहित जु भूप कूं, मार पकड़ ले आव ॥ ६ ॥

चौपाई ॥

जम की अज्ञा ले वह काला । जै जै शब्द कहत उठ चाला ॥
वाके संग दूत घन चाले । अतिभैमान महाबिकाले ॥
अपने अपने शस्तर तोलैं । चलो चलो आपस में बोलैं ॥
काल वही जिनका है नायक । पतितनकूं भारी दुखदायक ॥
खांडा है दहिने कर माहीं । चन्द्रहास तिह नांव कहाईं ॥
फांसी लिये जु बायें हाथा । ऐसें गया दूत ले साथा ॥
दूत काल के अरु वे दाने । जुद्ध करनलागे घमसाने ॥
मुगदर बज्रर लाठी मारै । गदा जु फांसी सेल सँभारै ॥७॥

दोहा ॥

खडग सिला पत्थर बड़े, अरु मुष्टों की मार ।
दोऊ ओर से चलत है, तनकी नाहिं सँभार ॥ ८ ॥

चौपाई ॥

ऐसा जुद्ध करै न डरावैं । देखत रोम खड़े होजावैं ॥
अन्त यहीं दूतौ वे मारे । दैत्यों के नायक जो हारे ॥
और काल नैं डंडौ मारै । तड़फै बहुत धरन पै डारै ॥
मुगदर गदा मार बस लाये । बांध फांसियों पकड़ चलाये ॥
धरमराय के आगे कीने । तब राजा वै नीके चीन्हें ॥
फिर कही इनकूं लेकर धावो । चित्रगुप्तही पै ले जावो ॥
आयसु ले फिर हांई आये । चित्रगुप्तकूं जाय दिखाये ॥

चित्रगुप्त ने किया बिचारी । बड़ पापी हैं येसब भारी ॥९॥

दोहा ॥

दूतौंने जतनों सहित, बांधा सावहीधान ।
भाग न जावैं छूटके, बलवन्ते परवान ॥ १० ॥

चौपाई ॥

फिर वे नरकमाहिं डलवाये । इनकूं बहुते त्रास दिखाये ॥
ह्यांसूं काढ़ैं बहुतीबारा । फिर दैं अगन कुण्डमें डारा ॥
ऐसे दैतन कूं भी देखा । पाप पुन्यका देवैं लेखा ॥
तातें सुनों ऋषी परबीना । रहै नहीं धनवंता हीना ॥
ना रहै बली न बूढ़ा बारा । काल सभी का खानेवारा ॥
कै घरमें कै बनके माहीं । काल कहीं छोड़त है नाहीं ॥
काल बली की फिरै दुहाई । कोइ न छोड़ा रंक अरु राई ॥
ना कोई संगी ना कोई साथी । बहुतोंगहिगहि छोड़ी बाथी ११

दोहा ॥

तातें या संसार में, चित्त न लावो कोय ।
यह निहचै कर जानलो, अपना कोई न होय ॥१२॥

चौपाई॥

मूये पाछे काकूं रोवैं । सुपना सा देखें जब सोवैं ॥
जब जागें जब कोइ न कोई । ऐसी भांती जग यह होई ॥
छोटी बड़ी आरबल जानो । यह सब काल चरित्तर मानो ॥
व्याधरोग में यह को परै । काल खेल यह सबही करै ॥
सबही सिष्ट कालमुख माहीं । कोट जतन सूं बचैं जु नाहीं ॥
इसी जगत का ऐसा लेखा । ज्यों स्वांगी धर नाचै भेखा ॥
जैसे बाट बटेऊ जावैं । छांहि वृक्षकी टुक ठहरावैं ॥
फिर वह धूप मांहि ही धावैं । जबलगनाहि ठिकाना पावैं १३

दोहा ॥

थोड़ा सुख संसारका, तामें दुःख अपार ।
चित मत दोजो तासमें, मैं कहूँ बारम्बार ॥ १४ ॥

चौपाई ॥

साध संगत गुरचरन मनावो । तातें काल चपेट न खावो ॥
हरि की ओरी चित्त लगावो । यातें मुक्ति ठिकाना पावो॥१५॥

दोहा ॥

नरक विलोचन अब कहूँ, सो अठारवां जान ।
वे पापी वहां परत हैं, जिनकी दिष्ट कुध्यान ॥ १६ ॥

चौपाई ॥

राह चलत तहिं जीव निहारैं । बाजे देखै तो बीमारैं ॥
परतिरिया जो देखत जावै । करै मनोरथ बहुत लुभावै ॥
क्रोधदिष्ट साधन कूं देखै । तिनकी निन्दा करै बसेखै ॥
देख किसीका पड़दा खोलैं । बिषै तमासे ही में डोलैं ॥
साध गुरू की ओर न झांकै । ठाकुरद्वारे प्रीति न राखै ॥
विधवा नारी काजल आंजै । आन पुरुषही के वै काजै ॥
ऐसे जो हो लोग लुगाई । तिन्हैं नरक यह अतिदुखदाई ॥
गिरतैं विन आंखन होजावैं । चीसैं बहुत महादुख पावैं ॥
रणजीत कहैं उन नैन निहारा । कहा ऋषिनसूं लखि विस्तारा॥
और अनूठा नरक बताऊं । सो पिरथी ऊपर दिखलाऊं १७॥

दोहा ॥

सो याही मृत्युलोक में, देखा अपने नैन ।
यह परगट परतिक्ष है, पापी कूं दुख दैन ॥१८॥

चौपाई ॥

जगमें नरक कहूँ अब खोलैं । महा कंगाल मांगते डोलैं ॥

नागे भूखे और जडाये। जूताना जिनके ही पाये ॥
पेट भरन कूं जतन करत हैं। बहुत पचैं ना उदर भरत हैं ॥
हैं दारिद्री नितही रोगी। अंधरे कोढ़ी निसदिन सोगी ॥
ऐसे देखो जो नर नारी। सब कूं जानौं नरक मंझारी ॥
जो कोइ पड़े बंध के माहीं। जीवत नरक मांहिं भुगताईं ॥
खोटा करतें नाहिं डरावें। जिन कूं प्यादे जम लेजावैं ॥
औगुनगारे कूं बहु मारैं। पाछे जकड़ बंध में डारैं॥१९॥

दोहा ॥

निरख परख निहचै करो, मन में लीजै जान।
अपनी आंखों देख लो, मैं जो किया बखान ॥२०॥

इति श्रीनासकेतोपाख्याने यमशासनो नाम एकादशोऽध्यायः ॥ ११ ॥

ऋषिरुवाच ॥ चौपाई ॥

कह ऋषीश्वर सुनहो दाता। नासकेत तुम परमगियाता ॥
जगमें बसना दीखै ऐसा। रैन समै बृक्षपक्षी जैसा ॥
राह माहिं ज्यों थका बटाऊं। बैठ छाहिं फिर चले उठाऊं ॥
आवा गवन यों जगत मंझारा। हमकूं डर लागत है भारा ॥
तू जमलोक देखकर आया। हमकूं ऐसा ज्ञान डिढाया ॥
अब इक बात पूछत है औरी। सभी ऋषीश्वर दोउ करजोरी॥
याका उत्तर हम कूं दीजे। हमें सनाथ आज तुम कीजे ॥
सबै पापका फल दिखलाया। सो सब हमरे निहचै आया॥१॥

दोहा ॥

पुन्य करन के फलन को, अब तुम कहो विचार।
जो जो देखो नैनही, सुखपावत नरनार ॥२॥

चौपाई ॥

जो ये लोग दान पुन्य करैं। फलपावैं कहा जब यह मरैं ॥

किरपा कर कर सबही कहिये । हम कूं भी ह्यां कीया चहिये ॥

नासकेत उवाच ॥ चौपाई ॥

नासकेत जब वचन उचारा । सो सो कहूं जु नैन निहारा ॥
जगमें सील दयाही सुखिया । पुण्यदान सूं होवै सुखिया ॥
जो नर इनसेती चितलावैं । बाट माहिं बहुतै सुखपावैं ॥
कोयल राह बिरछ बहु फले । महा सुगन्ध छांहिं उनतले ॥
फलखाने कूँ मारग माहीं । चढ़े बिमानन ऊपर जाई ॥
मनुषा जनमपाय जिन कीन्हा । जींवत दान कछू ह्यां दीन्हा ॥
आय मिलत हैं मारग माहीं । सुख आनन्द सूँ खाते जाईं ॥
जिन जीवों ऐसे पुन कीन्हे । दूध दही घृत दिये नवीने ॥ ३ ॥

दोहा ॥

नाना भांत मिठाइयां, अरु मेवा दई जान ।
नाना विध भोजन दिये, सोई मिलत हैं आन ॥ ४ ॥
जो कछु करै सो आपकूं, परकूँ करै न कोय ।
अपना कीया पाय है, नीच ऊंच क्यों न होय ॥ ५ ॥

चौपाई ॥

आगे बाजे बजते जावैं । हरिजस अधिक नायका गावैं ॥
ऐसें जावैं स्वरग मंझारें । लैन अप्सरा आवैं द्वारें ॥
निरत करत भीतर ले जावैं । सिंहासन ऊपर बैठावैं ॥
धरम नीक कूं देखें कोई । उठ उठ आन मिलत है सोई ॥
बहुतक जहां अप्सरा नारी । दिव बस्तर दिव भूषन वारी ॥
चोवा चन्दन कोई लगावें । कोई चावसों पवन ढुरावैं ।
कहै कै हमतो तुमरी दासी । हम तुम रहैं सदाही पासी ॥
एक साथ मिल हरिगुन गावैं । करैं विलास परम सुखपावैं ॥ ६ ॥

दोहा ॥

केलि करैं स्वरग लोकमें, जिन किये ऐसे दान ।
जुदे जुदे चरनदास अब, ताको करैं बखान ॥ ७ ॥

चौपाई ॥

जिन तलाव अरु कुएं खुदाये । बाट माहिं जिन द्रुम लगाये ॥
अरु जिन ऐसे दत्तव कीने । बहुत दान विप्रन कूँ दीने ॥
सोना रूपा मूंगे मोती । पन्ना हीरा उज्जवल जोती ॥
माणक चुन्नी और नगीना । दान जवाहरका जिन दीना ॥
गहने भाड़े सिज्या दीनी । मन्दर भूमिदान जिन कीनी ॥
ताँबा और कपूर सुहाये । अन्नदान भोजन जिन स्वाये ॥
ऐसी वस्तें देने वारे । जाय बसत हैं स्वर्ग मंझारे ॥
पहिले धरमराय पै जावैं । गण सुख सूँ ले ले ही धावैं ॥८॥

दोहा ॥

खड़ा करैं धर्मराय ढिग, कर कर बहुती चाव ।
तब राजा ऐसें कहैं, स्वर्गलोक लेजाव ॥ ६ ॥

इति श्रीनासकेतोपाख्याने स्वर्गमार्गवर्णनोनाम द्वादशोऽध्यायः ॥ १२ ॥

नासकेत उवाच ॥ दोहा ॥

अब स्वर्गों का कहत हूं, जुदा जुदाही नावँ ।
शुभकर्मन सूं पाइये, ऐसी उत्तम ठावँ ॥ १ ॥
पहिला स्वर्ग सुहावना, है कुबेर का लोक ।
यक्ष गन्धर्व जहाँ अपसरा, भोगीम हा अशोक ॥ २ ॥
लोक बरुनकी छवि घनी, रतन जड़े अस्थान ।
बाग घने शोभा घनी, बड़े सुखों की खान ॥ ३ ॥
इन्दर की अमरावती, रही स्वर्ग छवि धार ।
नृत्य करत हैं अप्सरा, अधिकी जहाँ बहार ॥ ४ ॥

रोग बुढ़ापा भय न ह्वां, जो कोइ पहुँचे जाय।
रतन जड़े मन्दिर मिलैं, भोगैं भोग अघाय ॥ ५ ॥
सोमलोक में सुख घना, पावै अति ही चैन।
रनजीत कहैं वहाँ जाय कर, देखे अपने नैन ॥ ६ ॥
आदित्य लोक में भोग है, नाना विधि सुखदान।
दिव्य देही पावै जहाँ, अधिकी रूप निदान ॥ ७ ॥
शिवका लोक सुहावना, शोभा कही न जाय।
जो जैसी इच्छा करै, तैसा ही फल पाय ॥ ८ ॥
सभा मुनिन-की ललित है, तीरथ मूरत धार।
सब परबत देही धरैं, घनी अप्सरा नार ॥ ९ ॥
ब्रह्मलोक सबसे बड़ा, तेजवन्त अधिकाय।
अति उज्ज्वल निर्मल महा, दृष्टि नहीं ठहराय ॥ १० ॥
दमकैं मन्दिर रतन के, नाना विध के भोग।
वही बसैं वहाँ जायकै, जो साधै तप जोग ॥ ११ ॥
सात स्वर्ग बरनन करे, सूक्षम कहे जनाय।
जिस करनी सों जाय वहां, सो अब कहूँ सुनाय ॥ १२ ॥

चौपाई ॥

सुनो ऋषीश्वर सबै सुनाऊं। धर्मिष्ठों के भोग बताऊं ॥
धर्मी पुरुष बसत जा ह्वांईं। नाना सुख आनन्द तहां ही ॥
दूध दही घृत अरु पकवाना। सहत जहाँ मेवा है नाना ॥
दिव्य गहने जहाँ रतन जड़ाऊ। रेशम बस्तर अधिक सुहाऊ ॥
जहाँ अप्सरा सेव करत हैं। आज्ञा माहीं खड़ी रहत हैं ॥
अद्भुत बाजे बहुत बजत हैं। महा विनोदा तहाँ रजत हैं ॥
जो कोई कूवाँ ताल खिनावै। और बावड़ी बाग बनावै ॥
सुरग माहिं वह आनन्द पावै। बहुतकालमृत्युलोक न आवै॥१३॥

दोहा ॥

भूमि गऊ अरु हेमका, और बसन दे दान ।
सो वे धरम प्रभावते, रहैं स्वर्ग सुखमान ॥ १४ ॥

चौपाई ॥

आनन्द करते देखे भारा । कहूँ जो अपने नैन निहारा ॥
जिन नर गुर की सेवा करिया । हरिकी पूजा मनमें धरिया ॥
मात पिता का सेवन कीना । जथाशक्ति कछु दान जु दीना ।
कन्द मूल फल अन्न जु दीया । विप्रसाध का आदर कीया ॥
हरषमान भोजन जो खाया । चलती बारी शीस नवाया ॥
तब वह दान बिरध हो फलैं । सोई आय प्रानी कूं मिलैं ॥
सुख पावैं तुष्ट आनन्दा । जो कोइ बोवै धर्म का कन्दा ॥
जो कोई पुन्यदान ह्यां देवे । कुबेर लोक जाका फल लेवे॥१५॥

दोहा ॥

कियो अगनहोत्र सदा, कियो जज्ञ अरु दान ।
कामलालसा ना कियो, जतीं रहै बेजान ॥ १६ ॥

चौपाई ॥

सब जीवन की दया बिचारैं । काहू दुख देवे नहिं मारैं ॥
तन मन वचन रहैं सुखदाई । देवैं अन्नदान हरषाई ॥
वेद पुरान सुनैं सुख पावैं । कथा कीरतन सों मन लावैं ॥
बोलैं साँच तपस्या करैं । साधैं जोग पाप सब हरैं ॥
गुरु साधन के दरशन धावैं । अरु सरधा सों तीरथ न्हावैं ॥
सो वे वरुण लोक के माहीं । प्रानी जा बहुते सुख पाहीं ॥
जो कोइ चतुर पुरुष कहलावै । कृत्त जतन कर दरब कमावै ॥
चहिये वह नित दानहि देवै । ह्यां जस ह्वां बहुते सुख लेवै ॥१७॥

दोहा ॥

पनही नांगे देत है, प्यासे पानी देत ।
चरणदास यों कहत हैं, फल पावन के हेत ॥ १८ ॥

चौपाई ॥

भांड़े वस्तर घोड़े हाथी । गौवें देवे बच्छो साथी ॥
देवे ऊँट पलाने साजैं । सो जो इन्दर लोक विराजै ॥
बहुतक भोग करै बरठाईं । रथ विमान चढ़ि रमै तहांहीं ॥
मोर लगे काहू रथ साथा । हंस लगे काहू विख्याता ॥
कैयों के हाथी अरु घोड़े । कैयों के सारस के जोड़े ॥
अपने धरम दान के कीये । देवत होय स्वरग सुख लीये ॥
देवसुता बहु सेवा करैं । धरमनीक कों हित बहु धरैं ॥
जिनका रूप जानिये ऐसा । अगन तपा सोना है जैसा ॥
शुद्ध फटक ज्यों निर्मल देहा । रतन जटित हैं जिनके गेहा ॥
कंठ माहिं रतनों की माला । महारूप धारै वे बाला ॥१९॥

दोहा ॥

बाजे सुघड़ बजावहीं, निरते अति चतुराय ।
धरमनिकों के कारने, अस्थापी धरमराय ॥ २० ॥
हां जो है धर्मात्मा, चढ़े विमानों देख ।
जहां इच्छा तहां जात हैं, क्रीड़ा करैं अनेक ॥ २१ ॥
अन्नदान के किये तें, पावें अमृत भोग ।
तातें सबही नरनकूं, दानही देना जोग ॥ २२ ॥

चौपाई ॥

जो नारी ऐसा प्रण धारै । पतिव्रता हो धर्म सँभारै ॥
पहिले सर्व कुटुंब को खावै । पीछे बचा आपहू खावैं ॥
अरु अपने पति कूं नित सेवे । सो वह इन्द्रलोक फल लेवे ॥

देही दिव्य रूप धरि रहिया । सुन्दर एक विमान जु लहिया ।।
रतन जड़े घर माहिं बिराजैं । आठो सिद्धि खड़ी छबि छाजैं ।।
शील बरत में सांची नारी । पति की आज्ञा कबहुं न टारी ।।
तिरदेवा सूं अपने पति कूं । अधिक जानती है वह हित सूं ।।
परपति के वह जाय न नीरा । सबकूं जानैं बाप अरु बीरा ।।
अन्यपुरुष के छुवे न मोती । अपने पति की पहिरे पोती ।।
तिरलोकी जाकूं सिरनावै । जहां तहां वह अस्तुति पावे ।।
स्वर्ग माहिं सुख लेने वारी । शुभ लक्षण सब बात सँवारी ।।
पति के संग लगीहीं रहे । काहू से पिया की नहि कहे ।।
दुख विपता में संग नहि छाड़ैं । अपने पतिही सूं हितमांडै ।।
बुरा भला पति कूं नहिं जानै । हरिही की सम ताहि पिछाने ।।
बुरी भली अज्ञा जो करै । सबही माने नैक न टरै ।।
कोढ़ी अँधरा जो पति वाका । चितसूँ सेवन करै जो ताका ।।
पुरुष मरै जावै जग सेतो । वाके संग जलै कर हेती ।।
पति कूँ कष्ट होय दुख मानै । वाका सभी आपना जानै ।।२३।।

दोहा ।।

शुभकर्मी भर्ता भवै, कै षट कर्म करै ।।
मान भंग नाहीं करै, सेवा चित्त धरै ।। २४ ।।

चौपाई ।।

भर्ता पुन्य करै सुख मानै । पाप करै जब दुख हिये आनै ।।
ऐसे कर्म करै जो नारी । पति समेत जा स्वर्ग मंझारी ।।
इन्द्रलोक में जाय बिराजै । सहस चौकड़ी लों वहाँ राजै ।।
रतन जड़े भूषन रहैं पहिरें । मुतियन के हिये हार जु लहरें ।।

इति श्रीनासकेतोपाख्याने स्वर्गवर्णनो नाम त्रयोदशोऽध्यायः ।। १३ ।।

नासकेतउवाच ॥ दोहा ॥

ब्रह्मभोज जो देत हैं, जज्ञ करैं चितलाय ।
और तपस्या करत हैं, अपने तनको ताय ॥ १ ॥

चौपाई ॥

जेठ मास पंच अगनी तापैं । चार औरही पावक आपैं ॥
पँचवीं अगन सीसपर भाना । यह पँच अगनी लेह पिछाना ॥
पूस माह में ऐसे धारे । सहस धार के लेने वारे ॥
टिगटी पर मटका धरवावैं । सहस छेद तामें करवावैं ॥
जल भरवा तल बैठें सोई । ऐसा कष्ट करै जो कोई ॥
सो वे रतन जड़े घर पावैं । सोमलोक में बहु हुलसावैं ॥२॥

दोहा ॥

सोनेका जो दान दे, सूरलोक कूं जाय ।
अरु कपड़े का जो करैं, वाही लोक रहाय ॥ ३ ॥

चौपाई ॥

आसोज अरु कातिक जब आवैं । तिनमें विप्रन कूं भुगतावैं ॥
खीर खांड भोजन करवावैं । साध ब्राह्मण नोत जिमावैं ॥
दक्षिणा दे टीका जब काढ़ैं । वाका धर्म अधिकही बाढ़ैं ॥
पोह माह दे लकड़ी दाना । बहु विधदेह जडावल नाना ॥
बैशाख चैत ऐसा जिन कीया । अन्नदान मंगतों कूं दीया ॥
जेठ साढ़ जिन पानी प्याये । सोरन दान दिये मनभाये ॥
ते जिय जावैं स्वर्ग मंझारी । आनन्द पावैं अधिक अपारी ॥
दानदिये फल आगे आवैं । नाना भोगकरैं सुख पावैं ॥
जिन पति संग जलाई काया । याहूका फल अधिक बताया ॥
साठ किरोड़ बरष वह नारी । रहै सूरके लोक मंझारी ॥
सो वह दिव मारग कँ पावै । पति सूँ कर जोरे ही जाव ॥

शुभ मग माहीं वृक्ष घनेही । सूरज तुल्य विमान वनेही ॥
नदियां दूध सहत दधिघीकी । अरु मीठे जलहीकी नीकी ॥४॥

दोहा ॥

जहां पटबंर बादले, अरु वसनन की छांहिं ।
सूरज ही के लोककूँ, ह्यां होकर वे जाहिं ॥ ५ ॥

चौपाई ॥

जो सूरज के सेवक जानौं । सूरही लोक बसत मनआनौं ॥
सुखदाई जानौं वह लोका । जहां बसैं कुछ रहै न शोका ॥
अरु बाजों के शब्द जहां है । गन्धव लाखों रहत तहां है ॥
वस्तर भूपन पहिरै आवैं । गावैं नाचैं ताहि रिझावैं ॥६॥

दोहा ॥

जो सेवक महादेवके, पहुंचै वाके लोक ।
सुख सेती जहां रहत है, निर्भै अधिक असोक ॥ ७ ॥

चौपाई ॥

पर कन्या का व्याह रचावैं । परमारथ के हेत करावैं ॥
बिप्पर बालक देह जनेऊ । ऐसे कारज मैं चित देऊ ॥
अरु कोइ ऐसा कारज आवै । परकारज को उठ उठ धावै ॥
स्वरगलोक पावत हैं सोई । भावैं नर नारी क्यों न होई ॥
बिना दान शिवलोक न पावै । धरमहीन कैसे कर जावै ॥
रतन जड़े नाना छवि वाकी । सब शोभा वरनु कहा जाकी ॥
जो ब्रह्मा के सेवक होई । वाके लोक बसत है सोई ॥
आनँद करै महा सुख पावै । ब्रह्मलोक को जो कोइजावै ॥
जो ब्राह्मण अपना धर्म राखै । करै सुकर्म झूंठ नहिं भाखै ॥
वेदपाठ साधै षट करमन । संध्या गायत्री अरु तरपन ॥
ऋतुवन्ती नारी पै जावै । औरं दिना चित नाहिं लगावै ॥

सब मनुषों से हित कर बोलैं । निंदा त्याग भली मुखखोलै ॥
शील दया हिरदै में धारैं । सो ब्रह्मा के लोक पधारैं ॥८॥

दोहा ॥

ज्यों क्षत्री धर्म आपने, सावधान जो होय ।
बस्ती की रक्षा करै, लोग दुखी नहिं कोय ॥ ९ ॥

चौपाई ॥

अपना अंश बांट कर लेवै । साध ब्राह्मण गऊ जु सेवै ॥
साधन की सेवा चित धरै । रनमें जूझै सनमुख मरै ॥
सोवे स्वर्गलोक कूं जावैं । भोगैं भोग बहुत सुख पावैं ॥
वैश्य शीलजुत गऊ चरावैं । साध ब्राह्मणन कूं सिरनावैं ॥
बोलैं सांच बणज के माहीं । सत व्योपार झूंठ कछु नाहीं ॥
शूदर अपने धर्म मँझारी । सांचे दयावन्त उपकारी ॥
सेवक गऊ बिरामन केरा । अपने गुरुका मनसों चेरा ॥
कोइ अतीत और गुरुभाई । सेवा कर बहुत चितलाई ॥
ऐसे चार वरन जो लेखे । चढ़े विमान जात मैं देखे ॥
और जिन्होंने लक्ष्मी धाई । लोक कामना पहूँचै जाई॥१०॥

इति श्रीनासकेतोपाख्याने स्वर्गवर्णनोनाम चतुर्दशोऽध्यायः ॥ १४ ॥

नासकेत उवाच ॥ चौपाई ॥

जिस जिस देवतकूं कोई धावैं । ताके लोकमाहिं वह जावैं ॥
ठाकुर का कोई भक्ता लसैं । वाके लोकमाहिं जा बसैं ॥
करै विनोद महासुख भारी । कै हो पुरुष और कै नारी ॥
दियाजिन्हों दधि दूध मिठाई । भोजन दिये महा सुखदाई ॥
दिया घीव रस सोना रूपा । छायाकरी हरी जिन धूपा ॥
मोती माणक गुली कपूरा । दिये दान जिन बस्तर पूरा ॥
बहुविध दान करैं जो केता । तीरथ बर्त करैं अरु जेता ॥

जाका फल मनमें नहिं धरैं । सब ठाकुर कूं अरपन करैं ॥
दान करैं हरि के हित बोवैं । सो बैकुंठ परापति होवैं ॥
तातें अपनो भला करीजै । धर्मपंथ में सदा रहीजै ।
गुरू ब्राह्मण कूं जो मानै । जो गृहस्थ कूं बेद बखानै ॥
जो गृहस्थ के साधू आवै । देखत उठके सीस नवावै ॥
आदर आसन दे बैठारै । मुखसूं मीठे बचन उचारै ॥
जथाशक्त भोजन करवावै । कंदमूल जैसा घर पावै ॥
जिन साधोंका सेवन चीन्हा । देवत पित्तर पूजन कीन्हा ॥
साध समान जगत के माहीं । और धरम कोइ दीखै नाहीं ॥
जिनकी अस्तुति राम बखानी । बेद पुरानन में हो जानी ॥१॥

दोहा ॥

एक समय धरमराय सब, लीने दूत बुलाय ।
कहा कि तिरलोकी बिषै, हरिजन हैं अधिकाय ॥ २ ॥

चौपाई॥

एक बात यह जाने रहियो । मेरा कहा जो नीके लहियो ॥
साधुरूप कूं ऐसे जानो । हरिकी देह मिले पहिचानो ॥
वे तो हैं परमेश्वर प्यारे । रहैं रामका बाना धारे ॥
जिनके दरशन पातक नासै । जनम मरनकी छूटैं गासैं ॥
किरपा कर निज भेद बतावैं । चोथेपद आनन्द दरसावैं ॥
ऐसे साधन कूं कहिं देखो । हरिसम जिनकूँ जान बिसेखो ॥
साध बसैं जहां तुम मत जइयो । उनके सेवक कूँ मत गहियो ॥
और साध जां जिस घरमाहीं । ह्यांभी तुमकूँ जाना नाहीं ॥३॥

दोहा ॥

साधन की सेवा करैं, अरु चरणामृत लेह ।
तिनके भी मत जाइयो, जिनसे उनका नेह ॥ ४ ॥

चौपाई ॥

और गिरस्ती ठाकुर सेवैं । माला फेर नाम हरि लेवैं ॥
राखैं बरत जागरन करैं । संध्यासमै आरती सरैं ॥
भोग लगाकर भोजन खावैं । और सन्तों को सीस नवावैं ॥
जिनके घर तुम कभी न जावो । अपनीसूरतनाहिंदिखावो ॥५॥

दोहा ॥

परमेश्वर के पारषद । उनकूं लेने जाहिं ।
तुमतो भूल न जाइयो, याद रखो मन माहिं ॥ ६
विष्णुभक्ति परभावकूं, अरु साधन की बात ।
चित्रगुप्त भी ना लखै, न्याव नहीं उन हाथ ॥ ७ ॥

चौपाई ॥

अरु इक नदी स्वर्ग के माहीं । नाम पुहपका अधिक सुहाई ॥
सिध गंध्रब तानिकट बिराजे । देवत अरु धर्मातम राजे ॥
पुण्य बढ़त है न्हाने सेती । तामें है सोने की रेती ॥
शंख पद्म ता माहिं भरेही । पुहुप भरे जहां बृक्ष खरेही ॥
दूध सुधासा जल है ताकै । ढेर मणों का कूल जुवाकै ॥
सूरज किरणों से अति दमकै । चन्द चांदनी सों वे चमकै ॥८॥

दोहा ॥

वाके तट इक बाग है, सुखका दैन सुथान ।
पवन सुगन्धी लिये जहां, बहत रहत सामान ॥ ९ ॥

चौपाई ॥

देखे तहां बिलास ही करते । बहुतभांति कर सुखही धरते ॥
भूख प्यास जाड़ा नहिं गर्मी । सदा निरोग रहैं वहां धरमी ॥
बूढ़ा बाला ज्वान न दरसै । दुखकलेश हां कछू न परसै ॥
कष्ट तपस्या जो जग करई । भय अरु दुख वह कहूं न भरई ॥

करैं किलोल हरष सुख पावैं । चरणदास जो स्वर्ग ही जावैं ॥
अरु पतिवर्ता फल बहु भोगे । संग पुरुष के जोगा जोगे ॥
इच्छा करत भोग जो आव । कहां लग कहूं बहुत सुखपावैं ॥
पतिव्रता बहु नैन निहारीं । शुभकर्मों के करने वारी ॥
अरु जो हैं विभिचारन नारी । उनपर विपता देखी भारी ॥
जिनहूं की मैं कहूं सुनाई । दुराचारनी पति दुखदाई ॥१०॥

दोहा ॥

खोटा चित खोटे करम, पुरुष पराये साथ ।
चौरन जारन है घनी, जिनकी सुनों जो बात ॥११॥

चौपाई ॥

कलह सुहावै अति कंकाली । मैले मनकी अति जंजाली ॥
अपने पति कूं दोष लगावै । आन पुरुष सों चित मिलावै ॥
जलती रहै हिये के माहीं । या जगमें जस नेकहु नाहीं ॥
जब वह मरैं पकड़ जम लेजाँ । उनकूं देह नरक दारुण माँ ॥
चौरासी वर्ष क्रोड जु ताहीं । ह्वांसू तिन्हैं निकासैं नाहीं ॥
अष्ट धात के पुरुष बनाये । पावक सम वैं अधिक तपाये ॥
जम कहै इनके संग मिलोही । जार तुम्हारे गलै लगोही ॥
मार मार कैही लपटावैं । जलते त्राह कहैं दुखपावैं ॥
अरु जो पापी नर ह्वाँ जावैं । जम अज्ञा बहु पीड़ा पावैं ॥
अरु जम यों कहैं पापी लोगो । खोटे कर्म किये अब भोगो ॥
रे मूरख ऐसा तन पाया । सो तुम पापहि माहिं गंवाया ॥
एक जनम के सुख के काजा । एककल्प भुगतो नर्क साजा १२

दोहा ॥

बहुत दिनों तन ना रहै, जानत है सब कोय ।
पाप गाँठ बांधै घने, ये अपराधी लोय ॥ १३ ॥

कलह लड़ाई करत हैं, औरनकूं दुख देत ।
ह्यां भी वे दुख पावईं, नरकमाहिं दुख लेत ॥१४॥
पापी जीवन कूं कहैं, किंकर मारहिं मार ।
करम भौम दुर्लभ महा, जनम न बारंबार ॥१५॥
बोये ना शुभ करमहीं, अब लुनते सुख भोग ।
तें कीने खोटे करम, बड़ा लगाया रोग ॥१६॥

इति श्रीनासकेतोपाख्याने विष्णुभक्तिप्रभाववर्णनोनाम पंचदशोऽध्यायः ॥१५॥

नासकेत उवाच ॥

चौपाई ॥

स्वर्ग लोक इक और अनूठा । सो वह मृत्युलोक में डीठा ॥
वह भी बड़भागन सूं पावै । हरिकिरपा पुन्यसे बनआवै ॥१॥

दोहा ॥

अचरज मनुषा देहकूं, स्वर्ग लोकही जान ।
तामें आये होत है, परमेश्वर पहिचान ॥ २ ॥

चौपाई ॥

ऐसा स्वर्ग लोक नहिं दूजा । तामें आके सब कुछ सूझा ॥
तामें भोगे भोग अपारा । तामें दीखे अति गुलजारा ॥
मूरख याका भेद न पाया । तामें सब ब्रह्मण्ड समाया ॥
तामें पावै ब्रह्म विचारै । तामें आके तत्त्व निहारै ॥
जाके दीखै दस दरवाजे । तामें अनहद बाजे बाजे ॥
करम धरम बहुते तप कीन्हा । ताते हरिने नरतन दीना ॥
ऐसा पाया स्वर्ग गँवावैं । कलप कलप बहुते पछतावैं ॥
जो कोई ह्याँ सूं गिरजावैं । मनुषादेह बहुर नहिं पावैं ॥३॥

दोहा ॥

मनुषा देह अनूप की, कही चरनही 'दास ।

और बात अब कहतहूँ, लहै स्वर्ग में बास ॥ ४ ॥
नारी जनक विदेह की, जाका बहुत विचार।
सूक्षम करि बर्णन करूं, ताकूं हिये में धार ॥ ५ ॥
तन तजके स्वर्गहि गई, मुँदगये जमपुर द्वार।
जो कोई मूये तादिना, सबकूँ ले गई लार ॥ ६ ॥
आगे पीछे भोर लों, और साँझ लग जान।
सबै जीव सुरपुर गये, यह तू निहचै मान ॥ ७ ॥
सुनों ऋषीश्वर कहतहूं, बड़ा अचम्भा जोर।
सभा धरमही रायकी, मैं भी था वह ठौर ॥ ८ ॥
बैठक धर्महि राय की, तामें सभा सुजान।
जहाँ ऋषि बैठे गुण भरे, तिनकूं निर्मल ज्ञान ॥ ९ ॥
धरमराय बैठा दिपै, ज्यों तारों में चन्द।
जहां ब्रह्मासुत आइया, नारद सुखका कन्द ॥ १० ॥

चौपाई ॥

बारह रविसम तेज उसीका। धरमराय किया भाव जिसीका ॥
धरमराय लखि उठिके धाया। कर प्रणाम आसन बैठाया ॥
अरघपाद करि पूजन कीया। हाथ जोड़ बोलन फिर लीया ॥
हे ब्रह्मासुत हे ऋषिराये। हे बुधवान भले तुम आये ॥
आज सुफलभया जंनमहमारा। भगवत किरपा भई अपारा ॥
तुमसे ऋषि का दर्शन पाया। बड़े भाग जागे सुख छाया ॥
यह सुन नारद मुनजी बोले। बचन प्रीतके मुखसों खोले ॥

नारद उवाच

मोकूं तुम दरशन की इच्छा। अरुकछू पूछन आयो सिच्छा ॥ ११ ॥

दोहा ॥

तुम सब लायक जोग हो, हे राजा धर्मराय।

धरम कहा अधरम कहा, मोकूं देहु बताय ॥ १२ ॥

सोरठा ॥

और कहो तुम मोहि, आश्रम चारौं के धरम।
सबै ज्ञान है तोहि, यह मेटो मेरो भरम ॥१३॥

नासकेत उवाच ॥

यों नारद जी कहत थे, जम सेती यह बात।
इतने ही में दीखिया, बहुत बिमान ज्ञु आत ॥ १४ ॥

चौपाई ॥

अरु बाजे बहु बाजत आवैं। करती नृत्य अप्सरा धावैं ॥
मुरली शंख पखावज भेरा। हाथी घोड़े शब्द घनेरा ॥
ऐरावत पर इन्दर राजा। ह्वाईं थाली ये सब साजा ॥
उसही समैं बायु की नाईं। लखि जमराज छिपाघरमाहीं ॥
मुनों समेत तेजस्वी राजा। और दूत भय सूँ गये भाजा ॥
अरु उसके गण भी कहीं भागे। जो कोई रहे सो छिपने लागे ॥
मोकूँ बड़ा अचंभा भया। खड़ा होय कर देखत रहा ॥
वाही समैं ज्ञु रथ ह्वां आये। मानों पुंज अग्नि के धाये ॥
उनसूं उड़ै पतंगे ऐसे। छूटैं तारे नभ में जैसे ॥
ऐसा ठाठ वहां कर गया। धरमराय फिर अथिर भया ॥१५॥

दोहा ॥

आ बैठा भय भीत सा, डरता सा मन मांहिं।
पीछे से देखन लगो, तेज धरै वै जांहि ॥ १६ ॥

नारद उवाच ॥

कौतिक विष्णु समानही, ऐसे हो महाराज।
यक्ष राक्षस के भूप तुम, तीन लोक तो राज ॥ १७ ॥

बड़ा अचंभा मो भया, डर भागे किस काज।
बाय बेग ज्यों उठ गये, कारन कहिए आज ॥ १८ ॥
फिर बहुरे तुम आपही, आसन बैठे आय।
सांच कहो संक्षेप से, मोकूं देहु सुनाय ॥ १६ ॥

जम उवाच ॥

हे मुनि महा जु श्रेष्ठ हो, कहूं सु तू सुन लेह।
छिपी बात है एक यह, सावधान चित देह ॥ २० ॥

चौपाई ॥

पुन्य बिचार संपूरन तामें। सुनों प्रीतसों कहूं कथा में ॥
हे मुनि मृत्यु लोक के मांहीं। श्रीमान महाराजा हांहीं ॥
सांच बचन का बोलन वारा। जिसका नांव जनक उजियारा ॥
अश्वमेध जगका कर्त्ता जानों। सत्यधर्म में डिढ पहिचानों ॥
छिमां दया अरु शील सहितहै। हरिकी सेवा करत रहत है ॥
ज्ञानवन्त शीतल सुखदाई। क्रोध लोभ बिन रहत सदाई ॥
वेद अर्थ का जानन हारा। नीति धरम का है रखवारा ॥
अपनी परजा कूं सुख देवै। एक एककी सुधही लेवै ॥२१॥

दोहा ॥

जैसे माली बाग की, सुध कूं भूलै नाहिं।
ऐसे अपनी सृष्टि कूं, राखै रच्या माहिं ॥ २२ ॥

चौपाई ॥

दूधभरी गऊ दान करत है। रंकन का बहु दुःख हरत है ॥
खेती सहित भूमि का दाना। विप्रन कूं देकर सनमाना ॥
बड़ी उमर की परजा सारी। नीति धर्म सब करै संभारी ॥
ऐसा महाराजा अनुरागी। जाका नांव जनक बड़भागी ॥
जाकी नार सतवंती नामा। जिसके भये संपूरन कामा ॥

सभी लक्षनों सहित विराजे । सब धर्मों कूं लीयें राजे ॥
पतिवर्ता अरु पति की प्यारी । सदा पिया की आज्ञाकारी ॥
भरताही की भक्ति करेवा । भरताही जिसका है देवा ॥२३॥

दोहा ॥

स्वामी के दुखसे दुखी, स्वामी के सुख सोय ।
स्वामी के रंग में रंगी, और नेह सब खोय ॥२४॥

चौपाई ॥

जब भरता के दरशन करै । पियाकी अस्तुति कर मनभरे ॥
भरता क्रोधकरै जब वापै । मीठे बचन कहै वह तापै ॥
भरता अरु सब कुटुंब जिमावै । पाछे बचा आपहूं खावे ॥
ऐसे और बहुत गुनवंती । तिरियन में अधिकी सतवंती ॥
पतिवर्ता में जान बड़ीही । जाती स्वर्ग विमान चढ़ीही ॥
इन्दर सहित देव बहु साथा । सभी नवावें जाकूं माथा ॥
बाजे बजत बहुत परकारा । गंध्रब गावत राग विचारा ॥२५॥

दोहा ॥

चाहे जा अमरावती, चाहे जा ब्रह्मलोक ।
चाहे जावे शिवपुरी, किये पुण्यके थोक ॥२६॥

चौपाई ॥

आनन्द भरता सहित जुपावे । चढ़ी विमानों ऊपर जावे ॥
वाका तेज अचानक आया । हो भयभीत भाज में गया ॥
घर में गया छिपा पहिचानो । दूत भजे सो भी तुम जानो ॥
बातोंही के करने मांहीं । दूत गए सो आये ह्वांहीं ॥
सुनके नारद बहु हुलसाया । पतिवर्ता का उत्तर पाया ॥
अरु फिर नारद पूछन लागे । सूरज पुत्तर सुनो सुभागे ॥

भानु तेजसा तन है तेरा। ताये सोने कासा हेरा॥
देह तुम्हारी गौरी सुहनी। मुख सांवरा कारन कौनी॥
याका भी मोहिं उत्तर दीजे। कहो भेद अरु किरपा कीजे॥
धरमराय बोले मुसकाई। छिपी बात यह है ऋषिराई॥
मेरेही हिरदै में रही। अबलग काहू से नहिं कही॥
ब्रह्मासुत अब तोसूं भाखूं। याका भेद कछू नहिं राखूं॥
जिन मनुषौ तप दान किया है। निहचे हरिका नाम लिया है २७

दोहा॥

अरु इन्द्रीमन वश किया, कियो योगही ध्यान।
हरिगुण गाये भक्ति करि, आराधे भगवान॥२८॥

चौपाई॥

गुरुके भक्त साध संग कीन्हा। हरिजन सेवनका व्रत लीन्हा॥
क्षमा शील अरु दया विचारी। सतवादी भये नर क्या नारी॥
तीरथ करके फल नहिं चाहा। हरिकी भक्ति करनका लाहा॥
दुख सुख एक बराबर जानै। सत संतोष सदा हिय आनै॥
पांच यज्ञ कर हरिकूं अरपैं। फल नहिं चाहैं आपन थरप॥
कौन कौन यज्ञ सो बतलाऊं। जुदे जुदे कर सब दिखलाऊं॥
मावस अरु संक्रायत जानों। व्यतीपात द्वादशी मानों॥
और पांचवें पूरनवासी। देवें दान रहैं निरबासी॥
अरु पच अगनी तपें निरासा। तपही की पूंजीजिनपासा॥२९॥

दोहा॥

प्रेम भक्ति निहकाम जो, करैं अनन्यही भाय।
तन मन हरिके ध्यानमें, राखैं चित्त लगाय॥३०॥

चौपाई॥

ऐसे साध संत जो आवैं। पुरी पास हो आगे जावैं॥

तिनकूं देखूं नयन निहारा । जिनके तेज श्याम मुखम्हारा ॥
पहिरे रहूं कवच तनमाहीं । ताकूँ आँच लगत है नाहीं ॥
नारद यह सुन निहचै कीजे । यही बात हिरदै धर लीजे ॥
धरमराय अरु नारद मुनी । दोनों की हम चित दे सुनी ॥
स्वरग नरक को सबही गाथा । तुमसों कही खोल ये बाता ॥
देखी नासकेत नहीं राखी । नैन निहारी सगरी भाखी ॥२१॥

इति श्रीनासकेतोपाख्याने यमनारदसंवादोनामषोडशोऽध्यायः ॥ १६ ॥

नासकेत उवाच ॥ दोहा ॥

और बात इक जगत में, है परसिद्ध लहूं ।
देखी अपने नैनही, सोभी सुनो कहूं ॥ १ ॥
जो पापी जीवों किये, पिछले करम अघाय ।
जनम पाय जा जगत में, सोई भुगतैं आय ॥ २ ॥

चौपाई ॥

हत गऊवां पातक कियो भारी । बिपदे मनुष मारहू डारी ॥
अपने गुरुके घरके माहीं । देखें खोटी दिष्टबुराई ॥
सो निषिद्ध काया धर आवैं । ह्याँ चंडाल जौनही पावैं ॥
मारै राह झूंठ बहु बोलें । सो रोगी हो जग में डोलैं ॥
जो सोना जगमाहिं चुरावें । जनम पाय कुष्ठी होजावैं ॥
जो मदिरा पी भये मतवाले । जिनके दांत हुये नखकारे ॥
ब्राह्मण पुस्तक पढ़न बिचारा । पावै जनम नागही कारा ॥
और जिन पाप जानकर कीन्हा । वाहू जनम सर्पकालीन्हा ॥३॥

दोहा ॥

जो कन्या कूं हनत है, कै बाहिर कै गेह ।
जनम पायहैं जगत में, होय गधे की देह ॥ ४ ॥

चौपाई ॥

विप्पर भिष्टल मांस अहारी । देत दान जिनकूँ ब्रह्मचारी ॥
दोनों गीदड़ को तन पावैं । नासकेत यह खोल दिखावैं ॥
जो नर परतिरिया कूँ ताकै । पावै जनम सुवर को आकै ॥
जो नारी पर पुरुष लुभानी । सो वे सुरी होती जानी ॥
अरु जो दान करत कोई रोकै । पीठ लदै वह घोड़ा होकै ॥
झूंठा कर ब्राह्मणकूँ देवै । सोतो जनम बाज का लेवै ॥
जो कोई धरी धरोहर नाटैं । अरु पक्षी के पर जो काटैं ॥
सो बिष्ठाके कीड़े जानों । उनको पापी अधिक पिछानों ॥
काहूं के जो बसन चुरावैं । सो वे नर धोबी हो आवैं ॥
और जिन मोती रतन चुराया । अपना खाविंद मार गँवाया ॥
सो होवें पत्थर के कीड़ा । निहचैपावैं किरम शरीरा ॥५॥

दोहा ॥

सब बिध देवे जोग हो, नहीं देत वे दान ।
मनै करै जो और दे, बागल हो जग आन ॥ ६ ॥

चौपाई ॥

जो कुदिष्ट आँखन सूं देखै । अंधे काने होत बसेखै ॥
झूंठा बाद विवाद बढ़ावै । सो कछुवे की काया पावै ॥
जो कोई परका दरब चुरावै । सोतो जन्म वृक्ष हो आवै ॥
वृक्ष देह तज बन्दर होवै । जनम अकारथ निहचै खोवै ॥
जो कोई बेटी होती मारै । सो घिरघिट की काया धारै ॥
जो काहू का सूत मुसावै । होय न्हारू बहु दुख पावै ॥
गुली कपूर कपास चुरावै । सो मकड़ी की देही पावै ॥
जो काहू की चोरे पनहीं । जनमलेत चकचूंधर तनहीं ॥७॥

दोहा ॥

जिन काहू के फल चुरा, मानी नाहीं संक।
ते नर हाथी होयकर, सिरमें खावैं अंक ॥ ८ ॥
गुरू ब्राह्मण का लिया, जानें अंस चुराय।
काला होवै सरपही, मारूदेश में जाय ॥ ९ ॥

चौपाई ॥

विप्र साध पैरों जिन मारै। जनमत पिंगल भये विचारै ॥
जो ब्राह्मण कूँ मदिरा प्यावै। कूकर जौन सोई हो आवै ॥
जो काहू का अन्न चुरावै। होवे बहिरा सुना न जावै ॥
काहू से कीन्ही दुष्टाई। वे तो मृग होवें बन जाई ॥
आप गुरू हो गुरू न कीन्हा। सो बिलाव होता हम चीन्हा ॥
वृक्ष काट जो फूल चुरावैं। जौन पपीहा की वे पावैं ॥
नितप्रत क्रोध नहीं हरपावैं। सो वे जौन न्योल हो धावैं ॥
जो काहू की निन्दा करैं। जौन कोकिला की वे धरैं ॥१०॥

दोहा ॥

हरिके भोग लगे बिना, खाय रसोई कोय।
चरनदास यों कहत हैं, ज्योन काग की होय ॥११॥

चौपाई ॥

देकर दान बहुरि पछितावै। सो तो जौन भेड़की पावै ॥
भली वस्तु छिपकर जो खावै। कुटुम्ब मित्रको नाहिं दिखावै ॥
सो होवें बगुले की देहीं। कपटरूप धारत हैं वेही ॥
जो अनहोती लड़ैं लड़ाई। सो जंगल मक्खी हो जाई ॥
जिन सेवा पतिकी नहिं रोपी। सो तिरिया तन धरै जलोकी ॥
जिन सतगुरु की वस्तु चुराई। अजगर प्रेत होत गिरिमाहीं ॥
राखे कपट सीस बहु नावै। सो पापी चीता हो आवै ॥

ज्ञान सीख गुरूसूं फिरजावै । सो शरीर कोढ़ी को पावै ॥१२॥

दोहा ॥

खोटे कर्मन सूं सबै, चौरासी में जाहिं ।
कहां लों गिनती मैं करूं, समझ देखि मनमाहिं ॥१३॥

इति श्रीनासकेतोपाख्याने कर्मानुसारयोनिप्राप्तिवर्णनं नाम

सप्तदशोऽध्यायः ॥ १७ ॥

नासकेतउवाच ॥ चौपाई ॥

जिन मनुषों शंकर नहिं माना । ब्रह्मा का पूजन नहिं ठाना ॥
विष्णु भक्ति में मन नहिं दीन्हा । गुरुसेवा का नेम न लीन्हा ॥
साधों की सेवा नहिं जानी । तीरथ किये न परब पिछानी ॥
गुरुका कबहूं नाम न लीया । कबहूं पापी होम न कीया ॥
परमेश्वर का जप नहिं साधा । योग जुगत नाहीं आराधा ॥
पांचों इन्द्री बस नहिं कीन्हीं । भली वस्तु काहू नहिं दीन्हीं ॥
कथा कीरतन में नहिं गया । हरि सों बेमुख दुष्टी भया ॥
जिन नर ऐसी चाल बिसारी । सो डूबत है नरक मँझारी ॥१॥

दोहा ॥

जिन पूजे हैं देवता, होम यज्ञ कर दान ।
नासकेत देखी कहै, स्वर्ग लहैं वह जान ॥ २ ॥

चौपाई ॥

धरमराय जब पकड़ बुलावै । पाप पुण्य का न्याव चुकावै ॥
पापी पठवै नरक मँझारी । पुण्यी पठवै स्वर्ग मँझारी ॥
पाप पुण्य क्षीण होजावैं । फिर वह मृत्युलोक में आवैं ॥
पापी देह निषद जो पावैं । पुण्यी मनुष होय हुलसावैं ॥
धनवन्ते उत्तम घर जनमैं । भले भले लक्षण आवैं तिनमें ॥
अरु जो चौरासी सूं कढ़ैं । मनुष देह धर ऊंचे चढ़ैं ॥

खोटे लक्षण तिनके माहीं । चरनदास कहैं निहचै आईं ॥
जितके जीव जहाई जाई । यह मत वेद पुराणन गाई ॥
साध संगत कोई उतरै पारा । और चौरासी जाहिं मँझारा ॥
सुनि ऋषीश्वर रसमें पागे । धन्य धन्य जब कहने लागे ॥
अस्तुति करि मनमें हरषाये । अपने अपने अस्थल आये ॥३॥

दोहा ॥

नासकेत की यह कथा, संस्कृत के माहिं ।
चरनदास ने सो करी, उक्ति आपनी नाहिं ॥ ४ ॥
पढ़ा लिखा मैं कुछ नहीं, सतगुरु दीन्हों ज्ञान ।
रणजीता यों कहत है, ताही की 'पहिचान ॥ ५ ॥
कथाजु अधिक सुहावनी, सुनकर उपजै चाव ।
दया धरम हिये आवसै, भाजैं सबै कुभाव ॥ ६ ॥
सुनकर जो रहनी रहै, मनमाहीं गहलेह ।
पाप निकट आवै नहीं, जनम नाहिं दुखदेह ॥ ७ ॥
कथा सुनै चितवन करै, समझ धरै मन माहिं ।
पवन नरक की नालगै, पातक सबहिं नसाहिं ॥ ८ ॥
सुनकर रहनी ना रहै, चलै न याकी चाल ।
चरनदास यों कहत है, ताहि नरक तत्काल ॥ ९ ॥
सुनकर मनलावै नहीं, तामें चित नहिं दै ।
जीवत भिष्टलही रहै, मुये नरक का भै ॥ १० ॥
जनमेजय की साखही, कहूँ सुनों चितलाय ।
कुष्ठ अठारह ही हुते, सुनकर गये नसाय ॥ ११ ॥
नासकेत ऐसी कथा, जैसा धरम जहाज ।
जनमेजय तापर चढ़ा, कुष्ठ गये सब भाज ॥ १२ ॥
खेवटिया जहाँ ब्यास से, बचन बाहहीवान ।

जगतसिन्धुसम जानिए, धरम जहाज पिछान ॥ १३ ॥
यामें जो कोई चढ़ै, सोई उतरै पार ।
रहिजावै अभिमानसूं, सो डूबै मँझधार ॥ १४ ।
सतगुरु बिन डूब सभी, रामभक्ति नहिं जान ।
सतसंगत आवै नहीं, करके बहु अभिमान ॥ १५ ।
नासकेत की कथा कूं, कहै सुनै चितलाय ।
पाप तजै अरु पुन्यकरै, बसै स्वर्ग वह जाय ॥ १६ ।
शुकदेव के परतापसूं, कह्यो नासहीकेत ।
पाप पुण्य के भेदकूं, समझन कारण हेत ॥ १७ ॥

इति श्रीश्यामचरनदासजीकृते नासकेतोपाख्याने शुभाशुभनिर्णय-
वर्णननामाष्टादशोऽध्यायः ॥ १८ ॥

संपूर्णः ॥